पंतनगर किसान डायरी
2025

कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक)
प्रसार शिक्षा निदेशालय
गोविन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
पंतनगर – 263 145
ऊधम सिंह नगर, उत्तराखण्ड

पंतनगर किसान डायरी
2025

संरक्षक	:	डा. मनमोहन सिंह चौहान कुलपति
मुख्य सम्पादक	:	डा. जितेन्द्र क्वात्रा निदेशक प्रसार शिक्षा
सम्पादक एवं परिकल्पना संयोजन	:	डा. संजय चौधरी प्रभारी अधिकारी, एटिक
परिकल्पना संयोजन	:	डा. बी.डी. सिंह, प्राध्यापक सस्य विज्ञान डा. निर्मला भट्ट, प्राध्यापक प्रसार शिक्षा निदेशालय
मुख्य पृष्ठ सज्जा, टंकण एवं अक्षर संयोजन	:	श्री धर्मेन्द्र कुमार
मूल्य	:	₹ 170/- (एक सौ सत्तर रूपये मात्र) डाक द्वारा मंगाने पर पंजीकृत डाक खर्च+ पैंकिग शुल्क ₹ 60/- अतिरिक्त
ISBN	:	978-93-84970-24-6
प्रकाशक	:	पिघलता हिमालय प्रकाशन, हल्द्वानी

सर्वाधिकार सुरक्षित @ 2025

इस डायरी में प्रकाशित लेख एवं विचार लेखकों के निजी हैं। प्रकाशक/सम्पादक इसके लिए उत्तरदायी नहीं हैं। प्रकाशित लेख पाठकों के जानकारी के लिए हैं। इन लेखों का विधिक कार्यों में उपयोग उचित नहीं होगा।

नोट- यद्यपि इस डायरी के मुद्रण में पूर्ण सतर्कता बरती गयी है, यदि कोई त्रुटि रह गयी हो या कोई सुझाव हो तो कृपया निम्न पते पर भेजने का कष्ट करें। लेखक आपके आभारी रहेंगे।

मंगाने का पता

प्रभारी अधिकारी
कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक)
प्रसार शिक्षा निदेशालय
गो. ब. पंत कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
पंतनगर, ऊधम सिंह नगर - 263 145 (उत्तराखण्ड)
फोनः 05944-234810, 235580, फैक्स-05944-233473
मो. 9412162673, 7817005216 ई-मेलः aticgbpuat@gmail.com

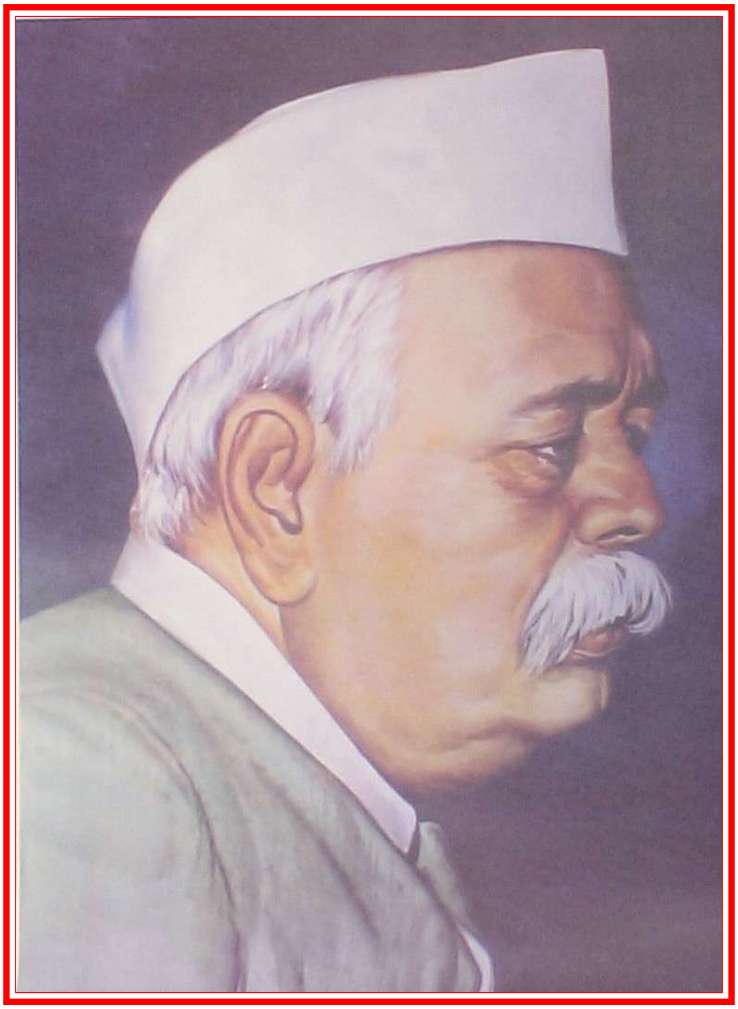

पं. गोविन्द बल्लभ पंत

(1887-1961)

व्यक्तिगत सूचनाएं

नाम_____

पता_____

_____

दूरभाष निवास _____मोबाईल_____

फार्म पता _____मोबाईल_____

फार्म दूरभाष न. _____

जन्म तिथि _____ ऊँचाई_____ भार _____

बैंक खाता न. _____

किसान क्रेडिट कार्ड न._____पैन न._____

ड्राईविंग लाइसेन्स न._____

ट्रैक्टर/वाहन न._____रक्त संवर्ग_____

वाहन बीमा पॉलिसी न. _____

_____

बीमा पॉलिसी सं._____

_____

ले ज गुरमीत सिंह
पीवीएसएम, यूवाईएसएम, एवीएसएम,
वीएसएम (से नि)
राज्यपाल उत्तराखण्ड

राजभवन उत्तराखण्ड
देहरादून 248003
दूरभाष : 0135–2757400
2757403

01.10.2024

संदेश

यह अत्यन्त हर्ष का विषय है कि गोविन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, पंतनगर द्वारा **''पंतनगर किसान डायरी 2025''** का प्रकाशन किया जा रहा है, जिसमें कृषि संबंधित समस्त विकसित तकनीकों को समाहित किया गया है।

देश के प्रथम गृह मंत्री पंडित गोविन्द बल्लभ पंज जी के सपनों को साकार करता पंतनगर कृषि विश्वविद्यालय पिछले अनेक दशकों से किसानों की सेवा करता आ रहा है। समय के साथ विश्वविद्यालय ने अपनी प्राथमिकताएं बदली और पृथक राज्य बनने के पश्चात उत्तराखण्ड की भौगोलिक परिस्थितियों के अनुरूप शोध एवं प्रसार कार्यक्रम शुरू किये गये। उत्तराखण्ड के कृषकों का खेती से परंपरागत रूप से अटूट संबंध रहा है। कृषकों द्वारा फसलों, सब्जियों, फलों, मुर्गी पालन, डेयरी, मत्स्य पालन आदि कृषि कार्यों से अपना व अपने परिवार का भरण–पोषण किया जाता है।

वर्तमान में अनेक कृषक अपनी खेती में वैज्ञानिक विधियों का समावेश करते हुए अपनी आय में बढ़ोत्तरी करने के साथ–साथ अन्य कृषकों को भी ऐसे कृषि उद्यम अपनाने हेतु प्रेरित कर रहे है। उत्तराखण्ड के प्रत्येक जनपद में स्थित कृषि विज्ञान केन्द्र अपने अनूठे प्रसार कार्यक्रमों के द्वारा जनपदों में अपनी अलग पहचान बना रहे हैं। कृषि वैज्ञानिक अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन, प्रशिक्षण, परीक्षण, किसान मेला, कृषि गोष्ठी, कृषक वैज्ञानिक संवाद जैसे कार्यक्रमों से अंगीकृत ग्रामों के कृषकों को लाभान्वित कर रहे हैं।

वर्तमान में आवश्यकता इस बात की है कि इन तकनीकों का रेखीय विभाग के सहयोग से क्षैतिज विस्तार किया जाये, जिससे संपूर्ण जनपद कृषि के क्षेत्र में समृद्ध हो सके। इस दिशा में पंतनगर कृषि विश्वविद्यालय एवं भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली द्वारा भी बदलते मौसम में आवश्यकतानुरूप नयी प्रजातियाँ विकसित करना, सीमित जल उपलब्धता की स्थिति में बेहतर प्रबन्धन, जैविक उर्वरक, जैविक रसायन के प्रयोग आदि पर लगातार शोध तथा व्यापक प्रचार–प्रसार किये जा रहे हैं। **''पंतनगर किसान डायरी 2025''** का प्रकाशन इस दिशा में एक और बड़ा कदम है, जिसमें कृषि से संबंधित सभी नवीनतम तकनीकों को समाहित किया गया है।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह डायरी न केवल रेखीय विभाग के अधिकारियों और प्रसार कार्यकर्ताओं के लिए मार्गदर्शिका का कार्य करेगी, बल्कि छात्रों और किसानों के लिए भी उपयोगी सिद्ध होगी। **''पंतनगर किसान डायरी 2025''** के प्रकाशन हेतु विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ0 मनमोहन सिंह चौहान सहित पूरी प्रकाशन टीम को मेरी तरफ से हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाएं।

गुरमीत

ले ज गुरमीत सिंह
पीवीएसएम, यूवाईएसएम, एवीएसएम, वीएसएम (से नि)

पुष्कर सिंह धामी

मुख्यमंत्री उत्तराखण्ड

उत्तराखण्ड सचिवालय
देहरादून– 248001
सचिवालय फोन : 0135–2716262
0135–2650433
फैक्स : 0135–2712827
विधान सभा फोन : 0135–2665100
0135–2665497
फैक्स : 0135–2666166
Email: cm-ua@nic.in

संदेश

मुझे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हो रही है कि **'गोविन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, पंतनगर जनपद–ऊधमसिंहनगर'** द्वारा **''पंतनगर किसान डायरी 2025''** का प्रकाशन किया जा रहा है। इस प्रदेश का अधिकांश क्षेत्र पर्वतीय क्षेत्र है, जहाँ वर्षा आधारित खेती, सीढ़ीनुमा छोटे–छोटे बिखरे जोत, परम्परागत विधि से खेती, कृषि लागतों पर न्यूनतम व्यय एवं उन्नत तकनीक का न्यूनतम उपयोग होता है। इस प्रदेश के पर्वतीय क्षेत्रों के कृषक विपरीत परिस्थितियों में भी अपने उत्कृष्ट कृषि कार्यों के कारण समाज में अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं तथा पर्वतीय क्षेत्रों में कृषकों द्वारा अनेक उद्यम यथा:–मशरूम उत्पादन, मौन पालन, मुर्गी पालन, मत्स्य पालन इत्यादि से अपनी आय में बढ़ोत्तरी कर रहे हैं। यह सर्वविदित है कि हरित क्रान्ति की जन्म स्थली पंतनगर विश्वविद्यालय अपने स्थापना काल से ही खाद्य सुरक्षा एवं कृषकों के सेवा में सतत् प्रयत्नशील है। विश्वविद्यालय द्वारा अपने शोध एवं प्रसार कार्यक्रमों से न सिर्फ उत्तराखण्ड बल्कि पूरे देश के कृषक लाभान्वित हो रहे हैं। विश्वविद्यालय द्वारा समय–समय पर कृषकोपयोगी प्रशिक्षण कार्यक्रम, किसान मेले का आयोजन, कृषक वैज्ञानिक संवाद कार्यक्रम आयोजित होने से पूरे देश के कृषकों को लाभान्वित किया जा रहा है। विश्वविद्यालय द्वारा समस्त तकनीकों को एक पुस्तक के रूप में संकलित कर इसे **''पंतनगर किसान डायरी 2025''** के रूप में प्रकाशित किया जाना नि:संदेह प्रशंसनीय कार्य है। मुझे आशा है कि इस पुस्तक में फसल, सब्जी, उद्यान, पशुपालन, औषधीय एवं सगंध पौधे, प्राकृतिक एवं जैविक कृषि, कृषि रक्षा रसायनों का सुरक्षित प्रयोग इत्यादि विषय समाहित होने से कृषकों के लिए यह अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगी। मुझे यह भी आशा है कि यह पुस्तक हिन्दी भाषी छात्रों, रेखीय विभाग के अधिकारियों, प्रसार कार्यकर्ताओं, स्वयं सेवी संस्थाओं तथा कृषकों एवं पाठकों के लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगी।

मेरी ओर से **'गोविन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, पंतनगर जनपद–ऊधमसिंहनगर'** के समस्त विश्वविद्यालय परिवार को **''पंतनगर किसान डायरी 2025''** के सफल प्रकाशन हेतु हार्दिक बधाई एवं शुभकामनायें।

(पुष्कर सिंह धामी)

गणेश जोशी
मंत्री
कृषि एवं कृषक कल्याण
सैनिक कल्याण एवं ग्राम्य विकास विभाग
उत्तराखण्ड सरकार

उत्तराखण्ड सरकार

विधान सभा भवन
देहरादून
फोन – 0135–2745500
0135–2665988

संदेश

मुझे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हो रही है कि पंतनगर विश्वविद्यालय द्वारा कृषि विकास के विभिन्न क्षेत्रों में विकसित तकनीकों को संकलित कर विगत वर्षों की भांति इस वर्ष भी एक **''पंतनगर किसान डायरी 2025''** प्रकाशित किया जा रहा है, जिसमें उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्र विकास परक कृषि तकनीक यहाँ के कृषि प्रणाली में समावेशित किया जाएगा। उत्तराखण्ड के क्षेत्रफल में मंडुवा, झंगोरा, गहत, भट्ट, चुआं, नौरंगी, गोल मूली, गडेरी जैसे आदि मोटे अनाज की खेती होती है। आज आवश्यकता इस बात की है कि यहाँ की जलवायु व पारिस्थितिकी के अनुरूप तकनीक विकसित किये जायें और विभिन्न योजनाओं द्वारा इन्हें संतृप्त किया जाय। इस दिशा में अनेक योजनाएं जैसे राष्ट्रीय कृषि विकास योजना, राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन, प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना, प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना, हार्टीकल्चर मिशन योजना, पॉलीहाउस मिर्माण जैसी अनेकों योजनाओं से कृषकों को अच्छादित किया जा रहा है। हरित क्रान्ति की जननी पंत विश्वविद्यालय एवं विभिन्न जनपदों में स्थित कृषि विज्ञान केन्द्र नित नवीनतम विकसित शोध एवं प्रसार कार्यक्रमों से दूरस्थ क्षेत्र के अन्तिम पायदान पर बैठे कृषकों को लाभान्वित कर रहे हैं, जो कि मल का पत्थर साबित होगा। पंतनगर विश्वविद्यालनय के कुलपति डॉ0 मनमोहन सिंह चौहान, जिनके नेतृत्व में यह विश्वविद्यालय सफलता के नये आयाम की ओर अग्रसर हो रहा है। इस पुस्तक में विश्वविद्यालय द्वारा विकसित समस्त कृषि तकनीकों को संकलित किया गया है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि पंतनगर किसान डायरी विभागीय अधिकारियों, कृषि एवं कृषि आधारित कर्मियों, कृषकों, प्रसार कार्यकर्ताओं एवं गैर सरकारी संस्थाओं के लिए मार्ग निर्देशिका के रूप में बेहतर कार्य करेगी।

मैं पंतनगर विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित ''पंतनगर किसान डायरी 2025'' की सफलता की कामना करते हुए विश्वविद्यालय के समस्त पदाधिकारियों एवं कार्मिकों को अपनी शुभकामनाएं ज्ञापित करता हूँ।

(गणेश जोशी)

डा. एम.एस. चौहान
एन.एफ.ए., एफ.एन.ए.एससी., एफ.एन.ए.ए.एस., एफ.एन.ए.डी.एस
Dr. M.S. Chauhan
FNA, FNASc. FNAAS, FNADS
Vice-Chancellor

गोविन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय पंतनगर – 263145
जिला–ऊधम सिंह नगर (उत्तराखण्ड) भारत
G.B. Pant University of Agriculture & Technology, Pantnagar - 263145
(Uttarakhand) India

संदेश

भारत में कृषि हजारों वर्ष पूर्व से की जा रही है किन्तु यह कहना सर्वथा उचित होगा कि देश में असली कृषि की शुरुआत 1960 के दशक के मध्य में हरित क्रान्ति के साथ ही हुई, जिसके परिणाम स्वरूप देश में खाद्यान्न उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि हुई। कृषि योग्य भूमि में साल दर साल आ रही कमी, जलवायु परिवर्तन व निरन्तर बढ़ती आबादी के लिए खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित् करना चिंता का विषय बन गया है। इन चुनौतियों के मद्देनजर हमारे कृषि वैज्ञानिकों द्वारा नयी–नयी कृषि तकनीकियाँ विकसित की जा रही हैं। इन तकनीकों को विभिन्न प्रसार शिक्षा कार्यक्रमों के माध्यम से कृषकों के द्वार तक पहुँचाकर खाद्यान्न उत्पादन में समगतिशीलता लायी जा सकती है।

उपरोक्त के परिप्रेक्ष्य में कृषि वैज्ञानिकों के सतत् अनुसंधान से विकसित नवीनतम तकनीकियों एवं ज्ञान को किसानों तक पहुँचाने के लिए कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक) द्वारा वर्ष 2006 से **''पंतनगर किसान डायरी''** का प्रकाशन प्रारम्भ किया था। इस पुस्तक की बढ़ती माँग व पाठकों से प्राप्त सुझावों को ध्यान में रखते हुए इसमें नवीनतम एवं समसामयिक जानकारी को सम्मिलित करते हुए **''पंतनगर किसान डायरी 2025''** का संस्करण प्रकाशित किया जा रहा है। इसमें विभिन्न फसलों जैसे–खाद्यान्न फसलें, दलहनी फसलें, तिलहनी फसलें, गन्ना, श्रीअन्न, सब्जी, मसाला, फल, फूल, औषधीय एवं सगंध फसलें, कुक्कुट पालन, पशुपालन, मशरूम उत्पादन, मत्स्य पालन एवं केन्द्रीय कीटनाशी बोर्ड द्वारा अनुमोदित रसायनों का उपयोग आदि से सम्बन्धित जानकारियों का समावेश किया गया है।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि **''पंतनगर किसान डायरी 2025''** का संस्करण किसानों को कृषि उत्पादन व उनकी आमदनी बढ़ाने में सहायक होगा, साथ ही कृषि प्रसार से जुड़े सभी वैज्ञानिकों, अधिकारियों व कार्यकर्ताओं तथा ग्रामीण उद्यमियों व विद्यार्थियों के लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगा। मैं कृषकों के हित में किये गये इस सत्प्रयास के लिए कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक) के प्रभारी अधिकारी डा. संजय चौधरी व कर्मचारियों के साथ–साथ निदेशक प्रसार शिक्षा डा. जितेन्द्र क्वात्रा व विश्वविद्यालय के उन सभी वैज्ञानिकों व अधिकारियों की सराहना करता हूँ जिन्होंने **''पंतनगर किसान डायरी 2025''** के प्रकाशन में अपना अमूल्य सहयोग दिया है। पंतनगर किसान डायरी के सभी पाठकों को भी मैं अपनी हार्दिक शुभकामनाएं देता हूँ।

(मनमोहन सिंह चौहान)

दूरभाष (कार्यालय) : 05944–233333, 7500122224, 9991652455 (मो0) फैक्स: 05944–233500 (कार्यालय)
E-mail: vcgbpuat@gmail.com, Website: www.gbpuat.ac.in

डा. जितेन्द्र क्वात्रा
निदेशक, प्रसार शिक्षा
एवं
निदेशक, राज्य कृषि प्रबन्धन एवं प्रसार प्रशिक्षण संस्थान, उत्तराखण्ड (समेटी–उत्तराखण्ड)

गोविन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय पंतनगर–263145
जिला–ऊधम सिंह नगर (उत्तराखण्ड) भारत
G.B. Pant University of Agriculture & Technology, Pantnagar - 263145 (Uttarakhand) India

प्राक्कथन

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहाँ 65 प्रतिशत आबादी गांवों में रहती है और इनमें से अधिकांश लोगों की आजीविका कृषि पर निर्भर रहती है। देश का कृषि उत्पादन बढ़ाने में कृषि की नवीनतम तकनीकों का विशेष स्थान है जिन्हें किसानों तक पहुँचाने का दायित्व प्रसार कर्मियों पर है। इस कार्य में कृषि विश्वविद्यालय/ शोध संस्थान, राज्य के रेखीय विभाग, निजी संस्थान, स्वयं सेवी संस्थाऐं एवं प्रगतिशील कृषक सार्थक प्रयास कर रहे हैं। कृषि एवं कृषि सम्बन्धित व्यवसाय वैज्ञानिक तथ्यों के व्यावहारिक उपयोग पर निर्भर है। यह एक विस्तृत क्षेत्र है जिसका पूरा ज्ञान किसी एक के पास होना सम्भव नहीं है। अतः इसे ध्यान में रखते हुए, कृषि के विभिन्न क्षेत्रों की प्रमुख तकनीकों को संकलित कर कृषकों एवं प्रसार कार्यकर्ताओं को उपलब्ध कराना अति आवश्यक है।

मुझे यह जानकर अपार हर्ष हो रहा है कि पंतनगर किसान डायरी की किसानों में बढ़ती लोकप्रियता एवं मांग के दृष्टिगत किसानों से प्राप्त सुझावों एवं नवीनतम व सामयिक जानकारी को सम्मलित करते हुए कृषि प्रौद्यौगिकी सूचना केन्द्र (एटिक), पंतनगर द्वारा **''पंतनगर किसान डायरी 2025''** का प्रकाशन किया जा रहा है। इसमें विभिन्न फसलों जैसे–खाद्यान्न फसलें, दलहनी फसलें, तिलहनी फसलें, गन्ना, श्रीअन्न, सब्जी, मसाला, फल, फूल, औषधीय एवं सगंध फसलें, कुक्कुट पालन, पशुपालन, मशरूम उत्पादन, मत्स्य पालन एवं केन्द्रीय कीटनाशी बोर्ड द्वारा अनुमोदित रसायनों का उपयोग आदि से सम्बन्धित जानकारियों का समावेश किया गया है। मुझे आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है कि नवीनतम वैज्ञानिक तकनीकों से सुसज्जित **''पंतनगर किसान डायरी 2025''** में उपलब्ध जानकारी निश्चित ही किसान, प्रसार कार्यकर्ता व अन्य हितधारक लाभान्वित होंगें।

मैं विश्वविद्यालय के उन सभी वैज्ञानिकों का विशेष रूप से आभारी हूँ जिनके द्वारा किसान डायरी के प्रकाशन हेतु महत्वपूर्ण एवं उपयोगी जानकारी उपलब्ध करायी गयी है। मैं कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक) के प्रभारी अधिकारी व कर्मचारियों के साथ–साथ प्रसार शिक्षा निदेशालय व विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों व अधिकारियों के प्रयासों की अत्यन्त सराहना करता हूँ जिन्होंने इसके प्रकाशन में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

(जितेन्द्र क्वात्रा)

दूरभाष (कार्यालय): 05944–233336 फैक्सः 05944–233473 (कार्यालय)
E-mail: dirextedugbp@gmail.com

अनुक्रमणिका

क्रमांक	विषय	पृष्ठ सं.
1.	उत्तराखण्ड–एक दृष्टि में	1–2
2.	पंतनगर विश्वविद्यालय–एक झलक	2–4
3.	विश्वविद्यालय के प्रशासनिक पदाधिकारी	5
4.	उत्तराखण्ड में स्थित कृषि विज्ञान केन्द्र	6
5.	विश्वविद्यालय के अनुसंधान केन्द्र	7
6.	विश्वविद्यालय द्वारा विकसित फसलों की उन्नत किस्में	8
7.	विश्वविद्यालय द्वारा विकसित औद्यानिक एवं सब्जी फसलों की उन्नत किस्में	9
8.	खाद्यान्न फसलें गेहूँ, जौ, धान, मक्का	10–29
9.	दलहनी फसलें चना, मटर, मसूर, उर्द, मूँग, राजमा, अरहर (तूर)	30–38
10.	तिलहनी फसलें राई, पीली सरसों, तोरिया (लाही), मूँगफली, तिल, सूरजमुखी, सोयाबीन	39–55
11.	गन्ना	56–61
12.	श्रीअन्न बाजरा, ज्वार, मंडुवा (रागी), झंगोरा (मादिरा सांवा), कौणी (कंगनी/काकुन), चीना, कुटकी, कोदो, कुट्टू (ऊगल), रामदाना (चौलाई/चुआ)	62–79
13.	अल्प प्रयुक्त दलहनी फसलें गहत (कुल्थी) एवं राइसबीन (नौरंगी)	80–83
14.	सब्जियों की उत्पादन तकनीकी	84–93
15.	मसालों की खेती धनिया, मेथी, लहसुन, प्याज, हल्दी, अदरक	94–106
16.	उष्ण एवं उपोष्ण फलोत्पादन प्रबन्धन एवं महत्वपूर्ण तकनीक	107–116

17.	सेब, नाशपाती, गुठलीदार फल (आड़ू, प्लम, खुमानी एवं बादाम)	117—124
18.	पुष्प उत्पादन तकनीक जरबेरा, ग्लैडियोलस, रजनीगंधा, गुलाब, लिलियम, दश्मिक गुलाब, गेंदा	125—134
19.	मुख्य औषधीय एवं सगंध फसलों की वैज्ञानिक खेती कैमोमिल/जर्मन चमेली, सुगंधित गुलाब, जिरेनियम, लैमनग्रास/नींबू घास, पुदीना	135—143
20.	बैकयार्ड कुक्कुट पालन	144—147
21.	पशुओं के प्रमुख संक्रामक रोग और बचाव	148—155
22.	विभिन्न मशरूम प्रजातियों की खेती से वर्षभर लाभ कमायें	156—164
23.	मशरूम बीज (स्पान) की उत्पादन तकनीकी एवं विशेषताएं	165—167
24.	समन्वित मत्स्य पालन	168—175
25.	समेकित नाशीजीव प्रबन्धन (आई.पी.एम.) के अन्तर्गत न्यूनतम साझा कार्यक्रम	176—180
26.	जैविक कृषि में पादप रोग प्रबन्धन	181—184
27.	केन्द्रीय कीटनाशी बोर्ड द्वारा अनुमोदित खरपतवारनाशी (हर्बिसाइड), कीटनाशी (इन्सेक्टिसाइड) एवं फफूँदनाशी (फन्जिसाइड) रसायनों का उपयोग	185—217
28.	किसानोपयोगी कृषि यंत्र	218—221
29.	मृदा परीक्षण एवं मृदा परीक्षण परिणामों के आधार पर उर्वरकों की गणना	222—226
30.	विभिन्न फसलों में मासिक कृषि कार्य	227—243
31.	पशुओं में स्वास्थ्य प्रबन्धन से सम्बन्धित किये जाने वाले माहवार कार्य	244—250
32.	डायरी – अक्टूबर, 2024 से जुलाई—2025 तक	251—255
33.	कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक) पर उपलब्ध साहित्यों की सूची	256
34.	विज्ञापन—घरडा केमिकल्स लिमिटेड, मुम्बई	आवरण 4
35.	विज्ञापन—यूनाइटेड फॉस्फोरस लिमिटेड (यूपीएल), मुम्बई	61
36.	विज्ञापन—क्रिस्टल क्रॉप प्रोटेक्शन लिमिटेड, हरियाणा	200
37.	विज्ञापन—टाकी सीड्स इंडिया प्राइवेट लिमिटेड, बैंगलोर	201
38.	विज्ञापन—सवाना सीड्स प्राइवेट लिमिटेड, रूद्रपुर, उत्तराखण्ड	202

उत्तराखंड–एक दृष्टि में

देश का सत्ताइसवां राज्य

राज्य का गठन	9 नवम्बर 2000
राजधानी	देहरादून (अस्थाई) भराड़ीसैण (गैरसैण), चमोली (ग्रीष्मकालीन)
कुल क्षेत्रफल	53,483 वर्ग कि.मी.
कुल वन क्षेत्र	38,000 वर्ग कि.मी.
सीमाएं	
अंतर्राष्ट्रीय	चीन, नेपाल
राष्ट्रीय	उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश
उच्च न्यायालय	नैनीताल
प्रति व्यक्ति आय (2021–2022)	2,53,832 रूपये (GSDP)
राज्य पुष्प	ब्रह्म कमल (*Saussurea obvallata*)
राज्य वन्य पशु	कस्तूरी मृग (*Moschus chrysogaster*)
राज्य वृक्ष	बुरांस (*Rhododendron arboreum*)
राज्य पक्षी	मोनाल (*Lophophorus impejanus*)
आय के प्रमुख स्त्रोत	वन संपदा, जल संसाधन, जड़ी–बूटी, पर्यटन, तीर्थाटन, खनिज सम्पदा आदि
प्रमुख खनिज	चूना पत्थर, मैग्नेसाइट, जिप्सम आदि
प्रमुख फसलें	गेहूँ, धान, जौ, मंडुवा, झंगोरा, मक्का, उर्द, मसूर, गहत, मटर, राजमा, भट्ट (काला सोयाबीन), चना, लाही व सरसों, सोयाबीन, तिल, मूँगफली, गन्ना आदि
प्रमुख फल	सेब, लीची, प्लम (आलू बुखारा), नाशपाती, माल्टा आदि
प्रमुख नदियां	भागीरथी, अलकनन्दा, मन्दाकिनी (गंगा), पिंडारी, टौन्स, यमुना, काली, नयार, भिलंगना, सरयू, रामगंगा आदि
प्रमुख पर्यटन एवं ऐतिहासिक स्थल	नैनीताल, मसूरी, पौड़ी, अल्मोड़ा, चम्पावत, रानीखेत, खिर्सू, दयारा बुग्याल, औली, खतलिंग, वेदिनी बुग्याल, फूलों की घाटी, लैंसडाउन, लाखामण्डल, चकराता, पाताल भुवनेश्वर, गंगोलीहाट, जौलजीवी, पूर्णागिरी, कटारमल, कौसानी, जागेश्वर, बागेश्वर, द्वाराहाट, सोमेश्वर, बैजनाथ, पिण्डारी ग्लेशियर आदि
प्रमुख धार्मिक तीर्थस्थल	बद्रीनाथ, केदारनाथ, गंगोत्री, यमुनोत्री, पंचकेदार, पंचबद्री, पंचप्रयाग, हरिद्वार, ऋषिकेश, हनोल, हेमकुण्ड साहिब, पूर्णागिरी, चितई, कलियर शरीफ, नानकमत्ता साहिब, रीठा साहिब, बौद्ध स्तूप, श्रीगुरू राम राय दरबार साहिब (देहरादून) आदि
प्रमुख लोकगीत एवं लोकनृत्य	झुमैलो, थड्या, चौफला, रासौ, पण्डवाणा, तांदी, भडगीत, जागर, चांचरी, छपेली, न्यूली पांडव, झोड़ा, छोलिया आदि
मौसम	ग्रीष्म काल –मार्च से जून मध्य वर्षा काल –मध्य जून से मध्य सितम्बर शीत काल –मध्य सितम्बर से फरवरी तक

उत्तराखंड की जनसंख्या (2011 की जनगणनानुसार)

कुल जनसंख्या	1,00,86,292
पुरुष	51,37,773
महिलाएं	49,48,519
लिंग अनुपात	963:1000 (महिला : पुरुष)
जनसंख्या घनत्व	189 प्रति वर्ग कि.मी.

प्रशासनिक इकाई (2023)

मण्डल	02
जिला	13
तहसील	110
उप तहसील	18
विकासखण्ड	95
न्याय पंचायत	670
ग्राम पंचायत	7,791
आबाद ग्राम (2011)	15,745
गैर आबाद ग्राम (2011)	1,048
नगर निगम (2011)	08
नगर पालिका परिषद	41
नगर पंचायत	53
छावनी परिषद	09
लोक सभा संसदीय क्षेत्र	05
राज्य सभा संसदीय क्षेत्र	03
विधान सभा क्षेत्र	70

मुख्य पर्वत शिखर

शिखर	समुद्र तल से ऊँचाई	जनपद
नंदादेवी	7816 मीटर	चमोली
कामेट	7756 मीटर	चमोली
सुनंदा देवी	7434 मीटर	चमोली–पिथौरागढ़
चौखम्बा	7138 मीटर	चमोली
त्रिशूल	7120 मीटर	चमोली
द्रोणागिरी	7066 मीटर	चमोली
पंचाचूली	6904 मीटर	पिथौरागढ़
नंदाकोट	6861 मीटर	पिथौरागढ़
बंदरपूंछ	6315 मीटर	उत्तरकाशी

पंतनगर विश्वविद्यालय
–एक झलक–

कृषि एवं संबंधित विषयों में क्रांतिकारी शिक्षा, अनुसंधान तथा प्रसार की प्रतिबद्धता के साथ भारत के प्रथम कृषि विश्वविद्यालय के रूप में 17 नवम्बर, 1960 को इस विश्वविद्यालय की स्थापना की गई थी। इन क्षेत्रों में उल्लेखनीय योगदान के कारण ही पंतनगर विश्वविद्यालय को भारत व विदेशों में अग्रणी संस्था की मान्यता दी गयी है। इसके उल्लेखनीय योगदानों के प्रमाण स्वरूप भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् ने पंतनगर कृषि विश्वविद्यालय को सन् 1997 में 'सर्वश्रेष्ठ संस्था' पुरस्कार से सम्मानित किया तथा पुनः यह सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार वर्ष 2005 में भी प्राप्त हुआ है।

उत्तराखंड में कृषि के व्यावसायीकरण के लिए वर्तमान कार्यक्रम अनुसंधान और प्रसार कार्यक्रमों का राज्य की नई कृषि–नीति के अनुरूप गठन।

* विश्वविद्यालय के प्रसार एवं अनुसंधान कार्यक्रमों में उद्यान विज्ञान को सर्वाधिक प्राथमिकता।
* तराई को लीची निर्यातक क्षेत्र के रूप में विकास के लिए पंतनगर को केन्द्र बिन्दु की भूमिका।
* कृषि में जैविक खेती और जैव प्रौद्योगिकी के संवर्धन हेतु शोध एवं प्रसार कार्यक्रम।
* फलों, सब्जियों, फूलों, औषधीय एवं सगंधीय पौधों, मशरूम एवं चाय उत्पादन में कृषि विविधीकरण पर बल।
* पुष्पोत्पादन में अनुसंधान एवं प्रौद्योगिकी के विकास में पंतनगर को केन्द्र बिन्दु की भूमिका।

प्रमुख सेवाएं

* कृषि आधारित उद्योगों के प्रबंध में उद्योगों/उद्यमियों के लिए परामर्श सेवा।
* पादप/पशु चिकित्सालयों में पादप/पशु रोगों का निदान एवं उपचार।

* मृदा व जल के नमूनों का परीक्षण।
* प्रशासकों, प्रबंधकों, व्यावसायियों, उद्यमियों एवं अन्य हित धारकों हेतु प्रशिक्षण कार्यक्रम।
* भारी धातुओं, सूक्ष्मजीवों, विषाक्त पदार्थो आदि के लिए नाशक जीवनाशियों एवं औद्योगिक प्रवाहों का विश्लेषण।
* उन्नत प्रजातियों के बीज, पौध, संकर प्रजनित गायों के बछियों, मत्स्य अंगुलिकाओं, मशरूम स्पॉन, जैव उर्वरकों, जैव नाशकजीवनाशियों, प्रकाशनों आदि की उचित मूल्य पर आपूर्ति।

शैक्षिक विशेषताएं

* पूर्ण रूप से आवासीय विश्वविद्यालय, जिसके अन्तर्गत 8 महाविद्यालय क्रमशः कृषि, गृह विज्ञान, पशुचिकित्सा एवं पशुपालन विज्ञान, आधारभूत विज्ञान तथा मानविकी, प्रौद्योगिकी, मत्स्य विज्ञान, स्नातकोत्तर अध्ययन एवं कृषि व्यवसाय प्रबन्धन स्थापित।
* अखिल भारतीय एवं विश्वविद्यालय द्वारा संचालित प्रतियोगी परीक्षाओं द्वारा प्रवेश।
* 62 विभागों द्वारा संचालित 14 स्नातक, 118 (65+53) स्नातकोत्तर पाठ्यक्रमों में अध्ययन की सुविधा।

स्नातक कार्यक्रम : कृषि, गृह विज्ञान, पशुचिकित्सा विज्ञान, मत्स्य विज्ञान, फूड टेक्नोलोजी, कृषि अभियांत्रिकी, सिविल अभियांत्रिकी, इलेक्ट्रीकल अभियांत्रिकी, कम्प्यूटर अभियांत्रिकी, इलेक्ट्रॉनिक्स एवं संचार अभियांत्रिकी, मैकेनिकल अभियांत्रिकी, उत्पादन अभियांत्रिकी, सूचना प्रौद्योगिकी, बायो–टैक्नोलोजी अभियांत्रिकी।

स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम : कृषि में 11, आधारभूत विज्ञान में 12, गृह विज्ञान में 04, मत्स्य विज्ञान में 03, प्रौद्योगिकी में 14, पशुचिकित्सा एवं पशुपालन विज्ञान में 18, कृषि व्यवसाय प्रबन्धन में 02 (एम.बी.ए.)।

पी.एच.डी. कार्यक्रम : कृषि में 11, पशुचिकित्सा एवं पशुपालन विज्ञान में 16, आधारभूत विज्ञान में 12, गृह विज्ञान में 03, प्रौद्योगिकी में 10, मत्स्य विज्ञान में 01।

* स्नातक पाठ्यक्रमों में पारम्परिक ज्ञान के साथ ग्रामीण कार्य अनुभव को प्राथमिकता।
* व्यावहारिक पाठ्यक्रमों के माध्यम से 'पढ़ाई के साथ–साथ कमाओं' कार्यक्रम को शुरू करने वाला पहला कृषि विश्वविद्यालय।
* विभिन्न विषयों में नवीनतम ज्ञान देने के लिए स्नातक एवं स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम संशोधित/परिवर्धित।

सुविधाएं

* 3 लाख पुस्तकें, 1500 पत्रिकाओं, सी.डी.रोम, ई–मेल और इन्टरनेट कनेक्टिविटी से युक्त अच्छा पुस्तकालय।
* सुसज्जित साधनों एवं सुविधाओं से सम्पन्न 17 छात्रावास और खेलकूद की सुविधाओं एवं शिक्षणेत्तर तथा पाठ्यक्रम आधारित कार्यकलापों की व्यवस्था।
* विद्यार्थियों के सेवायोजन के लिए कैम्पस साक्षात्कार।

प्रमुख तकनीकें एवं शोध परिदृश्य

* विश्वविद्यालय द्वारा विकसित फसलों, सब्जियों, चारा फसलों, फूलों और फलों की उन्नत किस्मों के उच्च कोटि के बीजों का उत्पादन एवं वितरण।
* जैव तकनीकों के प्रयोग से फसल एवं पशु उन्नयन तथा रोग, नाशकजीव एवं सूखा प्रतिरोधी हेतु फसलों में ट्रांसजेनिक प्रजनन।
* पशु जैव प्रौद्योगिकी, साल्मोनेला के लिए नई वैक्सीन, भ्रूण स्थानान्तरण तकनीक, कृत्रिम दूध का परीक्षण, गर्भधारण निदान, एक्यूपंक्चर और पशुचिकित्सा एवं पशुपालन विज्ञान में अन्य नवीन खोजें।

* 15–20 टन से अधिक उपज की क्षमता वाली उच्च सघन आम की बागवानी, अमरूद में फलत–नियंत्रण तथा अन्य फलों के उत्पादन के लिए भी तकनीकें उपलब्ध।
* मत्स्यपालन विज्ञान में प्रजनन तथा समेकित मछली–पालन, जलाशय मछली पालन, शीतजलीय मछली पालन हेतु तकनीकों का विकास।
* प्राकृतिक रेशा सम्मिश्रण और प्राकृतिक रंजक की तकनीकों के प्रयास से परिधान एवं वस्त्र उद्योग में योगदान।
* खेत की तैयारी, जीरो टिलेज, रोपण, गहाई एवं कृषि कार्यो के लिए विविध प्रकार के यंत्रों का विकास।
* मृदा, सिंचाई जल एवं ऊर्जा प्रबंध प्रौद्योगिकी का विकास।
* फसल अवशेष प्रबंध एवं चारे को अधिक पोषक बनाना।
* कृषि और संबंधित विषयों में कटाई के बाद की प्रौद्योगिकी, खाद्य प्रौद्योगिकी तथा खाद्य एवं पोषणौ के क्षेत्र में तकनीकें विकसित।
* कृषि के लिए फसलों, सब्जियों, फलों, औषधीय एवं सगंधी पौधों, पशुपालन, मृदा और जल संरक्षण, वानिकी, कृषि वानिकी, मशरूम, मत्स्य विज्ञान इत्यादि से संबंधित उत्पादन एवं प्रबंध तकनीकों का विकास।

अनुसंधान हेतु प्रमुख साधन एवं सुविधाएं

* विश्वविद्यालय के प्रत्येक महाविद्यालय में सुविधा सम्पन्न प्रयोगशालाएं।
* फार्म पर बड़े पैमाने पर प्रजनक एवं आधारीय बीज उत्पादन कार्यक्रम।
* उत्तरी भारत में पादप आनुवांशिक जननद्रव्यों के संग्रहण एवं संरक्षण हेतु पादप आनुवांशिक संसाधन केन्द्र स्थापित।
* मुख्य परिसर में फसलों, पशुधन, कुक्कुट, मत्स्य–पालन, फलों एवं सब्जियों, पुष्प, औषधीय एवं सगन्धीय पौधों, मशरूम तथा कृषि अभियांत्रिकी में अनुसंधान हेतु सर्वसाधन सम्पन्न अनुसंधान केन्द्र
* लोहाघाट एवं मझेड़ा में पर्वतीय कृषि संबंधी अनुसंधान के लिए विकसित एवं सुविधायुक्त परिसर।
* पटवाडागर में बॉयोटैक्नोलोजी एवं वैक्सीन संस्थान।

किसानोपयोगी सूचना एवं तकनीकों का प्रसार कार्यकलाप

* कृषि विज्ञान केन्द्रों के माध्यम से कृषकों को परामर्श एवं प्रशिक्षण।
* विश्वविद्यालय परिसर में वर्ष में दो बार अखिल भारतीय किसान मेला एवं कृषि उद्योग प्रदर्शनी तथा सभी क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्रों/कृषि विज्ञान केन्द्रों पर किसान दिवसों का आयोजन।
* प्रति वर्ष सरकारी एवं सार्वजनिक उपक्रमों के प्रतिनिधियों, अधिकारियों, किसानों एवं बेरोजगार युवकों तथा महिला कृषकों के लिए 70 पाठ्यक्रमों का आयोजन।
* रेडियो एवं दूरदर्शन प्रसारण, मासिक पत्रिकाओं (अंग्रेजी में 'इंडियन फार्मर्स डाइजेस्ट' एवं हिन्दी में 'किसान भारती') और व्यावसायिक पुस्तकों के माध्यम से प्रौद्योगिकी का हस्तान्तरण तथा राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय कृषि प्रदर्शनियों में सहभागिता।

सुविधाएं

* मीडिया उत्पादन एवं सेवाओं हेतु सभी उपकरणों से सुसज्जित संचार केन्द्र।
* साधन सम्पन्न पादप एवं पशु चिकित्सालय।
* किसानों के लिए हेल्प लाइन सहित सिंगल विंडो सर्विस' के रूप में कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र।
* प्रशिक्षण के लिए साधन संपन्न फार्म एवं प्रयोगशालाएं।

विश्वविद्यालय के प्रशासनिक पदाधिकारी

पदनाम	नाम	कार्यालय	मो.न.
कुलपति	डा. मनमोहन सिंह चौहान	05944– 233333 233500 (फैक्स)	7500122224
कुलपति के निजी सविच	श्री वी.एस. पंवार	तदैव	7055070333
कुलसचिव	डा. दीपा विनय	233640	9412996707
नियंत्रक	श्रीमती आभा गर्खाल	233327	9997441646
नियंत्रक के वैयक्तिक सहायक	श्री आर.एस. वर्मा	233327	6399207676
निदेशक प्रशासन एवं अनुश्रवण	श्री बी.एस. चलाल (पी.सी.एस.)	233360, 233695	7248066777
अपर निदेशक प्रशासन एवं अनुश्रवण	डा. विवेकानंद	233360, 233695	7500241414
अधिष्ठाता, कृषि महाविद्यालय	डा. एस.के. कश्यप	233632	7500241487
अधिष्ठाता, पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान महाविद्यालय	डा. ए.एच. अहमद	233347	9410111639
अधिष्ठात्री, प्रौद्योगिकी महाविद्यालय	डा. अलकनंदा अशोक	233338	9654414485
अधिष्ठाता, मत्स्य विज्ञान महाविद्यालय	डा. अवधेश कुमार	233377	9411160102
अधिष्ठात्री, गृह विज्ञान महाविद्यालय	डा. अलका गोयल	233637	8218618021
अधिष्ठाता, विज्ञान एवं मानविकी महाविद्यालय	डा. संदीप अरोरा	233374	7055470555
अधिष्ठाता, कृषि व्यवसाय प्रबंधन महाविद्यालय	डा. आर.एस. जादौन	233884	7500241410
अधिष्ठाता, स्नातकोत्तर अध्ययन महाविद्यालय	डा. के.पी. रावेरकर	233326	7817005212
अधिष्ठाता, छात्र कल्याण	डा. ए.एस. जीना	233536	7500546157
निदेशक शोध केन्द्र	डा. ए.एस. नैन	233363	8475001125
निदेशक प्रसार शिक्षा	डा. जितेन्द्र क्वात्रा	233336	7500241509
निदेशक प्रसार शिक्षा के व्यक्तिक सहा0	श्री सुभाष चन्द्र टम्टा	233336	9528814687
निदेशक संचार केन्द्र	डा. जे.पी. जायसवाल	–	9411159751
मुख्य कार्मिक अधिकारी	श्री बी.एस. चलाल (पी.सी.एस.)	233623	7248066777
अपर मुख्य कार्मिक अधिकारी	डा. गोहर ताज	233623	9411851713
संस्थापनाधिकारी	डा. पी.वी. सिंह	233495	9368234156
निदेशक सेवायोजन एवं परामार्श	डा. एम.एस. नेगी	233642	9412370194
संयोजक प्रवेश	डा. राजीव सिंह	233407	7055621242
प्रभारी अधिकारी, एटिक	डा. संजय चौधरी	234810, 235580	9412162673

उत्तराखण्ड में स्थित कृषि विज्ञान केन्द्र

1. डा. जितेन्द्र क्वात्रा 7500241509
   प्रभारी अधिकारी
   कृषि विज्ञान केन्द्र, काशीपुर
   जनपद–ऊधम सिंह नगर
2. डा. सी. तिवारी 7500241505
   प्रभारी अधिकारी
   कृषि विज्ञान केन्द्र, ज्योलीकोट
   जनपद–नैनीताल
3. डा. दीपाली टी. पाण्डेय 8958737598
   प्रभारी अधिकारी
   कृषि विज्ञान केन्द्र, लोहाघाट
   जनपद–चम्पावत
4. डा. आर.के. शर्मा 9412995904
   प्रभारी अधिकारी
   कृषि विज्ञान केन्द्र, मटेला
   जनपद–अल्मोड़ा
5. डा. एस.एस. सिंह 9761969696
   प्रभारी अधिकारी
   कृषि विज्ञान केन्द्र, ग्वालदम
   जनपद–चमोली
6. डा. पुरूषोत्तम कुमार 8475002233
   प्रभारी अधिकारी
   कृषि विज्ञान केन्द्र, धनौरी
   जनपद–हरिद्वार
7. डा. ए.के. शर्मा 8475002277
   प्रभारी अधिकारी
   कृषि विज्ञान केन्द्र, ढ़करानी
   जनपद–देहरादून
8. डा. संजय सचान 9450410994
   प्रभारी अधिकारी
   कृषि विज्ञान केन्द्र, जाखधार
   जनपद–रूद्रप्रयाग
9. डा. जी.एस. बिष्ट 9412344527
   प्रभारी अधिकारी
   कृषि विज्ञान केन्द्र, गैना–एंचौली
   जनपद–पिथौरागढ़
10. प्रभारी अधिकारी 01376–252101
    कृषि विज्ञान केन्द्र, रानीचौरी,
    जनपद–टिहरी गढ़वाल
11. प्रभारी अधिकारी 01348–226076
    कृषि विज्ञान केन्द्र, भरसार
    वाया चिपलघाट, जनपद–पौड़ी गढ़वाल
12. प्रभारी अधिकारी 01371–237198
    कृषि विज्ञान केन्द्र, चिन्यालीसैड़,
    जनपद–उत्तरकाशी
13. प्रभारी अधिकारी 05963–255150
    कृषि विज्ञान केन्द्र,
    काफलीगैर,
    जनपद–बागेश्वर

पंतनगर की किसानोपयोगी मासिक पत्रिकाएं

किसान भारती एवं इंडियन फार्मर्स डाइजेस्ट

पत्रिका का शुल्क नियंत्रक, गोविन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, पंतनगर के नाम बना बैंक ड्राफ्ट जो स्टेट बैंक (कोड 1133)/यूको बैंक (कोड 678)/पी.एन. बी. (कोड 4446), पंतनगर पर देय हो, अथवा मनीआर्डर द्वारा भी व्यवसाय प्रबंधक, गो.ब. पंत कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, पंतनगर–263145 को भेजकर सदस्यता ग्रहण की जा सकती है। चैक से चन्दा स्वीकार्य नहीं है। ग्राहक बनने पर पत्रिका डाक से ''फ्रेंकिंग के प्रमाण पत्र'' के अन्तर्गत भेजी जाती है और सम्पूर्ण साधारण डाक व्यय विश्वविद्यालय द्वारा वहन किया जाता है।

प्रकाशित होने वाले लेख

- ❖ कृषि एवं कृषि के विभिन्न आयाम
- ❖ औषधीय खेती
- ❖ मशरूम उत्पादन
- ❖ फल-फूल उत्पादन
- ❖ पशु पालन
- ❖ मुर्गी पालन
- ❖ मत्स्य पालन

वार्षिक शुल्क	₹ 150.00
5 वर्षीय शुल्क	₹ 675.00
10 वर्षीय शुल्क	₹ 1200.00
15 वर्षीय शुल्क	₹ 1800.00

संपर्क सूत्र :
व्यवसाय प्रबंधक
गोविन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिक
विश्वविद्यालय, पंतनगर– 263 145
ऊधम सिंह नगर, उत्तराखण्ड
मो. 7500241751

विश्वविद्यालय के अनुसंधान केन्द्र

मुख्यालय पंतनगर

1. संयुक्त निदेशक **7817005215**
   नारमन ई. बोरलॉग
   फसल अनुसंधान केन्द्र
2. संयुक्त निदेशक **8475008884**
   मशरूम अनुसंधान एवं
   प्रशिक्षण केन्द्र
3. संयुक्त निदेशक 05944–233055
   आदर्श पुष्प विज्ञान केन्द्र **7500241434**
4. संयुक्त निदेशक **7817005215**
   प्रजनक बीज उत्पादन केन्द्र
5. प्रभारी अधिकारी **7500241512**
   सब्जी अनुसंधान केन्द्र
6. संयुक्त निदेशक **7500241503**
   औषधीय पौध अनुसंधान
   एवं विकास केन्द्र
7. संयुक्त निदेशक **7900280111**
   उद्यान अनुसंधान केन्द्र
8. संयुक्त निदेशक **8279436339**
   कृषि वानिकी अनुसंधान केन्द्र
9. संयुक्त निदेशक **9456345516**
   मधुमक्खी अनुसंधान
   एवं प्रशिक्षण केन्द्र

मुख्यालय से बाहर

1. प्रभारी अधिकारी **7500241511**
   गन्ना अनुसंधान केन्द्र, काशीपुर
   जनपद–ऊधम सिंह नगर
2. प्रभारी अधिकारी **9410187299**
   ग्रामीण जैव सम्पदा केन्द्र
   (खन्ना फार्म), भगवानपुर
   जनपद– ऊधम सिंह नगर
3. प्रभारी अधिकारी **7500241431**
   कृषि अनुसंधान केन्द्र, मझेड़ा
   जनपद–नैनीताल
4. प्रभारी अधिकारी **8958737598**
   अनुसंधान केन्द्र, सुई, लोहाघाट
   जनपद–चम्पावत
5. प्रभारी अधिकारी **9761969696**
   जे.के.एच.आर.वी.आई.ए.आर. केन्द्र,
   केहड़गाँव, स्याल्दे
   जनपद–अल्मोड़ा
6. प्रभारी अधिकारी **9917747271**
   अनुसंधान एवं प्रशिक्षण केन्द्र, पौड़ी
   जनपद– पौड़ी गढ़वाल

विश्वविद्यालय द्वारा विकसित फसलों की उन्नत किस्में

गेहूँ : कल्याण सोना (एस. 227), सोनालिका (आर.आर. 21), यू.पी. 301, यू.पी. 310, यू.पी. 319, यू.पी. 215, यू.पी. 262, यू.पी. 368, यू.पी. 115, यू.पी. 2003, यू.पी. 2121, यू.पी. 2113, यू.पी. 1109, यू.पी. 2338, यू.पी. 2382, यू.पी. 2425, यू.पी. 2565, यू.पी. 2526, यू.पी. 2554, यू.पी. 2572, यू.पी. 2584, यू.पी. 2628, यू.पी. 2684, यू.पी. 2748, यू.पी. 2784, यू.पी. 2785, यू.पी. 2855, यू.पी. 2844, यू.पी. 2865, यू.पी. 2903, यू.पी. 2938, यू.पी. 2944

धान : आई आर 24, प्रसाद, गोविन्द, पंत धान 4, मनहर, पंत धान 6, पंत धान 10, पंत धान 11, पंत धान 12, पंत संकर धान 1, पंत मझेड़ा 7, पंत धान 16, पंत सुगन्ध धान 15, पंत सुगन्ध धान 17, पंत संकर धान 3, पंत धान 18, पंत धान 19, पंत सुगन्ध धान 21, पंत धान 22, पंत धान 23, पंत सुगन्ध धान 25, पंत सुगन्ध धान 27, पंत बासमती 1, पंत बासमती 2, पंत धान 24, पंत धान 26, पंत धान 28

मक्का : प्रोटीना, तरूण, नवीन, श्वेता, कंचन, डी. 765, सूर्या, गौरव (डी. 981), अमर (डी. 941), प्रगति (डी. 994), पंत संकर मक्का 1, पंत संकर मक्का 2, पंत संकुल मक्का 3, पंत संकर मक्का 4, पंत संकर मक्का 5, पंत संकर मक्का 6, पंत पापकार्न 1, पंत कम्पोजिट मक्का 4

गन्ना : को. पंत 84211, को. पंत 84212, को. पंत 90223, को. पंत 94211, को. पंत 96219, को. पंत 97222, को. पंत 99214, को. पंत 03220, को. पंत 05224, को. पंत 12221, को. पंत 12226, को. पंत 13224

अरहर : यू.पी.ए.एस. 120, पंत अरहर 291, पंत अरहर 3, पंत अरहर 6, पंत अरहर 7

चना : पंत जी. 114, पंत जी. 186, डब्ल्यू.सी.जी. 1 (सद्भावना), डब्ल्यूसी.जी. 2 (सूर्या), डब्ल्यूसी.जी. 10, पंत काबुली चना 1, पंत काबुली चना 2, पंत चना 3, पंत चना 4, पंत चना 5, पंत चना 6, पंत चना 7, पंत चना 8, पंत चना 9, पंत चना 10

मसूर : पंत एल 406, पंत एल 234, पंत एल 639, पंत एल 4, पंत एल 5, पंत एल 6, पंत एल 7, पंत एल 8, पंत एल 9, पंत एल 11, पंत एल 12, पंत एल 14, पंत एल 15

मूँग : पंत मूँग 1, पंत मूँग 2, पंत मूँग 3, पंत मूँग 4, पंत मूँग 5, पंत मूँग 6, पंत मूँग 7, पंत मूँग 8, पंत मूँग 9

उर्द : पंत उर्द 19, पंत उर्द 30, पंत उर्द 31, पंत उर्द 35, मानिक्य, पंत उर्द 40, पंत उर्द 6, पंत उर्द 7, पंत उर्द 8, पंत उर्द 9, पंत उर्द 10, पंत उर्द 11, पंत उर्द 12

मटर : पंत पी. 5, पंत पी. 13, पंत पी. 14, पंत पी. 25, पंत पी. 42, पंत पी. 74, पंत पी. 86, पंत पी. 108, पंत पी. 155, पंत पी. 157, पंत पी. 243, पंत पी. 250, पंत पी. 347, पंत पी. 96, पंत पी. 195, पंत पी. 462, पंत पी. 484, पंत पी. 497, पंत पी. 498, पंत पी. 501

सोयाबीन : ब्रैग, अंकुर, अलंकार, शिलाजीत, पी.के. 262, पी. के. 327, पी.के. 308, पी.के. 416, पी.के. 472, पी.के. 564, पंत सोयाबीन 1024, पंत सोयाबीन 1042, पंत सोयाबीन 1029, पंत सोयाबीन 1092, पंत सोयाबीन 1241, पी.आर.एस. 1, पंत सोयाबीन 1347, पंत सोयाबीन 1225, पंत सोयाबीन 19, पंत सोयाबीन 20, पंत सोयाबीन 21, पंत सोयाबीन 22, पंत सोयाबीन 23, पंत सोयाबीन 24, पंत सोयाबीन 25, पंत सोयाबीन 26, पंत सोयाबीन 27, पंत सोयाबीन 1670

तोरिया : पी.टी. 30, पी.टी. 303, पी.टी. 507, पी.टी. 2002–25 (उत्तरा), पंत हिल तोरिया 1, पी.टी. 508

पीली सरसों : पंत पीली सरसों 1, पंत श्वेता, पंत गिरजा, पंत पीली सरसों 2

राई : क्रान्ति, कृष्णा, पंत राई 19, पंत राई 20, पंत राई 21, पंत राई 22

करण राई : किरन

जौ : पी.आर.बी. 502, पी.आर.बी. 701, यू.पी.बी. 1008

मंडुवा (रागी) : पी.ई.एस. 176, पी.ई.एस. 110, पंत मंडुवा 3, पी.आर.एम.1, पी.आर.एम. 2

काकुन (कौणी) : पंत सिटेरिया 4, पी.आर.के. 1

प्रोसो मिलेट (चीना) : पी.आर.सी. 1

रामदाना : पी.आर.ए. 1, पी.आर.ए. 2, पी.आर.ए. 3

झंगोरा : पी.आर.जे. 1

कुट्टू : पी.आर.बी. 1

राइसबीन (नौरंगी) : पी.आर.आर. 1, पी.आर.आर. 2

चारा फसलें:

चरी : यू.पी. चरी 1, यू.पी. चरी 2, यू.पी. चरी 3, यू.पी. चरी 4, यू.पी. चरी 5, यू.पी. चरी 6, यू.पी. चरी 7, यू.पी. चरी 8, सी. एस.एच. 20 (एम.एफ.), सी.एस.एच. 24 (एम.एफ.), सी.एस. एच. 40 (एफ.), सी.एस.वी. 35 (एफ), पंत चरी 9, पंत चरी 10, पंत चरी 11, पंत चरी 12, पंत चरी 13, पंत चरी 14, पंत चरी 15, सी.एच.एस.43एफ, पंत संकर चारा मक्का 1

लोबिया : यू.पी.सी. 5286, यू.पी.सी. 5287, यू.पी.सी. 287, यू.पी.सी. 4200, यू.पी.सी. 8705, यू.पी.सी. 9202, यू.पी.सी. 607, यू.पी.सी. 618, यू.पी.सी. 622, यू.पी.सी. 621, यू.पी.सी. 625, यू.पी.सी. 628, पंत लोबिया 1, पंत लोबिया 2, पंत लोबिया 3, पंत लोबिया 4, पंत लोबिया 5, पंत लोबिया 7

जई : यू.पी.ओ. 94, यू.पी.ओ. 212, पंत चारा जई 3, पंत चारा जई 4

बरसीम : यू.पी.बी. 110

ढैंचा : पंत ढैंचा 1 (पी एस.ई.एस. 1)

कपास : श्यामली, प्रमुख, लोहित

चुकन्दर : पंत एस. 10

विश्वविद्यालय द्वारा विकसित औद्यानिक एवं सब्जी फसलों की उन्नत किस्में

नाशपाती : पंत नाशपाती 3, पंत नाशपाती 17, पंत नाशपाती 18
अमरूद : पंत प्रभात
आवला : पंत आवला 1
पपीता : पंत पपीता 1, पंत पपीता 2
बेल : पंत अपर्णा, पंत शिवानी, पंत सुजाता, पंत उर्वशी
नींबू : पंत लेमन 1
करौंदा : पंत मनोहर, पंत सुदर्शन, पंत सुवर्णा
आड़ू : पंत आड़ू 1
आलूबुखारा : पंत प्लम 1, एफएलए 12
कटहल : पंत महिमा, पंत गरिमा
आम : पंत सिन्दूरी, पंत चन्द्रा
ग्लैडियोलस : सुभागिनी
मिर्च : पंत सी 1
बैंगन : पंत सम्राट, पंत ऋतुराज, पंत संकर बैगन 1, पंत बैगन 4
टमाटर : पंत बहार, पंत टी. 3, पंत पॉलीहाउस टमाटर 2, पंत पॉलीहाउस हाईब्रिड टमाटर 1
फूलगोभी : पंत शुभ्रा, पंत गोभी 2, पंत गोभी 3, पंत गोभी 4
फ्रांसबीन : पंत अनुपमा, पंत बीन 2
सब्जी मटर : पंत उपहार, पंत मटर 2, पंत सब्जी मटर 3, पंत सब्जी मटर 4, पंत सब्जी मटर 5, पंत सब्जी मटर 6
धनिया : पंत हरितमा
करेला : पंत करेला 1, पंत करेला 3, पंत करेला 2
तोरई : पंत तोरई 1, पंत चिकनी तोरई 1
लौकी : पंत संकर लौकी 1, पंत संकर लौकी 2, पंत लौकी 3, पंत लौकी 4
खीरा : पंत खीरा 1, पंत संकर खीरा 1, पंत पार्थीनोकार्पिक खीरा 2, पंत पार्थीनोकार्पिक खीरा 3
ककड़ी : पंत ककड़ी 1
लहसुन : पंत लोहित
हल्दी : पंत पीताभ
सौफ : पंत मधुरिका
मेथी : पंत रागिनी
काली मिर्च : पंत कृष्णा
अजवाइन : पंत रूचिका
आलू : कुफरी किरन, कुफरी संगम, कुफरी गंगा
पेठा : पंत पेठा 1
शिमला मिर्च : पंत रानीचौरी शिमला मिर्च 1
कृषिवानिकी/वृक्ष
पॉपलर : पंत पॉपलर 5, आई.एफ.पी–बी.पी.ए.–30, आई.एफ.पी.–बी.पी.ए.–33, आई.एफ.पी–बी.पी.ए.–34

सब्जी अनुसंधान केन्द्र, पंतनगर

उच्च गुणवत्तायुक्त सब्जियों के प्रजनक बीज

मटर : पंत सब्जी मटर 3 व अर्किल, **धनिया :** पंत हरितिमा, **फ्रासबीन :** पंत अनुपमा
बैगन : पंत सम्राट व पंत ऋतुराज, **फूलगोभी :** पंत शुभ्रा, **मिर्च :** पंत सी 1
टमाटर : पंत टी 3, **भिण्डी :** परभनी क्रान्ति, **मूली :** जापानी सफेद, **पालक :** आल ग्रीन
लौकी : पंत लौकी, **खीरा :** पंत खीरा, **हल्दी :** पंत पीताभ इत्यादि।

प्रभारी अधिकारी,
सब्जी अनुसंधान केन्द्र
गोविन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
पंतनगर – 263 145, जिला– ऊधम सिंह नगर
मो.न. 7500241512,

खाद्यान्न फसलें

गेहूँ

डा. जे.पी. जायसवाल, डा. स्वाती, डा. अनिल कुमार, डा. राजीव कुमार, एवं डा. दीपशिखा

समस्त खाद्यान्नों में गेहूँ का प्रमुख स्थान है। गेहूँ की अधिक पैदावार प्राप्त करने के लिए संस्तुत उन्नत किस्मों, गुणवत्ता बीज एवं उचित फसल प्रबन्धन अपनाना चाहिए। गेहूँ के उत्पादन को बढ़ाने में गेहूँ की उन्नत किस्में जो कि अधिक पैदावार की क्षमता से युक्त हैं और रोग रोधी हैं, का बहुत महत्वपूर्ण योगदान होता है। ये किस्में भारत वर्ष के विभिन्न जलवायवीय क्षेत्रों के लिए वहाँ की परिस्थितियों के अनुकूल विकसित की जाती हैं क्योंकि प्रत्येक क्षेत्र की अपनी विशेषता होती है यथा भूमि का प्रकार तापमान, वर्षा आदि। अतः कृषक को उन्हीं प्रजातियों को अपने क्षेत्र में अपनाना चाहिए जहाँ के लिए उन्हें अनुमोदित किया गया है। मैदानी क्षेत्रों में सामान्यतया सिंचित दशा में समय से बोई गयी किस्में 140–150 दिन में पक जाती हैं तथा अच्छे प्रबन्धन में कृषक 60 कुन्तल प्रति हैक्टर तक उपज प्राप्त कर सकते हैं। कुछ किस्मों की उत्पादन क्षमता 60–70 कुन्तल प्रति हैक्टर है जिनसे अच्छे फसल प्रबन्धन और फसल वृद्धि हेतु अनुकूल परिस्थितियों में यह उपज प्राप्त की जा सकती है। सिंचित दशा में विलम्ब से बुवाई की जाने वाली किस्में 120–125 दिनों में पक कर तैयार हो जाती हैं जिनसे 40–50 कुन्तल प्रति हैक्टर उपज प्राप्त होती है। किन्तु अच्छे प्रबन्धन द्वारा अनुकूल वातावरण की दशा में 50 कुन्तल प्रति हैक्टर से भी अधिक उपज प्राप्त की जा सकती है।

पहाड़ी क्षेत्रों में गेहूँ की अधिकांश खेती असिंचित दशा में होती है और इस दशा में अच्छे प्रबन्धन से 25–30 कुन्तल प्रति हैक्टर (0.5–0.6 कुन्तल/नाली) तथा सिंचित दशा में 35–40 कुन्तल/हैक्टर (0.7–0.8 कुन्तल/नाली) उपज प्राप्त की जा सकती है। पहाड़ी क्षेत्रों में असिंचित दशा में गेहूँ की फसल 165–170 दिनों में तथा सिंचित दशा में 160–165 दिनों में पक जाती है। इसी क्रम में भारत वर्ष को गेहूँ में शोध तथा प्रजातियों के विकास की दृष्टि से पाँच क्षेत्रों में बाटा गया है, इन क्षेत्रों के लिए संस्तुत नवीन तथा उपयुक्त किस्मों का विवरण निम्नवत् है :

सारणी 1 : भारत वर्ष में गेहूँ के क्षेत्र, बुवाई की दशा एवं संस्तुत किस्में

क्षेत्र/प्रदेश	बुवाई की दशा	संस्तुत प्रजातियाँ
उत्तरी पर्वतीय क्षेत्र जम्मू–कश्मीर (जम्मू एवं कठुवा जनपदों के अतिरिक्त), हिमांचल प्रदेश (पोंटा घाटी एवं ऊना के अतिरिक्त), उत्तराखण्ड में तराई क्षेत्र के अतिरिक्त, सिक्किम, पश्चिम बंगाल की पहाड़ियाँ, अरूणाचल प्रदेश आदि।	सिंचित तथा असिंचित, समय पर बुवाई	वीएल 953, वीएल 907, एचएस 507, एचएस 240, यूपी 2572**, एचडब्ल्यूपी 349
	असिंचित, समय पूर्व बुवाई	एचएस 542, एचपीडब्ल्यू 251, वीएल 829, वीएल 616
	असिंचित, विलम्ब से बुवाई	एचएस 490, वीएल 892, एचएस 207, एसएस 295
	असिंचित, उच्च पर्वतीय क्षेत्र	वीएल 832, एचएस 365

उत्तरी पश्चिमी मैदानी क्षेत्र जम्मू–कश्मीर (जम्मू एवं कठुवा जनपद), हिमांचल प्रदेश (पोंटा घाटी एवं ऊना जनपद), पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, (झांसी संभाग के अतिरिक्त), उत्तराखण्ड के तराई वाले क्षेत्र, राजस्थान (कोटा एवं उदयपुर संभाग के अतिरिक्त), दिल्ली	सिंचित, समय से बुवाई	डीबी डब्ल्यू. 187, पीबी डब्ल्यू 826, एचडी 3406, एचडी 3237, एचडी 3086, डब्ल्यूएच 1105, एचडी 2967, डीपीडब्ल्यू 621–50, पीबीडब्ल्यू 502, डब्ल्यूएच 542, यूपी 2554*, यूपी 2628*, यूपी 2784*, यूपी 2855*, यूपी 2903*, यूपी 2938*
	सीमित सिंचाई, समय से बुवाई	एचडी 3043, डब्ल्यूएच 1142, एच.डी. 3369
	सिंचित, विलम्ब से बुवाई	पीबीडब्ल्यू 752, डब्ल्यूएच 1124, एचडी 3059 पीबीडब्ल्यू 590, यूपी 2565*, यूपी 2526*, यूपी 2865*, यूपी 2844*, यूपी 2944*, डीबीडब्ल्यू 173, डीबीडब्ल्यू 71, राज 3765, राज 3077
	असिंचित, समय से बुवाई	पीबीडब्ल्यू 644, डब्ल्यूएच 1080, पीबीडब्ल्यू 396, पीबीडब्ल्यू 299, पीबीडब्ल्यू 175, सी 306
उत्तरी पूर्वी मैदानी क्षेत्र पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखण्ड, पश्चिम बंगाल के मैदानी क्षेत्र, उड़ीसा एवं असम	सिंचित, समय से बुवाई	एच.डी. 3411, डीबीडब्ल्यू 187, एनडब्ल्यू 5054, सीबीडब्ल्यू 38, राज 4120, एचयूडब्ल्यू 468, के 9107, के 1006, एचडी 2967, यूपी 262, डीबीडब्ल्यू 39, एचडी 2733, एचडी 2824
	सीमित सिंचाई, समय से बुवाई	एचआई 1612,
	सिंचित, विलम्ब से बुवाई	एचडी 3118, डीबीडब्ल्यू 107, एचयूडब्ल्यू 234, एनडब्ल्यू 1014, एनडब्ल्यू 2026, पीबीडब्ल्यू 524, डीबीडब्ल्यू 14
	असिंचित, समय से बुवाई	के 1317, एचडी 2888, एमएसीएस 6145, के 8027 के 9465, एचयूडब्ल्यू 528
मध्य क्षेत्र मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, गुजरात, उत्तर प्रदेश का झांसी संभाग, राजस्थान के कोटा एवं उदयपुर संभाग	सिंचित, समय से बुवाई	एचआई 1544, जीडब्ल्यू 366, जीडब्ल्यू 190, एचडी 2236, एचआई 8498(डी), एचआई 8737(डी),
	सीमित सिंचाई, समय से बुवाई	डीबीडब्ल्यू 110,
	सिंचित, विलम्ब से बुवाई	जीडब्ल्यू 173, एमपी 1203, एचडी 2932, एचपी 4010 एचडी 2864
	असिंचित, समय से बुवाई	सी 306, सुजाता, एचडब्ल्यू 2004, एचडी 4672(डी) ए 9–30–1(डी)
प्रायद्विपीय क्षेत्र महाराष्ट्र, कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश, तमिलनाडु के मैदानी भाग एवं गोवा	सिंचित, समय से बुवाई	एचडी 3226, डीबीडब्ल्यू 168, एमएसीएस 6478, एमए सीएस 2496, डीडब्ल्यूआर 162, एचडी 2380, एमएसी एस 2846, डीडब्ल्यूआर 1006(डी)
	सीमित सिंचाई, समय से बुवाई	डीबीडब्ल्यू 93, एचआई 1620
	सिंचित, विलम्ब से बुवाई	एचडी 2501, एचडी 2932, राज 4083, पीबीडब्ल्यू 533, एचडी 2833, एचआई 977, एनआईएडब्ल्यू 34

	असिंचित, समय से बुवाई	यूएएस 375, यूएएस 446, पीबीडब्ल्यू 596, एचडी 2781, एनआई 5439, एमएसीएस 1967(डी), एमएसीएस 4028(डी), एचआई 8777(डी)
	डाईकोकम गेहूँ	एनपी 200, डीडीके 1001, डीडीके 1009
अम्लीय व लवणीय भूमि के लिए (सभी प्रदेशों के लिए)	सिंचित, समय से बुवाई	केआरएल 1–4, राज 3077, केआरएल 19, जेओबी 666, केआरएल 210, केआरएल 213

नोटः *उत्तराखण्ड के मैदानी क्षेत्रों के लिए संस्तुत, **उत्तराखण्ड के पहाड़ी क्षेत्रों के लिए संस्तुत, डी=ड्यूरम (कठुआ) गेहूँ

सारणी 2 : उत्तराखण्ड में गेहूँ के क्षेत्र एवं संस्तुत किस्में

क्षेत्र	बुवाई की दशा	संस्तुत प्रजातियाँ
मैदानी, भांवर एवं तराई	सिंचित, समय से बुवाई	यूपी 2903, यूपी 2938, यूपी 2855, यूपी 2784, यूपी 2628, डीबीडब्ल्यू 187, पीबीडब्ल्यू 826, एचडी 3406, एचडी 3086, एचडी 2967, डब्ल्यूएच 1105, डब्ल्यूएच 542, बीएल 953
	सिंचित, विलम्ब से बुवाई	यूपी 2944, यूपी 2844, यूपी 2865, यूपी 2526, यूपी 2565, डब्ल्यूएच 1124, एचडी 3059, पीबीडब्ल्यू 590, डीबीडब्ल्यू 173, डीबीडब्ल्यू 71, राज 3765, राज 3077
	असिंचित, समय से बुवाई (अक्टूबर के द्वितीय पक्ष)	पीबीडब्ल्यू 644, डब्ल्यूएच 1080, पीबीडब्ल्यू 396, पीबीडब्ल्यू 299, पीबीडब्ल्यू 175, सी 306
पर्वतीय क्षेत्र (1700 मी. से नीचे)	सिंचित, समय से बुवाई (नवम्बर का प्रथम पक्ष)	यूपी 2572, यूपी 2584, वीएल 953, वीएल 907, वीएल 804, वीएल 738, एचएस 507, एचएस 240, एचपीडब्ल्यू 349
	सिंचित, विलम्ब से बुवाई (नवम्बर का द्वितीय पक्ष)	यूपी 2572, एचएस 265, एचएस 240
	असिंचित, समय से बुवाई (अक्टूबर का प्रथम पक्ष)	यूपी 2572, वीएल 953, वीएल 616, वीएल 829
	(अक्टूबर का द्वितीय पक्ष)	वीएल 719, वीएल 804, वीएल 802, एचएस 240, एचडी 2380
पर्वतीय क्षेत्र (1700 मी. से ऊपर)	असिंचित दशा, समय से बुवाई (अक्टूबर का प्रथम पक्ष)	एचपीडब्ल्यू 42, एचएस 365

खाद एवं उर्वरक

उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करना चाहिए। मृदा परीक्षण नहीं कराया गया हो तो सिंचित दशा में समय से बुवाई के लिए धान्य फसल–चक्र में 150 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 40 कि.ग्रा. पोटाश तत्व प्रति हैक्टर तथा देर से बुवाई के लिए 120 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 40 कि.ग्रा. पोटाश तत्व प्रति हैक्टर तथा सीमित सिंचाई की दशा में 90 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 40 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर की दर से प्रयोग करें।

नाइट्रोजन की एक तिहाई एवं फॉस्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा अन्तिम जुताई के समय अथवा बुवाई के समय लाइनों में बीज से 2–3 से.मी. बगल में गहराई पर डालें। शेष नाइट्रोजन की आधी मात्रा पहली सिंचाई (20–25 दिन) के बाद तथा बची हुई नाइट्रोजन को दूसरी सिंचाई के बाद (40–45 दिन) टॉपड्रेसिंग के रूप में दें। असिंचित दशा में 60 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 30 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 20 कि.ग्रा. पोटाश तत्व को बुवाई के समय बीज के बगल में 2–3 से.मी. गहराई पर दें। मिट्टी में जिंक की कमी हो तो 20–25 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति हैक्टर जुताई के समय दें। अधिक

उपज के लिए 10 टन प्रति हैक्टर गोबर की सड़ी खाद बुवाई से 10–15 दिन पूर्व खेत में डालें।

बीज की मात्रा

समय से बुवाई हेतु 100 कि.ग्रा. एवं देर से बुवाई हेतु 125 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर प्रयोग करें।

बुवाई का समय

मैदानी क्षेत्र में देर से पकने वाली प्रजातियों की बुवाई नवम्बर के प्रथम पखवाड़े में एवं जल्दी पकने वाली प्रजातियों को नवम्बर के दूसरे पखवाड़े में बोयें। पर्वतीय क्षेत्र के सिंचित घाटियों में नवम्बर के प्रथम सप्ताह तक, असिंचित घाटियों में अक्टूबर के अन्त तक तथा ऊँचे पर्वतीय क्षेत्रों में मध्य अक्टूबर तक बुवाई करें।

सिंचाई

सिंचाई की कुल संख्या भूमि की किस्म एवं शीतकालीन वर्षा पर निर्भर करती है। सामान्यतया गेहूँ को निम्नानुसार 4–6 सिंचाई की आवश्यकता होती है:

पहली सिंचाई : शिखर जड़ प्रारम्भ होने पर (बोने से 20–25 दिन पर, परन्तु देर से बोई गयी फसल में 25–30 दिन पर)

दूसरी सिंचाई : कल्ले फूटने के समय अथवा बुवाई से 40–45 दिन पर।

तीसरी सिंचाई : गॉठ बनने की अन्तिम अवस्था अथवा बुवाई से 60–65 दिन पर।

चौथी सिंचाई : फूल आने के समय अथवा बुवाई से 80–85 दिन पर।

पॉचवी सिंचाई : दाने में दूध पड़ने के समय अथवा बुवाई से 100–105 दिन पर।

छठवी सिंचाई : दाना भरते समय अथवा बुवाई से 115–120 दिन पर।

खरपतवार नियंत्रण

गेहूँसा एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के एक साथ होने पर आइसोप्रोट्यूरान के साथ 2, 4–डी या मेटसल्फ्यूरान मिथाइल को एक साथ मिलाया जा सकता है। फिनोक्साप्रोप तथा क्लोडीनाफोप के साथ 2, 4–डी या मेटसल्फ्यूरान मिथाइल को मिलाकर प्रयोग नहीं किया जा सकता है। इनके छिड़काव में कम से कम एक सप्ताह का अन्तर होना चाहिए। जहाँ पर जंगली जई या जंगली जई एवं गेहूँसा दोनों की समस्या हो, वहाँ पर क्लोडीनाफोप प्रोपरजिल या फिनोक्साप्रोप–पी–इथाइल का प्रयोग किया जाय।

खरपतवार नियंत्रण हेतु निम्न सारणी में दिये गये रसायनों का प्रयोग करें। एक हैक्टर क्षेत्र हेतु 500–700 लीटर पानी में घोल पर्याप्त रहता है। छिड़काव के लिए फ्लैटफैन नोजल का प्रयोग करें। हर साल एक ही रसायन का उपयोग न करें। फसल–चक्र को बदलना चाहिए।

खरपतवार का नाम	रसायनों का नाम	मात्रा प्रति है. (सक्रिय रसायन)	प्रयोग करने का समय
चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार	2, 4–डी	500 ग्राम	नवम्बर माह में बुवाई करने पर 30–35 दिन में एवं देर से बुवाई करने पर 35–40 दिन में।
	मैटसल्फ्यूरान मिथाइल	4 ग्राम	बुवाई के 30–35 दिन में।
सकरी पत्ती वाले खरपतवार	आइसोप्रोट्यूरान	1.00 कि.ग्रा.	30–35 दिन में
	सल्फोसल्फ्यूरान	25 ग्राम	30–35 दिन में
	पिनोक्साडेन	40–50 ग्राम	25–30 दिन में
	क्लोडीनाफोप	60 ग्राम	30–35 दिन में
	फिनोक्साप्रोप-पी-इथाइल	100–120 ग्राम	30–35 दिन में
	पेन्डीमिथेलिन (स्टॉम्प)	1.0 कि.ग्रा.	बुवाई के तुरन्त बाद या 2–3 दिन के अन्दर

चौड़ी पत्ती एवं सकरी पत्ती वाले सभी प्रकार के खरपतवारों के लिए	मेटसल्फ्यूरान+ सल्फोसल्फ्यूरान	30 ग्राम + 2 ग्राम	बुवाई से 25–30 दिन के अन्दर
	मीजो+ आइडोसल्फ्यूरान	12 ग्राम + 24 ग्राम	बुवाई से 25–30 दिन के अन्दर

कीट नियंत्रण एवं फसल सुरक्षा

जमीन में यदि दीमक या गुजिया का प्रकोप होता है तो बुवाई से पहले क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी. दवा की 3–4 मि.ली. मात्रा को प्रति कि.ग्रा. बीज के साथ मिलाकर ही बुवाई करें। खड़ी फसल में इसका प्रकोप होने पर क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी. की 5 लीटर मात्रा प्रति हैक्टर की दर से सिंचाई के पानी के साथ प्रयोग करें। यदि माहू की औसत संख्या 5 माहू/बाली हो तो 750 मि.ली. मेटासिस्टॉक्स (ऑक्सीडिमेटॉन मिथाइल 25 ई.सी.) या मोनोक्रोटोफॉस 36 एस.एल. 1400 मि.ली. प्रति हैक्टर की दर से 500 ली. पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

फसल में चूहे का प्रकोप होने पर जिंक फास्फाइड एक भाग, सरसों का तेल एक भाग तथा 48 भाग दाना मिलाकर विषाक्त चारा बना लें। इनकी 10 ग्राम की पुड़िया बनाकर प्रति बिल में डाल कर बिल बंद कर दें।

रोग नियंत्रण

रोग का नाम	पहचान	रोकथाम
पीली गेरूई	पत्तियों की ऊपरी सतह पर पीले रंग के स्फोट कतारों में व्यवस्थित दिखते हैं।	क्षेत्र के लिए संस्तुत एवं प्रतिरोधी प्रजातियों को बोयें। रोग के लक्षण दिखने पर प्रारम्भिक अवस्था में प्रोपिकोनाजोल 25 ई.सी. अथवा टेबूकोनाजोल 250 ई.सी. 500 मि.ली. दवा 500 लीटर पानी में प्रति हैक्टर की दर से घोल बनाकर फसल पर छिड़काव करें।
भूरी गेरूई	पत्तियों की ऊपरी सतह पर गाढ़े भूरे रंग के स्फोट दिखाई पड़ते हैं।	क्षेत्र के लिए संस्तुत एवं प्रतिरोधी प्रजातियों को बोयें। रोग के लक्षण दिखने पर प्रारम्भिक अवस्था में प्रोपिकोनाजोल 25 ई.सी. अथवा टेबूकोनाजोल 250 ई.सी. 500 मि.ली. दवा 500 लीटर पानी में प्रति हैक्टर की दर से घोल बनाकर फसल पर छिड़काव करें।
झुलसा रोग	पत्तियों पर पहले छोटे गाढ़े भूरे रंग के धब्बे बनते हैं जो बाद में बड़े होकर पत्तियों के काफी भाग में फैल जाते हैं। रोग से पत्तियाँ सूख भी जाती हैं।	मैंकोजेव 2 कि.ग्रा. या प्रोपिकोनाजोल 500 मि.ली. 750 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें।
सफेद चूर्ण (पाउडरी मिल्ड्यू)	पत्ती, तने तथा बालियों पर स्फोट सफेद चूर्ण के रूप में होते हैं।	क्षेत्र के लिए संस्तुत प्रजातियों को बोयें एवं प्रोपिकोनाजोल 25 ई.सी. अथवा टेबूकोनाजोल 250 ई.सी. 500 मि.ली. दवा 500 लीटर पानी में प्रति हैक्टर की दर से घोल बनाकर फसल पर छिड़काव करें।
करनाल बन्ट	रोगी दाने आंशिक या पूर्ण रूप से काले चूर्ण में बदल जाते हैं। यह रोग बीज एवं मृदा द्वारा फैलता है।	बीज के लिए बोई गयी फसल में बाली निकलने की अवस्था पर प्रोपिकोनाजोल 25 ई.सी. अथवा टेबूकोनाजोल 250 ई.सी. 500 मि.ली. दवा 500 लीटर पानी में प्रति हैक्टर की दर से घोल बनाकर फसल पर छिड़काव करें।

पहाड़ी बन्ट या दुर्गन्धयुक्त कन्डुवा	बालियों में दाने काले रंग की गॉठों में बदल जाते हैं। बालियाँ फैली हुई सी दिखाई पड़ती हैं। सड़ी मछली सी दुर्गन्ध आती है।	बीज को जैव अभिकर्ता ट्राईकोडर्मा के 5 ग्राम अथवा कार्बोक्सिन 2 ग्राम अथवा कार्बेंडाजिम 50 डब्ल्यू.पी. 2.5 ग्राम दवा प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से शोधित करके बोयें।
अनावृत कन्डुवा (लूज स्मट)	बालियों में दाने के स्थान पर काला चूर्ण बन जाता है। हवा द्वारा इनका फैलाव अन्य बालियों पर हो जाता है।	यह रोग आन्तरिक बीज जनित है। बीज को कार्बेंडाजिम अथवा कार्बोक्सिन की 2.5 ग्रा. मात्रा/कि.ग्रा. बीज अथवा टेबूकोनाजोल 1.5 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से शोधित कर बोयें।
सेहूँ रोग (ईयर कोकल)	प्रभावित पौधों की पत्तियाँ टेड़ी–मेड़ी हो जाती हैं।बालियॉ छोटी बनी रहती हैं। दाने के स्थान पर सूत्र कृमि की छोटी–छोटी गॉठें (भूरी या काली रंग की) बन जाती है।	बीज को 2–5 प्रतिशत नमक के घोल में डुबाने से रोगी दाने पानी के ऊपर तैरने लगते हैं। इन्हें निकाल कर बाहर फेंक दें। बुवाई से पूर्व बीज साफ पानी से दो–तीन बार धो लें तथा छाया में सूखा लें।

उपज

मैदानी क्षेत्रों में उन्नत विधि से खेती कर सिंचित दशा में समय से बुवाई करने पर 55–65 कुन्तल प्रति हैक्टर तथा विलम्ब से बुवाई की दशा में 45–55 कुन्तल प्रति हैक्टर उपज प्राप्त की जा सकती है।

पर्वतीय क्षेत्रों में सिंचित दशा में 35–40 कुन्तल प्रति हैक्टर तथा असिंचित दशा में 25–30 कुन्तल प्रति हैक्टर प्राप्त की जा सकती है। पर्वतीय क्षेत्र में फसल के दौरान वर्षा होने पर असिंचित दशा में भी अच्छी उपज होती हैं।

धान के खेत में बिना जुताई गेहूँ की खेती

भारत के उत्तरी मैदानी क्षेत्रों में धान–गेहूँ एक मुख्य फसल चक्र है, जिसके अन्तर्गत लगभग तीन लाख हैक्टर भूमि में इसकी खेती होती है। इसका लगभग 50 प्रतिशत भाग उत्तर प्रदेश में ही है। सर्वेक्षण से पता चला है कि अधिकतर धान के खेतों में गेहूँ की बुवाई देर से (दिसम्बर में) हो पाती है, जिससे गेहूँ की उपज में कमी हो जाती है। धान की रोपाई के लिए लेव लगाने से भूमि कड़ी हो जाती है जिससे गेहूँ के लिए खेत तैयार करने में किसान कई जुताईयां/हैरो (6–8) करते हैं, जिससे लगभग एक से दो सप्ताह का समय लगता है और गेहूँ की बुवाई समय से नहीं हो पाती है। साथ ही कई जुताइयाँ करने में व्यय भी अधिक होता है और गेहूँ से मिलने वाला शुद्ध लाभ कम हो जाता है। इन समस्याओं के समाधान के लिए एक सीडड्रिल विकसित की गई है जिससे धान की कटाई के बाद खेत में बिना जुताई किए गेहूँ की बुवाई की जा सकती है जिसे पंतनगर जीरो टिल फर्टी–सीडड्रिल कहते हैं। यह आम सीडड्रिलों से काफी मिलती जुलती है। इसमें केवल फरो ओपनर अलग तरह के लगे होते हैं, जिससे बिना जुते खेत में कूंड़ बना सकते हैं। इस सीडड्रिल को गेहूँ की बुवाई हेतु अनुसंधान केन्द्र, विश्वविद्यालय फार्म तथा गत कई वर्षों से किसानों के द्वारा प्रयोग में लाया जा रहा है। इस सीड ड्रिल के प्रयोग से बिना जुताई किये खेतों में समय से गेहूँ की बुवाई करने से खेत तैयारी उपरान्त विलम्ब से बुवाई करने की तुलना में उपज में वृद्धि होती है, साथ ही ट्रैक्टर का समय एवं डीजल की बचत होती है। इससे गेहूँ की फसल का उत्पादन व्यय कम हो जाता है। बुवाई की यह मशीन उत्तराखंड, उत्तर प्रदेश, हरियाणा व पंजाब में बनने लगी है और आसानी से उपलब्ध है। इसका मूल्य लगभग रू0 14,000 है। उत्तराखंड के किसानों के लिए इस सीडड्रिल पर उत्तराखंड सरकार की तरफ से अनुदान भी उपलब्ध है।

पंत जीरो टिल सीडड्रिल के अलावा पंत पंच प्लांटर एवं डबल डिस्क ओपनर का भी विकास हुआ है जो बिखरे फसल अवशेषों की दशा में भी बिना जुताई गेहूँ की अच्छी प्रकार बुवाई कर देता है।

परीक्षण परिणाम/लाभ

1. इस सीडड्रिल से एक घण्टे में 0.4 हैक्टर क्षेत्रफल की बुवाई की जा सकती है।

2. पारम्परिक विधि की तुलना में नमी वाले खेतों में 6–8 दिन पहले बुवाई सम्भव है।
3. इस विधि में 10–12 घंटे ट्रैक्टर का समय तथा 40–45 लीटर डीजल की बचत होती है।
4. पारम्परिक विधि से बुवाई की तुलना में उपज पर कोई विपरीत प्रभाव नहीं पड़ता है। कहीं–कहीं पर उपज अधिक पाई गयी है।

बिना जुताई गेहूँ बोने की विधि की सफलता के लिए निम्न मुख्य बातों का विशेष ध्यान रखना चाहिएः

1. धान की फसल का प्रबन्ध अच्छा होना चाहिए, जिससे धान की कटाई के समय खेत में खरपतवार, कम्बाइन हारवेस्टर से कटे धान के खेत से बिखरा हुआ पुआल हटा देना चाहिए। खड़े हुए डंठलों से इस मशीन द्वारा बुवाई में किसी प्रकार की बाधा नहीं पड़ती है।
2. यदि बिखरा हुआ पुआल इत्यादि हो तो इस दशा में पंत पंच प्लांटर या डबल डिस्क ओपनर का प्रयोग करना चाहिए।
3. यदि खेत में बुवाई से पहले खरपतवार हो तो खरपतवार नाशक दवा का प्रयोग अवश्य करें।
4. बुवाई के समय खेत में उपयुक्त नमी होनी चाहिए।
5. सीडड्रिल में केवल दानेदार उर्वरक जैसे कि डी0ए0पी0 ही डालना चाहिए।
6. बुवाई करते समय बीज की गहराई सीडड्रिल में लगे पहियों से सुनिश्चित कर लेनी चाहिए।
7. सीडड्रिल को ट्रैक्टर चलने की दशा में ही नीचे या ऊपर करना चाहिए अन्यथा खुरपों में मिट्टी भरने की संभावना रहती है।
8. बुवाई के बाद खरपतवार न जमने के लिए दवा का प्रयोग करें।
9. यह विधि दोमट भूमि के लिए अधिक उपयुक्त है।

सम्पर्क सूत्र : 9411159751

☑

जौ

डा. जे.पी. जायसवाल, डा. स्वाती,
डा. अनिल कुमार एवं डा. दीपशिखा

जौ विश्व के महत्वपूर्ण खाद्यान्नों में से एक है, जिसकी खेती मुख्यतः रूस, संयुक्त राज्य अमेरिका, भारत, कनाडा, तुर्की और फ्रांस में की जाती है। विश्व में सबसे अधिक जौ की खेती रूस में की जाती है। वर्ष 2021–22 में विश्व में जौ का उत्पादन 1450 लाख टन तथा भारत में 15.9 लाख टन रहा। भारत में जौ की खेती तमिलनाडु, ओड़िशा तथा असम के अलावा अन्य सभी राज्यों में होती है, पर इसका मुख्य उत्पादन उत्तर–पश्चिमी भारत में होता है। भारत में इसके मुख्य उत्पादक राज्य उत्तर प्रदेश, राजस्थान, हरियाणा और मध्य प्रदेश हैं। उत्तराखण्ड में इसकी खेती मुख्यतया पहाड़ों पर होती है।

जौ को संस्कृत में यव के नाम से जाना जाता है जिसकी खेती प्राचीन काल से ही की जाती रही है तथा ऐसा माना जाता है कि इसका उपयोग धार्मिक कार्यों में होता आ रहा है। जौ को अकेले या गेहूँ के साथ मिलाकर प्रयोग में लाया जाता है तथा कभी–कभी इसको भूनकर व पीसकर सत्तू के रूप में भी प्रयोग करते हैं। इसके अतिरिक्त पशुओं को भी दाने के रूप में जौ खिलाया जाता है। पश्चिमी देशों में जौ मुख्य रूप से माल्ट बनाने के काम में आता है। सीमित सिंचाई व उर्वरक एवं सिंचित दशा में जौ की खेती गेहूँ की अपेक्षा अधिक लाभदायक है। इस प्रकार देखें तो आधुनिक समय में जौ की खेती को मुख्य फसल के रूप में देखा जाने लगा है।

जलवायु

जौ की खेती के लिए ठंडी और नम जलवायु उपयुक्त रहती है। अतः भारत में इसे रबी की फसल के रूप में उगाया जाता है। पहाड़ों पर इसकी खेती 2000 मीटर की ऊँचाई तक की जा सकती है। नमी अधिक होने पर रोगों का प्रकोप अधिक होता है जौ सूखे के प्रति गेहूँ से अधिक सहनशील है, जब कि पाले का प्रभाव इस पर अधिक होता है।

मृदा

जौ के लिए अच्छे जल निकास वाली दोमट मिट्टी उपयुक्त होती है, लेकिन भारत में जौ की खेती अधिकतर रेतीली भूमि में की जाती है। जौ और गेहूँ को प्रायः एक ही मौसम में उगाये जाने के कारण जौ को गेहूँ हेतु उपयुक्त न समझी जाने वाली भूमि में ही उगाया जाता है। मामूली ऊसर भूमि में भी जौ उगाया जा सकता है, लवणों के प्रति यह गेहूँ की अपेक्षा अधिक सहनशील होता है, अम्लीय भूमि में जौ को नहीं उगाया जा सकता है। यह कहा जा सकता है कि सूखे एवं क्षारीय दशाओं में जौ ही एक मात्र ऐसी फसल है जिसे रबी में सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है।

जौ की उन्नत प्रजातियाँ

उत्तर पर्वतीय क्षेत्र

समय से बुवाई, वर्षा आधारित : यू.पी.बी. 1008, बी. एच.एस. 400, वी.एल. बी. 118, एच.बी.एल. 113, पी.आर.बी. 502, एच.बी.एल. 713

समय से बुवाई, सिंचित : एच.बी.एल. 713

उत्तर पश्चिमी मैदानी क्षेत्र

समय से बुवाई, सिंचित : डी.डब्ल्यू.आर.बी. 160, डी.डब्ल्यू.आर.बी. 182, डी.डब्ल्यू.आर.बी. 137, डी. डब्ल्यू.आर.बी. 123, डी.डब्ल्यू.आर.बी. 101, डी.डब्ल्यू. आर.बी. 92, आर.डी. 2849, बी.एच. 902, आर.डी. 2552, बी.एच. 946, पी.एल. 891, आर.डी. 2035

उत्तर पूर्वी मैदानी क्षेत्र

समय से बुवाई, सिंचित : एच.यू.बी. 113

उत्तर पश्चिमी मैदानी क्षेत्र एवं उत्तर पूर्वी मैदानी क्षेत्र लवणता की स्थिति वाले क्षेत्र : आर.डी. 2907

उत्तराखण्ड असिंचित क्षेत्र : वी.एल.बी. 130

मध्य क्षेत्र समय से बुवाई, सिंचित : आर.डी. 2715

बीजोपचार

जौ की बुवाई के लिए प्रयोग किया जाने वाला बीज शुद्ध, रोग मुक्त, प्रमाणित एवं क्षेत्र विशेष के लिए अनुशंसित उन्नत किस्म का होना चाहिए। बोने से पूर्व बीज का अंकुरण परीक्षण अवश्य कर लेना चाहिए। यदि जौ का प्रमाणित बीज न मिले तो बीजों का उपचार अवश्य करना चाहिए। खुली कंगियारी से बचाव के लिए 2.5 ग्राम कार्बोक्सिन या कार्बेन्डाजिम से प्रति एक कि.ग्रा. बीज उपचारित करें। बंद कंगियारी के नियंत्रण हेतु थीरम तथा कार्बेन्डाजिम/कार्बोक्सिन को 1:1 के अनुपात में मिलाकर 2.5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. अथवा टेबुकोनाजोल 1.5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें। दीमक से बचाव के लिए 150 मि.ली. क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी. को 5 लीटर पानी में मिलाकर घोल बना लें और इससे 100 कि.ग्रा. बीज का उपचार कर सकते हैं।

खेत की तैयारी

जौ के लिए खेत की तैयारी गेहूँ की भॉति ही की जाती है। खरीफ की फसल की कटाई के पश्चात् खेत में मिट्टी पलटने वाले हल से गहरी जुताई करने के बाद देशी हल से जुताई करनी चाहिए। प्रत्येक जुताई के बाद पाटा चलाकर खेत को समतल कर लेना चाहिए। भूमि का समतलीकरण एवं मेड़ बनाना भी आवश्यक है ताकि सिंचाई उचित समय से हो सके तथा असिंचित खेत हेतु वर्षा का पानी खेतों में जमा हो सके।

खाद एवं उर्वरक

उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करना चाहिए। मृदा परीक्षण नहीं कराया गया हो तो सिंचित दशा में समय से बुवाई के लिए 60 कि.ग्रा. नत्रजन, 30 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 20 कि.ग्रा. पोटाश तत्व प्रति हैक्टर तथा वर्षा आधारित क्षेत्रों के लिए 30 कि.ग्रा. नत्रजन, 20 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 20 कि.ग्रा. पोटाश तत्व प्रति हैक्टर की आवश्यकता होती है। सिंचित क्षेत्रों में आधी नत्रजन और फॉस्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के समय तथा नत्रजन की शेष मात्रा प्रथम सिंचाई के समय डालनी चाहिए। वर्षा आधारित क्षेत्रों में नत्रजन, फॉस्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के समय ही डाल देनी चाहिए। जस्ते की कमी वाली भूमि में 25 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति हैक्टर की दर से प्रयाग करना चाहिए।

बीज की मात्रा : समय से बुवाई के लिए 100 कि. ग्रा. एवं देर से बुवाई के लिए 125 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर प्रयोग करें।

बुवाई की विधि : बुवाई की सबसे उपयुक्त विधि सीडड्रिल है। देसी हल के पीछे लगे चोगे में भी बीज डालकर बुवाई की जा सकती है। देसी हल के पीछे बीज डालकर एवं छीटा विधि की अपेक्षा सीडड्रिल से पंक्तिबद्ध बुवाई करना उत्तम रहता है। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 23 से.मी. रखनी चाहिए। बीज तथा मिट्टी के अच्छे संपर्क के लिए पाटा लगाकर मिट्टी को सघन बना देना चाहिए लेकिन सीडड्रिल से बुवाई के बाद पाटा नहीं लगाना चाहिए।

सिंचाई : जौ सिंचित के साथ–साथ वर्षा आधारित या पानी की कमी वाले क्षेत्रों में भी उगाया जाता है। सामान्यतः इसके लिए 2–3 सिंचाइयों की आवश्यकता होती है। पानी की उपलब्धता के आधार पर सिंचाई उपयुक्त अवस्था पर देनी चाहिए। यदि दो सिंचाई उपलब्ध हों तो पहली सिंचाई कल्ले निकलते समय (बुवाई के 30–35 दिन बाद) तथा दूसरी बाली आने की अवस्था (बुवाई के 65–70 दिन बाद) पर देनी चाहिए। यदि केवल एक सिंचाई उपलब्ध हो तो इसे बुवाई के 35–40 दिन बाद देनी चाहिए। यदि तीन सिंचाई उपलब्ध हों तो तीसरी सिंचाई दाना बनते समय देनी चाहिए। अच्छी पैदावार, दानों की एक रूपता एवं गुणवत्ता सुनिश्चित करने हेतु माल्ट जौ को 3–4 सिंचाई की आवश्यकता होती है।

खरपतवार नियंत्रण : जौ की फसल में अनेक खरपतवार लगते हैं जो पोषक तत्वों, प्रकाश, नमी आदि के लिए फसल के साथ प्रतिस्पर्धा करते हैं। अतः इनका समय पर नियंत्रण करने से ही अधिक लाभ प्राप्त होता है। जौ के खेत में चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों का अधिक प्रकोप होता है जिसमें मुख्यतः बथुआ, कृष्णनील, चटरी, गेगला, मुनमुना, हिरनखुरी, सोया, सैंजी, प्याजी, मंडूसी या गेहूँसा, कंटीली, जंगली जई, मोथा व दूब आदि का प्रकोप होता है। खरपतवारों के नियंत्रण के लिए पेन्डीमिथेलिन 30 ई.सी. 1.0 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व प्रति है0 बुवाई के बाद 2–3 दिन के अन्दर 500 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें। बुवाई से 30–35 दिन पश्चात् पिनोक्साडेन 5 ई.सी. की 87.5 मि.ली. मात्रा को 300 से 375 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

रतुआ एवं झुलसा रोग : जौ की रोग प्रतिरोधी प्रजातियों का प्रयोग करें। रोग के लक्षण दिखायी देने पर प्रोपिकोनाजोल 25 ई.सी. अथवा टेबुकोनाजोल 250 ई.सी. के 0.1 प्रतिशत घोल का 15 दिन के अन्तराल पर दो बार छिड़काव करें।

खुला एवं बंद कंडुवा रोग : खुला एवं बंद कंडुवा रोग के नियंत्रण के लिए बीजोपचार काफी असरदार होता है। खुले एवं बंद कंडुवा रोग के नियंत्रण के लिए कार्बोक्सिन/कार्बेन्डाजिम तथा थीरम का 1:1 के अनुपात में 2.5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज प्रयोग करें। इसके अतिरिक्त बीज का धूप उपचार भी किया जा सकता है। मई–जून के महीने में बीज को चार घंटे तक पानी में डालकर तपती धूप में रखें। इसके बाद इसे पानी से निकालकर सुखा लें एवं खुले स्थान पर भण्डारित करें।

चेपा (एफिड) : जौ की फसल में चेपा के प्रकोप से काफी हानि होती है। इसके लिए डाइमेथोएट 30 ई. सी. 2 मि.ली. प्रति लीटर अथवा इमिडाक्लोप्रिड 200 की 20 ग्राम सक्रिय तत्व प्रति है0 की दर से 500–600 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

कटाई व मड़ाई : जौ की फसल मार्च के अंत से अप्रैल के प्रथम पखवाड़े तक कटाई के लिए तैयार हो जाती है। बाली से दाना की झड़ने की प्रवृति के कारण बालियों के पक जाने पर फसल को तुरन्त ही काट लें। कटी हुई फसल को 2–3 दिन सुखाने के बाद थ्रेसर से मड़ाई कर दाना अलग कर लें।

उपज व भंडारण : जौ की फसल गेहूँ की लम्बी किस्मों की तुलना में अधिक उपज देने की क्षमता रखती है। जौ की अच्छी फसल से 45–50 कुन्तल प्रति हैक्टर तक दाना तथा लगभग इसी मात्रा में भूसा प्राप्त हो जाता है। जौ का दाना हवा से नमी सोखता है, अतः उत्पाद का सही स्थान पर भण्डारण करें ताकि कीड़े ना लगें।

❑❑❑

धान

डा. इन्द्रदेव पाण्डेय

उन्नत किस्में

विभिन्न परिस्थितियों के लिए धान की उन्नत किस्में निम्नलिखित तालिका में दी गयी है :

प्रजातियों का नाम	पकने की अवधि (दिन)	उपज (कु./है.)
शीघ्र पकने वाली		
गोविन्द	95–100	30–35
नरेन्द्र 118	110–115	40–45
नरेन्द्र 97	110–115	40–45
साकेत 4	115–120	45–50
पंत संकर धान 1	115–120	60–65
पंत धान 22	115–125	50–55
मध्यम शीघ्र पकने वाली		
रत्ना	120–125	45–50
पंत धान 10	121–130	58–60
पंत धान 12	125–130	45–48
पंत धान 23	120–125	45–50
पंत संकर धान 3	125–130	65–70
पंत धान 26	115–120	47–50
मध्यम अवधि में पकने वाली		
पंत धान 4	126–130	55–60
पंत धान 18	130–135	60–65
पंत धान 19	130–135	60–65
पंत धान 24	130–135	55–60
नरेन्द्र 359	130–135	60–65
सरजू 52	130–135	60–65
एचकेआर 47	130–135	60–65
पीआर 113	130–135	60–65
पंत धान 28	125–130	60–65
देर से पकने वाली		
पूसा 44	140–145	55–60
स्वर्णा (एमटीयू 7029)	160–165	60–65
सुगंधित धान		
पंत बासमती 1	135–140	48–50
पंत बासमती 2	125–130	48–49
पंत सुगन्ध धान 25	135–140	36–40
पंत सुगन्ध धान 27	120–125	43–45
टाईप 3	140–145	30–35
तरावड़ी बासमती	145–150	30–35
बासमती 370	140–145	30–35

पूसा बासमती 1	140–142	40–45
पंत सुगन्ध धान 15	135–140	35–40
पंत सुगन्ध धान 17	135–140	35–40
पंत सुगन्ध धान 21	135–140	35–40
पूसा सुगन्ध 4	135–140	30–35
पूसा सुगन्ध 5	120–125	45–50
ऊसर भूमि के लिए		
नरेन्द्र ऊसर धान 1	145–150	40–50
सी.एस.आर. 10	115–120	50–60
सी.एस.आर. 30	130–135	40–45
नरेन्द्र ऊसर धान 2	125–130	45–50
नरेन्द्र ऊसर संकर धान 3	135–140	35–45
पर्वतीय सिंचित क्षेत्र		
घाटियाँ एवं कम ऊँचाई वाले क्षेत्र (900 मी0 तक)		
गोविन्द	95–100	30–35
साकेत 4	115–120	45–50
प्रसाद	120–125	50–55
पंत धान 6	113–120	40–45
पंत धान 10	121–130	58–60
पंत धान 11	118–125	42–48
पंत धान 12	113–120	42–48
वी.एल. 81	115–120	40–42
विवेक धान 82	115–120	45–50
वी.एल. धान 85	118–120	40–45
वी.एल. धान 65	130–135	50–55
मध्यम ऊँचाई वाले क्षेत्र (900–1600 मी0 तक)		
पंत धान 6	115–120	35–40
वी.एल. धान 81	115–120	40–42
विवेक धान 82	115–120	45–50
वी.एल. धान 85	118–120	40–45
पंत धान 10	123–125	45–50
पंत धान 12	115–125	42–48
विवेक धान 62	125–130	45–50
वी.एल. धान 61	130–135	45–50
वी.एल. धान 65	130–135	50–55
पर्वतीय असिंचित क्षेत्र		
चेतकी धान		
वी.एल. धान 207	155–160	20–25
वी.एल. धान 208	160–165	20–22
वी.एल. धान 209	155–160	20–22
जेठी धान		
वी.एल. धान 221	110–115	20–25
विवेक धान 154	100–110	20–25

बुवाई तथा रोपाई का समय ः पर्वतीय क्षेत्र के असिंचित (उपराऊ) दशा में चेतकी धान की सीधी बुवाई सामान्यतः मध्य मार्च से अप्रैल के प्रथम पखवाड़े तक तथा जेठी धान की सीधी बुवाई मई के अंतिम सप्ताह से जून के प्रथम सप्ताह तक करनी चाहिए। सिंचित (तलाऊ) दशा में धान की खेती रोपाई द्वारा की जाती है। धान की नर्सरी डालने एवं रोपाई का समय निम्नवत है:

क्षेत्र	नर्सरी डालने का समय	पौध रोपाई का समय
मैदानी क्षेत्र, घाटियाँ एवं कम ऊँचे क्षेत्र (900 मी. ऊँचाई तक)	मई द्वितीय पक्ष से जून का प्रथम सप्ताह	जून अन्त से जुलाई का प्रथम सप्ताह
मध्यम ऊँचे क्षेत्र (900 मी. से 1500 मी. ऊँचाई तक)	मई प्रथम पक्ष	जून के द्वितीय पक्ष
ऊँचे क्षेत्र (1500 मी. से ऊपर)	अप्रैल का द्वितीय पक्ष	जून का प्रथम पक्ष

बीज दर एवं बुवाई : पर्वतीय क्षेत्रों में घाटियों को छोड़कर अन्य सभी स्थानों में धान की सीधी बुवाई होती है। असिंचित (उपराऊ) दशा में चेतकी एवं जेठी धान की बुवाई हेतु 1.0 कि.ग्रा. बीज प्रति नाली (50 कि.ग्रा./है.) की आवश्यकता पड़ती है। बुवाई पंक्तियों में करनी चाहिए। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 20 से.मी. तथा बीज की बुवाई 4 से 5 से.मी. की गहराई पर करनी चाहिए। सीधी बुवाई के धान में 20–25 दिन बाद एक से दो बार फेरस सल्फेट 0.5 प्रतिशत एवं यूरिया का 2 प्रतिशत का छिड़काव अवश्य करें। प्रमाणित बीज से उत्पादन अधिक मिलता है अतः प्रमाणित बीज का ही प्रयोग करें। सिंचित (तलाऊ) दशा में एक नाली की रोपाई हेतु नर्सरी तैयार करने के लिए 0.7 से 0.8 कि.ग्रा. (35–40 कि.ग्रा./है.) धान के बीज की आवश्यकता होती है। संकर धान के लिए 20 कि.ग्रा. व सुगन्धित धान के लिए 30 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर प्रयोग करें।

रोपाई के लिए नर्सरी की तैयारी

पौध तैयार करने की विधिः धान की पौध गीली विधि या शुष्क विधि से तैयार की जा सकती है।

गीली विधिः पर्याप्त सिंचाई साधन वाले क्षेत्रों में नर्सरी के लिए गीली विधि उपयुक्त हैं। इसके लिए पौध क्षेत्र में 15–20 दिन पहले पानी लगा दें जिससे खरपतवारों के बीज जम जायेंगे जो खेत तैयार करते समय खेत में मिल जायेगे। ऐसा करने से पौध क्षेत्र में खरपतवारों का प्रकोप कम होगा। गीली विधि में खेत में पानी भर कर पडलर या देशी हल द्वारा जुताई करें तथा 50–60 कि.ग्रा. कम्पोस्ट या गोबर की खाद 100 ग्राम नत्रजन एवं 80 ग्राम फॉस्फोरस प्रति 10 वर्ग मी. की दर से उर्वरक डालकर खेत को पाटे से समतल कर दें। लेव लगाने के बाद 1.25 मी. चौड़ी तथा सुविधानुसार लम्बी क्यारियाँ बना लें तथा क्यारी के बीच में 30–40 से.मी. पट्टी खाली छोड़ दें, जिससे बुवाई, निराई, सिंचाई तथा अन्य कृषि कार्य करने में सुविधा रहती है। क्यारी में 500 ग्राम अंकुरित बीज प्रति 10 वर्ग मी. की दर से बिखेर दें। इस तरह से एक हैक्टर खेत की रोपाई हेतु 10 वर्ग मी. की 80 क्यारियों व एक नाली खेत के लिए 1.5 से 2 क्यारियों की आवश्यकता पड़ती है। नर्सरी जब 12–15 दिन की हो जाय तो उसमें 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट तथा 2 प्रतिशत यूरिया उसमें मिलाकर छिड़काव करें।

शुष्क विधि : कम वर्षा अथवा अपर्याप्त सिंचाई के साधन वाले क्षेत्रों में शुष्क विधि उपयुक्त है। शुष्क अवस्था में उपरोक्त खाद की मात्रा डालकर खेत तैयार कर 1.25 मी. चौड़ी तथा सुविधानुसार, लम्बी क्यारी बनायें और 5–10 से.मी. की दूरी पर कतारों में 500 ग्राम बीज प्रति 10 वर्ग मी. की दर से बुवाई करें। बुवाई के बाद पानी लगा दें। क्यारी में पानी एक सप्ताह तक शाम के समय लगायें तथा बाद में 1–2 से.मी. पानी बनाये रखें। ऐसा करने से खरपतवार कम होंगे तथा पौध उखाड़ने में आसानी रहेगी।

रोपाई : पंक्ति से पंक्ति की दूरी 20 से.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 10 से.मी. या पंक्ति से पंक्ति तथा पौधे से पौधे की दूरी 15 से.मी. रखनी चाहिए। एक स्थान पर 2–3 पौधे लगाना चाहिए। मैदानी एवं घाटी हेतु 25–30 दिन, मध्य क्षेत्रों के लिए 30–35 दिन एवं अधिक ऊँचे क्षेत्रों हेतु 40–50 दिन की पौध उपयुक्त होती है। रोपाई 2–3 से.मी. गहराई से ज्यादा नही करनी चाहिए। रोपाई से 10 दिन के अन्दर मरे पौधों की जगह फिर से रोपाई करें।

उर्वरकों का प्रयोग : उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करना उपयुक्त रहता है। यदि मृदा परीक्षण सम्भव न हो तो उर्वरकों की निम्न मात्रा प्रयोग करनी चाहिए:

पर्वतीय क्षेत्र (मात्रा कि.ग्रा.)

प्रजातियाँ	नत्रजन	फॉस्फोरस	पोटाश
बौनी प्रजातियाँ प्रति हैक्टर	100–120	60	40
प्रति नाली	2.0–2.4	1.2	0.8
देशी प्रजातियाँ प्रति हैक्टर	60	30	30
प्रति नाली	1.2	0.6	0.6

नत्रजन उर्वरक का 1/4 भाग तथा फॉस्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के समय प्रयोग करें। नत्रजन की 1/2 मात्रा को कल्ले फूटते समय 1/4 मात्रा बाली बनने की प्रारम्भिक अवस्था के समय टॉपड्रेसिंग के रुप में प्रयोग करें। ध्यान रहे कि टॉप–ड्रेसिंग करते समय खेत में पर्याप्त नमी हो। यदि कम्पोस्ट या सड़ी गोबर की खाद उपलब्ध हो तो इसे बोने के 15–20 दिन पहले खेत में मिला देना चाहिए एवं इस स्थिति में नत्रजन उर्वरक की आधी मात्रा (10 से 15 कि.ग्रा) प्रयोग करनी चाहिए।

मैदानी क्षेत्रों व पर्वतीय घाटियों में धान की खेती रोपाई करके की जाती है। इन क्षेत्रों हेतु उर्वरकों की मात्रा निम्नवत है :

तराई–भावर एवं मैदानी (मात्रा कि.ग्रा./हैक्टर) क्षेत्र

प्रजातियाँ	नत्रजन	फॉस्फोरस	पोटाश
अधिक उपज वाली प्रजातियाँ (धान–गेहूँ फसल चक्र)	150	60	40
संकर किस्में	150	60	60
सुगंधित धान (बौनी)	100	60	40
देशी प्रजातियाँ	60	30	30

फॉस्फोरस तथा पोटाश की पूरी एवं नत्रजन की 1/3 मात्रा बेसल ड्रेसिंग के रुप में रोपाई से पहले खेत तैयार करते समय देना चाहिए। नत्रजन की 1/3 मात्रा कल्ले फूटते समय (रोपाई के 20–25 दिन पर) तथा 1/3 मात्रा बाली बनने की प्रारम्भिक अवस्था में (रोपाई के 40–50 दिन पर) टॉप–ड्रेसिंग के रुप में प्रयोग करनी चाहिए।

मैदानी क्षेत्रों में ढैंचा या सनई की हरी खाद की फसलों को मई माह में बुवाई करके 45–60 दिन बाद रोपाई से पूर्व खेतों में मिलाने से 80–100 कि.ग्रा./है. नत्रजन की बचत की जा सकती है। इसके अलावा सिंचित क्षेत्र में, जहाँ खेत में प्रायः पानी रहता हो, जैव उर्वरक–नील हरित शैवाल/अजोला का प्रयोग कर नत्रजन वाली उर्वरकों की बचत कर सकते हैं।

खरपतवार नियंत्रण

असिंचित (उपराऊ) क्षेत्रः असिंचित क्षेत्रों में खुरपी/कुटला द्वारा निराई कर खरपतवार नियंत्रण करनी चाहिए। पहली निराई धान के जमाव के बाद 20–25 दिनों के अन्दर ही करना आवश्यक है। इसके पश्चात् आवश्यकतानुसार एक/दो निराई और करनी चाहिए।

सिंचित (तलाऊ) क्षेत्रः धान की रोपाई के बाद समय से निराई (20 दिन एवं 40 दिन पर) अवश्य करें। श्रमिकों के अभाव में खरपतवारनाशी रसायनों के प्रयोग से भी खरपतवार नियंत्रण किया जा सकता है। रोपाई के तीन दिन के अन्दर ब्यूटाक्लोर 50 ई.सी. 3 लीटर या एनिलोफॉस 30 ई.सी. 1.5 लीटर या प्रेटिलाक्लोर 50 ई.सी. 1.5 लीटर प्रति हैक्टर की दर से 500 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

चौड़ी पत्तियों वाले एवं मोथा वर्ग के खरपतवारों की बहुलता की दशा में मेटसल्फ्यूरान मिथाईल 20 डब्ल्यू.पी. 20 ग्राम प्रति है. का प्रयोग रोपाई के 20 दिन बाद करना चाहिए। सकरी तथा चौड़ी पत्ती के खरपतवारों की दशा में ऑक्साडायरीगल 80 डब्ल्यू.पी. की 125 ग्राम मात्रा प्रति है. का प्रयोग रोपाई के 3 दिन के अन्दर करना चाहिए या विसपाइरीवैक सोडियम 10 ई.सी. की 200 मि.ली. मात्रा रोपाई के 15–20 दिन के अन्दर करनी चाहियें।

सिंचाई : धान की फसल को खाद्यान्न फसलों में सबसे अधिक पानी की आवश्यकता होती है। फसल की कुछ विशेष अवस्थाओं–रोपाई के बाद एक सप्ताह तक, कल्ले फूटने, बाली निकलने, फूल खिलने तथा दाना भरते समय खेत में पानी बना रहना चाहिए। बीच–बीच में 2–3 दिन के लिए पानी निकाल देना चाहिए या पानी खड़ा न रहे। इसके कल्ले ज्यादा फूटते हैं। फूल खिलने

की अवस्था पानी के लिए अति संवेदनशील है। परीक्षणों के आधार पर यह पाया गया है कि धान की अधिक उपज लेने के लिए लगातार पानी भरा रहना आवश्यक नहीं है। इसके लिए खेत की सतह से पानी अदृश्य होने के एक दिन बाद 5–7 से.मी. सिंचाई करना उपयुक्त होता है। यदि वर्षा के अभाव के कारण पानी की कमी दिखाई दे तो सिंचाई अवश्य करें। कल्ले निकलते समय पानी अधिक समय तक धान के खेत में भरा रहना भी हानिकारक होता है। अतः जिन क्षेत्रों में पानी भरा रहता हो वहाँ जल निकासी का प्रबन्ध करना चाहिए अन्यथा उत्पादन पर कुप्रभाव पड़ेगा।

कीट नियन्त्रण

दीमक : असिंचित (उपराऊँ) परिस्थिति में दीमक के श्रमिक ही हानिकारक होते हैं। ये जड़ एवं तने को खाकर पौधे को सुखा देते हैं। प्रकोपित सूखे पौधे को आसानी से उखाड़ा जा सकता है। ऐसे क्षेत्रों में कच्चे गोबर की खाद का प्रयोग न करें। फसल के अवशेषों को नष्ट कर दें।

धान का फुदका : यह छोटा हरे या भूरे रंग का कीट होता है जो पौधे के तने एवं पत्तियों का रस चूस कर उनकी बढ़वार रोक देता है। पूरे खेत में कुछ समूह में पौधे पीले एवं बाद में जले हुए दिखाई देते हैं। इसका प्रकोप होने पर ट्राइफ्लूमेजोपायरिम 10 एससी 235 मि.ली या फिप्रोनिल 5 एससी 1000 मि.ली. या ब्रुप्रोफेजिन 25 एस.सी. 1 लीटर या थियामेथोक्जाम 25 डब्लू.एस. जी. 100 ग्रा. या एसिटामिप्रिड 20 एस.पी. 100 ग्रा. या क्लोथियानिडिन 50 डब्लू.डी.जी. 30 ग्रा. या डाईनोटेफ्यूरान 20 एस.जी. 150–200 ग्राम या फ्लोनिकामिड 50 डब्लू. जी. 150 ग्राम मात्रा 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें। छिड़काव तने के पास होना चाहिए जहाँ फुदके बैठकर रस चूसते हैं अन्यथा कोई फायदा नहीं होगा। जब फूदकों की संख्या कम हो तो ब्रुप्रोफेजिन का प्रयोग करना चाहिए। अधिक संख्या होने पर ट्राइफ्यूमेजोपायरिम 10 एससी का प्रयोग करना चाहिए। जब फुदका एवं तना बेधक दोनों का प्रकोप हो तो फिप्रोनिल 5 एससी का प्रयोग करना चाहिए।

कुरमुला : असिंचित (उपराऊँ) दशा में कुरमुला कीट के गिडार बहुत हाँनि पहुँचाते हैं। कच्चा गोबर प्रयोग करने की पुरानी परम्परा को छोड़कर सड़ी हुई गोबर की खाद का प्रयोग करना नितान्त आवश्यक है, क्योंकि कच्चा गोबर कुरमुला के प्रथम अवस्था वाले गिडार के लिए भोज्य पदार्थ के रुप में उपयोग किया जाता है। नीम की खली 8 कुन्तल प्रति हैक्टर के हिसाब से खेत की तैयारी के समय मिट्टी में मिलाने पर इस कीट का प्रकोप कम हो जाता है। फसल कटाई के बाद एवं पहले खेत की गहरी जुताई कर कुछ दिनों के लिए छोड़ दें जिससे इनके ग्रब चिड़ियों द्वारा नष्ट कर दिये जायें या धूप से नष्ट हो जायें। कुरमुले की समस्या के निदान हेतु वयस्क कीट तथा सफेद गिडार दोनों की रोकथाम आवश्यक है। प्रकाश प्रपंच (वी एल कुरमुला ट्रैप–1) के प्रयोग से वयस्कों को आकर्षित कर नष्ट किया जा सकता है। गिडारों के नियन्त्रण हेतु खड़ी फसल में क्वीनालफॉस 25 ई.सी. या क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी. नामक कीटनाशी रसायन की 4.0 लीटर/हैक्टर मात्रा (80 मि.ली./नाली) 40 कि.ग्रा. भुरभुरी मृदा या राख में मिलाकर बुरकाव करना चाहिए। बुरकाव करते समय खेत में पर्याप्त नमी का होना अनिवार्य है जिससे कीटनाशी जड़ के पास मौजूद गिडार तक पहुँच कर अपना विषैला प्रभाव दिखा सकें।

तना बेधक : तना बेधक असिंचित एवं सिंचित धान का एक मुख्य कीट है। इस कीट की सूड़ियाँ पीले या मटमैले रंग की चिकनी सी होती हैं, जो तने को छेद कर अन्दर ही अन्दर खाती रहती हैं। कीट का आक्रमण बाली निकलने के समय होने पर बालियों में दाने नहीं बनते और बालियाँ सफेद दिखाई देती हैं। ऐसी बालियाँ ऊपर से खींचने पर आसानी से खिंच जाती हैं। फसल के वानस्पतिक अवस्था में प्रकोप होने से मृत गोभ बनता है। पाँच प्रतिशत मृत गोभ अथवा एक अण्डे का झुण्ड वानस्पतिक अवस्था में तथा एक पतंगा/वर्गमीटर बाली निकलने की अवस्था में दिखाई पड़ने पर नियन्त्रण के उपाय अवश्य करने चाहिए। इस कीट की रोकथाम हेतु फसल की प्रारम्भिक अवस्था में क्लोरान्ट्रानिलिप्रोले 0.4 जी 10 कि.ग्रा./है. या फिप्रोनिल 0.3 जी 25 कि.ग्रा.

/है. या कॉरटाप हाइड्रोक्लोराइड 4 जी 20 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से मृदा में डालना चाहिए, जब खेत में लगभग 1–2 इंच पानी लगा हो। यदि इस कीट का प्रकोप रोपाई के 45–50 दिन बाद होता है तो क्लोरान्ट्रानिलिप्रोले 20 एस.सी. 150 मि.ली./है. या फ्लूबेन्डियामाइड 480 एस.सी. 75 मि.ली./है. या फिप्रोनील 5 एस.सी. 1.0 लीटर या कॉरटाप हाइड्रोक्लोराइड 50 डब्लू. पी. 600 ग्रा. या क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी. 2.5 लीटर 500–600 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर छिड़काव करना चाहिए।

यदि धान में पीला तना बेधक का प्रकोप हो तो इसकी रोकथाम रोपाई के दो सप्ताह के अन्दर बीस फेरोमोन प्रपंच प्रति हैक्टर की दर से खेत में क्रमबद्ध कतारों में लगाकर भी की जा सकती है। दो कतारों के बीच की दूरी 25 मीटर तथा कतार में दो फेरोमोन प्रपंच के बीच की दूरी 20 मीटर होनी चाहिए। ये प्रपंच पौधे की उपरी सतह से 30 से.मी. ऊँचे होने चाहिए अन्यथा इससे कोई लाभ नहीं होगा। फेरोमोन प्रपंच में आकर्षण रसायन (3 मि.ग्रा. ल्यूर) को 3 सप्ताह के अंतराल पर बदलना चाहिए।

धान का हिस्पा : यह बहुत छोटे आकार का कीट है जिसका रंग काला एवं शरीर पर छोटे–छोटे कांटे होते है। यह पत्तियों को खुरच कर खाता है जिससे पौधों की बढ़वार रुक जाती है। इसका प्रकोप होने पर 1.25 लीटर क्लोरपाइरीफॉस या 1.25–2.5 लीटर ट्राइएजोफॉस 20 ई.सी. को 500 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

पत्ती लपेटक: इस कीट की सूँड़ी पहले पत्ती को लपेटती है जिससे पत्ती मुड़कर बेलनाकार आकृति की बन जाती है। इसके अन्दर सूँड़ी पत्ती के हरे भाग को खाती रहती है। इसके नियन्त्रण के लिए क्लोरान्ट्रानिलिप्रोले 20 एस.सी. 150 मि.ली./है. या कॉरटाप हाइड्रोक्लोराइड 50 डब्लू.पी. 600 ग्रा. या फ्लूबेन्डियामाइड 480 एस.सी. 75 मि.ली. को 500–600 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर छिड़काव करना चाहिए।

रोग नियन्त्रण

झोंका रोग: असिंचित धान में झोंका सबसे अधिक हानिकारक रोग है। इस रोग का प्रकोप पत्तियों, गाठों, बालियों, डण्ठलों एवं छोटी–छोटी पुष्प टहनियों पर होता है। पत्तियों पर आँख की आकृति के धब्बे बनते है, जो बीच में राख के रंग के तथा किनारे गहरे भूरे रंग के होते हैं। बालियों के निचले भाग में धूसर बादामी रंग के क्षतस्थल बनते हैं एवं वह भाग सिकुड़ जाता है जिसके कारण बालियाँ टूट सकती हैं। इस रोग की रोकथाम हेतु बुवाई पूर्व थीरम एवं कार्बेंडाजिम (2:1) 3 ग्रा. प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से बीजोपचार कर लेना चाहिए। थीरम एवं कार्बेंडाजिम से बीजोपचार करने पर पौधों का जमाव भी अच्छा होता है तथा बीज व पौध में लगने वाले रोगों में कमी आती है। पत्तियों पर रोग के लक्षण दिखाई देने पर 500 ग्राम कार्बेंडाजिम 50 डब्लू.पी. अथवा 500–600 ग्राम एडिफेनफॉस 50 % ई.सी. या 750 मि.ली. आइसोप्रेथियोलेन 40 ई.सी. या 1 लीटर पिकोक्सीस्ट्रोबिन 6.78 % + ट्राईसाइक्लेजोल 20.33 % एस.सी. या 600 मि.ली. पिकोक्सीस्ट्रोबिन 22.52 % एस.सी. या 500 मि.ली. प्रोपिकोनाजोल 10.7 % + ट्राइसाइक्लेजोल 34.2 % एस.ई. या कार्बेंडाजिम 12 % + मैंकोजेब 63 % डब्लू.पी. 750 ग्राम को 500–750 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करने से रोग की रोकथाम हो जाती है। ध्यान रहे कि अनुमोदित मात्रा से अधिक दवा का प्रयोग कदापि न किया जाय। संस्तुत से अधिक मात्रा में नत्रजन का प्रयोग भी नहीं करना चाहिए।

जीवाणु झुलसा: यह रोग जैन्थोमोनास ओराइजी नामक जीवाणु से उत्पन्न होता है। पत्तियों पर जलसिक्त धब्बे बनते हैं जो धीरे–धीरे बढ़कर लम्बी धारियाँ बना देते हैं। शीघ्र ही धारियाँ हल्के भूरे रंग की हो जाती हैं। नम वातावरण में साधारणतया रोग ग्रस्त हिस्सों पर धुंधली बूंदों के रूप में जीवाणुओं का रिसाव होने लगता है। गम्भीर रूप से संक्रमित पौधे झुलस कर मर जाते हैं। इस रोग को खेत में फैलने से रोकने हेतु खेत में जल भराव नहीं होना चाहिए। साथ ही नाइट्रोजन की मात्रा

को रोक दें और यदि बीमारी अधिक हो तो 15 ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लिन + 500 ग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराइड को 1000 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें। इसके अतिरिक्त केन्द्रीय कीटनाशी बोर्ड द्वारा रोग नियंत्रण हेतु कॉपर हाइड्रोक्साइड 53.8 % डी.एफ. 1.5 लीटर/हैक्टर की दर से छिड़काव करने की भी संस्तुति की गयी है।

भूरी पर्ण चित्ती रोग: भूरी चित्ती रोग में पत्तियों पर गोलाकार भूरे रंग के धब्बे बन जाते हैं। इस रोग के लगने से पौधों की बढ़वार कम होती है, दाने भी प्रभावित हो जाते हैं जिससे उनकी अंकुरण क्षमता पर भी विपरीत प्रभाव पड़ता है। कम खाद दिये गये खेतों में यह रोग अधिक लगता है। अतः खाद की संस्तुत मात्रा ही प्रयोग करनी चाहिए व कम रोग लगने वाली किस्मों को बोना चाहिए। बुवाई से पूर्व बीजों को थीरम नामक कवकनाशी द्वारा 2.5 ग्रा. दवा प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित कर लेना चाहिए। रोग दिखाई देने पर प्रोपिनेब 70 डब्लू.पी. 1500–2000 ग्राम या हैक्साकोनाजोल 4 % + जिनेब 68 % डब्लू.पी. 1000–1250 ग्राम मात्रा का 500 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

खैरा रोग: यह रोग जस्ते की कमी के कारण होता है। इसमें पत्तियों पर हल्के पीले रंग के धब्बे बनते है जो बाद में कत्थई रंग के हो जाते है। पौधा बौना रह जाता है और व्यात कम होती है। प्रभावित पौधों की जड़ें भी कत्थई रंग की हो जाती हैं। इसकी रोकथाम के लिए पौध रोपण से पूर्व खेत तैयार करते समय 25 कि.ग्रा./है. जिंक सल्फेट प्रयोग करें तथा खड़ी फसल पर 5 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट 2.5 कि.ग्रा. बुझे चूने के साथ 1000 लीटर पानी में मिलाकर प्रति हैक्टर (क्रमशः 100 ग्रा. एवं 50 ग्रा. प्रति नाली) अथवा 5 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट + 20 कि.ग्रा. यूरिया का 1000 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए। पौधशाला में उपरोक्त के दो छिड़काव बुवाई के 10 तथा 20 दिन बाद करने चाहिए।

पर्णच्छद अंगमारी (शीथ ब्लाइट): इस रोग के लक्षण मुख्यतः पत्तियों एवं पर्णच्छद पर दिखाई देते हैं। पर्णच्छद पर पानी की सतह के ऊपर 2–3 से.मी. लम्बे हरे–भूरे या पुआल के रंग के क्षत स्थल बन जाते हैं। क्षत स्थल बाद में बढ़ कर तनों को चारों ओर से घेर लेते हैं। कटाई के बाद रोग ग्रस्त फसल अवशेषों को जला देना चाहिए। रोग दिखाई देते ही प्रोपिकोनाजोल 25 % ई.सी. 500 मि.ली. अथवा हैक्साकोनाजोल 5 % ई.सी. 1000 मि.ली. अथवा वेलीडिमाइसिन 3 % एल. 2000 मि.ली. या अजोक्सीस्ट्रोबिन 18.2 % + डाइफेनोकोनाजोल 11.4 % एस.सी. 500 मि.ली. या अजोक्सीस्ट्रोबिन 11 % + टेबुकोनाजोल 18.3 % एस.सी. 750 मि.ली. या टेबुकोनाजोल 50 % + ट्राइफ्लोक्सीस्ट्रोबिन 25 % डब्लू.जी. 200 ग्राम को 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर छिड़काव करें तथा दूसरा छिड़काव 10 दिन बाद करना चाहिए।

आभासी कंड (फाल्स स्मट): इससे धान के दाने भूरे, हरे, पीले तथा काले रंग के गोल–गोल आकार के हो जाते हैं। संक्रमित बाली में दाने कहीं–कहीं पर दिखाई देते हैं। इस रोग की रोकथाम के लिए प्रथम छिड़काव बाली निकलते समय 2 कि.ग्रा. कॉपर हाइड्रोक्साइड 77 % डब्लू.पी. या 350–400 ग्राम टेबुकोनाजोल 50 % + ट्राइफ्लोक्सीस्ट्रोबिन 25 % डब्लू.जी. या 550 ग्राम फ्लूपायरम 17.7 % + टेबुकोनाजोल 17.7 % एस.सी. या 1 लीटर पिकोक्सीस्ट्रोबिन 7.05 % + प्रोपिकोनाजोल 11.7 % एस.सी. को 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें। द्वितीय छिड़काव इन्ही रसायनों का बालियों के पूर्णतयाः बाहर निकलने के बाद करें।

सम्पर्क सूत्र : 8755790584

☑

मक्का

**डा. अमित भटनागर, डा. एन.के. सिंह,
डा. आर.पी. सिंह एवं डा. वीर सिंह**

हमारे देश में धान एवं गेहूँ के बाद मक्का तीसरी मुख्य खाद्यान्न फसल है। इसे पॉपकार्न, स्वीटकार्न एवं बेबीकॉर्न के लिए भी उगाया जाता है। इसके अतिरिक्त इससे स्टॉर्च, खाद्य तेल, इथेनॉल आदि उत्पाद भी बनाये जाते हैं। हमारे देश में मक्का का अधिकांश उपयोग मुर्गियों के दाने के लिए किया जाता है। मक्का को अनाज, दाने एवं चारे के रूप में सदियों से प्रयोग में लाया जा रहा है। मक्का मुख्यतः खरीफ ऋतु में उगायी जाती है परन्तु जिन क्षेत्रों में सिंचाई की सुविधा है वहाँ इसे रबी एवं बसंत ऋतु में भी उगाया जाता है। उत्तरी पश्चिमी मैदानी क्षेत्रों तथा तराई क्षेत्रों में बसंत ऋतु में मक्का को उगाकर अधिक लाभ कमाया जा सकता है।

प्रजातियाँ

आनुवांशिक आधार पर मक्के की दो प्रकार की प्रजातियाँ होती हैं संकुल तथा संकर मक्का। संकुल मक्का की उत्पादन क्षमता संकर की अपेक्षा कम होती है, लेकिन इनमें सूखा, कीट, रोग आदि सहने की क्षमता ज्यादा होती है। संकुल मक्का का बीज 3 से 4 वर्ष तक प्रयोग में लाया जा सकता है। संकर मक्का की उत्पादन क्षमता अधिक होती है, लेकिन इनमें कीट, रोग आदि की संभावना ज्यादा होती है। संकर मक्का का बीज अगले वर्ष बोने पर उत्पादन काफी कम मिलता है। अतः प्रत्येक वर्ष संकर मक्का का नया बीज बोना चाहिए।

मक्का की प्रजातियों को पकने के आधार पर निम्नालिखित तीन मुख्य भागों में बाँटा गया है:

1. शीघ्र पकने वाली प्रजातियाँ (75–80 दिन अवधि): ये प्रजातियाँ वर्षा आधारित क्षेत्रों के लिए उपयुक्त हैं। इन्हें सिंचित अवस्था में बसंत ऋतु में भी उगाया जा सकता है।

संकुल : कंचन, गौरव, सूर्या, विवेक संकुल मक्का 11, 31, 35, 37

संकर : पंत संकर मक्का 1, पंत संकर मक्का 4, पंत संकर मक्का 5, पी.इ.इ.एम.एच. 5, विवेक संकर मक्का 21, 23, 25, 33, 43, 39, 47, 53, डी.एम.एच. 107, पी.एम.एच. 2, एच.एम. 13, पूसा एच.एम. 4, 8, बायो 605

2. मध्यम अवधि वाली प्रजातियाँ (80–90 दिन अवधि): ये प्रजातियाँ उन क्षेत्रों के लिए उपयुक्त हैं जहाँ वर्षा सामान्य होती है।

संकुल : तरूण, नवीन, किरन, नवजोत, बजौरा मक्का 1, प्रताप मक्का 1, पूसा संकुल 3, 4

संकर : जे.के.एम.एच. 1701, एच.एम. 4, 10, बायो 9544, पंत संकर मक्का 6, के.डी.एम.एच. 017, डी 2244, पालम संकर मक्का 2

3. देर से पकने वाली प्रजातियाँ (90–100 दिन अवधि)

संकुल : देवकी, प्रभात, किसान, विजय

संकर : एच.क्यू.पी.एम. 1, 4, एच.एम. 11, बुलंद, पी. 3522

क्षेत्र विशेष हेतु संस्तुत उन्नत प्रजातियाँ

1. तराई, भावर एवं मैदानी क्षेत्र

संकर : एच.एम 4, 10, 11, 13, एच.क्यू.पी.एम. 1, 4, 5, पंत संकर मक्का 1, विवेक मक्का 51, सरताज, प्रकाश, पंत संकर मक्का 4, बुलंद, बायो 9544, पी. 3522, पंत संकर मक्का 5, पंत संकर मक्का 6, सी.पी. 838

संकुल : तरूण, नवीन, कंचन, श्वेता, डी. 765, सूर्या, गौरव, अमर, बजौरा मक्का 1, विवेक संकुल 11, पंत संकुल मक्का 3

2. पर्वतीय क्षेत्र

संकर : विवेक संकर 9, 39, 45, 47, 53, 55, 57, डी.एम.एच. 109, एच.एम. 13, बिस्को चैम्पियन 61, जे.के.एम.एच. 4152

संकुल : विवेक संकुल मक्का 11, वी.एल. मक्का 37, विवेक संकुल 31, विवेक संकुल 35, प्रगति, कंचन, नवीन, श्वेता, पंत संकुल मक्का 4

विशेष उपयोग हेतु मक्का की किस्में

1.चारे हेतु : अफ्रीकन टॉल, जे 1006

2.स्वीटकार्न : शुगर 75, वी.एल. स्वीटकार्न हाइब्रिड 1, 2, एन.एस.सी.एच. 12 (मिस्ठी), हाई ब्रिक्स 53, 39

3.पॉपकार्न : वी.एल. अम्बर, पंत पॉपकार्न 1, शालीमार पॉपकार्न 1

4. उच्च प्रोटीनयुक्त मक्का : एच. क्यू. पी. एम. 1, 4, 5, 7, विवेक क्यू.पी.एम. 9, 45, 59, 61, 63

5.बेबीकॉर्न : एच.एम. 4, वी.एल. बेबीकार्न 1, 2

बुवाई का समय

तराई, भावर एवं मैदानी क्षेत्र : जून द्वितीय सप्ताह

निचले पहाड़ी क्षेत्र : जून प्रारम्भ से जून मध्य तक

मध्यम पहाड़ी क्षेत्र : मई अन्त से जून मध्य तक

अत्यधिक ऊँचे पहाड़ी क्षेत्र : अप्रैल अन्त से मई मध्य तक

मैदानी क्षेत्रों में रबी ऋतु में इसकी बुवाई का उचित समय 15 अक्टूबर से 15 नवम्बर है। बसंत ऋतु में बुवाई फरवरी के प्रथम पखवाड़ा में करनी चाहिए।

बीज की मात्रा

संकुल मक्का के लिए 18 से 20 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर (360 से 400 ग्रा. प्रति नाली), संकर मक्का के लिए 20–22 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर (400 से 440 ग्राम प्रति नाली), पॉपकार्न के लिए 12 से 14 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर (240–280 ग्राम प्रति नाली), बेबीकार्न के लिए 40–45 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर (800–900 ग्रा. प्रति नाली) तथा स्वीटकार्न के लिए 8 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर (160 ग्राम/नाली) बीज प्रयोग करना चाहिए।

बुवाई की विधि

बुवाई पंक्तियों में करें। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 60 से.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 25 से.मी. रखनी चाहिए। बेबीकार्न के लिए पौधे से पौधे की दूरी 15 से.मी. एवं पंक्ति से पंक्ति की दूरी 50 से.मी. रखनी चाहिए। बीज लगभग 5 से.मी. गहरा बोना चाहिए। यदि घर का बीज प्रयोग में लाया जा रहा हो तो थीरम 40 एफ.एस. 24 मि.ली. या थीरम 75 डब्लू.एस. 25–30 ग्राम मात्रा को 1 लीटर पानी में मिलायें तथा इस घोल से एक हैक्टर क्षेत्र के बीज को उपचारित करके बोयें।

उर्वरकों की मात्रा एवं प्रयोग विधि

उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करना चाहिए। यदि किसी कारण मृदा परीक्षण न हुआ हो तो जल्दी पकने वाली प्रजातियों के लिए 100 कि.ग्रा. नत्रजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 40 कि.ग्रा. पोटेशियम (क्रमशः 2.0, 1.2 एवं 0.8 कि.ग्रा. प्रति नाली) तथा देर एवं मध्यम देर से पकने वाली प्रजातियों के लिए 120–150 कि.ग्रा. नत्रजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 40 कि.ग्रा. पोटेशियम (क्रमशः 2.4–3.0, 1.2 एवं 0.8 कि.ग्रा. प्रति नाली) की दर से प्रयोग करना चाहिए। सम्पूर्ण फॉस्फोरस व पोटेशियम एवं एक चौथाई नत्रजन की मात्रा बुवाई के समय कूड़ों में प्रयोग करनी चाहिए। शेष नत्रजन बराबर–बराबर मात्रा में तीन बार में–फसल की 3–4 पत्ती की अवस्था, पौधे की घुटने की ऊँचाई की अवस्था तथा फूल (नर मंजरी) निकलते समय टॉप–ड्रेसिंग के रूप में प्रयोग करनी चाहिए। उर्वरकों को पौधों के पास देना चाहिए ताकि उर्वरक पौधों के जड़ क्षेत्र में पहुँच जाये। जिन क्षेत्रों में जिंक की कमी हो वहाँ जिंक सल्फेट हेप्टाहाइड्रेट (21 % जिंक) की 25 कि.ग्रा. मात्रा या जिंक सल्फेट मोनोहाइड्रेट (33 % जिंक) की 15 कि.ग्रा. मात्रा प्रति हैक्टर की दर से बुवाई से पूर्व खेत में प्रयोग करनी चाहिए। यदि खड़ी फसल में जिंक की कमी के लक्षण आते हैं तो 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट के घोल का छिड़काव पौधों पर 1000 लीटर/हैक्टर की दर से करना चाहिए। बेबीकार्न वाली फसल में नत्रजन की अधिक आवश्यकता होती है, अतः इसमें 180 कि.ग्रा. नत्रजन प्रति हैक्टर (3.6 कि.ग्रा. प्रति नाली) प्रयोग करें। इसकी एक तिहाई मात्रा बुवाई के समय तथा शेष मात्रा दो बराबर भागों में बुवाई के 20–25 तथा 40–45 दिन बाद खड़ी फसल में डालें। पौधों पर 25–30 दिन में मिट्टी चढ़ाने से फसल पर अच्छा प्रभाव आता है, इससे पौधे कम गिरते हैं तथा खरपतवार की समस्या भी कम हो जाती है।

खरपतवार नियंत्रण

मक्का की फसल में कम से कम दो निराई–गुड़ाई, प्रथम बोने के 20 दिन एवं द्वितीय 35 दिन बाद करने की आवश्यकता होती है। रासायनिक विधि से खरपतवार को नष्ट करने के लिए एट्राजीन 50 डब्लू. पी. 2.0 कि.ग्रा. चूर्ण प्रति हैक्टर (40 ग्रा. चूर्ण 10 लीटर पानी प्रति नाली) की दर से बुवाई के तुरंत बाद या बुवाई के 2 से 3 दिन के अन्दर छिड़कनी चाहिए। यदि मक्का के साथ दलहनी फसल बोयी गयी है तो इसका छिड़काव नहीं करना चाहिए। टेम्बोट्राइओन 286 मि.ली. प्रति हैक्टर या टोप्रामिजोन 75 मि.ली. प्रति हैक्टर खरपतवारनाशी का प्रयोग बुवाई के 20–25 दिन बाद करें। खरपतवारनाशी रसायनों के प्रयोग के लिए पानी की मात्रा 500 लीटर/हैक्टर रखनी चाहिए। मोथा के नियंत्रण के लिए हेलोसल्फ्यूरान मिथाइल की 90 ग्राम मात्रा प्रति हैक्टर प्रयोग करनी चाहिए।

सिंचाई

पौधों की प्रारम्भिक अवस्था, फसल की घुटनों तक की ऊँचाई तथा पुष्पन की अवस्था पर पर्याप्त नमी आवश्यक है। खरीफ ऋतु में सामान्यतः सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है क्योंकि जल की पूर्ति वर्षा से हो जाती है। यदि वर्षा न हो रही हो तो आवश्यकतानुसार सिंचाई करनी चाहिए। भुट्टे के आरम्भिक अवस्था के समय पानी की कमी होने पर दाने कम तथा छोटे बनते हैं। वर्षा के बाद खेत से पानी के निकास का अच्छा प्रबंधन होना चाहिए अन्यथा पौधे पीले पड़ जाते हैं और उनकी बढ़वार रूक जाती है। रबी ऋतु की फसल में सामान्यतः 8–9 तथा बसंत ऋतु की फसल में 6–7 सिंचाईयों की आवश्यकता होती है।

सहफसली

मक्का में सहफसली खेती करने से अतिरिक्त आय प्राप्त होती है। खरीफ में मक्का की दो पंक्तियों के बीच में सोयाबीन, मूँगफली, लोबिया, मूँग या उर्द की 1 या 2 पंक्तियों को बोया जा सकता है। इस प्रकार सहफसली के रूप में दलहनी फसलों को उगाकर अतिरिक्त उपज प्राप्त की जा सकती है।

कीट नियंत्रण

तना छेदक: इस कीट की सूड़ियाँ तनों में छेद करके अन्दर ही अन्दर खाती रहती हैं जिसके कारण मृतगोभ बन जाता है और पूरा पौधा सूख जाता है। इसकी रोकथाम हेतु कार्बोफ्यूरान 3जी की 33 कि.ग्रा. मात्रा प्रति हैक्टर की दर से बुवाई के समय खेत में मिलायें। खड़ी फसल में इस कीट का प्रकोप होने पर सिंचाई के बाद इस कीटनाशी की 33 कि.ग्रा. मात्रा प्रति हैक्टर की दर से फसल की पंक्तियों में पौधों के पास डालें अथवा खड़ी फसल में डाईमेथोएट 30 % ई.सी. की 660 मि.ली. मात्रा 500–600 लीटर पानी में मिलाकर प्रति हैक्टर क्षेत्र में छिड़काव करें।

प्ररोह मक्खी : ये पौधे की प्रारम्भिक अवस्था में मध्य प्ररोह में घुसकर उसके भीतरी भाग को खाते हैं। इस कीट का आक्रमण बसन्त ऋतु की मक्का में बहुत अधिक होता है। पौधे उगने के पश्चात् यदि 20–25 दिन तक फसल को बचा लिया जाए तो उसके पश्चात् इस कीट का आक्रमण नहीं होता है। इसके प्रकोप से बचने के लिए वही कीटनाशी का प्रयोग करें जो तना छेदक के नियंत्रक के लिए बताये गये हैं। परन्तु डाईमेथोएट की मात्रा 1155 मि.ली. प्रति हैक्टर रखें। बीज को इमिडाक्लोप्रिड 48% एफ.एस. से 1 मि.ली. प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करके बोयें। इस कीट का फसल पर अधिक प्रकोप होने पर मोनोक्रोटोफॉस की 625 मि.ली. या ऑक्सीडिमेटॉन मिथाइल 25% ई.सी. की 1000 मि.ली. मात्रा प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें।

पतझड़ सैनिक कीट (फॉल आर्मी वर्म)

यह एक नया कीट है इसके प्रकोप से मक्का की फसल में बहुत अधिक क्षति होती है। शुरूआत में इस कीट की सूंड़ी पत्तियों के हरे भाग को खुरचकर खाती है जिससे पत्तियों में सफेद जाली जैसी दिखायी पड़ती है। इस कीट की सूंड़ी के सिर पर उलटा वाई का निशान तथा पिछले हिस्से पर चार छोटे वर्गाकार

काले रंग के धब्बे होते हैं। बड़ी अवस्था में इसकी सूंड़ी गोफ में तथा भुट्टे के अन्दर प्रवेश कर जाती है। ऐसी दशा में इस कीट का नियंत्रण संभव नहीं हो पाता है। अतः इस कीट के प्रकोप से बचने के लिए शुरूआती अवस्था से ही नियंत्रण करना चाहिए। इसके लिए स्पीनोट्राम 11.7 प्रतिशत एस.सी. का 0.5 मि.ली./लीटर या क्लोरान्ट्रानीलीप्रोले 18.5 एस सी का 0.4 मि.ली. /लीटर या थियामेथोक्जाम 12 प्रतिशत + लेम्डासाईहैलोथ्रिन 9.5 प्रतिशत का 0.2 मि.ली./लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

रोग नियंत्रण

वलय पत्ती एवं शीथ अंगमारीः यह रोग प्रायः 40 – 50 दिन के पौधों पर फूल खिलने के पहले लगता है जिसमें भूमि के सतह के ऊपर तनों पर भूरे रंग के धब्बे बनते हैं जो बाद में पत्ती पर भी बन जाते हैं जिसके पश्चात् पूरा पौधा सूख जाता है।

उपचारः रोग के लक्षण दिखाई देते ही निचली पत्तियों को तोड़कर हटा दें। अधिक प्रकोप होने पर इस रोग के नियन्त्रण के लिए बीमारी के लक्षण दिखते ही मैन्कोजेब का 2.5 कि.ग्रा. या वेलिडामाइसिन का 2 कि.ग्रा. या प्रोपिकोनाजोल या कार्बेन्डाजिम का 1 कि.ग्रा. की दर से 500–600 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें। यदि आवश्यकता हो तो दूसरा छिड़काव 10 दिन पश्चात् करें।

तुलासिता रोग या भूरी धारीदार मृदुरोमिल आसिता : इस रोग में पत्तियों पर पीली धारियाँ पड़ जाती हैं। पत्तियों के नीचे की सतह पर सफेद रूई के समान फफूँदी दिखाई देती है। रोगी पौधों में भुट्टे कम बनते हैं या बनते ही नहीं हैं।

झुलसा रोगः इस रोग में पत्तियों पर लम्बे तथा कुछ अण्डाकार नाव के आकार के पीले से भूरे रंग के धब्बे बन जाते हैं जो बाद में काले हो जाते हैं और अधिक प्रकोप होने पर पत्तियाँ झुलस कर सूख जाती हैं।

उपचारः उपरोक्त दोनों रोगों की रोकथाम हेतु मैंकोजेब 75 डब्लू.पी. या जिनेब 75 डब्लू.पी. की 1.5–2.0 कि.ग्रा. मात्रा को 750–800 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर की दर से बीमारी के लक्षण दिखाई देने पर छिड़काव करना चाहिए। दूसरा छिड़काव प्रथम छिड़काव के 10–15 दिन पर करना चाहिए।

तना सड़न रोगः यह रोग अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में जहाँ अधिक पानी रुकता है, अधिक पाया जाता है। इसमें तने की पोरियों पर जलीय धब्बे दिखाई देते हैं जो शीघ्र ही सड़ने लगते हैं और उनमें से दुर्गन्ध आती है। पत्तियाँ पीली पड़कर सूख जाती हैं तथा पौधे पोरी से टूटकर गिर जाते हैं।

उपचारः सिंचाई के पानी के साथ ब्लीचिंग पाउडर 25 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर खेत में डालें। खेत में पानी के निकास की उचित व्यवस्था बनाऐं।

कटाई एवं उपज

फसल पकने पर भुट्टों को ढकने वाली पत्तियाँ पीली पड़ने लगती हैं। इस अवस्था में कटाई करनी चाहिए। शीघ्र पकने वाली प्रजातियों की 40–45 कुन्टल तथा मध्यम एवं देर से पकने वाली प्रजातियों की 50–60 कुन्टल प्रति हैक्टर औसत पैदावार प्राप्त होती है।

सम्पर्क सूत्र : 9411159845 ☑

दलहनी फसलें

डा. आर.के. पंवार, डा. एस.के. वर्मा,
डा. के.पी.एस. कुशवाहा, डा. मीना अग्निहोत्री एवं
डा. जे.पी. पुरवार

देश की अर्थव्यवस्था में दलहनी फसलों का महत्वपूर्ण स्थान है। दलहनी फसलों के उत्पादन और खपत की दृष्टि से भारत का विश्व में प्रथम स्थान है। वर्ष 2022–23 में देश में दलहनों का कुल क्षेत्रफल 307 लाख हैक्टर तथा उत्पादन 252 लाख टन रहा है। भारत में मुख्य रूप से चना, अरहर, उर्द, मूँग एवं मसूर की खेती की जाती है। वर्ष 2022–23 में इन फसलों के 107, 48, 48.3, 32.5 एवं 38.2 लाख हैक्टर क्षेत्रफल से क्रमशः 135, 43.2, 15.1, 19.9 एवं 12.7 लाख टन उत्पादन प्राप्त हुआ है। दालें शाकाहारी मनुष्यों के भोजन में प्रोटीन का मुख्य आधार होने के साथ ही कुछ सूक्ष्म पोषक तत्वों के भी स्त्रोत हैं। दालों में प्रोटीन की मात्रा अन्य धान्य अनाजों की तुलना में 2 से 3 गुणा अधिक होती है। इस प्रकार दालें हमारे शारीरिक और मानसिक विकास के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण है। शाकाहरी भोजन में प्रोटीन का स्त्रोत होने के साथ ही साथ दलहनी फसलें मृदा स्वास्थ्य को भी सुदृढ़ बनाये रखने में अहम भूमिका निभाती हैं। ये फसलें नाइट्रोजन यौगिकीकरण के द्वारा मृदा की उर्वरता में वृद्धि कर कृषि को अवलम्बनीय बनाने में अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं। सघन फसल पद्धति में दलहनी फसलों के समावेश से मृदा तथा पर्यावरण पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। विगत कुछ वर्षों में दलहनी फसलों की उन्नतशील एवं रोग रोधी प्रजातियों एवं उत्पादन तकनीकों के विकास के फलस्वरूप दलहनों की उत्पादकता में कुछ वृद्धि देखने को मिली है। दलहनों की बाजार में मॉग एवं कीमत में बढ़ोत्तरी के कारण भी किसानों की दलहनों की खेती में रूचि हुई है। दलहनों की उपलब्ध उन्नतशील प्रजातियों एवं उत्पादन तकनीकों को अपनाकर दलहनों के उत्पादन में देश आत्मनिर्भर हो सकता है।

चना

चना एक अत्यन्त महत्वपूर्ण दलहनी फसल है जो कम सिंचित भूमि में भी आसानी से उगायी जा सकती है।

उन्नत प्रजातियाँ

छोटे दाने वाली : पंत जी 114, डी.सी.पी. 92–3, जी.एन.जी. 1581, आर.एस.जी. 963

मध्यम आकार के दाने वाली : पंत जी 186, पूसा 547, पंत जी 3, पंत जी 4, पंत जी 5, पंत जी 6, पंत जी 7, पंत जी 8, पंत जी 9, पंत जी 10

मोटे दाने वाली : पूसा 256

काबुली चना : पूसा 1003, पूसा 1053, पंत काबुली चना 1, जे.जी.के. 1, पंत काबुली चना 2

उर्वरक

दलहनी फसल होने के कारण जड़ों में उपस्थित जीवाणुओं द्वारा वायुमण्डल से पर्याप्त मात्रा में नत्रजन का उपयोग कर लिया जाता है। प्रारम्भ के दिनों में जब तक जीवाणु पूर्णरूप से कार्य नहीं करते, फसल के लिए अलग से 15–20 कि.ग्रा. नत्रजन तत्व प्रति हैक्टर देना आवश्यक होता है। फॉस्फोरस एवं पोटाश तत्वों को मृदा परीक्षण के आधार पर प्रयोग करना लाभप्रद होता है। यदि मृदा परीक्षण नहीं कराया गया हो तो 40–45 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 20–30 कि.ग्रा. पोटाश तत्व प्रति हैक्टर प्रयोग करें। इन सभी तत्वों को बुवाई के समय मिट्टी में मिला दें।

जैव उर्वरकों से बीजोपचार

बीज का राइजोबियम एवं पी.एस.बी. जैव उर्वरकों द्वारा उपचार करना लाभप्रद होता है। बीजोपचार के लिए राइजोबियम एवं पी.एस.बी. जैव उर्वरकों की लगभग 200 ग्राम मात्रा का एक पैकेट 10 कि.ग्रा. बीज को उपचारित करने के लिए पर्याप्त होता है। बीज को स्वच्छ पानी से हल्का नम कर कल्चर को बीज के साथ अच्छी प्रकार मिला दें जिससे बीज के ऊपर कल्चर की एक समान परत चिपक जाये। कल्चर को बीज के ऊपर चिपकाने के लिए 10 प्रतिशत गुड़/चीनी का घोल भी उपयोग में लाया जा सकता है। बीजोपचार के पश्चात् बीज को थोड़ी देर छाया में सुखाकर तुरन्त बुवाई कर देनी चाहिए।

बीज को पहले जैव नियंत्रक ट्राइकोडर्मा पाउडर (8 ग्राम/कि.ग्रा. बीज) से शोधित करें तथा बाद में जैव उर्वरकों से उपचारित करना चाहिए।

बीज की मात्रा

छोटे एवं मध्यम आकार के बीज की मात्रा प्रति हैक्टर 60–80 कि.ग्रा. एवं मोटे दाने वाले बीज 80 से 100 कि.ग्रा. बुवाई में प्रयोग करना चाहिए।

बुवाई का समय एवं विधि

पर्वतीय क्षेत्रों में मध्य अक्टूबर से नवम्बर के प्रथम सप्ताह तथा तराई क्षेत्रों में नवम्बर का प्रथम पखवाड़ा बुवाई के लिए उत्तम रहता है। तराई क्षेत्रों में पछेती बुवाई दिसम्बर के प्रथम पखवाड़े तक भी की जा सकती है। बुवाई 30 से 45 सेमी. की दूरी पर बनी पंक्तियों में करें।

सिंचाई

यदि जाड़ों में वर्षा न हो तो एक सिंचाई फूल आने से पहले तथा दूसरी फली बनते समय करना लाभप्रद होता है। सिंचाई हल्की होनी चाहिए।

खरपतवारों की रोकथाम

बुवाई से 25–30 एवं 45–50 दिनों बाद खुरपी द्वारा खरपतवारों को निकाल देना चाहिए। सभी दलहनी फसलों के लिए वेल्लोर 32 ई.सी. (पेन्डीमिथेलिन 30 ई.सी. + इमेजाथापायर 2 ई.सी.) 1.0 कि.ग्रा. 200–250 लीटर पानी में घोलकर बुवाई के तुरन्त बाद प्रति हैक्टर छिड़काव से खरपतवारों का प्रकोप कम हो जाता है। संकरी पत्ती वाले खरपतवारों की संख्या ज्यादा होने की दशा में फेनोक्साप्रोप–पी ईथाइल 50 ग्राम सक्रिय तत्व 200–250 लीटर पानी में घोलकर बुवाई के 20–25 दिन बाद प्रति हैक्टर छिड़काव खरपतवार प्रबन्धन में प्रभावी पाया गया है।

फसल सुरक्षा

कीट नियंत्रण

चने में फली बेधक के नियंत्रण के लिए नीम सीड करनेल एक्सट्रैक्ट 5 प्रतिशत, एन.पी.वी. 250 सूड़ीतुल्यांक अथवा बी.टी. 1 कि.ग्रा./है., क्लोरान्ट्रानिलिप्रोले 18.5 एस.एल. के 125 मि.ली. या इमामेक्टिन बेन्जोएट 5 एस.जी. का 220 ग्राम 500–600 लीटर पानी में घोल कर प्रति हैक्टर छिड़काव करें। पहला छिड़काव पौधों में 50 प्रतिशत फूल आने की अवस्था में, दूसरा छिड़काव पहले छिड़काव के 15 दिन बाद तथा तीसरा आवश्यकतानुसार दूसरे छिड़काव के 15 दिन बाद करें।

रोग नियंत्रण

चने में मुख्य रूप से उकठा, जड़ सड़न एवं अंगमारी रोग का प्रकोप होता है। इनकी रोकथाम के लिए बीजों को ट्राइकोडर्मा (8 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज) नामक जैव नियंत्रक से उपचारित करके ही बोयें। चने की खेती, खरीफ में धान उगाने के बाद करने से इन रोगों का प्रकोप काफी कम होता है। गर्मियों में गहरी जुताई करना भी लाभप्रद साबित हुआ है।

उपज

वैज्ञानिक विधि से खेती करने पर चने की 20–30 कुन्तल प्रति हैक्टर पैदावार ली जा सकती है।

मटर

मटर की फसल दाल के लिए उगायी जाती है। सूखी मटर को दलकर दाल तथा सूप बनाने के काम में लाते हैं। भूसंरक्षण की दृष्टि से भी यह महत्वपूर्ण फसल है।

भूमि

दोमट तथा हल्की भूमि अधिक उपयुक्त है।

उन्नत प्रजातियाँ

मैदानी क्षेत्र : के. पी. एम. आर. 522, अपर्णा, मालवीय मटर 15, डी. डी. आर. 23, पंत मटर 13, पंत मटर 14, पंत मटर 25, पंत मटर 74, पंत मटर 155, पंत मटर 250, पंत मटर 347, पंत मटर 462, पंत मटर 484, पंत मटर 497, पंत मटर 498, पंत मटर 501

सामान्य प्रजाति : पंत मटर 42, पंत मटर 243

पर्वतीय क्षेत्र : पंत मटर 13, पंत मटर 14, आई.पी.एफ. डी. 1–10

सामान्य प्रजातिः वी.एल. मटर 40, वी. एल. मटर 42

बुवाई का समय

तराई व भावर एवं मैदानी क्षेत्र : अक्टूबर के मध्य से नवम्बर के मध्य तक।

पर्वतीय क्षेत्र : अक्टूबर के मध्य से नवम्बर के प्रथम सप्ताह तक।

बीज की मात्रा

सामान्य प्रजाति : 80–100 कि.ग्रा./हैक्टर।

बौनी प्रजाति : 125 कि.ग्रा./हैक्टर।

बुवाई की विधि

सामान्य प्रजाति : हल के पीछे 30 से.मी. की दूरी पर।

बौनी प्रजाति : हल के पीछे 20–25 से.मी. की दूरी पर।

बीजोपचार

उपयुक्त राइजोबियम एवं पी.एस.बी. जैव उर्वरकों से चने के भाँति बीजोपचार कर बुवाई करें।

खाद एवं उर्वरक

मृदा परीक्षण के आधार पर अथवा सभी प्रजातियों के लिए 20 कि.ग्रा. नत्रजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस, 40 कि.ग्रा. पोटाश, 30 कि.ग्रा. गन्धक तथा 60 कुन्तल गोबर की खाद प्रति हैक्टर बुवाई से पूर्व मिट्टी में मिला दें।

खरपतवार नियंत्रण

चने की भॉति करें।

सिंचाई

चने की भॉति फूल आने से पहले तथा दाना भरते समय आवश्यकतानुसार सिंचाई करें।

फसल सुरक्षा

रोग नियंत्रण

1. **बुकनी रोग** : रचना, अपर्णा, पंत मटर 25 आदि अवरोधी किस्मों का प्रयोग करें। रोग नियंत्रण हेतु 3 कि.ग्रा. घुलनशील गंधक या 500 मि.ली. ट्राइडोमार्फ 80 ई.सी. दवा को 600–800 लीटर पानी में घोलकर रोग के लक्षण आते ही 10–12 दिन के अन्तर पर दो बार छिड़काव करें।
2. **रतुआ रोग** : 500 मि.ली. ट्राइडोमार्फ 80 ई.सी. प्रति हैक्टर 600–800 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।
3. **उकठा रोग** : दीर्घकालीन फसलचक्र अपनायें तथा चने की भांति बीज शोधन करके बुवाई करें।
4. **तुलासिता रोग** –इसकी रोकथाम रतुआ रोग की भॉति करें।
5. **सफेद विगलन**– यह रोग पर्वतीय क्षेत्र में व्यापक रुप से फैल रहा है। पूरा पौधा सफेद रंग का होकर मर जाता है। इसके उपचार के लिए फसल की बुवाई नवम्बर के प्रथम सप्ताह के बाद करें। दीर्घकालीन फसलचक्र अपनायें। जनवरी माह में जब लक्षण दिखाई दें तब घुलनशील गन्धक का 0.3 प्रतिशत घोल बनाकर 15 दिन के अन्तराल पर आवश्यकतानुसार छिड़काव करें।
6. **झुलसा रोग**– 8 ग्राम ट्राइकोडर्मा जैव नियंत्रक से प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से बीज को उपचारित करना चाहिए और बाद में प्रोपिकोनाजोल का 0.1 प्रतिशत घोल बनाकर छिड़काव करें।
7. **बीज विगलन**–बीज बोने से पूर्व जैव नियंत्रक ट्राइकोडर्मा 8 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से बीजोपचार करें।

कटाई एवं उपज

फसल पूर्ण पकने पर कटाई करके मड़ाई कर लें तथा दानों को अच्छी तरह सुखाकर भण्डारण करें। उपरोक्त प्रकार से खेती करके मटर से 20–25 कुन्तल प्रति हैक्टर उपज प्राप्त की जा सकती है।

मसूर

मसूर रबी मौसम की एक प्रमुख दलहनी फसल है जिसमें अन्य दलहनी फसलों की अपेक्षा सूखा सहन करने की क्षमता अधिक होती है। मसूर का अधिक उत्पादन प्राप्त करने हेतु निम्न बातों पर विशेष ध्यान देना चाहिए :

उन्नत किस्में

उन्नत किस्मों का विवरण सारणी 1 में दिया गया है।

सारणी 1 : मसूर की उन्न्त किस्मों का विवरण

प्रजातियाँ	पकने की अवधि (दिन)	पैदावार (कु./हैक्टर)	उत्पादन क्षेत्र	विशेष गुण
पंत एल 406	130–135	15–20	देश के उत्तर पश्चिमी भाग	समय एवं देर से बोने के लिए व छोटे दाने वाली
पंत एल 4	130–135	15–20	देश के उत्तर पश्चिमी उत्तर प्रदेश	छोटे दाने वाली

पंत एल 5	120–125	18–20	उत्तर प्रदेश एवं उत्तराखण्ड	बहुरोगरोधी, बड़े दाने वाली
पंत एल 7	120–125	18–20	उत्तराखण्ड, उत्तर पश्चिमी भाग	बहुरोगरोधी, बड़े दाने वाली
पंत एल 8	130–135	18–20	उत्तर पश्चिमी भाग	बहुरोगरोधी, छोटे दाने वाली
पंत एल 9	125–130	18–20	उत्तराखण्ड	बहुरोगरोधी, छोटे दाने वाली
डी.पी.एल. 15	120–125	15–20	उत्तर पश्चिमी भाग	बड़े दाने वाली
डी.पी.एल. 62	120–125	15–20	उत्तर पश्चिमी भाग	बड़े दाने वाली
वी.एल. मसूर 5	160–165	15–16	सम्पूर्ण पहाड़ी क्षेत्र	छोटे दाने वाली
वी.एल. मसूर 125	160–165	15–16	सम्पूर्ण पहाड़ी क्षेत्र	छोटे दाने वाली
वी.एल. मसूर 126	160–165	15–16	सम्पूर्ण पहाड़ी क्षेत्र	छोटे दाने वाली
वी.एल. मसूर 507	160–165	15–16	सम्पूर्ण पहाड़ी क्षेत्र	छोटे दाने वाली
पंत एल 15	125–130	18–20	देश के उत्तरी पश्चिमी मैदानी भाग	बहुरोगरोधी, छोटे दाने वाली
पंत एल 14	125–130	18–20	देश के उत्तरी पश्चिमी मैदानी भाग	बहुरोगरोधी, छोटे दाने वाली
पंत एल 12	150–160	13–15	उत्तराखण्ड के पहाड़ी भाग	बहुरोगरोधी, बड़े दाने वाली
पंत एल 11	120–125	18–20	उत्तराखण्ड के मैदानी भाग	बहुरोगरोधी, बड़े दाने वाली

बीज की मात्रा

समय से बुवाई : 30–40 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर
देर से बुवाई : 40–50 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर
बड़े दाने वाली प्रजाति : 50–55 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर

बुवाई का समय एवं विधि

पर्वतीय क्षेत्रों में मध्य अक्टूबर से नवम्बर के प्रथम सप्ताह तक बुवाई का उचित समय है। तराई एवं भावर क्षेत्रों में नवम्बर का प्रथम पखवाड़ा उपयुक्त होता है एवं पछेती बुवाई दिसम्बर के दूसरे सप्ताह तक की जा सकती है। समय से बुवाई करने पर कतार से कतार की दूरी 25 सेमी. तथा विलम्ब से बोने पर 15–20 से.मी. रखनी चाहिए। बुवाई के समय बीज की प्रति 10 कि.ग्रा. मात्रा को 200 ग्राम राइजोबियम एवं 200 ग्राम पी.एस.बी. जैव उर्वरकों से उपचारित करना चाहिए।

उर्वरक

दलहनी फसल होने के कारण प्रारम्भ की अवस्था में 15–20 कि.ग्रा. नत्रजन तत्व प्रति हैक्टर देना आवश्यक है। बाद में जड़ों में उपस्थित जीवाणु इसकी पूर्ति वायुमंडल से कर लेते हैं। फॉस्फोरस एवं पोटाश तत्व मृदा परीक्षण के आधार पर दें। यदि ऐसा सम्भव न हो तो 40–50 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 20–30 कि.ग्रा. पोटाश तत्व प्रति हैक्टर की दर से बुवाई से पूर्व अथवा बुवाई के समय दें।

बीजोपचार

उपयुक्त राइजोबियम एवं पी.एस.बी. जैव उर्वरकों से चने की भाँति बीजोपचार करें।

सिंचाई

यदि जाड़े में वर्षा न हो तो पहली सिंचाई फूल आने के पहले तथा दूसरी फलियाँ बनते समय अवश्य करें। अधिक मात्रा में पानी नहीं लगाना चाहिए।

खरपतवारों की रोकथाम

बुवाई से 40–50 दिनों तक खरपतवार नियंत्रण अवश्य करें। दो निराई पर्याप्त होती हैं। खरपतवारनाशी का प्रयोग चने की भाँति करें।

फसल सुरक्षा

रोग नियंत्रण

1. उकठा रोग : बुवाई से एक दिन पूर्व जैव नियंत्रक ट्राइकोडर्मा पाउडर 5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से बीज का शोधन अवश्य करें।

2. रतुआ रोग : नियंत्रण के लिए 500 मि.ली ट्राइडोमार्फ 80 ई.सी. का 800 ली. पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टर की दर से 10 दिन के अन्तराल पर 2–3 छिड़काव करें।

कटाई एवं मड़ाई

भलीभाँति पकी फसल की ही कटाई करें। मड़ाई करने के बाद दानों को इतना सुखा लें कि नमी की मात्रा 12 प्रतिशत से अधिक न हो।

गन्ने में मसूर

शरद ऋतु में बोये जाने वाले गन्ने के खेत में इसकी मिली–जुली खेती की जा सकती है। गन्ने की दो कतारों के बीच दो कतारें मसूर की लगाने से करीब

6–8 कुन्तल मसूर प्रति हैक्टर प्राप्त की जा सकती है। गन्ने की फसल पर इसका कोई बुरा प्रभाव नहीं पड़ता है।

पैदावार : 15–20 कुन्तल प्रति हैक्टर।

उर्द

उन्नत प्रजातियाँ

पर्वतीय, तराई–भावर एवं मैदानी के लिए संस्तुत प्रजातियाँ :

प्रजाति	पकने की अवधि (दिन)	औसत उपज (कु/है.)
(खरीफ)		
पर्वतीय एवं तराई–भावर		
पंत उर्द 19	85–90	12–15
पंत उर्द 35	85–90	12–15
पंत उर्द 10	85–90	10–12
मैदानी क्षेत्र		
आजाद उर्द 1	80–85	10–12
उत्तरा	80–85	12–15
केयूजी 749	75–80	10–12
(जायद)		
शेखर 1 (हरा दाना)	90–95	12–15
शेखर 2 (हरा दाना)	90–95	10–12
पंत उर्द 12	80–85	12–16
मैदानी एवं निचली पहाड़ी क्षेत्रों के लिए		
पंत उर्द 31	80–85	12–15
(खरीफ एवं जायद)		
पंत उर्द 40	85–90	12–15
पंत उर्द 7	85–95	12–15
पंत उर्द 8	80–85	12–15
पंत उर्द 9	85–90	14–16
पंत उर्द 11	85–90	12–14

बुवाई का समय

पर्वतीय क्षेत्र की घाटियाँ : जून का द्वितीय पखवाड़ा

तराई–भावर एवं मैदानी क्षेत्र : जुलाई के तीसरे सप्ताह से अगस्त का प्रथम सप्ताह

नोटः जायद में बुवाई का उपयुक्त समय मार्च का प्रथम पखवाड़ा है। जहाँ खेत खाली हो वहाँ फरवरी के अंतिम सप्ताह में भी बुवाई की जा सकती है।

बुवाई की विधि

बुवाई पंक्ति में हल के पीछे करें। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30–45 से.मी. होनी चाहिए। बुवाई 3–4 से.मी. गहरी होनी चाहिए। जायद में पंक्ति से पंक्ति की दूरी 20–25 से.मी. रखनी चाहिए।

बीज की मात्रा

खरीफ में 12–15 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर

जायद में 30–35 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर

उर्वरकों का प्रयोग

उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करना चाहिए। यदि परीक्षण की सुविधा उपलब्ध न हो तो 15–20 कि.ग्रा. नत्रजन, 40–50 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 20–30 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर प्रयोग करना चाहिए। उर्वरकों की सम्पूर्ण मात्रा अंतिम जुताई के समय हल के पीछे कूँडों में प्रयोग करें। फॉस्फोरस की मात्रा सिंगल सुपर फॉस्फेट के रुप में प्रयोग करने पर सल्फर की आवश्यकता की भी पूर्ति हो जाती है।

बीज उपचार

जैव नियंत्रक ट्राइकोडर्मा पाउडर 5 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करके बुवाई करें।

जैव उर्वरकों से बीजोपचार

बीजोपचार के लिए राइजोबियम एवं पी.एस.बी. जैव उर्वरकों की लगभग 200 ग्राम मात्रा का एक पैकेट 10 कि.ग्रा. बीज को उपचारित करने के लिए पर्याप्त होता है। बीज को स्वच्छ पानी से हल्का नम कर कल्चर को बीज के साथ अच्छी प्रकार से मिला दें जिससे बीज के ऊपर कल्चर की एक समान परत चिपक जाये। कल्चर को बीज के ऊपर चिपकाने के लिए 10 प्रतिशत गुड़/चीनी का घोल भी उपयोग में लाया जा सकता है। बीजोपचार के पश्चात् बीज को थोड़ी देर छाया में सुखाकर तुरन्त बुवाई कर देनी चाहिए।

निराई–गुड़ाई

बुवाई के बाद तीसरे या चौथे सप्ताह में पहली निराई–गुड़ाई तथा आवश्यकतानुसार दूसरी निराई–गुड़ाई 40–50 दिन बाद करनी चाहिए। घास तथा चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों को रासायनिक विधि से नष्ट करने के लिए पेन्डीमिथेलिन 30 ई.सी. 1.0 कि.ग्रा. मात्रा को 500–600 लीटर पानी में घोलकर

प्रति हैक्टर बुवाई के तुरन्त बाद जमाव से पूर्व छिड़काव करें।

सिंचाई

वर्षा ऋतु की फसल में सामान्यतया अलग से सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है। जायद में पहली सिंचाई बुवाई के 25–30 दिन बाद तथा बाद में आवश्यकतानुसार 10–15 दिन के अन्तराल पर हल्की सिंचाई करनी चाहिए।

कीट नियंत्रण

1. तना मक्खी : सूंड़ियों द्वारा तने को खोखला अथवा सुरंग बनाकर नुकसान पहुँचाया जाता है, जिससे पौधे पीले पड़कर बाद में सूख जाते हैं। तना मक्खी के एकीकृत कीटनाशी जीव प्रबन्धन के लिए प्रतिरोधी प्रजातियों की बुवाई करें तथा बीज का कीटनाशक रसायन से शोधन करें।

2. बिहार रोमिल सूड़ी : इस कीट की सूडियाँ काले–भूरे रोयेंदार होती हैं जो पत्तियों को खाकर नुकसान पहुँचाती हैं। प्रौढ़ कीट पत्तियों पर समूह में अंडे देते हैं जिन्हें शुरू में ही नष्ट कर देना चाहिए। इसकी रोकथाम के लिए नीम तेल अथवा नीमसीड करनैल एक्सट्रेक्ट का 5 प्रतिशत घोल बनाकर छिड़काव करें।

3. फली बेधक : दलहनी फसलों का मुख्य हानिकारक कीट है। यह दो प्रकार का होता है : एक चित्तीदार जो शाखा की ऊपरी पत्तियों, कलियों तथा पुष्पों को एक साथ लपेटकर तथा अन्दर बैठकर फली के दानों एवं पुष्पों को खाता है तथा दूसरा कीट मुलायम पत्तियों, कलियों, पुष्पों तथा फलियों को खाता है। इसके नियंत्रण के लिए गर्मी में गहरी जुताई करें तथा बहु प्रतिरोधी प्रजातियों की बुवाई करें। 'टी' आकार की खूँटियाँ 20 खूँटी/हैक्टर की दर से लगाएं। 5 % नीम आधारित कीटनाशक या नीम तेल 3000 पी.पी.एम. का छिड़काव करें। रासायनिक नियंत्रण हेतु क्लोरान्ट्रानिलिप्रोले 18.5% एस.सी का 100 मि.ली. प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें।

रोग नियंत्रण

1. पीला चित्तवर्ण रोग : रोगी पत्तियों पर गाढ़े पीले सुनहरे चकत्ते पाये जाते हैं। उग्र अवस्था में पत्तियों के साथ ही तना एवं फलियॉ भी पीली पड़ जाती हैं। यह रोग सफेद मक्खी द्वारा फैलता है। इसके नियंत्रण हेतु कीटनाशी, पाइरीप्रोक्सीफेन 10 ई.सी. 0.5 लीटर या मिथाइल–ओ–डिमेटॉन 25 ई.सी. 1.0 लीटर प्रति हैक्टर की दर से 500–600 लीटर पानी में मिलाकर 2–3 छिड़काव 10–12 दिन के अन्तराल पर करें। रोग अवरोधी प्रजातियॉ जैसे – पंत उर्द 19, पंत उर्द 35, पंत उर्द 31, पंत उर्द 40, तथा पंत उर्द 10 उगायें। उर्द की बुवाई जायद में करने पर यह रोग कम लगता है।

2. वेब झुलसा व पर्ण धब्बा रोग : वेब झुलसा रोग से प्रभावित पौधों की पत्तियाँ झुलस जाती हैं जिन पर कवक तन्तु का जाल दिखाई देता है। पर्ण धब्बा रोग में पत्तियों पर गोलाई लिए हुए कोणीय धब्बे बनते हैं जिनमें बीच का भाग हल्के राख के रंग का या हल्का भूरा या सफेद रंग का हो जाता है तथा किनारे गहरे भूरे रंग के होते है। फलियों एवं तनों पर भी लक्षण दिखाई देते हैं। इसकी रोकथाम के लिए प्रोपिकोनाजोल का 0.1% घोल बनाकर 700–800 लीटर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें।

उपज : संस्तुत सघन पद्धतियाँ अपनाकर 10–15 कुन्तल/हैक्टर पैदावार प्राप्त की जा सकती है।

मूँग

उन्नत प्रजातियाँ

प्रजाति	पकने की अवधि (दिन)	औसत उपज (कु/है.)
खरीफ सीजन में		
पर्वतीय एवं भावर क्षेत्र		
पंत मूँग 2	75–80	8–11
नरेन्द्र मूँग 1	75–80	12–15
पंत मूँग 4	75–85	12–15
पंत मूँग 5	75–80	12–15
(खरीफ एवं जायद)		
पंत मूँग 8	80–90	12–15
पंत मूँग 9	80–90	12–15
मैदानी क्षेत्र (उपरोक्त के अतिरिक्त)		
पी. डी. एम. 11	75–85	10–12
सम्राट	70–75	12–15

मालवीय जनचेतना	75–85	12–15
मालवीय जनप्रिया	75–85	12–15
मालवीय जागृति	75–85	12–15
सत्या (एम.एच. 2–15)	75–80	12–15

बुवाई का समय

पर्वतीय क्षेत्रों की घाटियों में मूँग की बुवाई का उपयुक्त समय जून का द्वितीय पखवाड़ा है। विलम्ब से बुवाई करने पर उपज में कमी आ जाती है। तराई–भावर एवं मैदानी क्षेत्रों में मूँग की बुवाई का सर्वोत्तम समय जुलाई के अन्तिम सप्ताह से अगस्त का दूसरा सप्ताह है। जायद में बुवाई का उचित समय मार्च के द्वितीय पखवाड़ें से 10 अप्रैल तक है। तराई क्षेत्र में मूँग की बुवाई मार्च के अंत तक कर लेनी चाहिए।

बुवाई की विधि

बुवाई कूँड में हल के पीछे 3–4 से.मी. गहराई पर करें। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30–45 से.मी. रखें।

बीज की मात्राः खरीफ में 12–15 कि.ग्रा., जायद में 25–30 कि.ग्रा.

उर्वरकों का प्रयोगः उर्द की भाँति करें ।

बीज उपचार

जैव नियंत्रक ट्राइकोडर्मा पाउडर 5 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करके बीज बोयें।

राइजोबियम से बीजोपचार

उर्द की भाँति ही मूँग के बीज को जैव उर्वरकों से उपचारित करना चाहिए।

निराई–गुड़ाई : उर्द की भाँति करें ।

फसल सुरक्षा : कीटों तथा बीमारियों की रोकथाम उर्द की भाँति करें।

उपज : संस्तुत सघन पद्धतियाँ अपनाकर 10–15 कु./है. उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

राजमा

उन्नत प्रजातियाँ

प्रजाति	पकने की अवधि (दिन)	औसत उपज (कु./है.)
तराई एवं भावर		
पी.डी.आर.14 (उदय)	90–100	15–20
पर्वतीय क्षेत्र		
वी.एल.राजमा 63	120–140	12–15

बीज की मात्रा : 75–80 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर

बुवाई का समय

तराई एवं भावर : जायद में फरवरी का प्रथम पखवाड़ा तथा रबी में अक्टूबर का दूसरा पखवाड़ा।

पर्वतीय क्षेत्र : जून का द्वितीय पखवाड़ा।

बुवाई की विधि : बुवाई 30 से.मी. की दूरी पर कतारों में करें तथा बुवाई के 15–20 दिन बाद पौधों की छंटाई करके कतारों में पौधे से पौधे की दूरी 10 से.मी. कर दें।

बीज उपचार : जैव नियंत्रक ट्राइकोडर्मा पाउडर 8 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से बीज उपचारित कर बोयें।

खाद एवं उर्वरक : गोबर की खाद– 4–5 टन/है0, नत्रजन 80–100 कि.ग्रा./है0, फॉस्फोरस 80 कि.ग्रा./है0, पोटाश 40 कि.ग्रा./हैक्टर।

तराई एवं भावर क्षेत्रों में नत्रजन की मात्रा 80–100 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर, दो बार में प्रयोग करना चाहिए। बीस कि.ग्रा. गंधक/है. देने से लाभकारी परिणाम मिलते हैं।

निराई–गुड़ाई

प्रथम निराई–गुड़ाई एवं पौधों की छंटाई बुवाई के 15–20 दिन बाद करें। आवश्यकतानुसार दूसरी निराई–गुड़ाई 35–40 दिन बाद करें।

सिंचाईः फसल में फूल आते समय तथा फली बनते समय आवश्यकतानुसार सिंचाई करें।

कीट नियन्त्रण

फली छेदक कीट से बचाव हेतु प्रोफेनोफॉस 50 ई.सी. का 2.0–3.0 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

रोग नियन्त्रण

1. जड़ विगलन रोगः जैव नियंत्रक ट्राइकोडर्मा पाउडर की 8 ग्राम मात्रा प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से बीज का शोधन करें। अंकुरण के 15–20 दिन बाद एवं फूल आरम्भ होने पर प्रोपिकोनाजोल के 0.1 प्रतिशत घोल का जड़ों के आस–पास छिड़काव करें।

2. कोणीय पर्ण चित्ती रोगः मैंकोजेब का 0.2 प्रतिशत अथवा कार्बेंडाजिम का 0.1 प्रतिशत घोल बनाकर 4 से 5 छिड़काव करें।

3. एन्थ्रेक्नोजः कार्बेंडाजिम अथवा थायोफिनेट मिथाइल की 600–800 ग्राम मात्रा को 600–800 ली0 पानी में मिलाकर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें तथा आवश्यकतानुसार दूसरा छिड़काव 15 दिन बाद करें।

उपज

जब फसल पकने पर पौधे पीले पड़ जाते हैं तथा सभी पत्तियॉ गिर जाती हैं तब इसकी कटाई करके मड़ाई कर लें तथा दानों को अच्छी तरह सुखाकर भण्डारण करें। संस्तुत सघन पद्धतियाँ अपनाकर 12–15 कुन्तल/हैक्टर उपज प्राप्त की जा सकती है।

अरहर (तूर)

उन्नत प्रजातियाँ

पर्वतीय क्षेत्र में शीघ्र तैयार होने वाली प्रजातियों का प्रयोग करना चाहिए एवं मैदानी क्षेत्र में अगेती प्रजातियों के साथ ही पछेती प्रजातियों की बुवाई की जा सकती है। अरहर की प्रजातियों का विवरण निम्नवत् हैः

प्रजाति	पकने की अवधि (दिन)	औसत उपज (कु./है.)
मैदानी एवं पर्वतीय क्षेत्र		
शीघ्र पकने वाली प्रजातियाँ		
पंत अरहर 6	140–150	18–22
पंत अरहर 291	140–150	18–20
यू.पी.ए.एस. 120	130–135	16–20
पूसा 992	135–140	18–20
वी.एल अरहर 1	130–140	12–15
देर से पकने वाली प्रजातियाँ		
बहार	240–250	20–25
अमर	260–270	20–25
नरेन्द्र अरहर 1	240–260	25–30
मालवीय चमत्कार	230–250	25–30

बुवाई का समय

पर्वतीय क्षेत्रों में बुवाई का उपयुक्त समय मध्य अप्रैल से मध्य मई है। तराई–भावर एवं मैदानी क्षेत्रों में शीघ्र पकने वाली प्रजातियों को सिंचित क्षेत्रों में जून के मध्य तक बो देना चाहिए जिससे फसल नवम्बर के अन्त तक पक कर तैयार हो जाए और दिसम्बर के प्रथम पखवाड़े में गेहूँ की बुवाई सम्भव हो सके। देर से पकने वाली प्रजातियों को जुलाई माह में बोना चाहिए।

बीज एवं बुवाई की विधि

बुवाई हल के पीछे कूँड़ों में करनी चाहिए। बुवाई के 20–25 दिन बाद घने पौधों को निकाल कर पौधे से पौधे के बीच की दूरी निश्चित कर देनी चाहिए। प्रजाति तथा मौसम के अनुसार बीज की मात्रा तथा बुवाई की दूरी निम्न प्रकार रखनी चाहिए।

प्रजाति	बीज की मात्रा (कि.ग्रा./है.)	बुवाई दूरी (से.मी.)	
		पंक्ति से पंक्ति	पौधे से पौधे
पंत अरहर 291,	15	60–75	20
यू.पी.ए.एस. 120			
वी.एल.अरहर 1	15–20	30	20

बीजोपचार

सर्वप्रथम एक कि.ग्रा. बीज को 8 ग्राम जैव नियंत्रक ट्राइकोडर्मा पाउडर से उपचारित करें। इसके बाद राइजोबियम एवं पी.एस.बी. जैव उर्वरकों से उर्द की भॉति बीजोपचार करें।

उर्वरकों का प्रयोग

अरहर की अच्छी उपज के लिए प्रति हैक्टर 15 कि.ग्रा. नत्रजन, 40–50 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 20–30 कि.ग्रा. पोटाश की आवश्यकता होती है। नत्रजन एवं फॉस्फोरस हेतु 100 कि.ग्रा. डाईअमोनियम फॉस्फेट प्रति हैक्टर प्रयोग किया जा सकता है। फॉस्फोरस की मात्रा 250 कि.ग्रा सिंगल सुपर फॉस्फोट से देने पर फसल को 30 कि.ग्रा. सल्फर की पूर्ति भी हो जाती है। इन उर्वरकों को पंक्तियों में बुवाई के समय चोंगा या नाई की सहायता से देना चाहिए जिससे उर्वरक का बीज के साथ सम्पर्क न हो।

सिंचाई

अरहर की बुवाई उचित नमी होने पर करनी चाहिए। नमी के अभाव में पलेवा करके बोना उत्तम रहता है। खड़ी फसल में खेत में कम नमी की अवस्था में एक सिंचाई फलियाँ बनने के समय सितम्बर माह में अवश्य करें।

निराई–गुड़ाई एवं खरपतवार नियंत्रण

बुवाई के एक माह के अन्दर ही एक निराई करनी चाहिए। यदि अरहर की शुद्ध खेती की गयी हो तो दूसरी निराई पहली के 20 दिन बाद करना आवश्यक होगा। खरपतवारों को रासायनिक विधि से नष्ट करने के लिए 1 कि.ग्रा. पेन्डीमिथेलिन 30 ई.सी. को 500–600 लीटर पानी में घोलकर बुवाई के तुरंत बाद पाटा लगाकर जमाव से पूर्व छिड़काव करें।

कीट नियंत्रण

1. फली बेधक कीट : इस कीट की सूड़ी फली के अन्दर घुसकर दाने को खाकर हाँनि पहुँचाती है। प्रौढ कीटों का अनुश्रवण करने के लिए 5–6 फेरोमोन प्रपंच/है. की दर से फसल में फूल आते समय खेत में लगायें। यदि 5–6 माँथ प्रति प्रपंच दो–तीन दिन लगातार दिखाई दें तो निम्नलिखित में किसी एक दवा का प्रयोग फसल में फूल आने पर करना चाहिए। यदि आवश्यकता हो तो दूसरा छिड़काव 15 दिन बाद करें।

1. एन. पी. वी. 500 सूड़ी तुल्यांक अथवा बी. टी. 1 कि.ग्रा./हैक्टर।
2. निबोली 5 प्रतिशत + 1 प्रतिशत साबुन का घोल।
3. इंडोक्साकार्ब 14.5 ई.सी. की 353–400 मि.ली. या इमामेक्टिन बेन्जोएट 5 एस.जी. की 220 मि.ग्रा. या स्पाइनोसेड 45 एस.सी. की 125–162 मि.ली. मात्रा प्रति हैक्टर।

2. अरहर की फली मक्खी : यह फली के अन्दर दाने को खाकर हाँनि पहुँचाती है। इसके उपचार हेतु फूल आने के बाद लेम्डासाइहेलोथ्रिन 5 ई.सी. का 500 मि.ली. प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें। निबोली 5 प्रतिशत का भी छिड़काव कर सकते हैं।

रोग नियंत्रण

1. अरहर का उकठा रोग : यह फ्यूजेरियम नामक कवक से होता है। यह पौधों में पानी व खाद्य पदार्थ के संचार को रोक देता है जिससे पत्तियाँ पीली पड़ कर पूरा पौधा सूख जाता है। पौधे की जड़ें सड़कर गहरे रंग की हो जाती हैं तथा छाल हटाने पर जड़ से लेकर तने की ऊँचाई तक काले रंग की धारियाँ साफ दिखायी पड़ती है, इसका निम्नानुसार उपचार करना चाहिए:

1. जिस खेत में उकठा रोग का प्रकोप अधिक हो उनमें 3–4 साल तक अरहर की फसल नहीं लेनी चाहिए।
2. ज्वार के साथ अरहर की सहफसल लेने से कुछ हद तक उकठा रोग का प्रभाव कम हो जाता है।
3. जैव नियंत्रक ट्राइकोडर्मा पाउडर 8 ग्राम प्रति कि.ग्रा. की दर से बीज उपचारित करना चाहिए।
4. रोग अवरोधी प्रजातियाँ पंत अरहर 3, पंत अरहर 291, वी.एल. अरहर 1, नरेन्द्र अरहर 1 उगायें।

2. अरहर का बंझा रोग : यह रोग माइट द्वारा फैलता है। रोगग्रस्त पौधे में पत्तियाँ अधिक लगती हैं जो छोटी व हल्के रंग की हो जाती हैं तथा फूल नहीं आते, जिससे दाना नहीं बनता है। फसल में इसके नियंत्रण हेतु मिथाइल–ओ–डिमेटॉन की एक लीटर मात्रा 800 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर की दर से 15 दिन के अन्तराल पर 3–4 छिड़काव करें। प्रथम छिड़काव रोग के लक्षण दिखाई देते ही करें। रोगी पौधे को काट कर जला दें।

3. फाइटोफ्थोरा तना झुलसा : इस रोग में पत्तियाँ पीली पड़ जाती हैं, पौधे कमजोर पड़ जाते हैं तथा तना झुलस जाता है।

उपचार

1. अरहर के खेतों में जल निकास का उचित प्रबंध करें तथा बुवाई मेड़ों पर करें।
2. मेटालैक्सिल से 5 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से बीजोपचार करें तथा इसी दवा का 2.5 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से 800 लीटर पानी में घोल बनाकर 2–3 छिड़काव करें।
3. अरहर की बुवाई जून के मध्य में करें।

उपज

सघन पद्धतियाँ अपनाकर अगेती किस्मों की 16–20 कुन्तल/हैक्टर एवं पछेती किस्मों की 25–30 कुन्तल/हैक्टर उपज प्राप्त की जा सकती है।

सम्पर्क सूत्र : 9412982048

☑

तिलहनी फसलें

डा. ए.के. तिवारी, डा. एम.एस. खान, डा. एम.एस. नेगी एवं डा. उषा पंत

राई

तिलहनी फसलों में राई का प्रमुख स्थान है। इसकी खेती सीमित सिंचाई की दशा में अधिक लाभदायक हैं।

उन्नत किस्में

मैदानी, तराई, भावर व घाटी के सिंचित क्षेत्रों के लिए उपयुक्त प्रजातियाँ :

प्रजाति	परिपक्वता अवधि	उपज (कि.ग्रा/है.)	तेलांश (%)	संस्तुत राज्य/क्षेत्र/ परिस्थिति	विशेषताएं/लक्षण
अगेती बुवाई हेतु					
पंत राई 19	110–115	1631–2511	40.9–41.8	दिल्ली, हरियाणा, पंजाब, जम्मू एवं राजस्थान के लिए उपयुक्त	प्रारम्भिक अवस्था में उच्च तापमान के लिए सहिष्णु
पूसा मस्टर्ड 27 (ईजे 27)	118	1437–1669	40–45	उत्तर प्रदेश, उत्तराखण्ड, मध्य प्रदेश एवं राजस्थान के लिए उपयुक्त	सिचिंत अवस्था में अगेती बुवाई तथा बहु–फसली खेती के लिए उपयुक्त
समय से बुवाई के लिए					
क्रान्ति	125–130	2000–2800	40	दिल्ली, गुजरात, हरियाणा, उड़ीसा, पंजाब, राजस्थान, उत्तर प्रदेश एवं पश्चिमी बंगाल के लिए उपयुक्त	मृदुरोमिल रोग रोधी एवं झुलसा व पाले के लिए सहिष्णु
पंत राई 20	122–128	2000–3000	39.39	समय से बुवाई हेतु उत्तराखण्ड के सिंचित एवं असिंचित क्षेत्रों के लिए उपयुक्त	फसल की प्रारंम्भिक अवस्था में उच्च तापमान के लिए सहिष्णु
पंत राई 21	122–125	2400–3000	40	उत्तराखण्ड के मैदानी क्षेत्रों के लिए उपयुक्त	जल्दी पकने तथा मोटे दाने वाली किस्म
पंत राई 22	125–130	1700–2200	39.0	उत्तराखण्ड के मैदानी सिंचित क्षेत्रों के लिए उपयुक्त	सिंचित दशा हेतु
आरजीएन 73	135–140	2000–2200	40	उत्तर प्रदेश, उत्तराखण्ड, मध्य प्रदेश एवं राजस्थान के अन्य क्षेत्रों के लिए उपयुक्त	सिचिंत तथा पाले की स्थिति के लिए उपयुक्त
पछेती बुवाई हेतु					
एनआरसीएचबी 101	105–135	1382–1491	35–42	मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, उत्तराखण्ड एवं पूर्वी राजस्थान के लिए उपयुक्त	सिंचित दशा में पछेती बुवाई हेतु उपयुक्त

बुवाई का समय एवं विधि

राई बोने का उपयुक्त समय सितम्बर के अन्तिम सप्ताह से अक्टूबर का प्रथम पखवाड़ा है। बुवाई देशी हल के पीछे उथले (4–5 से.मी. गहरे) कूँड़ों (समय से बुवाई में पंक्ति से पंक्ति की दूरी 45 से.मी. एवं देर से 30 से.मी. दूरी पर) में करने के बाद हल्का पाटा लगा देना चाहिए। असिंचित मध्य पर्वतीय क्षेत्रों में बुवाई का उपयुक्त समय सितम्बर का द्वितीय पखवाड़ा है। विलम्ब से बुवाई करने पर माहू के साथ–साथ अन्य कीटों एवं बीमारियों के प्रकोप की सम्भावना अधिक रहती है।

बीज दर

कतारों में बुवाई करने हेतु 4 कि.ग्रा./हैक्टर और छिटकवॉ विधि में 5.0 कि.गा. बीज प्रति हैक्टर बीज की आवश्यकता होती है।

बीज शोधन

बीज जनित रोगों से पादप सुरक्षा के लिए मेटालैक्सिल 35 डब्लू एस 4 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से शोधन करने पर प्रारम्भिक अवस्था में सफेद गेरुई एवं तुलासिता रोग की रोकथाम की जा सकती है। बीज तथा मृदा जनित अन्य रोगों से सुरक्षा एवं पौधों के प्रारम्भिक स्वास्थ के लिए कार्बेन्डाजिम 1 ग्राम एवं थायरम 2 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करके बोयें।

उर्वरक की मात्रा

वर्मीकम्पोस्ट 5 टन प्रति हैक्टर या सड़ी गोबर की खाद 10 टन प्रति हैक्टर खेत की तैयारी करते समय बुवाई के 20–25 दिन पहले मिट्टी में अच्छी तरह से मिलायें। यदि मिट्टी परीक्षण सम्भव न हो तो असिंचित क्षेत्रों में 50 कि.ग्रा. नत्रजन, 20–30 कि.ग्रा. फॉस्फोरस व 20–30 कि.ग्रा. पोटाश तथा सिंचित क्षेत्रों में 120 कि.ग्रा. नत्रजन, 30–40 कि.ग्रा. फॉस्फोरस व 20–30 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर प्रयोग करना चाहिए। फॉस्फोरस देने के लिए सिंगल सुपर फॉस्फेट अधिक लाभदायक होता है क्योंकि इसमें 12 प्रतिशत गंधक होता है जिससे गंधक की पूर्ति हो जाती है अन्यथा 20 कि.ग्रा./हैक्टर गंधक का प्रयोग अलग से करें। फॉस्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा तथा नत्रजन की आधी मात्रा बुवाई के समय नाई या चोंगे द्वारा बीज से 2–3 से.मी. नीचे प्रयोग करनी चाहिए। शेष नत्रजन की मात्रा पहली सिंचाई पर (बुवाई के 25–30 दिन बाद) टॉप–ड्रेसिंग के रुप में दी जानी चाहिए। गंधक की पूर्ति हेतु जिप्सम 120–150 कि.ग्रा./हैक्टर की दर भी प्रयोग किया जा सकता है जिसे बुवाई के पूर्व मिट्टी में अच्छी तरह से मिलायें।

खरपतवार नियंत्रण एवं विरलीकरण

बुवाई के 15 दिन के अंदर घने पौधों को निकालकर पौधे से पौधे की दूरी 10–15 से.मी. रखते हुए पौधों की संख्या 30–35 प्रति वर्गमीटर कर देना चाहिए तथा साथ ही निराई कर खरपतवारों को नष्ट कर देना चाहिए। यदि खरपतवार अधिक हों तो पेन्डीमिथेलिन (30 ई.सी) 3.3 लीटर प्रति हैक्टर की दर से 500–700 लीटर पानी में घोल बनाकर बुवाई के तुरन्त बाद अथवा 1–2 दिन के अंदर छिड़काव करें।

सिंचाई

राई की फसल, फूल आने व दाना भरने से पूर्व की अवस्था पर जल की कमी के प्रति विशेष संवेदनशील है। अतः अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए इन अवस्थाओं पर सिंचाई करना आवश्यक है। यदि मिट्टी हल्की हो तो अधिकतम उपज प्राप्त करने के लिए 2 सिंचाईयाँ क्रमशः पहली बोने के 30 दिन तथा दूसरी वर्षा न होने पर 50–55 दिन के बाद करें।

फसल सुरक्षा

रोग उपचार

1. तुलासिता रोग : यह रोग हायलोपरनोस्पोरा पैरासिटिका कवक द्वारा फैलता है जो बुवाई के 10–15 दिन बाद बीज पत्र की अवस्था में ही

दिखाई देने लगता है। रोग की उग्र अवस्था में पत्तियाँ पीली पड़कर सूख जाती है।

रोकथाम : रोग का लक्षण दिखते ही मेटालैक्सिल 35 डब्ल्यू एस या रिडोमिल एम जेड 72 की 2 कि.ग्रा. मात्रा 500 लीटर पानी में घोलकर 1–2 छिड़काव करें।

2. सफेद गेरूई रोग : यह रोग एल्बुगो कैन्डिडा कवक के द्वारा होता है। रोग का लक्षण बुवाई के 30–40 दिन बाद दिखाई देने लगता है। रोग की प्रारिम्भक अवस्था में पत्तियों के ऊपर हल्के पीले धब्बे एवं पत्तियों की निचली सतह पर सफेद फफोले बनते हैं जिससे बाद में पुष्प विन्यास विकृत हो जाता है।

रोकथाम : मेटालेक्सिल 35 डब्लू एस या रिडोमिल एम.जेड 72 की 2.5 कि.ग्रा. मात्रा का 800–1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर की दर से 10 दिन के अन्तराल पर 2–3 छिड़काव करें।

3. झुलसा रोग : यह रोग अल्टरनेरिया ब्रेसिकी कवक के द्वारा होता है। रोग का लक्षण बुवाई के 30–40 दिन बाद दिखाई देने लगता है। इस रोग में पत्तियों, शाखाओं तथा फलियों पर गहरे रंग के धब्बे गोल–गोल छल्ले के रुप में दिखायी देते हैं। रोग की उग्र अवस्था में पत्तियाँ झुलस कर गिर जाती हैं एवं दाने सिकुड़ जाते हैं।

रोकथाम : इप्रोडियोन या मैंकोजेब 75 प्रतिशत की 2 कि.ग्रा. मात्रा 800–1000 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टर की दर से 10 दिन के अंतराल पर 2–3 छिड़काव करें।

4. तना सड़न रोग : यह रोग स्क्लेरोटिनिया कवक के द्वारा होता है जो पौधों में फूल आने की अवस्था से शुरु होता है। प्रारम्भिक अवस्था में तने पर हल्के धब्बे दिखायी देते हैं तथा बाद में धब्बों के ऊपर फफूँदी की सफेद वृद्धि दिखाई देती है। रोग की उग्र अवस्था में तना सूखने लगता है एवं अन्त में रोग ग्रसित स्थान से पौधा टूट कर गिर जाता है।

रोकथाम : पुष्प आने के समय कार्बेन्डाजिम 1.0 कि.ग्रा. या प्रोपिकोनाजोल 1 लीटर मात्रा का प्रति हैक्टर की दर से 800 से 1000 लीटर पानी में घोल बनाकर 10 दिन के अंतराल पर 2–3 छिड़काव करें। बुवाई के पूर्व 1 कि.ग्रा. ट्राईकोडर्मा को प्रति कुन्तल सड़ी गोबर की खाद या केचुए की खाद में मिलाकर खेत में अच्छी तरह से मिलायें।

5. चूर्णिल आसिता रोग : यह रोग इरीसिफी क्रूसीफेरम कवक के द्वारा होता है। प्रारम्भ में पत्तियों के ऊपरी सतह पर धूल या पाउडर की तरह जो तापक्रम अधिक होने पर बुवाई के लगभग 100–110 दिनों के बाद फरवरी के अन्तिम या मार्च के प्रथम सप्ताह में दिखाई देता है। रोग की उग्र अवस्था में पत्तियाँ एवं फलियाँ सूख जाती हैं।

रोकथाम : बीज की बुवाई 15 अक्टूबर तक कर दें। केराथेन 1.0 कि.ग्रा. 800–1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर रोग की प्रारिम्भक अवस्था में 10 दिनों के अंतराल पर 1–2 छिड़काव करें।

इसके अतिरिक्त उपर्युक्त सभी रोगों के रोकथाम हेतु निम्नलिखित बातों का ध्यान रखें :

1. स्वस्थ एवं प्रमाणित बीजों का प्रयोग करें।
2. फसल की बुवाई अक्टूबर मध्य तक अवश्य कर दें।
3. संतुलित उर्वरकों का प्रयोग करें।
4. नत्रजन की अधिक मात्रा का प्रयोग न करें।
5. रोग की प्रारिम्भक अवस्था में ही सही दवा का उचित मात्रा में प्रयोग करें।
6. बुवाई के समय सल्फर 20 कि.ग्रा., जिंक सल्फेट 15 कि.ग्रा. एवं बोरेक्स 10 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से प्रयोग करें।

कीट उपचार :

1. आरा मक्खी : इसकी गिडारें सरसों कुल की सभी फसलों को हानि पहुँचाती हैं। गिडारें काले रंग की होती है जो पत्तियों के किनारों को अथवा विभिन्न आकार के छेद बनाती हुई बहुत तेजी से

खाती हैं जिससे पत्तियाँ बिल्कुल छलनी हो जाती हैं।

रोकथाम : रोकथाम हेतु गर्मियों में खेत की गहरी जुताई करें। कीट की सूड़ियों को पकड़ कर नष्ट कर दें। फसल की सिंचाई करने से भी कीट की सूड़ियाँ डूब कर मर जाती हैं। फसल में इस कीड़े का प्रकोप होने पर डाइमेथोएट 30 ई.सी की 650 मि.ली. मात्रा का 600 से 700 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टर की दर से 10 दिन के अंतराल पर आवश्यकतानुसार 2–3 छिड़काव करें।

2. माहूँ : यह छोटे कोमल शरीर वाले हरे रंग के कीट होते हैं जिनके झुण्ड पत्तियों, फूलों तथा पौधे के अन्य कोमल भागों पर चिपके रहते हैं तथा रस चूसकर पौधों को कमजोर कर देते हैं।

रोकथाम : समन्वित कीट नियंत्रण के लिए कीट के आर्थिक क्षति स्तर (10–15 पौधों पर 26–28 माहूँ प्रति 10 से.मी. तने की ऊपरी शाखा) में पाए जाने पर डाइमेथोएट 30 ई.सी 500 मि.ली. प्रति हैक्टर अथवा थियामेथोक्जाम 25 डब्ल्यू जी 100 ग्राम का 600 से 700 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टर की दर से 10 दिन के अंतराल पर छिडकाव करें। बायोएजेन्ट वर्टिसिलियम लिकेनाइ 1 कि.ग्रा. का 600 से 700 लीटर पानी में घोल प्रति हैक्टर 10 दिन के अंतराल पर आवश्यकतानुसार 2–3 छिडकाव करें।

3. चित्रित बग (चितकबरा कीट) : यह नारंगी रंग का धब्बेदार कीट है जिसके शिशु तथा वयस्क पत्तियों के मुलायम टहनियों तथा कलियों से रस चूसते हैं, जिससे पौधों की वृद्धि रुक जाती है। कीट कटाई के बाद मड़ाई के लिए रखे गये ढेर में भी हो सकते हैं जो दानों को नुकसान पहुँचाते हैं।

रोकथाम : गर्मियों में खेत की गहरी जुताई करें। समय से बुवाई कर इनके प्रभाव को कम किया जा सकता है। डाइमेथोएट 30 ई.सी. 650 मि.ली. अथवा थियामेथोक्जाम 25 डब्ल्यू.जी. 100 ग्राम का 600 से 700 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टर की दर से 10 दिन के अंतराल पर आवश्यकतानुसार 2–3 छिडकाव करें।

नोट : कीटनाशी दवाओं का सायंकाल के समय छिड़काव करने से परागण कीटों एवं मधुमक्खियों को नुकसान पहुँचाने से बचाया जा सकता है।

कटाई–मड़ाई :

जब 75 प्रतिशत फलियाँ सुनहरे रंग की हो जायें, फसल को काट लें तथा अच्छी तरह सुखाकर मड़ाई करके बीज को अलग कर लें। देर करने से बीजों के झड़ने की आशंका होती है। बीजों को खूब सुखाकर (बीज में नमी 10 प्रतिशत से कम हो) ही सूखे स्थान पर भण्डारित करें।

महत्वपूर्ण बिन्दु :

- क्षेत्र विशेष के लिए उपयुक्त प्रजातियों का चयन करें।
- बुवाई समय से और पंक्तियों में करें।
- बुवाई के 15–20 दिनों पर विरलीकरण अवश्य करें।
- फसल की 30–35 दिन की अवधि पर पहली सिंचाई अवश्य करें।
- सिंचाई के बाद उपयुक्त मृदा नमी के रहते यूरिया की टॉप–ड्रेसिंग करें।
- रोगों एवं कीटों से फसल सुरक्षा हेतु तुरन्त उपचार करें।

पीली सरसों

विगत कुछ वर्षों से पीली सरसों की खेती किसानों में काफी प्रचलित हुई है। इस फसल की प्रजातियों के दाने पीले रंग के होते हैं जिनमें तेलांश तोरिया तथा राई की प्रजातियों से अधिक पाया जाता है। इसकी खेती मैदानी, तराई, भावर तथा निचले–मध्य पर्वतीय क्षेत्रों में सफलतापूर्वक की जाती है।

उन्नत किस्में

प्रदेश के मैदानी, तराई, भावर व मध्य पर्वतीय क्षेत्रों के लिए उपयुक्त प्रजातियाँ निम्नलिखित है:

प्रजाति	परिपक्वता अवधि	उपज (कि.ग्रा/है.)	तेलांश (%)	संस्तुत राज्य/क्षेत्र/ परिस्थिति	विशेषताएं/लक्षण
एन आर सी वाई एस–05–02	94–118	1239–1715	38.2–46.5	समस्त पीली सरसों उगाने वाले क्षेत्रों के लिए	प्रारम्भिक परिपक्वता, मध्यम ऊँचाई एवं उच्च तेलांश
वाई एस एच 401	115–120	1273–1651	43–45	समस्त पीली सरसों उगाने वाले क्षेत्रों के लिए	मोटे दाने
पी वाई एस 1 (पंत पीली सरसों 1)	100–110	1050–1163	42–44	उत्तराखण्ड के सिंचित क्षेत्रों के लिए	फलियाँ चार कोष्ठक युक्त एवं नीचे की ओर लटकी हुई। तुलासिता एवं सफेद फफूँदी के लिए अवरोधी
पंत श्वेता	105–110	1600–2000	45	उत्तराखण्ड के मैदानी क्षेत्रों के लिए	फलियाँ बहुकोष्ठीय तथा ऊपर की ओर सीधी रहती हैं। पुष्प श्वेत रंग के होते हैं।
पंत गिरजा	92–128	1200–1500	45	उत्तराखण्ड के मैदानी क्षेत्रों के लिए	द्विकोष्ठीय फलियां एवं पीले पुष्प
पंत पीली सरसों 2	106–110	1400–1800	45	उत्तराखण्ड के मैदानी क्षेत्रों के लिए	बहुकोष्ठकीय ऊपर की ओर सीधी फली वाली

बीज दर एवं बुवाई की विधि

कतारों में बुवाई करने हेतु 4 कि.ग्रा./हैक्टर और छिटकवाँ विधि में 5.0 कि.गा. बीज प्रति हैक्टर बीज पर्याप्त होता है। बुवाई 30 से.मी. की दूरी पर पंक्तियों में 3–4 से.मी. की गहराई पर करनी चाहिए।

बुवाई का समय

पर्वतीय (मध्य ऊचाई तक) तथा मैदानी क्षेत्रों में पीली सरसों की बुवाई अक्तूबर के प्रथम पखवाड़े में कर देनी चाहिए। विलम्ब से बोई गई फसल में बीमारियों एवं कीटों का विशेषकर माहूँ के प्रकोप की अधिक सम्भावना रहती है जिससे उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

बीज शोधन

बीज का शोधन राई की भाँति करें।

उर्वरक की मात्रा

उर्वरकों की मात्रा का प्रयोग राई की भाँति करें।

खरपतवार नियंत्रण एवं विरलीकरण

खरपतवार नियंत्रण एवं विरलीकरण राई की ही भाँति करें।

सिंचाई

सिंचाई राई की ही भाँति करें।

फसल सुरक्षा

रोगों एवं कीटों का नियंत्रण राई की ही भाँति करें।

कटाई–मड़ाई

कटाई–मड़ाई राई की ही भाँति करें।

महत्वपूर्ण बिन्दु :

- क्षेत्र विशेष के लिए उपयुक्त प्रजातियों का चयन करें।
- बुवाई समय से और पंक्तियों में करें।
- विरलीकरण बुवाई के 15–20 दिनों के अंदर अवश्य करें।
- पहली सिंचाई 30–35 दिन की अवधि पर अवश्य करें।
- सिंचाई के बाद उपयुक्त मृदा नमी के रहते यूरिया की टॉप–ड्रेसिंग करें।
- रोगों एवं कीटों से फसल सुरक्षा हेतु तुरन्त उपचार करें।

तोरिया (लाही)

अल्प अवधि में अधिक उपज क्षमता के कारण तोरिया को कैच क्राप के रुप में खरीफ एवं रबी मौसम के बीच मैदानी, तराई एवं भावर तथा निचले पर्वतीय क्षेत्रों में उगाकर अतिरिक्त लाभ अर्जित किया जा सकता है।

उन्नत किस्में

सिंचित व मध्य पर्वतीय क्षेत्रों, तराई एवं भावर के लिए उपयुक्त प्रजातियाँ :

प्रजाति	परिपक्वता अवधि	उपज (कि.ग्रा/है)	तेलांश (%)	संस्तुत राज्य/क्षेत्र/परिस्थिति	विशेषताएं/लक्षण
पंत तोरिया 303	91–97	1500–1800	44	उत्तर प्रदेश, उत्तराखण्ड, बंगाल, हरियाणा, उड़ीसा एवं सिक्किम क्षेत्रों के लिए उपयुक्त	झुलसा, सफेद फफोला एवं मृदरोमिल रोगों के लिए सहिष्णु
वी.एल तोरिया 3	128–140	769–1106	39–41	उत्तराखण्ड के पहाडी क्षेत्रों के लिए उपयुक्त	–
उत्तरा	93–97	1000	42	उत्तराखण्ड के मैदानी एवं पर्वतीय क्षेत्रों के लिए उपयुक्त	सफेद फफोला एवं चूर्णिल आसिता रोगों के लिए अवरोधी
पंत तोरिया 508	82–91	1600–2000	42	उत्तराखण्ड के मैदानी असिंचित क्षेत्रों के लिए उपयुक्त	सफेद गेरुई के लिए अवरोधी
पंत हिल तोरिया 1	122–134	900–1200	42	उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में असिंचित दशाओं के लिए	सफेद गेरुई के लिए अवरोधी

बीज दर एवं बुवाई की विधि

कतारों में बुवाई करने हेतु 4 कि.ग्रा./हैक्टर और छिटकवाँ विधि में 5.0 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर बीज पर्याप्त होता है। बुवाई 30 से.मी. की दूरी पर पंक्तियों में 3–4 से.मी. की गहराई पर करनी चाहिए।

बुवाई का समय

पर्वतीय क्षेत्रों में तोरिया की बुवाई सितम्बर के प्रथम पक्ष तथा मैदानी क्षेत्रों में सितम्बर के द्वितीय पक्ष में समय मिलते ही कर देनी चाहिए। घाटी वाले सिंचित एवं मध्य पर्वतीय क्षेत्रों में प्रचलित एक वर्षीय स्थानीय फसल चक्र धान व आलू की फसल के बीच में परती वाले समय का सदुपयोग करने हेतु तोरिया की एक अतिरिक्त फसल ली जा सकती है। इसके लिए धान की जल्दी पक कर तैयार होने वाली किस्म जैसे गोविन्द, साकेत 4, पंत धान 11 एवं पंत धान 6 की कटाई के पश्चात् अक्टूबर के प्रथम पखवाड़े में तोरिया की बुवाई करनी चाहिए ताकि तोरिया की फसल की कटाई के बाद फरवरी में आलू की शीध्र पकने वाली किस्म कुफरी ज्योति की बुवाई समय से की जा सके एवं जिसकी खुदाई जून के प्रारम्भ में करके पुनः धान की रोपाई समय से की जा सके।

बीज शोधन

राई की भाँति करें।

उर्वरक की मात्रा

राई की भाँति करें।

खरपतवार नियंत्रण एवं विरलीकरण

राई की भाँति करें।

फसल सुरक्षा

रोगों एवं कीटों का नियंत्रण राई की ही भाँति करें।

सिंचाई

पुष्प निकलने से पूर्व की अवस्था पर जल की कमी के प्रति तोरिया विशेष संवेदनशील है। अतः अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए इस अवस्था पर

सिंचाई करना अत्यन्त उपयोगी होता है। अधिक उपज लेने हेतु प्रथम सिंचाई 25–30 दिन बाद एवं दूसरी पुष्प बनने के पूर्व की अवस्था में करें।

कटाई-मड़ाई

राई की भाँति करें।

महत्वपूर्ण बिन्दु :

- क्षेत्र विशेष के लिए उपयुक्त प्रजातियों का चयन करें।
- बुवाई समय से और पंक्तियों में करें।
- विरलीकरण बुवाई के 15–20 दिनों के अंदर अवश्य करें।
- पहली सिंचाई 30–35 दिन की अवधि पर अवश्य करें।
- सिंचाई के बाद उपयुक्त मृदा नमी के रहते यूरिया का टॉप–ड्रेसिंग करें।
- रोगों एवं कीटों से फसल सुरक्षा हेतु तुरन्त उपचार करें।

मूँगफली

उन्नत प्रजातियाँ

बीज दर

70–75 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर।

बुवाई का समय

जून द्वितीय पक्ष से जुलाई प्रथम पक्ष।

दूरी

पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30–45 से.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 10–20 से.मी. रखनी चाहिए।

बीजोपचार

बोने से पूर्व एक कि.ग्रा. बीज को 2 ग्रा. थीरम व 1 ग्रा. कार्बेंडाजिम 50% धु.चू. के मिश्रण से उपचारित करें अथवा थायोफिनेट मिथाइल 1.5 ग्रा. प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से शोधित करना चाहिए। इस शोधन के 5–6 घण्टे बाद बीज को मूँगफली के विशिष्ट राइजोबियम कल्चर से उपचारित करें। एक पैकेट 10 कि.ग्रा. बीज के लिए पर्याप्त होता है। कल्चर को बीज में मिलाने के लिए आधा लीटर पानी में 50 ग्रा. गुड़ धोल लें, फिर इस घोल में 250 ग्रा. के एक पैकेट राइजोबियम कल्चर को मिलाकर 10 कि.ग्रा. बीज के ऊपर छिड़क कर हल्के हाथ से मिलायें जिससे बीज के ऊपर एक हल्की पर्त बन

प्रजाति	उपज (कि.ग्रा/है.)	तेलांश (%)	संस्तुत राज्य/क्षेत्र/परिस्थिति	विशेषताएं/लक्षण
गिरनार 2 (पी बी एस 24030)	2907	51	उत्तर प्रदेश, पंजाब एवं उत्तरी राजस्थान हेतु खरीफ फसल के लिए संस्तुत	गुच्छेदार किस्म, मोटा दाना तथा सदा हरी पत्तियॉ सहित चूर्णिल आसिता के लिए सहिष्णु
उत्कृष (सीएस एमजी 9510)	2192	49	उत्तर प्रदेश, पंजाब एवं उत्तरी राजस्थान हेतु खरीफ फसल के लिए संस्तुत	–
मालिका	2579	48	सम्पूर्ण भारत वर्ष हेतु खरीफ फसल के लिए संस्तुत	गला सड़न के लिए अवरोधी, बड़े दाने
जीजी 21	1843	53	उत्तर प्रदेश, पंजाब एवं उत्तरी राजस्थान हेतु खरीफ फसल के लिए संस्तुत	–
एचएनजी 69	2800	50	उत्तर प्रदेश, पंजाब एवं उत्तरी राजस्थान हेतु खरीफ फसल के लिए संस्तुत	गला सड़न के लिए अवरोधी, बड़े दाने
वीएल मूँगंफली 1	1940	42.2	उत्तराखण्ड के खरीफ मौसम के लिए राज्य सरकार द्वारा विमोचित	एलएलएस एवं जड़ सड़न के लिए प्रतिरोधी

जाये। बीज को छाया में 2–3 घण्टे सुखाकर बुवाई प्रातः 10 बजे तक या सायं 4 बजे के बाद करें। तेज घूप से कल्चर के जीवाणु मरने की आशंका रहती है। ऐसे खेतों में जहाँ मूँगफली पहली बार या काफी समय के बाद बोई जा रही हो, कल्चर का प्रयोग अवश्य करें।

खाद एवं उर्वरक

मूँगफली की अच्छी उपज के लिए उर्वरकों का प्रयोग बहुत आवश्यक है। यह उचित होगा कि उर्वरकों का प्रयोग भूमि परीक्षण की संस्तुति के आधार पर किया जाए। यदि परीक्षण नहीं कराया गया है तो नत्रजन 20 कि.ग्रा, फॉस्फोरस 30 कि.ग्रा, पोटाश 45 कि.ग्रा. (तत्व रूप में), जिप्सम 200 कि.ग्रा. एवं बोरेक्स 4 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से प्रयोग किया जाय। नत्रजन, फॉस्फोरस और पोटाश खादों की सम्पूर्ण मात्रा तथा जिप्सम की आधी मात्रा कूँड़ों में नाई अथवा चोंगे द्वारा बुवाई के समय बीज से लगभग 2–3 से.मी. गहराई पर डालनी चाहिए। जिप्सम की शेष आधी मात्रा तथा बोरेक्स की सम्पूर्ण मात्रा फसल की 3 सप्ताह की अवस्था में टॉपड्रेसिंग के रूप में बिखेर कर प्रयोग करें तथा हल्की गुड़ाई करके 3–4 से.मी. गहराई तक मिट्टी में भली प्रकार मिला दें।

खरपतवार नियंत्रण

बुवाई के 15–20 दिन बाद पहली एवं 30–35 दिन बाद दूसरी निराई करनी चाहिए। खरपतवारों को रासायनिक विधि से नष्ट करने के लिए पेन्डीमिथेलिन 30 ई.सी., 3.3 ली. या एलाक्लोर 50 ई.सी. की 4.0 लीटर मात्रा को 500 से 700 लीटर पानी में घोलकर बुवाई के बाद जमाव से पूर्व छिड़काव करें। इस छिड़काव से मौसमी घास एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों का जमाव नहीं होता है।

सिंचाई

यदि वर्षा न हो और सिंचाई की सुविधा हो तो आवश्यकतानुसार दो सिंचाईयाँ क्रमशः खूटियाँ (पेगिंग) तथा फली बनते समय देना चाहिए।

कीट नियंत्रण

मूँगफली का सफेद गिड़ार : इसकी गिड़ारें पौधे की जड़ें खाकर पूरे पौधे को सुखा देती हैं। गिड़ारे पीलापन लिए हुए सफेद रंग की होती हैं, जिनका सिर भूरा–कत्थई या लाल रंग का होता है। ये छूने पर अर्धवृत्ताकार हो जाती हैं। इसका प्रौढ़ मूँगफली की फसल को हानि नहीं पहुँचाता है। यह मानसून की प्रथम वर्षा के बाद आसपास के पेड़ों पर आकर मैथुन क्रिया करता है तथा पुनः तीन चार दिन बाद खेतों में जाकर अण्डे देता है। यदि प्रौढ़ को पेड़ों पर ही मार दिया जाए तो इसकी संख्या में काफी कमी हो जाएगी।

उपचार :

1. मानसून के प्रारंभ के 2–3 दिन के अन्दर पोषक पेड़ों जैसे नीम, गूलर, आदि पर प्रौढ़ कीट को नष्ट करने के लिए फेन्थोएट 0.03 प्रतिशत या क्लोरपाइरीफॉस 0.03 प्रतिशत का छिड़काव करना चाहिए।
2. बुवाई के 3–4 घण्टे पूर्व बीज को इमिडाक्लोप्रिड 2 मि.ली. प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करके बुवाई करें।
3. खड़ी फसल में प्रकोप होने पर डाइफ्लूबेंज्यूरान 25% डब्लू.पी. का @ 300 मि.ली. मात्रा को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति हैक्टर की दर से प्रयोग करें।

दीमक : ये सूखे की स्थिति में जड़ों तथा फलियों को काटती हैं। जड़ काटने से पौधे सूख जाते हैं। यह फली के अन्दर गिरी के स्थान पर मिट्टी भर देती है।

उपचार : सफेद गिडार के लिए किए गये बीजोपचार से दीमक का प्रकोप भी रोका जा सकता है।

रोग नियंत्रण

मूँगफली का क्राउन रॉट : अंकुरित हो रहीं मूँगफली इस रोग से प्रभावित होती है। प्रभावित हिस्से पर काली फफूँदी उग जाती है जो स्पष्ट दिखाई देती है।

उपचार : इसके लिए बीज शोधन थीरम 2 ग्राम और

कार्बेंडाजिम 50 प्रतिशत धू.चू. 1 ग्राम को एक कि. ग्रा. बीज की दर से अवश्य शोधित कर बोना चाहिए। फसल–चक्र अपनायें। बुवाई से पूर्व पंत बायोएजेन्ट 3 (ट्राइकोडर्मा+स्यूडोमोनास) की 1 कि.ग्रा. मात्रा /100 कि.ग्रा. सड़ी गोबर की खाद में अच्छी तरह से मिलाकर मिट्टी में मिलायें। रोग आने की दशा में जड़ों पर कार्बेन्डाजिम 1 ग्राम/लीटर की दर से उपचार करें।

ड्राईरूट रॉट या चारकोल रॉट : नमी की कमी तथा तापक्रम अधिक होने पर यह बीमारी जड़ों में लगती है, जिससे जड़ें भूरी और पौधा सूख जाता है।

उपचार : बीजशोधन करें। खेत में नमी बनाए रखें। लम्बा फसल–चक्र अपनायें। पंत बायोएजेन्ट 3 का उपयोग करें।

बड नेक्रोसिस : शीर्ष कलियाँ सूख जाती हैं। पौधे की बढ़वार रूक जाती है। बीमार पौधे में नई पत्तियाँ छोटी–छोटी बनती हैं और गुच्छे में निकलती हैं। प्रायः अन्त तक पौधा हरा बना रहता है। फूल, फल नहीं बनते हैं।

उपचार : जून के चौथे सप्ताह से पूर्व बुवाई न की जाये। थ्रिप्स कीट, जो रोग का वाहक है, का नियंत्रण डाईमेथोएट 30 ई.सी. एक लीटर प्रति हैक्टर की दर से 10–15 दिन के अंतराल पर छिड़काव करें।

मूँगफली का टिक्का रोग : इस रोग में पत्तियों पर हल्के भूरे रंग के गोल धब्बे बन जाते हैं जिसके चारों ओर निचली सतह पर पीले घेरे होते हैं। उग्र प्रकोप से तने तथा पुष्प शाखाओं पर भी धब्बे बन जाते हैं।

उपचार : खड़ी फसल पर क्लोरोथेलोनिल 2 कि.ग्रा. या मैंकोजेब 80 प्रतिशत के 2.0 कि.ग्रा. अथवा प्रोपिकोनाजोल की 25 ई.सी. 500 मि.ली. मात्रा 800 से 1000 ली. पानी में घोलकर प्रति हैक्टर की दर से 2–3 छिड़काव 10–12 दिन के अन्तर पर करें।

खुदाई एवं भण्डारण

यह देखा गया है कि कृषक बाजार में अच्छी कीमत लेने तथा गेहूँ की बुवाई शीघ्र करने के उद्देश्य से मूँगफली की खुदाई फसल को पूर्ण पकने से पूर्व कर लेते हैं जिससे दाने का विकास अच्छा नहीं होता। दाना घटिया श्रेणी का होता है और उपज कम हो जाती है। अतः इसकी खुदाई तभी करें जब मूँगफली के छिलके के ऊपर नसें उभर आयें तथा भीतरी भाग कत्थई व दाना गुलाबी रंग का हो जाय। खुदाई के बाद फलियों को खूब सुखाकर भण्डारण करें। यदि भीगी मूँगफली का भण्डारण किया जाएगा तो फलियाँ काले रंग की हो जायेंगी, जो खाने एवं बीज हेतु सर्वथा अनुपयुक्त हो जाती हैं।

उपज

उपरोक्त सघन पद्धतियाँ अपनाकर 20–30 कु./हैक्टर उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

तिल

उन्नत प्रजातियाँ

प्रजाति	उपज (कि.ग्रा/है.)	तेलांश (%)	संस्तुत राज्य/क्षेत्र/ परिस्थिति	विशेषताएं/लक्षण
टीकेजी 306	750–800	49–52	मध्य प्रदेश में खरीफ मौसम के लिए उपयुक्त	परिपक्वता अवधि 86–90 दिन, बीज सफेद एवं 1000 दानों का वजन 2.8 ग्राम, फाइटोफ्थोरा ब्लाइट हेतु अवरोधी तथा चूर्णिल आसिता एवं झुलसा के लिए मन्द अवरोधी
जवाहर तिल 12 (पीकेडीएस 12)	700–750	48–52	मध्य प्रदेश में गर्मी मौसम हेतु उपयुक्त	परिपक्वता अवधि 82–85 दिन, बीज सफेद तना सड़न के लिए मन्द अवरोधी

आरटी 351	700–800	48–50	राजस्थान, गुजरात, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, हरियाणा, पंजाब एवं जम्मू एवं कश्मीर के लिए उपयुक्त	मैक्रोफोमिना, पत्ती मुडाव, फाइलोडी के लिए प्रतिरोधी। फली भेदक के लिए मन्द अवरोधी
टीकेजी 308	700–750	48–50	मध्यप्रदेश (खरीफ मौसम) के लिए उपयुक्त	मैक्रोफोमिना, सर्कोस्फोरा, पत्ती मुडाव एवं फली भेदक के लिए मध्यम अवरोधी
सुभरा	800–900	48.52	उड़ीसा (खरीफ एवं गर्मी मौसम) के लिए उपयुक्त	बीज सुनहरे पीले व बड़े आकार के समपरिपक्वता
गुजरात तिल 4	750–800	47–49	दक्षिणी स्वराष्ट्र जोन–4 गुजरात (खरीफ मौसम) के लिए उपयुक्त	सफेद बीज एव पत्ती धब्बा रोग के लिए सहिष्णु

बुवाई का समय एवं विधि

तिल की बुवाई का उचित समय जुलाई का दूसरा पखवाड़ा है। इससे पूर्व बुवाई करने से फाइलोडी रोग लगने का भय रहता है। इसकी बुवाई हल के पीछे लाइनों में 30 से 45 सेमी की दूरी पर करें। बीज को कम गहराई पर बोयें। तराई तथा भावर क्षेत्र में तिल की बुवाई जुलाई के दूसरे पखवाड़े में करनी चाहिए।

बीज दर तथा शोधन

एक हैक्टर क्षेत्र के लिए 3–4 कि.ग्रा. बीज का प्रयोग करें। बीज जनित रोगों से बचाव हेतु 2.5 ग्राम थीरम या कैप्टान प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से बीज शोधन करें।

उर्वरकों का प्रयोग

उर्वरकों का प्रयोग भूमि परीक्षण के आधार पर करें। यदि परीक्षण न कराया गया हो तो 30 कि.ग्रा. नत्रजन, 15 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 15 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर की दर से प्रयोग करें। नत्रजन की आधी मात्रा एवं फॉस्फोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के समय बेसल ड्रेसिंग के रूप में तथा नत्रजन की शेष आधी मात्रा प्रथम निराई के समय प्रयोग करें।

निराई–गुड़ाई

बुवाई के 15–20 दिन के बाद पहली एवं 30–35 दिन बाद दूसरी निराई करनी चाहिए। निराई–गुड़ाई करते समय पौधों की थिनिंग (विरलीकरण) करके उनकी आपस की दूरी 10 से 12 से.मी. कर लें।

सिंचाई

जब पौधों में 50–60 प्रतिशत तक फली लग जाए और उस समय वर्षा न हो तो एक सिंचाई करना आवश्यक हैं।

कीट नियंत्रण

पत्ती व फल की सूंड़ी : इसकी सूड़ियाँ कोमल पत्तियों व फलियों को खाती हैं एवं इन्हें जाला बनाकर बाँध देती हैं।

उपचार : इस कीट की रोकथाम के लिए क्लोथियानिडिन 50 डब्लू.डी.जी. के 0.12 कि.ग्रा. प्रति लीटर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

रोग नियंत्रण

तिल का फाइलोड़ी : यह रोग फाइटोप्लाज्मा द्वारा होता है। इस रोग में पौधों का पुष्प विन्यास एवं पत्तियाँ विकृत रूप में बदलकर गुच्छेदार हो जाती हैं। इस रोग का वाहक फुदका कीट है।

उपचार :

1. तिल की बुवाई समय से पहले न की जाय।
2. मिथाइल–ओ–डिमेटॉन 25 ई.सी. दवा का 1.0 लीटर/हैक्टर की दर से 10–15 दिन के अंतराल पर छिड़काव करना चाहिए।
3. रोग ग्रस्त पौधों को जला देना चाहिए।

फाइटोफ्थेरा झुलसा : इस रोग में पौधों के कोमल भाग व पत्तियाँ झुलस जाती हैं।

उपचार : इसकी रोकथाम हेतु 2.0 कि.ग्रा. मैंकोजेब या 3.0 कि.ग्रा. कॉपर ऑक्सीक्लोराइड का छिड़काव प्रति हैक्टर की दर से 10–12 दिन के अन्तराल पर दो–तीन बार छिड़काव करना चाहिए।

उपज : उपरोक्त सघन पद्धतियाँ अपनाकर 5–6 कुन्तल/हैक्टर उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

सूरजमुखी

उन्नत किस्में

प्रजाति	उपज (कि.ग्रा/है.)	तेलांश (%)	संस्तुत राज्य/क्षेत्र/ परिस्थिति	विशेषताएं/लक्षण
डीआरएसएफ 113	1000–1500	36–39	सम्पूर्ण देश के लिए उपयुक्त	अधिक उपज
फूले रविराज	1795	34	पश्चिमी महाराष्ट्र के लिए उपयुक्त, भेदक के लिए सहिष्णु	गलन, झुलसा तथा केपिटुलम
आर एस एफ वाई–901 (कान्थी)	1200–1400	-	कर्नाटक के लिए उपयुक्त	गलन के लिए सहिष्णु
संकर प्रजाति				
केबीएसएच 53	1700–2700	42–44	कर्नाटक के लिए उपयुक्त	सफेद फफुदी के लिए प्रतिरोधी
पीएसएफएच 569	2232	40	पंजाब के लिए उपयुक्त	अधिक तेलांश तथा अगेती संकर
सूर्यामुखी	2000–2200	40	पंजाब के लिए उपयुक्त	
डीसीएस 107	1762	-	सम्पूर्ण देश के लिए उपयुक्त	गैर ढहने वाली किस्म
आरएसएफएच 130	1200–1500	40	कर्नाटक के लिए उपयुक्त	परिगलन के लिए सहिष्णु
सीओ 2	1900–2200	38–40	तमिलनाडू के लिए उपयुक्त	झुलसा एवं चूर्ण के लिए मन्द अवरोधी
ओलिसन 3794 (पीएसी 3794)	1594	38	महाराष्ट्र, तमिलनाडू, कर्नाटक एवं आन्ध्र प्रदेश	सभी दशाओं के लिए उपयुक्त

बीज शोधन : बुवाई से पहले बीज को 12 घण्टे पानी में भिगोकर छाया में 3–4 घंटे सुखा लें। इसके पश्चात् कैप्टान 2 ग्राम या थीरम 2.5 ग्राम मात्रा प्रति कि.ग्रा. की दर से बीज का शोधन कर लेना चाहिए। इससे बीज का जमाव अच्छा होता है एवं साथ ही फसल को विभिन्न बीमारियों से बचाया जा सकता है।

बुवाई की विधि एवं समय

सूरजमुखी की बसन्तकालीन फसल को बोने का उचित समय फरवरी का माह है किन्तु कृषक–बंधु इसकी बुवाई मार्च माह में भी करते हैं। देर से बुवाई करने पर फसल देर से पकती है और मानसून की वर्षा शुरु होने पर फसल की कटाई एवं गहाई में समस्या हो सकती है, इसलिए फसल को फरवरी के अंत तक अवश्य बो देना चाहिए।

बुवाई सदैव लाइनों में करें। संकुल एवं बौनी प्रजातियों को 45 से.मी. तथा संकर एवं लम्बी प्रजातियों को 60 से.मी. दूरी पर बनी लाइनों में 3–4 से.मी. गहराई पर बोयें। पौधे से पौधे की दूरी 20–30 से.मी. रखें। बुवाई के 15–20 दिन बाद विरलीकरण कर पौधे से पौधे की दूरी 20–30 से.मी. कर देना चाहिए।

उर्वरक एवं खाद

सूरजमुखी की सफल खेती करने हेतु 80–100 कि.ग्रा. नत्रजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 40 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर की आवश्यकता होती है। नत्रजन की आधी से दो तिहाई मात्रा बोते समय तथा शेष 25–30 दिन बाद या पहली सिंचाई के समय खड़ी फसल में प्रयोग करें। फॉस्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के समय दें। 200 कि. ग्रा.प्रति हैक्टर जिप्सम का भी प्रयोग बुवाई के समय अवश्य करें। फॉस्फोरस को सिंगल सुपर फॉस्फेट के रुप में दें जिससे बीजों में तेल की मात्रा बढ़ जाती है।

सिंचाई

पहली सिंचाई बोने के 20–25 दिन बाद अवश्य दें। तदोपरान्त समान्यतया 20 दिनों के अंतराल पर सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। वैसे वानस्पतिक, कली, फूल एवं दाने बनने की अवस्था में नमी की कमी होने पर सिंचाई अवश्य करनी चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण

इसके लिए पहली निराई–गुड़ाई बोने के

15–20 दिन बाद करें तथा दूसरी गुड़ाई के समय पौधों पर मिट्टी भी चढ़ा दें, जिससे पौधे तेज हवा के कारण गिरने नहीं पाते। टोक.ई. 25 की 1.5–2.0 कि.ग्रा. सक्रिय पदार्थ दवा को 800–1000 ली. पानी में घोलकर अंकुरण के पहले खेत में छिड़कने से भी खरपतवार नष्ट हो जाते हैं। पेन्डीमेथिलिन की 1.0 कि.ग्रा. का सक्रिय पदार्थ मात्रा 600–800 ली. पानी में घोल का छिड़काव बुवाई के 2–3 दिन बाद करने से भी खरपतवारों का नियंत्रण किया जा सकता है।

पादप सुरक्षा

दीमक व कटुवा कीट जमाव के समय फसल को नुकसान करते हैं। इनकी रोकथाम के लिए इमिडाक्लोप्रिड 48 प्रतिशत ई.सी. की 500 ग्राम कीटनाशक 100 कि.ग्रा. बीज के साथ 600–700 लीटर पानी में घोलकर बोने से पहले खेत में छिड़ककर मिट्टी में मिला देना चाहिए। हरा फुदका, बिहार की बालदार सूड़ी, तम्बाकू की सूड़ी, चेंपा, सफेद मक्खी, नाजारा कीट, रेड पम्पकिन कीट तथा रस चूसने वाले कीट फसल की वानस्पतिक अवस्था में और चने की सूड़ी एवं परागकण खाने वाले कीट शीर्ष (मुण्डक) बनने एवं दाने भरने वाली अवस्था में फसल को भारी नुकसान करते हैं। इनकी रोकथाम के लिए इमिडाक्लोप्रिड 17.8 प्रतिशल एस.एल. @ 40 मि.ली. प्रति एकड़ 200 लीटर पानी में मिलाकर अथवा मोनोक्रोटोफॉस की 1 मि.ली. दवा का प्रति लीटर पानी के हिसाब से घोल बनाकर दो छिड़काव 10–15 दिन के अन्तराल पर करने से कीट नष्ट हो जाते हैं।

सामान्यतया झुलसा, रस्ट, तुलासिता रोग खरीफ मौसम में उगने वाली फसल की मुख्य बीमारियाँ हैं। इनकी रोकथाम हेतु 0.2–0.25 प्रतिशत मैंकोजेब के 2–3 छिड़काव 10–15 दिन के अन्तर से करें। रबी एवं बसन्तकालीन फसल की स्क्लेरोशियम कालर राट, तना सड़न, चारकोल सड़न, स्केलेरोटिनिया तना सड़न एवं राइजोपस मुण्डक सड़न मुख्य बीमारियाँ हैं। इन बीमारियों की रोकथाम हेतु सर्वप्रथम बुवाई से पहले बीज शोधित करें और खड़ी फसल में 0.1 प्रतिशत कार्बेंडाजिम एवं 0.2 प्रतिशत मैंकोजेब का घोल बनाकर 2–3 छिड़काव 15 दिनों के अन्तराल पर करें। मुण्डक में दाने भरते समय 0.2 प्रतिशत ब्लाइटॉक्स घोल के दो छिड़काव करें।

पशु-पक्षियों से बचाव

सूरजमुखी की फसल को मुख्यतः नीलगाय, जंगली सुअर, बंदर, तोता, कौआ आदि मुण्डक में दाना भरते समय भारी नुकसान करते हैं। तोते अकेले पूरी फसल को नष्ट करने में सक्षम होते हैं। अतः इन पशु–पक्षियों से फसल को बचाना अति आवश्यक है। आजकल बाजार में पक्षी उड़ाने वाले टेप (एल्युमिनियम) बाजार में उपलब्ध हैं। इन टेपों को खेत में फसल से कुछ अधिक ऊँचाई पर चारों तरफ खेत में आड़े तिरछे बाँधने पर तोते से फसल को बचाने में सहायता मिलती है। बाजार में जूट, रेशम एवं धागे से बने जाल भी उपलब्ध है जिनसे फसल की सुरक्षा की जा सकती है। यह ध्यान रखना भी आवश्यक है कि प्रजाति का चुनाव ऐसा हो जिसका मुण्डक नीचे की तरफ झुक जाता हो क्योंकि ऐसी प्रजातियों में पक्षियों से नुकसान नहीं हो पाता है।

कटाई एवं मड़ाई

जब मुण्डक का पिछला भाग भूरे–सफेद रंग का होने लगे तभी फसल के मुण्डकों को काट लेना चाहिए। कुण्डकों को 5–6 दिन तेज धूप में सुखने के बाद डण्डे से पीटकर दाने निकाल लिए जाते हैं। आजकल बाजार में सूरजमुखी थ्रेसर उपलब्ध हैं जिनकी सहायता से सूरजमुखी की मड़ाई की जा सकती है।

उपज

उपर्युक्त वैज्ञानिक विधि से सूरजमुखी की खेती करने पर प्रति हैक्टर लगभग 25–30 कुन्तल बीज एवं 80–100 कुन्तल डंठल पैदा किया जा सकता है। इसके साथ ही रु. 15000–20000/– प्रति हैक्टर शुद्ध लाभ मात्र 90–100 दिन में लिया जा सकता है।

सम्पर्क सूत्र : 9411597520 ☑

सोयाबीन

डा. नवनीत पारिख, डा. एम.के. कर्णवाल, डा. अजय कुमार, डा. आर.के. शर्मा,
डा. शिल्पी रावत, डा. रेनु पाण्डेय एवं डा. मनोज कुमार गुप्ता

सोयाबीन का महत्व

विश्व में लगातार बढ़ती हुई खाद्य तेल की मांग को पूरा करने में सोयाबीन महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। खाद्य तेलों के कुल उत्पादन में सोयाबीन का योगदान विश्व में लगभग 25 प्रतिशत है। कुल उत्पादन का 90 प्रतिशत सोयाबीन अमेरिका, ब्राजील, अर्जेन्टीना, चीन एवं भारत में पैदा किया जाता है।

सोयाबीन विश्व एवं भारत में सर्वोच्च तिलहनी फसल आज भी बनी हुई है। वर्ष 2020–21 में देश में सोयाबीन की खेती लगभग 12.1 मिलियन हैक्टर में की गयी इससे लगभग 12.61 मिलियन टन उपज प्राप्त हुई और इसकी औसत उत्पादकता लगभग 1042 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर रही, जबकि विश्व में सोयाबीन की खेती लगभग 129.52 मिलियन हैक्टर में की गयी इससे लगभग 371.69 मिलियन टन का उत्पादन हुआ और औसत उत्पादकता लगभग 2860 कि.ग्रा./हैक्टर रही। उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में सोयाबीन खरीफ की मुख्य फसल है। उत्पादन के साथ–साथ यह खेत की उर्वरा शक्ति बढ़ाने में महत्वपूर्ण फसल है। सोयाबीन में 20 प्रतिशत तेल व 40 प्रतिशत प्रोटीन पायी जाती है। सोयाबीन से दूध, दही, पनीर, आटा, नमकीन एवं कई अन्य पौष्टिक व्यंजन भी बनाये जाते हैं।

सोयाबीन की अनुशंसीत प्रजातियाँ एवं उनकी विशेषतायें

क्षेत्र	प्रजाति	दाने का रंग एवं आकार	पकने की अवधि (दिन)	उपज (कु0/है.)	विशेषतायें
पर्वतीय	वी एल सोया 59	पीला गोल	120–130	25–28 (50–56 कि.ग्रा./नाली)	जीवाणु स्फोट अवरोधी
	वी एल सोया 63	पीला गोल	120–125	25–28 (50–56 कि.ग्रा./नाली)	जीवाणु स्फोट अवरोधी
	वी एल सोया 89	पीला गोल	115–120	23–24 (46–48 कि.ग्रा./नाली)	एफ.एल.एस. एवं फली अंगमारी के लिए मध्यम रोधी
	वी एल भट्ट 201 (वीएलबी 201)**	काला गोल	115–120	16–18 (32–36 कि.ग्रा./नाली)	एफ.एल.एस. के लिए रोधी एवं फली अंगमारी के लिए मध्यम रोधी
	वी एल भट्ट 202 (वीएलबी 202)**	काला गोल	115–120	12–16 (24–32 कि.ग्रा./नाली)	एफ.एल.एस. एवं एफिड के लिए रोधी
	पी एस 1092	पीला गोल	115–120	25–30 (50–60 कि.ग्रा./नाली)	पीला चित्तवर्ण विषाणु एवं जीवाणु स्फोट अवरोधी एवं राइजोक्टोनिया वायक अंगमारी रोग के लिए मध्यम रोधी
	पी एस 25	पीला गोल	118–120	30–32 (60–64 कि.ग्रा./नाली)	पीला चित्तवर्ण विषाणु व जीवाणु स्फोट के लिए रोधी एवं राइजोक्टोनिया वायक अंगमारी रोग के लिए मध्यम रोधी

मैदानी	पी एस 1347*	पीला गोल	120–125	30–34	पीला चित्तवर्ण विषाणु, जीवाणु स्फोट राइजोक्टोनिया वायक अंगमारी एवं चक्र भृंग अवरोधी
	पी एस 1225	पीला गोल	120–125	30–35	पीला चित्तवर्ण विषाणु व जीवाणु स्फोट अवरोधी एवं राइजोक्टोनिया वायक अंगमारी व कीटों के प्रति मध्यम अवरोधी
	पी एस 21	पीला गोल	123–126	30–35	पीला चित्तवर्ण विषाणु व जीवाणु स्फोट के लिए रोधी एवं राइजोक्टोनिया वायक अंगमारी रोग के लिए मध्यम रोधी
	पी एस 23	पीला गोल	112–115	30–35	पीला चित्तवर्ण विषाणु व जीवाणु स्फोट के लिए रोधी एवं राइजोक्टोनिया वायक अंगमारी रोग के लिए मध्यम रोधी
	पी एस 24	पीला गोल	120–122	30–32	पीला चित्तवर्ण विषाणु एवं जीवाणु स्फोट अवरोधी
	पी एस 26	पीला गोल	117–125	30–35	पीला चित्तवर्ण विषाणु व जीवाणु स्फोट के लिए रोधी एवं राइजोक्टोनिया वायक अंगमारी रोग के लिए मध्यम रोधी
	पी एस 27	पीला गोल	116–122	30–35	–तदैव–

*मिलवा खेती के लिए उपयुक्त **काले रंग की प्रजाति

बीज दर

70–75 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर (1.4–1.5 कि.ग्रा./नाली) पर्याप्त होती है।

बीज उपचार

बीज जनित रोगों से बचाव हेतु बीज को कार्बोक्सिन+थीरम 3 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से शोधित करके बोना चाहिए।

राइजोबियम से बीज सम्बर्धन

बीज राइजोबियम कल्चर से उपचारित करके ही बोना चाहिए। बीज का उपचार सोयाबीन के विशिष्ट राइजोबियम कल्चर से करना चाहिए, जिसकी विधि निम्न प्रकार है :

लगभग 250 मि.ली. साफ व ठण्डे पानी में 25–30 ग्राम चीनी या गुड़ का घोल बनाकर उसमें 300–400 ग्राम राइजोबियम कल्चर अच्छी तरह मिला लें। इस मिश्रण को 30 कि.ग्रा. बीज के ऊपर छिड़क कर हाथ से मिलायें जिससे बीज के ऊपर एक हल्की पर्त चढ़ जायें। इस बीज को छाया में 15–20 मिनट सुखाकर तुरन्त लाईनों में बुवाई करें। तेज धूप में कल्चर के जीवाणुओं के मरने की आशंका रहती है, अतः उपचारित बीज को धूप में न सुखायें। बुवाई के उपरान्त बीज को तुरन्त मिट्टी से ढ़क दें। सोयाबीन की खेती में हर बार राइजोबियम कल्चर का प्रयोग करना फायदेमंद होता है। राइजोबियम के साथ–साथ सोयाबीन के बीजों का पी.एस.बी. (स्फूर घोलक जीवाणु) 5 ग्राम/कि.ग्रा. के टीकाकरण से सोयाबीन की फॉस्फोरस की आंशिक पूर्ति की जा सकती है।

बुवाई का समय

पर्वतीय क्षेत्रों में बुवाई का उपयुक्त समय मई के अन्तिम सप्ताह से जून के दूसरे सप्ताह तक तथा भावर–तराई में जून अन्तिम सप्ताह से जुलाई प्रथम सप्ताह तक है। विलम्ब से बुवाई करने पर उपज कम मिलती है तथा रबी की फसल की बुवाई समय से नहीं हो पाती है।

बुवाई की विधि

बुवाई हल के पीछे या सीडड्रिल द्वारा 3–4 से.मी. की गहराई पर लाइनों में करनी चाहिए।

लाइन से लाइन की दूरी 45 से.मी. रखनी चाहिए। जमाव के पश्चात् अधिक घने पौधों को निकाल देना चाहिए तथा छंटाई करके पौधे से पौधे की दूरी 5–7 से.मी. कर देनी चाहिए। एक हैक्टर में पौधों की संख्या 3.5 से 4.0 लाख होनी चाहिए।

उर्वरकों का प्रयोग

यदि मृदा परीक्षण न कराया गया हो तो उन्नतशील प्रजातियों के लिए 20 कि.ग्रा. नत्रजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 40 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर (क्रमशः 400, 1200 व 800 ग्राम प्रति नाली) का प्रयोग करना चाहिए। उर्वरकों की सम्पूर्ण मात्रा अन्तिम जुताई में हल के पीछे कूड़ों में प्रयोग करें अथवा 10 टन सड़ी गोबर की खाद डालें। जिन खेतों में जस्ते की कमी है उनमें 25.0 कि.ग्रा. जस्ता (जिंक सल्फेट 22–24 %)/है0 डालना चाहिए। सोयाबीन की अधिक उपज के लिए 20–30 कि.ग्रा. सल्फर/है0 डालना लाभकारी होता है।

खरपतवार नियंत्रण

सोयाबीन अगेती खरपतवार के प्रति संवेदनशील है। यदि खरपतवार का उचित प्रबंधन नहीं किया गया तो उपज में 20–70 प्रतिशत तक की हानि हो सकती है। खरपतवार नियंत्रण के लिए महत्वपूर्ण अवधि बुवाई के 40–45 दिन तक होती है। बुवाई से 20–25 दिन बाद प्रथम निराई अवश्य कर लेनी चाहिए। दूसरी निराई बुवाई के 40–45 दिन बाद करनी चाहिए।

खरपतवारों के प्रबंधन के लिए अनेक रसायन उपलब्ध हैं जो निम्नवत् है :

रसायन-बुवाई के 0-3 दिन तक			
क्र.सं.	**रसायन**	**मात्रा (कि.ग्रा. एआई/है.)**	**समय**
1.	फ्लुक्लोरैलिन 45 ई.सी.	1.0 कि.ग्रा. एआई/है.	बीज बुवाई से पूर्व मिट्टी में 2–3 से.मी. गहराई तक मिला दें
2.	ट्राइफ्लुरैलिन 48 ई.सी.	1.0 कि.ग्रा. एआई/है.	–तदैव–
3.	मेटोलाक्लोर 50 ई.सी.	1.0 कि.ग्रा. एआई/है.	बुवाई के 0–3 दिन पर
4.	क्लोमाजोन 50 ई.सी.	1.5 कि.ग्रा. एआई/है.	बुवाई के 0–3 दिन पर
5.	सल्फेंट्राजोन 39.6% एस.सी.	300 ग्राम एआई/है.	बुवाई के 0–3 दिन पर
खरपतवारनाशी संयोजन			
1.	सल्फेंट्राजोन 39.6% एससी + क्लोमाजोन 30% डब्ल्यू.पी.	1250 एमएल/है.	बुवाई के 0–3 दिन पर
रसायन-खड़ी फसल में			
1.	क्लोरीम्युरॉन इथायल 25 डब्ल्यू.पी.	0.01 कि.ग्रा. एआई/है.	जब खरपतवार 3–5 पत्ती वाली अवस्था में हो (बुवाई के 18–25 दिन)
2.	इमाजेथापायर 10 एस.एल.	0.01 कि.ग्रा. एआई/है.	– तदैव –
3.	क्वीजेलोफॉप ईथाइल 5 ई.सी.	0.05 कि.ग्रा. एआई/है.	घासी खरपतवार नियंत्रण हेतु (बुवाई के 18–25 दिन)
4.	फेनोक्साप्रॉप–पी–ईथाइल 9 ई.सी.	0.07 कि.ग्रा. एआई/है.	– तदैव –
खरपतवारनाशी संयोजन			
1.	इमाजेथापायर 30 ई.सी. + इमाजामॉक्स 35 डब्ल्यू.जी.	100 ग्राम/है.	जब खरपतवार 3–5 पत्ती वाली अवस्था में हो (बुवाई के 18–25 दिन)
2.	सोडियम एसिफ्ल्युओरफेन 16.5% + क्लोडिनाफॉप 8% ई.सी.	1.0 लीटर/है.	– तदैव –
3.	फ्लुएजिफॉप–पी–ब्यूटाइल 11.1% + फोमेसाफेन 11.1%	1.0 लीटर/है.	– तदैव –

सिंचाई एवं जल निकास

यदि वर्षा न हो तो फूल आने और फली बनते समय आवश्यकतानुसार हल्की सिंचाई करें। उचित जल–निकास आवश्यक है।

कीट नियंत्रण

पत्ती खाने वाला कमला कीट : बालदार कमला कीट सोयाबीन की पत्तियों को नुकसान पहुँचाने वाला प्रमुख कीट है। मादा इकट्ठे समूह में अण्डे देती हैं जिनसे सूड़ियाँ निकलकर लगभग 3–4 दिनों तक इकट्ठे रह कर पत्तियों को खाती है। यह कीट गहरे पीले रंग का होता है। इसके शरीर पर पीले या भूरे रोयें होते हैं। इसकी रोकथाम के लिए लेम्डा साइहैलोथ्रिन 5 ई.सी. 250 मि.ली. अथवा इमामेक्टिन बेन्जोएट 5 एसजी 220 ग्राम अथवा क्लोरान्ट्रानिलिप्रोले 18.5 एस.सी. 150 मि.ली. का 500–600 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें। कीट की प्रारम्भिक अवस्था में सूड़ियों सहित प्रभावित पत्तियों को नोचकर नष्ट करना भी एक प्रभावी नियंत्रण सिद्ध होता है।

हरी अर्ध कुण्डलक इल्ली : पत्तियों को नुकसान पहुँचाने वाले अन्य कीटों में भूरी व हरी अर्ध कुण्डलक इल्ली भी प्रमुख है, जो अर्ध कुण्डलक बनाती हुई चलती है व पत्तियों के किनारों को खाती है। इसकी रोकथाम के लिए क्लोरान्ट्रानिलिप्रोले 18.5 एस.सी. 150 मि.ली. अथवा इन्डोक्साकार्ब 15.8 ई.सी. 333 मि.ली. का 500–600 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें।

तम्बाकू की इल्ली : यह भी सोयाबीन की पत्तियों को क्षति पहुँचाने वाला प्रमुख हानिकारक कीट है। मादा कीट समूह में अण्डे देती है तथा अण्डों से सूड़ियाँ निकलकर समूह में पत्तियों को खाते हुए क्षति पहुँचाती हैं। इसकी रोकथाम के लिए इन्डोक्साकार्ब 15.8 ई.सी. 333 मि.ली. अथवा क्लोरान्ट्रानिलिप्रोले 18.5 एस.सी. 150 मि.ली. अथवा इमामेक्टिन बेन्जोएट 5 एस.जी. 250 ग्राम/का 500–600 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें। कीट की प्रारम्भिक अवस्था में सूड़ियों सहित प्रभावित पत्तियों को नोचकर नष्ट करना भी एक प्रभावी नियंत्रण है।

तना छेदक मक्खी (स्टेम फ्लाई) : तना छेदक मक्खी 70–80% पौधों को ग्रसित करती है जो धात्विक काले रंग की होती है। मादा पत्ती के निचले भाग में अण्डें देती है। अण्डों से डिंभक 2–3 दिन में निकल कर तुरन्त पास के तनों में छेद कर पर्णवृन्त तक चला जाता है और फिर तनों में घुस कर पौधों को हानि पहुँचाता है। इसकी रोकथाम के लिए थियामेथोक्जाम 12.6% + लैम्ब्डासाइहेलोथ्रिन 9.5% जेड.सी. 125 मि.ली. अथवा लैम्ब्डासाइहेलोथ्रिन 4.9% सी.एस. 300 मि.ली. प्रति 500 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें अथवा थियामेथोक्जाम 30% एफ.एस. 10 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से बीजोपचार करें।

छल्ला भृंग (गर्डिल बीटल) : यह कीट 10– 30% तक पौधों को ग्रसित करता है। मध्यम आकार की वयस्क मादा तने तथा टहनियों पर दो छल्ले बनाती हैं तथा छल्लों के बीच छिद्र में पीले अण्डे देती हैं। गिडार अन्दर ही अन्दर खाती है जिससे छल्लों के ऊपर का हिस्सा सूख जाता है। इसके नियंत्रण हेतु फसल में क्लोरान्ट्रानिलिप्रोले 18.5 एस.सी. 150 मि.ली. अथवा बीटा–साइफ्लुथ्रिन 8.49% + इमिडाक्लोप्रिड 19.8% ओ.डी. 350 मि.ली. 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर छिड़काव करें।

सफेद मक्खी : सफेद मक्खी का वयस्क छोटे आकार का होता है। यह मक्खी अपने अण्डे पत्तियों की निचली सतह पर देती है तथा पीला विषाणु रोग फैलाती है। इसके नियंत्रण के लिए थियामेथोक्जाम 30 % एफ.एस. का 10 एम.एल./कि.ग्रा. बीज की दर से बीजोपचार करें अथवा एसिटामिप्रिड 25%+ बाइफेन्थ्रिन 25% डब्ल्यू.जी. @ 250 ग्राम प्रति 500 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

रोग नियंत्रण

सोयाबीन की फसल में अंकुरण की बहुत बड़ी समस्या है जो बीज एवं पौध गलन रोग से होती है। इसके नियंत्रण हेतु बीज को कार्बोक्सिन

37.5% + थीरम 37.5% @ 3 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से शोधित करके बोना चाहिए। खड़ी फसल में अन्य बीमारियाँ जैसे पर्णचित्ती, जीवाणु स्फोट (वैक्टीरियल पश्चूल्स), श्यामवर्ण (एन्थ्रेक्नोज), पीला मोजैक एवं राइजोक्टोनिया वायक अंगमारी दिखाई देती हैं। राइजोक्टोनिया वायक अंगमारी के मुख्य लक्षणों में पर्ण धब्बा, पर्ण अंगमारी एवं पत्तियों का गिरना है। खेत में स्थान–स्थान पर रोगी पौधे समूहों में पाए जाते हैं। पत्तियों पर भूरे रंग के छोटे–बड़े धब्बे बन जाते हैं। टहनियों पर कपास जैसी फफूँदी की सफेद वृद्धि देखी जा सकती है।

इन रोगों से फसल को बचाने के लिए ऊपर दी गयी दवाओं से बीजों को उपचारित करके बोयें तथा फसल पर रोग के लक्षण दिखाई पड़ने पर टेबुकोनाजोल या हेक्जाकोनाजोल 1 लीटर का 1000 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टर पहला छिड़काव बुवाई के 60 दिन बाद करें। दूसरा एवं तीसरा छिड़काव 15–15 दिन के अन्तराल पर करें। गर्मी में गहरी जुताई करें तथा फसल–चक्र अपनायें। फली अंगमारी के नियंत्रण हेतु टेबुकोनाजोल + सल्फर 1250 ग्राम 500 लीटर पानी में मिलाकर फली बनने की अवस्था तथा 15–20 दिन के अन्तराल पर 2–3 छिड़काव करें। पानी का उचित जल निकास करें। जीवाणुस्फोट एवं पीला चित्तवर्ण रोग से बचाव हेतु रोग अवरोधी प्रजातियाँ जैसे पी.एस. 1092, पी.एस. 1225, पी.एस. 1347, पी.एस. 25 एवं पी.एस. 26 बोयें। फसल में रोग वाहक कीड़ों की संख्या कम करने के लिए ऐसीटामिप्रिड 25% + बाइफेन्थ्रिन 25% डब्ल्यू.जी. @ 250 ग्राम 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर छिड़काव करें। जीवाणु जनित रोगों में पत्तियों पर आलपिन के सिर के बराबर 1 मि.मी. के पीले धब्बे बनते हैं जो बाद में भूरे पड़ जाते हैं। इसकी रोकथाम के लिए कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 50 डब्ल्यू.पी. 1.5 मि.ग्रा. + स्ट्रेप्टोसाइक्लिन 15 ग्राम का 500 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टर छिड़काव करना चाहिए। श्यामवर्ण (फली का झुलसा) रोग में फलियों पर पीले से भूरे धब्बे बनते हैं जिससे दाने छोटे, अपरिपक्व एवं सिकुड़े हुये बनते हैं। धब्बों पर कवक की वृद्धि साफ–साफ दिखाई पड़ती है। इसकी रोकथाम के लिए टेबुकोनाजोल का 625 मि.ली./हैक्टर या मैंकोजेब/थायोफेनेट मिथाइल 2 कि.ग्रा. या कार्बेंडाजिम 500 ग्राम मात्रा का 1000 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टर दो छिड़काव करें। पहला छिड़काव लक्षण दिखाई देते समय तथा दूसरा 15 दिन बाद करें। बीमारियों एवं कीट नियंत्रण हेतु एकीकृत नाशीजीव प्रबन्धन मोड्यूल अपनायें।

उपज

संस्तुत विधियाँ अपनाकर 30–35 कुन्तल प्रति हैक्टर (60–70 कि.ग्रा./नाली) पैदावार प्राप्त की जा सकती है।

अधिक उपज के लिए प्रभावी बिन्दु

1. सामयिक बुवाई के साथ–साथ प्रति इकाई क्षेत्रफल में पौधों की संख्या (20–25 पौधे प्रति वर्ग मीटर) सुनिश्चित् अवश्य करें। पौध संख्या 3–4 लाख/हैक्टर रखें।
2. क्षेत्र उपयुक्त प्रजाति को बीज अंकुरण परीक्षण के बाद ही बोयें।
3. बीज उपचार एवं राईजोबियम कल्चर से बीज संवर्धन अवश्य करें।
4. संतुलित उर्वरकों का प्रयोग बुवाई के समय ही बेसल ड्रेसिंग के रूप में करें।
5. खरपतवार, कीट एवं रोग नियंत्रण से आवश्यक पौध सुरक्षा करें।
6. आवश्यकतानुसार निराई–गुड़ाई समय से करें।
7. वर्षा के अभाव में फूल एवं फली आने की अवस्था में सिंचाई अवश्य करें।
8. उचित जल प्रबन्धन करें।
9. समय से फसल की कटाई एवं मड़ाई कर उचित भण्डारण करें।

सम्पर्क सूत्र : 9997706784

☑

गन्ना

डा. आनन्द सिंह जीना, डा. गीता शर्मा एवं डा. आर.पी. मौर्या

भारत की प्रमुख नकदी फसलों में से एक गन्ना उत्तराखण्ड के मैदानी क्षेत्रों की भी एक प्रमुख फसल हैं। गन्ना की खेती उत्तरी भारत के समशीतोष्ण क्षेत्रों से दक्षिण भारत के उष्ण जलवायु क्षेत्रों तक की जाती है। भारतवर्ष में गन्ने की खेती 51.75 लाख हैक्टर में की जाती है जिससे 4394 लाख मैट्रिक टन गन्ना उत्पादन प्राप्त होता है। गन्ने की औसत उत्पादकता लगभग 849 कुन्तल प्रति हैक्टर है। उत्तराखण्ड में क्षेत्रफल लगभग 0.92 लाख हैक्टर एवं उत्पादकता 81.17 लाख मैट्रिक टन है। लेकिन उत्तरी भारत में गन्ने की उत्पादकता दक्षिणी राज्यों के मुकाबले कम है। उत्तराखण्ड में गन्ने की उत्पादकता 885 कुन्तल प्रति हैक्टर है। गन्ने की उत्पादकता बढाने हेतु किसान भाइयों को निम्न नवीनतम तकनीकों को अपनाना चाहिएः

प्रजातियों का चुनाव

अच्छे एवं लाभदायक गन्ना उत्पादन हेतु क्षेत्र विशेष के लिए संस्तुत प्रजातियों की बुवाई करें। अपने प्रक्षेत्र पर प्रजातियों का सन्तुलन बनाए रखने हेतु एक तिहाई प्रक्षेत्र में अगेती (शीघ्र पकने वाली) तथा दो तिहाई प्रक्षेत्र में सामान्य (मध्यम देर से पकने वाली) प्रजातियों की बुवाई करें।

गन्ने की संस्तुत प्रजातियाँ

शीघ्र पकने वाली (अगेती) : को.पंत 94211, को.पंत 84211, को.पंत 3220, को.पंत 12221, को. 15023, को. 118, को.शा. 8272, को.शा. 3251, को.शा. 88230, को. 98014, को.लख. 9709, को.शा. 8436 को. 5009, को.लख. 11203, को.लख. 14201, को.लख. 15201, को.शा. 13235, को.शा. 17231

मध्य देर से पकने वाली (सामान्य) : को.पंत 12226, को.पंत 13224, को.पंत 97222, को.पंत 99214, को.पंत. 5224, को.पंत 90223, को.पंत 84212, को.शा. 98268, को.शा. 7250, को.लख. 9709, को.शा. 8279, को.शा. 8432, को.एस.ई. 1434, को. 9022, को. 5011, को. 12029, को. 13035, को.लख. 09204, को.लख. 11206, को.लख. 14204, को.शा. 10239, को.शा. 12232, को.शा. 14233, को.शा. 16233, को.पी.बी. 14185

जल प्लावित दशा हेतु : को.शा. 96436, यू.पी. 9530, को.लख. 9184, को.पंत. 90223

देर से बुवाई हेतु : को.शा. 88230, को.शा. 94257, को.शा. 95255, यू.पी. 39

सीमित कृषि साधन हेतु : को.शा. 94257, को.शा. 95255, को.पंत 99214, को.पंत 12226

सीमित सिंचाई हेतु : को.शा. 92263, को.शा. 93276, यू.पी. 39, को.पंत 13224

क्षारीय भूमि हेतु : को.शा. 92263, को.शा. 93278, को.शा. 94257, को.शा. 95222, को.शा. 95255

	शरदकालीन	बसन्तकालीन	ग्रीष्मकालीन
बुवाई का समय	मध्य सितम्बर से 20 अक्टूबर	मध्य फरवरी से मध्य मार्च	अप्रैल माह
पंक्ति से पंक्ति की दूरी	90 से.मी.	90 से.मी.	60 से.मी.
प्रति हैक्टर तीन आँख के टुकड़े (प्रति मी.)	35–40 हजार (4–5)	35–40 हजार (4–5)	50–60 हजार (4–5)
प्रति हैक्टर दो आँख के टुकड़े (प्रति मी.)	52–60 हजार (10)	55–60 हजार (10)	70–72 हजार (10)
गन्ना बीज हेतु गन्ने के पौधे का उपयुक्त भाग	नीचे का दो तिहाई	ऊपरी दो तिहाई	ऊपरी दो तिहाई

पाला सहनशील प्रजातियाँ : को.शा. 88230, को.शा. 94257, को.पंत 99214

गन्ने का बीज एवं बुवाई

जिस खेत से बीज का गन्ना लेना हो उसमें 25 प्रतिशत अतिरिक्त नत्रजन, फॉस्फोरस, एवं पोटाश दें। गन्ना बीज को पारायुक्त फफूँदीनाशक 6 प्रतिशत के 0.25 प्रतिशत घोल में अथवा कार्बेंडाजिम 50 प्रतिशत डब्लू. पी. के 0.1 प्रतिशत घोल में 10 मिनट तक उपचारित करें। गन्ने की बुवाई से पूर्व रिजर अथवा हल से 20 से.मी. गहरी नालियां बनाकर उसमें उर्वरकों का छिड़काव कर मिट्टी में मिला दें। अब गन्ने के 4 टुकड़े प्रति मीटर लम्बाई की दर से नालियों में डाल दें। दीमक और जड़ बेधक कीड़ो से बचाव के लिए गन्ना बोने के बाद 6.25 लीटर लिन्डेन 1800 ली. पानी में घोलकर एक हैक्टर क्षेत्र में बोये गये टुकड़ों के ऊपर फब्बारे से छिड़काव करें। छिड़काव के तुरन्त बाद नालियों को ढ़क दें तथा हल्का पाटा लगा दें।

खाद एवं उर्वरक

गन्ने के खेत में प्रत्येक तीसरे वर्ष 100–150 कुन्तल प्रति हैक्टर की दर से गोबर की खाद दें। उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर किया जाना चाहिए। मृदा परीक्षण के अभाव में 120–150 कि.ग्रा./हैक्टर नत्रजन की आवश्यकता होती है। इस मात्रा का आधा भाग तथा 50–60 कि.ग्रा./हैक्टर फॉस्फोरस व 40–50 कि.ग्रा/हैक्टर पोटाश, 15–20 कि.ग्रा/हैक्टर सल्फर तथा 15–20 कि.ग्रा/हैक्टर जस्ता बुवाई के पहले कूड़ में डाल दें। शेष नत्रजन आधी–आधी दो बार में टापड्रेसिंग के रूप में दें। पहली कल्ला फूटते समय बुवाई के 60–70 दिन पर तथा दूसरी कल्ला फूटने के लगभग 45 दिन बाद दें। बरसात शुरु होने से पूर्व उर्वरकों की पूरी मात्रा दे देनी चाहिए। गन्नें की पेड़ी में नत्रजन 25 प्रतिशत अधिक प्रयोग करें।

मिट्टी चढ़ाना और बांधना

गन्ने को गिरने से बचाने के लिए उसमें मिट्टी चढ़ाना एवं समय से बंधाई करना आवश्यक हैं। गन्ने की जड़ पर जून के अन्त में हल्की मिट्टी तथा जुलाई के अन्त में पर्याप्त मिट्टी चढ़ानी चाहिए। पहली बधाई लगभग 150 से.मी. की ऊँचाई पर जुलाई के अन्त में तथा दूसरी बंधाई पहली बंधाई के लगभग 50 से.मी. ऊपर अगस्त में करनी चाहिए। बांधते समय ध्यान रहे कि ऊपरी पत्तियां ना बांधी जायें। आवश्यकता होने पर अगस्त–सितम्बर में दो पंक्तियों के तीन थालों की एक साथ बंधाई (कैंची बंधाई) करनी चाहिए।

गन्ने के प्रमुख कीट एवं उसका प्रबन्धन

अगेती प्ररोह बेधक : इस कीट की सूड़ी गन्ने के केन्द्रीय प्ररोह में छेद करके अंदर प्रवेश करती है और अंदर के ऊतक को खाकर नुकसान पहुँचाती है जिससे मध्य प्ररोह सूख जाती है जिसे 'डेड हॉर्ट' लक्षण कहते हैं। एक से तीन महीने की फसल पर इस कीट का प्रकोप होता है। मृत प्ररोह को आसानी से खींच सकते हैं, जिससे दुर्गन्ध आती है। इस कीट के नियंत्रण के लिए क्लोरान्ट्रानिलिप्रोले 18.5 प्रतिशत एस.सी. दवा को 150 मि.ली. प्रति एकड़ की दर से 200 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

शीर्ष अगोला बेधक : इस कीट की सूड़ियाँ गन्ने के मध्य गोफ में लिपटी पत्तियों में छेद कर अंदर प्रवेश करती है एवं जब पत्तियाँ खुलती है तो पत्तियों पर ये कतार में दिखाई देते हैं। इस कीट का प्रकोप गन्ने की बाद की अवस्था में होने पर मध्य गोफ सूख जाती है जिससे नीचे की ऑखों से गोफ निकलने से पत्तियों के गुच्छे बन जाते हैं, जिसे 'बंची टॉप' कहते हैं। इस कीट के नियंत्रण के लिए अप्रैल व मई के मध्य में गन्ने की जड़ पर क्लोरान्ट्रानिलिप्रोले 18.5 प्रतिशत एस.सी दवा का 150 मिली. प्रति एकड़ की दर से 400 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

पोरी व वृंत बेधक : इस कीट की सूड़ियाँ गन्ने के पोरियों में छेद बनाकर अन्दर प्रवेश करती हैं। गन्ने के पोर में एक समय में कई छिद्र देखे जा सकते हैं। गन्ने में इस बेधक के नियंत्रण के लिए क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी. 1500 मि.ली./हैक्टर की दर से अथवा मोनोक्रोटोफॉस 36 एस.एल. 1875 मि.ली./हैक्टर की दर से 1000 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

सफेद गिडार व दीमक : ये दोनों गन्ने के प्रमुख कीट हैं तथा गन्ने के जड़ और गन्ने के जमीन की सतह के नीचे वाले भाग को खाते हैं। इन दोनों कीटों के नियंत्रण के लिए इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एम.एल. दवा को 140 मि.ली. प्रति एकड़ की दर से 750 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। सफेद गिडार के प्रभावी नियंत्रण के लिए फिप्रोनिल 40 प्रतिशत + इमिडाक्लोप्रिड 40 प्रतिशत डब्ल्यू.जी. दवा को 200 ग्राम प्रति एकड़ की दर से 500 लीटर पानी में घोलकर जड़ों में छिड़काव करें।

गन्ने का पायरिला : यह गन्ने का मुख्य चूसक कीट है। इस कीट का वयस्क व शिशु गन्ने की पत्तियों से रस चूसते हैं, पत्तियाँ पीली पड़ने लगती है और अंत में सूख जाती हैं। इस कीट के अवशिष्ट पर काली फफूँद उग जाती है, जो पत्तियों के प्रकाश संश्लेषण को अवरुद्ध कर देती है। इस कीट के नियंत्रण के लिए मोनोक्रोटोफॉस 36 प्रतिशत एस.एल. दवा को 200 मि.ली. प्रति एकड़ की दर से 400 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। नत्रजन का संतुलित मात्रा में प्रयोग करें।

जैविक नियन्त्रण

अगोला शूट बेधक के नियन्त्रण के लिए गन्ने में बुवाई के 45 दिन बाद अथवा कीट के दिखाई देने पर ट्राइकोग्रामा किलोनिस परजीवी के 25–30 ट्राइकोविट कार्ड (50000–60000 अण्डे)/हैक्टर 10 दिन के अन्तराल पर 4–6 बार प्रयोग करें। चोटी भेदक कीट के नियंत्रण के लिए बुवाई के 60 दिन बाद अथवा कीट दिखायी देने पर, ट्राइकोग्रामा जैपोनिकम परजीवी 25–30 ट्राइकोविट कार्ड (50000–60000 अण्डे)/हैक्टर की दर से 10 दिन के अन्तराल पर 4–6 बार प्रयोग करें। तना बेधक के नियन्त्रण के लिए गन्ने की बुवाई के 90 दिन पश्चात् अथवा कीट के दिखाई देने पर, ट्राइकोग्रामा किलोनिस परजीवी 25–30 ट्राइकोविट कार्ड (50000–60000 अण्डे)/हैक्टर की दर से 10 दिन के अन्तराल पर 8–10 बार प्रयोग करें। पोरी भेदक के नियन्त्रण के लिए बुवाई के चार महीने बाद ट्राइकोग्रामा किलोनिस परजीवी के 120 ट्राइकोविट कार्ड/हैक्टर 8–10 दिन के अन्तराल पर 8–10 बार प्रयोग करें। पाइरिला कीट के नियन्त्रण हेतु काली तितली के 8000 से 10000 कोकून या 8 से 10 लाख अण्डे प्रति हैक्टर की दर से खेत में छोड़ें।

गन्ने में लगने वाले रोग एवं व्याधियाँ

चूँकि गन्ना एक लम्बी अवधि की फसल है तथा इसकी खेती के लिए गन्ने की पोरियों को ही बीज हेतु प्रयोग में लाया जाता है अतः इसमें लगने वाले रोगों की संख्या लगभग 50 से भी ज्यादा हैं परन्तु इस फसल को मुख्यतया तीन बीमरियाँ ज्यादा प्रभावित करती हैं जो कि निम्नवत हैं :

गन्ने का पोखा बोंग रोग

पोखा बोंग गन्ने का एक फफूँद जनित रोग है जो सामान्य तौर पर गर्म एवं आर्द्र परिस्थितियों वाली अवधि के दौरान प्रकट होता है। यह बीमारी न केवल दक्षिण और उत्तरी क्षेत्रों में अपितु भारत के तराई क्षेत्रों में भी व्याप्त है। इस रोग की गंभीरता निरन्तर बढ़ती ही जा रही है एवं यह रोग सामान्य खेती के लिए प्रयोग में लाई जाने वाली गन्ने की लगभग सभी किस्मों को प्रभावित कर रहा है। इस रोग से ग्रसित गन्ने की फसल द्वारा लगभग 40.8–64.5 प्रतिशत शर्करा उत्पादन कम हो रहा है।

इस रोग के तीन चरण हैं, क्लोरोसिस (हरितरोग) चरण, चाकू कट चरण (चाकू से होने वाले घाव के समान) एवं शीर्ष सड़न चरण जो प्रायः मानसून के मध्य प्रकट होते हैं :

1. **क्लोरोसिस चरण** : रोग का प्रथम लक्षण नयी निकलने वाली पत्तियों पर दिखाई देता है, जिसमें पत्तियों की मध्य शिरा में आधार की ओर तथा कभी–कभी पूरी पत्ती पर हरितरोग स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। इस रोग के कारण अक्सर एक स्पष्ट सिकुड़न, घुमाव और पत्तियों का छोटा या कुरूप होना एवं पत्तियों का विकृत होना देखा गया है। कुछ परिस्थितियों में पत्ती का आवरण (शीथ) भी हरितरोग से प्रभावित पाया जाता है।
2. **चाकू कट चरण** : यह चरण प्रायः शीर्ष सड़न चरण के साथ ही प्रकट होता है। प्रभावित परिपक्व गन्ने की पत्तियों एवं तने के अग्रभाग में चाकू से काटे गये निशान के समान निशान बन जाते हैं जो उन्हें तोड़ (काट) देता

है। गन्ने के मध्य गांठों के बीच में रोग पीड़ित हिस्सों के टूटने के कारण निशान बन जाते हैं तथा गन्ने के तने में भी एक या दो आड़ी–तिरछी रेखाएं समान अंतराल में बन जाती हैं। जोकि चाकू से काटे गये सदृश प्रतीत होते हैं।

3. **शीर्ष सड़न चरण :** गन्ने का मुख्य वृद्धि करने वाला भाग जब फफूँद के संक्रमण के कारण सड़ने लगता है तब पौधे की इस अवस्था को शीर्ष सड़न चरण कहा जाता है। यह रोग की सबसे उन्नत और गंभीर अवस्था है। इस चरण में युवा तंतु सड़ जाते हैं परिणामस्वरूप पूरा शीर्ष मर जाता है। संक्रमण यदि पत्ते पर है तो वह नीचे की ओर बढ़ता है तथा तने में प्रवेश कर जाता है। संक्रमण के उन्नत चरण में युवा तंतुओं का पूरा आधार एवं शीर्ष पूरी तरह सड़ जाता है, पत्तियाँ कुरूप हो जाती हैं। उनमें सिकुड़न एवं घुमाव आ जाता है। अंततः सड़न पैदा होती है। लाल चित्तियाँ एवं धारियाँ भी विकसित हो जाती हैं एवं तंतुओं को पूरी तरह सड़ा कर सुखा देती है। फलस्वरूप गन्ने में कोई वृद्धि नहीं होती और पौधा मर जाता है।

नियंत्रण के उपाय

1. गन्ने की लगभग सभी किस्में इस रोग से ग्रसित पाई गई हैं। परन्तु प्रजाति को. पंत 3220 में अन्य प्रजातियों की अपेक्षा रोग के प्रति अधिक सहनशीलता पाई गई है, अतः अधिक रोग प्रतिरोधी प्रजातियों का प्रयोग करें।
2. चाकू कट एवं शीर्ष सड़न जैसे लक्षण प्रदर्शित करने वाले गन्नों को उखाड़ कर जला देना चाहिए।
3. बुवाई से पूर्व जैवनियंत्रक ट्राइकोडर्मा द्वारा बीज व मृदा शोधन करके भी रोग पर नियंत्रण पाया जा सकता है।
4. कार्बेंडाजिम नामक दवा द्वारा 1–1.5 ग्राम प्रति लीटर की दर से बीज शोधन एवं 15 दिन के अंतराल पर दो से तीन छिड़काव जून के आखिरी सप्ताह से जुलाई माह में (जब फसल 4–5 फीट तक लम्बी हो गई हो) करना चाहिए। इस रोग की रोकथाम हेतु दवा का छिड़काव बीमारी के लक्षण परिलक्षित होने से पूर्व पौधे के शीर्ष (ऊपरी एक फीट) पर करना चाहिए।

गन्ने का कंड़वा (व्हिप स्मट) रोग

अस्टीलैगो सीटामीनिया नामक कवक द्वारा उत्पन्न यह रोग लगभग प्रत्येक गन्ना उत्पादक क्षेत्र में पाया जाता है। यह रोग गन्ने के तने के शीर्ष पर कमची (व्हिप) सदृश लम्बी, काली एवं चाबुक के आकार की संरचना के रूप में प्रकट होता है। पूर्ण विकसित अवस्था में व्हिप की लम्बाई 2 मीटर तक हो सकती है। कमची में काले रंग का चूर्ण भरा रहता है जो फफूँद के बीजाणु होते हैं। यह बीजाणु पतली सफेद झिल्ली द्वारा ढके होते हैं जो हवा के कारण फट जाती हैं एवं बीजाणु पूरे खेत में फैल जाते हैं। गन्ने की फसल में अन्तराल न होने के कारण वे सदैव किसी ना किसी खेत में उपस्थित रहते हैं। अतः रोगजनक की उत्तरजीविता के लिए सदैव परपोषी उपलब्ध रहता है। रोग ग्रस्त झुरमुट सामान्यतः अधिक ऊँचा होता है जिसमें सामान्य की अपेक्षा अधिक दौजियाँ (टिलर) निकलती हैं। प्रभावित गन्ने की पत्तियाँ पंखाकार विन्यास में निकलती हैं, जिन्हें कण्डयुक्त चाबुक निकलने से पूर्व भी पहचाना जा सकता है। ग्रसित पौधे लम्बे, पतले एवं कम वजन के होते हैं। सामान्यतः ऐसे गन्ने रसहीन होकर सूख जाते हैं।

नियंत्रण के उपाय

1. रोग प्रतिरोधी प्रजातियों जैसे कि को.पंत 97222, को.पंत 90223, को.पंत 3220 एवं को.पंत 5224 आदि का चुनाव करें।
2. बीज हेतु केवल कंड मुक्त गन्नों का ही प्रयोग करना चाहिए।
3. कार्बेंडाजिम नामक दवा द्वारा 1–1.5 ग्राम प्रति लीटर की दर से बीज शोधन करना चाहिए।
4. कंडग्रस्त कमचियों (व्हिप) को सावधानी पूर्वक निकाल देना चाहिए।
5. सम्पूर्ण रोग ग्रसित झुरमुट को निकाल कर जला दें अथवा जमीन में दबा देना चाहिए।
6. रोगग्रस्त खेतों में गन्ने की पेड़ी न रखें।
7. उचित फसल चक्र अपनाने एवं अरहर के साथ सहफसली खेती करने से भी इस रोग की उग्रता को कम किया जा सकता है।

गन्ने का लाल सड़न (रेड रॉट) रोग

यह गन्ने का सर्वाधिक विध्वंसक रोग है जो भारत में गन्ने की अनेकों उन्नत किस्मों के द्रुतह्रास (Degradation) के लिए उत्तरदायी है। यह रोग कोलेटोट्राइकम फाल्केटम नामक कवक से होता है जो प्रतिवर्ष संक्रमित पोरियों (सेटों), मलबों तथा इसके ऐसे रोगाणुओं से फैलता है जो संक्रमित फसल की कटाई के बाद भी खेत में पड़े रहते हैं। शर्करा उद्योग के साथ–साथ यह गन्ना उत्पादकों के लिए भी अत्यन्त हानिकारक है। अधिक आर्द्रता एवं जल निकास की उचित व्यवस्था न होना, फसल की कमजोर वृद्धि तथा बार–बार एक ही किस्म की बुवाई करना भी रोग के विकास में सहायक होता है।

गन्ने का लाल सड़न, लाल विगलन या काना रोग जुलाई/अगस्त माह में मानसून के साथ प्रकट होता है तथा फसल की कटाई तक विकसित होता रहता है। रोग को उसकी प्रारम्भिक अवस्था में खेत में पहचानना कुछ कठिन होता है। बाद में जब पौधे की वृद्धि रूक जाती है तथा इक्षु शर्करा की रचना प्रारम्भ होती है तो इस रोग के स्पष्ट लक्षण प्रकट होते हैं। रोग की प्रारम्भिक अवस्था में ऊपर से तीसरी एवं चौथी पत्तियों में रंग की क्षति एवं म्लानि (मुरझाना) दिखाई देता है तथा बाद में तना रोग के प्रभाव को प्रदर्शित करता है जो शुष्क एवं झुर्रीदार हो जाता है तथा उसमें धँसे हुए स्थल बन जाते हैं। तने को लम्बाई में चीरने पर अन्दर का गूदा लाल रंग का दिखाई देता है इस लाल रंग के बीच में जगह–जगह चौड़ाई में सफेद रंग के धब्बे दिखाई देते हैं, जो इस रोग की विशिष्ट पहचान है। रोग की बहुत बढ़ी हुयी अवस्था में गूदे का लाल रंग मटियाले भूरे रंग में बदल जाता है। रोगी गन्ने के गूदे से सिरके जैसी गंध आती है, जो रोगजनक की एन्जाइम क्रिया के परिणामस्वरूप इक्षु शर्करा के ग्लूकोज और एल्कोहल में परिवर्तित हो जाने के कारण होती है। उबालने पर ऐसा रस अच्छी तरह से ठोस नही हो पाता है। बाद की अवस्था में गन्ना सूख जाता है तथा उसका वजन बहुत कम हो जाता है। तथा ऐसे गन्ने गांठ पर सरलता से टूट जाते हैं। कुछ समय बाद रोगग्रस्त गन्नों की गांठों के आस–पास सिकुड़े हुए क्षेत्रों में काले बिन्दु (एसरबुलस) दिखाई देते हैं। रोगग्रस्त गन्ना सूख जाने के कारण खेत में दूर से ही दिखाई पड़ता है।

नियंत्रण के उपाय

1. क्षेत्र विशेष के लिए संस्तुत लाल सड़न प्रतिरोधी किस्मों का ही चुनाव करें। जैसे कि – को.पंत 97222, को.पंत 90223, को.पंत 3220 एवं को.पंत 5224 आदि प्रजातियाँ अन्य प्रजातियों की अपेक्षा अधिक रोग रोधी पाई गई हैं।
2. रोपाई के लिए बीज पोरियों (सेटो) को पूरी तरह से स्वस्थ खेतों से लेना चाहिए तथा ऐसे गन्ने का उपयोग न करें, जिसके काटे गये सिरों पर लाल रंग दिखाई देता है।
3. कार्बेंडाजिम नामक दवा द्वारा 1–1.5 ग्राम प्रति लीटर की दर से बीज शोधन करना चाहिए।
4. रोगाणुओं के संचयन को रोकने के लिए खेत को स्वच्छ रखें तथा रोगग्रस्त गन्नों के संपूर्ण झुरमुट को जड़ सहित उखाड़ कर जला दें।

सहफसली खेती

पंक्तियों के मध्य अधिक दूरी चाहने वाली फसलों में पंक्तियों के बीच कम अवधि की फसलों की सहफसली खेती आर्थिक रुप से तो लाभप्रद है ही साथ ही साथ इनसे खरपतवार नियन्त्रण में भी सहायता होती है। शरदकालीन गन्ने में आलू, लाही, पीली सरसों, मटर, शीतकालीन गन्ने में मक्का, राजमा, लहसुन, धनिया, गोभी, पत्तागोभी इत्यादि तथा बसन्तकालीन गन्ने में मूंग, उर्द, लोबिया, भिन्डी, मेंथा इत्यादि की सहफसली खेती की जा सकती है। अन्तः फसली फसल में उर्वरक की अतिरिक्त मात्रा फसल पद्धति के अनुसार देना चाहिए। अन्तः फसल लेने की दशा में पेन्डीमिथेलिन 1.0 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हैक्टर की दर से 600–800 लीटर पानी में घोलकर फसलों के जमाव से पूर्व प्रयोग करने से खरपतवार नियन्त्रण में मदद मिलती है।

कटाई एवं उपज

जैसे ही रस में ब्रिक्स 18 प्रतिशत तथा शुद्धता 85 प्रतिशत हो जाए, गन्ने की कटाई की जा सकती है।

गन्ना पेड़ी की कटाई नवम्बर से प्रारम्भ कर दें। नौलख गन्ने की कटाई फरवरी–मार्च में करें। अच्छी तरह तैयार की गई फसल से लगभग 800–1000 कुन्तल पैदावार प्रति हैक्टर प्राप्त की जा सकती है।

पेड़ी–प्रबन्धन

गन्ने की खेती में पेड़ी की एक या दो फसल लेना आर्थिक दृष्टि से अत्यन्त लाभप्रद होता है। इसलिए प्रजातियों का चुनाव करते समय ध्यान रखें कि उन्हीं प्रजातियों को बोया जाय जिनकी पेड़ी की पैदावार अच्छी हो। पेड़ी की फसल रखने के लिए गन्ने की नौलख फसल को फरवरी–मार्च में काट लेना चाहिए, ताकि गन्ना के कल्लों का फुटाव अच्छा हो और पेड़ी की पैदावार भी अच्छी मिले। कटाई करते समय कोशिश करें कि मेड़ों को समतल करके गन्ना जितने नीचे से काटा जा सके काटना चाहिए। इससे गन्ने के कल्लों का फुटाव एक साथ तथा अधिक होता है। गन्ना काटने के तुरन्त बाद सूखी पत्तियाँ खेत से बाहर निकाल कर सिंचाई कर देनी चाहिए। पेड़ी की फसल में गन्ने की सूखी पत्तियाँ कदापि न जलायें, इससे नवांकुरों को हानि पहुँचती है। पंक्तियों में अधिक दूरी वाली खाली जगहों पर गन्ने के टुकड़े अथवा गन्ना पौध से भराई करनी चाहिए। पेड़ी के लिए आमतौर पर मुख्य फसल से 20 प्रतिशत ज्यादा नत्रजन देना चाहिए तथा आवश्यकतानुसार सिंचाईयाँ करनी चाहिए। नत्रजन का प्रयोग दो बार में करना चाहिए। आधी मात्रा पहली सिंचाई पर तथा शेष आधी मात्रा दूसरी या तीसरी सिंचाई पर देनी चाहिए। नौलख फसल में रोग अथवा कीट के अत्यधिक प्रकोप की दशा में पेड़ी नहीं रखनी चाहिए। अगर काले चिकटे या आर्मीवर्म का प्रकोप हो तो क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी. 750 मि.ली. प्रति हैक्टर या क्वीनालफॉस 25 ई.सी. 2 ली./हैक्टर की दर से घोल बनाकर पत्तियों के बीच गोभ में छिड़काव करना लाभदायक होता है।

सम्पर्क सूत्र : 7500241511 ☑

श्रीअन्न

डा. बी.डी. सिंह, डा. जितेन्द्र क्वात्रा,
डा. बी.एस. कार्की, डा. आर.के. शर्मा एवं डा. जे.पी. पुरवार

बाजरा

बाजरा शुष्क एवं अर्ध शुष्क क्षेत्रों में उगायी जाने वाली मोटे अनाज की प्रमुख फसल है तथा क्षेत्रफल व उत्पादन की दृष्टि से भारत में यह फसल मोटे अनाजों में प्रथम स्थान पर है। इसकी खेती दाने के अलावा पशुओं के लिए पौष्टिक चारे के लिए भी की जाती है। इस फसल में फाईबर, प्रोटीन, मैग्नीशियम और आयरन आदि प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। इसकी खेती मुख्य रूप से राजस्थान, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, हरियाणा एवं गुजरात में की जाती है। बाजरे की पौष्टिकता एवं असिंचित क्षेत्रों में उत्पादन की क्षमता को दृष्टिगत रखते हुए इसकी खेती के अन्तर्गत क्षेत्रफल बढ़ाये जाने की पर्याप्त संभावनाऐं हैं।

भूमि का चुनाव

बाजरा की खेती सामान्यतया सभी प्रकार की भूमियों में की जाती है किन्तु बलुई दोमट एवं अच्छे जल निकास वाली भूमि सर्वोत्तम रहती है।

खेत की तैयारी

एक गहरी जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करनी चाहिए, तत्पश्चात् 2–3 हैरो करके मिट्टी बारीक कर लेनी चाहिए। यदि खेत ऊबड़–खाबड़ हो तो उचित जल निकास के लिए खेत को समतल भी कर लेना चाहिए।

उन्नत प्रजातियाँ

संकुल प्रजातियाँ : जे.बी.वी. 3, पी.सी. 383, आई. सी.एम.वी. 221, राज 171, पी.सी.बी. 164, पूसा कम्पोजिट 701, एम.पी. 363, पूसा कम्पोजिट 334।

संकर प्रजातियाँ : के.बी. 4108, जी.एच.बी. 905, कावेरी सुपर वास, बायो 448, एम.पी. 7872, आर. एच.बी. 173, आर.एच.बी. 121, पूसा 605, पूसा 322।

बुवाई का समय एवं बुवाई की विधि

फसल की बुवाई मानसून प्रारम्भ होते ही जून के अन्तिम सप्ताह से मध्य जुलाई तक कर लेनी चाहिए। उत्तरी भारत में इसकी बुवाई के लिए जुलाई का प्रथम पखवाड़ा सर्वोत्तम है। बीज की बुवाई हल के पीछे कूंड़ में अथवा सीडड्रिल से 2–3 से.मी. गहराई पर कतार से कतार 45 से.मी. पर करनी चाहिए। बुवाई के 15–20 दिन बाद घने पौधों को निकालकर पौधे से पौधे की दूरी 12–15 से.मी. करनी चाहिए।

बीज की मात्रा

एक हैक्टर क्षेत्र के लिए 4–5 कि.ग्रा. बीज पर्याप्त रहता है। छिटकवाँ विधि से बुवाई करने की दशा में बीज दर 15–20 प्रतिशत बढ़ा लेनी चाहिए।

बीज का उपचार

बुवाई से पूर्व 2.5 ग्राम कार्बेंडाजिम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से बीज उपचार करना चाहिए। यदि बीज में अर्गट बीमारी से ग्रसित बीज मौजूद हो तो बीजों को 20 प्रतिशत नमक के घोल में 5 मिनट रखने के बाद तैरते हुए बीजों को अलग कर लेना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक प्रयोग

गोबर की खाद अथवा कम्पोस्ट की उपलब्धता के अनुसार 10–12 टन प्रति हैक्टर खेत की तैयारी के समय प्रयोग करना चाहिए। उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करना लाभप्रद रहता है। यदि मृदा परीक्षण न किया जा सका हो तो सिंचित क्षेत्रों में 80 कि.ग्रा. नत्रजन, 40 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 20 कि.ग्रा. पोटाश एवं असिंचित क्षेत्रों में 40 कि.ग्रा. नत्रजन एवं 20 कि.ग्रा. फॉस्फोरस प्रति हैक्टर प्रयोग करना चाहिए। असिंचित क्षेत्रों में नत्रजन व फॉस्फोरस की पूरी मात्रा बुवाई के समय बेसल–ड्रेसिंग के रूप में एवं सिंचित क्षेत्रों में नत्रजन की आधी मात्रा तथा फॉस्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा बेसल ड्रेसिंग के रूप में तथा नत्रजन की शेष आधी मात्रा बुवाई के 25–30 दिन बाद (सिंचाई के पश्चात् अथवा खेत में पर्याप्त नमी होने पर) टॉप–ड्रेसिंग के रूप में प्रयोग करें।

निराई-गुड़ाई एवं खरपतवार नियंत्रण

पहली निराई–गुड़ाई बुवाई के 20–25 दिन पर तथा दूसरी बुवाई के 40–45 दिन पर करनी चाहिए। यदि निराई–गुड़ाई संभव न हो तो खरपतवार नियंत्रण के लिए बुवाई के तुरन्त पश्चात् 2–3 दिन के अन्दर एट्राजीन 50 प्रतिशत डब्ल्यू.पी. के 2 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर मात्रा का 500 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

सिंचाई प्रबन्धन

बाजरा की खेती अधिकांशतया असिंचित क्षेत्रों में की जाती है जो वर्षा पर आधारित रहती है। सिंचित क्षेत्रों में यदि खेत में पर्याप्त नमी न हो तो पहली सिंचाई 20–25 दिन पर तथा दूसरी सिंचाई बाली निकलते समय आवश्यक है। अधिक देर तक जल भराव की दशा में पानी के निकास का भी उचित प्रबन्ध करना चाहिए।

रोग प्रबन्धन

मृदु रोमिल/हरी बाली रोग : यह फफूँदी से उत्पन्न होने वाला रोग है जो बीज के अंकुरण एवं पौधे के बढ़वार के समय पैदा होता है। इस रोग से ग्रसित पौधे की पत्तियाँ पीली पड़ जाती है व बढ़वार रूक जाती है। प्रभावित पत्ती के निचली सतह पर सफेद चूर्णनुमा पदार्थ दिखाई देता है। रोग की उग्र दशा में बालियाँ बनने की अवस्था में बालियों के स्थान पर छोटी–छोटी हरी पत्तियाँ उग आती है। इसी कारण इसे हरी बाली रोग भी कहते हैं।

इस रोग की रोकथाम के लिए बुवाई से पहले बीज को 2.5 ग्राम कार्बेंडाजिम अथवा 6 ग्राम मेटालेक्जिल 35 डब्ल्यू.एस. प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें। खेत से रोगग्रस्त पौधों को निकालकर जला दें। खड़ी फसल में मैंकोजेब 0.2 प्रतिशत घोल का छिड़काव बालियों में 50 प्रतिशत पुष्प बनने पर करें तथा आवश्यकतानुसार दूसरा छिड़काव 10–12 दिन पर करें।

अर्गट : यह रोग फसल में बालियाँ निकलते समय आता है। रोगग्रस्त पौधे की बालियों के फूलों से हल्के गुलाबी रंग का शहद के समान चिपचिपा पदार्थ निकलता है जो कुछ दिनों बाद सूख कर कड़ा हो जाता है व काले पदार्थ के रूप में बदल जाता है जिसे अर्गट के नाम से जाना जाता है।

इस रोग की रोकथाम के लिए बुवाई से पहले बीज को नमक के 20 प्रतिशत घोल में डुबोकर पानी में तैरते हुए स्क्लेरोशिया को निकालकर नष्ट कर देना चाहिए। बुवाई से पूर्व बीज को कार्बेंडाजिम 2.5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। फसल में बालियाँ निकलते समय 2 कि.ग्रा. मैंकोजेब अथवा 1 कि.ग्रा. कार्बेंडाजिम का 700–800 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

कंडुवा (स्मट) रोग : यह रोग मृदा जनित है। रोग के कारण बाली के कुछ दाने प्रारम्भ में हरे रंग के बड़े अंडाकार हो जाते हैं। परिपक्व होने पर ये गहरे भूरे काले रंग में बदल जाते हैं जो जीवाणुओं से भरे होते हैं। इस रोग से अनाज की गुणवत्ता खराब होने के साथ–साथ उपज में भी कमी आ जाती है।

इस रोग के नियंत्रण के लिए रोगग्रसित बालियों को काटकर नष्ट कर देना चाहिए। बुवाई से पूर्व कार्बेंडाजिम 2.5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से बीज उपचार करें। खड़ी फसल में रोग के लक्षण दिखाई देने पर मैंकोजेब 0.2 प्रतिशत के घोल का छिड़काव करें।

रस्ट (रतुआ) रोग : इस रोग में पत्ती की ऊपरी व निचली सतह पर छोटे लाल–भूरे उभरे हुए धब्बे (दाने) आ जाते हैं। परिपक्व होने पर ये दाने फट जाते हैं और उससे जीवाणु बाहर निकल आते हैं। पत्तियाँ ऊपर से नीचे की ओर मुरझाने लगती हैं तथा रोग का प्रकोप अधिक होने पर पौधे गिर जाते हैं।

इस रोग के नियंत्रण के लिए मैंकोजेब 0.2 प्रतिशत अथवा हेक्साकोनाजोल 0.1 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।

कीट प्रबन्धन

दीमक : इस कीट का आक्रमण पौधों के उगने के साथ ही प्रारम्भ हो जाता है और कीट पौधों के जड़ों को खाकर क्षति पहुँचाता है।

इस कीट के प्रबन्धन के लिए खेत की तैयारी के समय गहरी जुताई करनी चाहिए। बीज को बुवाई से पूर्व इमिडाक्लोप्रिड 40 एफ.एस. 3 मि.ली. प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से बीजोपचार करना चाहिए। खड़ी फसल में कीट का प्रकोप होने पर इमिडाक्लोप्रिड 70 डब्ल्यू.एस. का 1 लीटर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

तना बेधक कीट : यह कीट पौधे के तने को अंदर से खाकर नष्ट करता है जिससे पौधे की पत्तियाँ पीली पड़ने लगती हैं तथा पौधा कमजोर हो जाता है। इस कीट के प्रकोप से तने में 'डेड हर्ट' बन जाता है। तना अंदर ही अंदर गल जाता है जिससे बदबू आने लगती है।

इस कीट के नियंत्रण के लिए खड़ी फसल में कार्बेफ्यूरान 3 सी.जी. का 50 कि.ग्रा./हैक्टर प्रयोग करें अथवा इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. का 0.5 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करें।

कटाई

बाजरे की फसल सामान्यतया 70–80 दिन में पक जाती है। फसल पकने पर दाना कठोर हो जाता है तथा भूरे रंग का दिखाई देता है।

उपज

संकर किस्मों से 25–30 कुन्तल तथा अन्य उन्नत किस्मों से 12–15 कुन्तल दाने की उपज प्रति हैक्टर प्राप्त हो जाती है।

ज्वार

मोटे अनाजों में बाजरे के बाद ज्वार दूसरी महत्वपूर्ण फसल है जिसकी खेती पारम्परिक रूप से दाने एवं चारे के लिए की जाती है। देश में सम्पूर्ण चारे की आवश्यकता का लगभग 60 प्रतिशत इसी फसल से पूरी होती है। इसके अतिरिक्त विभिन्न उद्योग, मुर्गी और जानवरों का आहार, इथेनॉल और स्टार्च के लिए कच्चे उत्पाद के रूप में ज्वार की माँग तेजी से बढ़ रही है। यह अनाज प्रोटीन, फाईबर, विटामिन, खनिज आदि अनेक पोषक तत्वों से भरपूर होता है जो इसे सभी उम्र के लोगों के लिए पोषण का उत्कृष्ट स्त्रोत बनाता है। ज्वार की खेती उत्तरी भारत में खरीफ के मौसम में तथा दक्षिण भारत में खरीफ व रबी दोनों मौसमों में की जाती है। ज्वार की खेती महाराष्ट्र, कर्नाटक, राजस्थान, तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश, गुजरात, उत्तर प्रदेश, बिहार, हरियाणा व उड़ीसा में की जाती है। ज्वार में सूखा सहने की काफी क्षमता के कारण इसे कम वर्षा वाले क्षेत्रों में भी सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है।

मिट्टी एवं खेत की तैयारी

ज्वार की खेती बलुई भूमि से लेकर भारी भूमि में की जा सकती है किन्तु अच्छी पैदावार लेने के लिए दोमट एवं बलुई दोमट मिट्टी, जिसका जल निकास अच्छा हो एवं पी.एच. मान 6.0 से 7.5 हो, अधिक उपयुक्त रहती है।

ज्वार की बुवाई के लिए ग्रीष्मकाल में एक गहरी जुताई कर लेनी चाहिए। बुवाई से पूर्व मिट्टी पलटने वाले हल अथवा हैरो से दो बार जुताई कर मिट्टी को भुरभुरी बना लेनी चाहिए एवं तत्पश्चात् पाटा चलाकर खेत को समतल कर लेना चाहिए।

उन्नत प्रजातियाँ

संकर प्रजातियाँ : सी.एस.एच. 13, सी.एस.एच. 14, सी.एस.एच. 16, सी.एस.एच. 17, सी.एस.एच. 18, सी.एस.एच. 23, सी.एस.एच. 25।

संकुल प्रजातियाँ : सी.एस.बी 10, सी.एस.बी. 11, सी.एस.बी. 15, सी.एस.बी. 17, सी.एस.बी. 20, सी. एस.बी. 23।

चारा हेतु उन्नत प्रजातियाँ

(अ.) एक कटान वाली : यू.पी. चरी 2, पंत चरी, 3, पंत चरी 4, पंत चरी 5, पंत चरी 7, पंत चरी 12

(ब.) बहु कटान वाली : पंत चरी 6, पंत चरी 8, पंत चरी 9, पंत चरी 10, पंत चरी 11, पंत चरी 14

(स.) एक कटान वाली संकर : सी.एस.एच. 40 एफ

(द.) बहु कटान वाली संकरः सी.एस.एच. 20, एम.एफ. सी.एस.एच. 24 एम.एफ, सी.एस.एच. 43 एम.एफ.

बुवाई का समय

खरीफ मौसम की फसल के लिए बुवाई का

उपयुक्त समय जून के अन्तिम सप्ताह से जुलाई का प्रथम सप्ताह है। असिंचित क्षेत्रों में वर्षा के प्रारम्भ होते ही इसकी बुवाई कर लेनी चाहिए। चारे की फसल हेतु उत्तराखण्ड के तराई–भावर क्षेत्रों में इसकी बुवाई अप्रैल के प्रथम सप्ताह तथा सिंचाई सुविधा उपलब्ध होने पर बुवाई मई के प्रारम्भ में भी की जा सकती है।

बीज की मात्रा

एक हैक्टर के लिए सामान्य प्रजातियों का 10–12 कि.ग्रा. तथा संकर प्रजातियों का 7–8 कि.ग्रा. बीज पर्याप्त रहता है। चारे हेतु एक कटान वाली प्रजातियों का बीज दर 30–40 कि.ग्रा./है., बहु कटान के अन्तर्गत छोटे दाने वाली प्रजातियों का 25–30 कि.ग्रा. एवं बड़े दाने वाले संकर प्रजातियों का बीज दर 40–45 कि.ग्रा./है. रखना चाहिए।

बीजोपचार एवं बीज की बुवाई

बुवाई से पूर्व बीजों को 2 ग्राम कार्बेंडाजिम + 1 ग्राम थीरम रसायन से प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित कर लेना चाहिए। बुवाई हल के पीछे कूँड में अथवा सीडड्रिल द्वारा पंक्ति से पंक्ति 45 से.मी. दूरी एवं 3–4 से.मी. की गहराई पर करनी चाहिए। पौधे से पौधे की दूरी 12–15 से.मी. रखनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग

गोबर की खाद अथवा कम्पोस्ट उपलब्ध होने पर 8–10 टन प्रति हैक्टर की दर से अन्तिम जुताई के समय प्रयोग करें। उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करना उचित रहता है। मृदा परीक्षण के अभाव में सिंचित क्षेत्रों में 80–100 कि.ग्रा. नत्रजन, 40–50 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 40–50 कि.ग्रा. पोटाश तथा असिंचित दशा में 40–50 कि.ग्रा. नत्रजन, 20–30 कि.ग्रा. फॉस्फोरस प्रति हैक्टर प्रयोग करना चाहिए। सिंचित क्षेत्रों में नत्रजन की आधी मात्रा तथा फॉस्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा अन्तिम जुताई के समय तथा नत्रजन की शेष आधी मात्रा पहली सिंचाई के बाद (बुवाई के 30–35 दिन बाद) दें। असिंचित क्षेत्रों में नत्रजन व फॉस्फोरस की पूरी मात्रा अन्तिम जुताई के समय देनी चाहिए।

निराई–गुड़ाई एवं खरपतवार नियंत्रण

पहली निराई–गुड़ाई बुवाई के 15–20 दिन पर करें। इसी समय घने उगे पौधों को निकाल कर पौधे से पौधे की दूरी 12–15 से.मी. कर दें। दूसरी निराई–गुड़ाई आवश्यकता पड़ने पर इसके 20 दिन बाद करनी चाहिए।

रासायनिक खरपतवार नियंत्रण के लिए बुवाई के 2–3 दिन के अन्दर 0.5 कि.ग्रा. एट्राजीन (सक्रिय तत्व) का 500–600 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टर प्रयोग करना चाहिए।

सिंचाई एवं जल निकास

ज्वार की अधिकांश खेती असिंचित दशा में की जाती है। सिंचित दशा में पहली सिंचाई बुवाई के 30 दिन (फसल की घुटने तक की अवस्था), दूसरी सिंचाई फसल में बालियाँ निकलते समय (बुवाई के 55 दिन पर) तथा तीसरी सिंचाई दाना भरते समय (बुवाई के 75 दिन पर) देनी चाहिए। बरसात में जल भराव की स्थिति में जल निकास की व्यवस्था करनी चाहिए।

रोग प्रबन्धन

झुलसा रोग (लीफ ब्लाइट) : इस रोग से पत्तियाँ प्रभावित होती हैं जिससे नयी पत्तियों में छोटे–छोटे धब्बे बन जाते हैं। रोग उग्र होने पर ये धब्बे बढ़कर पुवाल अथवा भूरे रंग के हो जाते हैं तथा कुछ समय के बाद फसल जली हुई नजर आती है।

एन्थ्रेक्नोज : यह रोग कवक द्वारा पैदा होता है जो बीज, वायु एवं संक्रमित पौधे के अवशेषों के माध्यम से फैलता है। इस रोग में सामान्यतया नीचे की पुरानी पत्तियों में छोटे–छोटे लाल भूरे रंग के धब्बे पड़ जाते हैं। धब्बे का मध्य भाग सफेद रंग का होता है जो लाल, भूरे या जामुनी रंग के किनारों से घिरा रहता है।

डाउनी मिल्ड्यू : नयी पत्तियों पर चमकीली हरी एवं सफेद धारियाँ दिखाई देती हैं। संक्रमित पत्तियों की निचली सतह सफेद आसिता से ढ़की रहती है। रोग के तीव्र होने पर पत्तियाँ सिकुड़ कर सूख जाती हैं। रोगग्रस्त पौधे में पुष्पगुच्छ नहीं बनते हैं अथवा

काफी छोटे बनते हैं जिनमें बीज नहीं बन पाते हैं।

ज्वार के झुलसा, एन्थ्रेक्नोज एवं डाउनी मिल्ड्यू रोग की रोकथाम के लिए बुवाई से पहले बीज को 2 ग्राम कार्बेंडाजिम + 1 ग्राम थीरम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें। फसल में रोग के लक्षण दिखाई देने पर 2.0 कि.ग्रा. मैंकोजेब का 500–600 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें। डाउनी मिल्ड्यू के नियंत्रण के लिए मेटालेक्सिल 500 ग्राम या जिनेब 1 कि.ग्रा. का प्रति हैक्टर छिड़काव करना भी प्रभावी रहता है।

भूरा फफूँद रोग (ग्रेन मोल्ड) : प्रारम्भिक अवस्था में रोग के लक्षण बालियों एवं पर्णवृन्त पर सफेद फफूँदी के रूप में दिखाई देते हैं। रोग के उग्र होने पर बालियों में बनने वाले दाने हल्के गुलाबी भूरे या काली फफूँदीयुक्त भद्दे हो जाते हैं।

इस रोग से बचाव हेतु रोगरोधी किस्मों का प्रयोग करना चाहिए। रोग आने पर 2.0 कि.ग्रा. मैंकोजेब का 500–600 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टर छिड़काव करना चाहिए।

दाने का कंडुवा (ग्रेन स्मट) : यह कवक द्वारा उत्पन्न होने वाला बीज जनित रोग है जो बाली में दाने बनते समय आता है। इसे आवृत कंड (कवर्ड स्मट) भी कहते हैं। पौधे की बढ़वार सामान्य होती है किन्तु रोगग्रस्त दाने स्वस्थ दानों की अपेक्षा आकार में बड़े हो जाते हैं जो कवक के काले जीवाणु से भरे रहते हैं।

अनावृत कंड रोग : यह रोग भी बीज से फैलता है। रोग से प्रभावित पौधे स्वस्थ पौधों की अपेक्षा छोटे एवं तने पतले होते हैं। रोगग्रस्त पौधे में बाली अपेक्षाकृत जल्दी निकल आती है जिसमें सभी दाने काले चूर्णयुक्त होते हैं जो बाली के पर्णच्छद से बाहर आने पर बिखर जाते हैं।

कंडुवा एवं अनावृत कंड रोगों से बचाव के लिए उचित फसल–चक्र अपनाना चाहिए। बुवाई हेतु स्वस्थ बीज के प्रयोग के साथ–साथ बुवाई पूर्व बीज को 2 ग्राम कार्बेंडाजिम + 1 ग्राम थीरम से प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से शोधित करें।

अर्गट (शर्करीय रोग) : यह कवक द्वारा उत्पन्न होने वाला वायुजनित रोग है। रोग की प्रारम्भिक अवस्था में संक्रमित पुष्पकों में से शहद जैसा चिपचिपा तरल स्त्राव होता है, जिसका स्वाद मीठा होने के कारण उस पर कीट भी आकर्षित होते हैं। अनुकूल परिस्थितियों में लंबे, सीधे या घुमावदार क्रीम से हल्के भूरे रंग के कठोर स्क्लेरोशिया विकसित होते हैं।

इस रोग से बचाव हेतु रोगग्रस्त पौधों को काटकर जला दें। उपयुक्त फसल–चक्र अपनायें। बुवाई से पहले बीजों को नमक के 20 प्रतिशत घोल में डुबोकर तैरते हुये रोगजनक स्क्लेरोशिया या अर्गट के पिण्डों को अलग कर लेना चाहिए। खड़ी फसल में मैंकोजेब का 0.25 प्रतिशत अथवा कार्बेंडाजिम का 0.1 प्रतिशत घोल का छिड़काव 5–10 प्रतिशत फूल आने पर एवं उसके पश्चात् 50 प्रतिशत फूल आने की अवस्था पर करें।

किट्ट रोग : इस रोग का प्रकोप फसल की वानस्पतिक अवस्था से लेकर बालियाँ आने तक होता है। रोग के प्रारम्भिक लक्षण छोटे–छोटे बैंगनी लाल रंग के धब्बे के रूप में पौधे की निचली पत्तियों के दोनों सतहों पर उत्पन्न होते हैं। बाद में ये धब्बे बड़े होकर फट जाते हैं, जिनसे बैंगनी भूरे रंग के जीवाणु निकलते हैं।

इस रोग के नियंत्रण के लिए रोगरोधी प्रजातियों को बोयें। फसल में रोग आने पर मैंकोजेब को 0.25 प्रतिशत घोल का 2–3 छिड़काव 10–12 दिन के अन्तराल पर करें।

प्रमुख कीट एवं नियंत्रण

तना मक्खी (शूट फ्लाई) : यह ज्वार के फसल का प्रमुख कीट है जिसका प्रकोप बीज जमाव से लेकर फसल की एक माह की अवस्था तक अधिकतम होता है। इसके शिशु (मैगट) पौधे के मुख्य प्ररोह में प्रवेश कर अग्र भाग को हानि पहुँचाते हैं जिससे मुख्य प्ररोह सूखकर मृत केन्द्र (डेड हर्ट) बन जाता है। बाद में बगल से निकलने वाले कल्लों से पौधों का आकार झाड़ीनुमा हो जाता है।

इस कीट के नियंत्रण के लिए बुवाई से पूर्व बीज को 10 ग्राम थियामेथोक्जाम 30 एफ.एस. 10 मि.ली. प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित कर लेना चाहिए। खड़ी फसल में कीट का प्रकोप होने पर ऑक्सी–डिमेटोन मिथाइल 25 ई.सी. का 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से 500–600 लीटर घोल बनाकर प्रति हैक्टर छिड़काव करें।

तना छेदक कीट : यह कीट ज्वार की फसल को एक माह की अवस्था से लेकर बालियाँ आने तक नुकसान करता है। कीट का लार्वा शुरू में पत्तियों के कोमल भागों को छेद करके खाता है तथा बाद में तने में छेद कर केन्द्रीय प्ररोह को खाता है जिससे डेड हर्ट बन जाता है।

इस कीट के नियंत्रण के लिए कीट ग्रस्त पौधों को लार्वा सहित निकालकर नष्ट कर देना चाहिए। खड़ी फसल में बुवाई के 20–25 दिन बाद कार्बोफ्यूरान 3 सी.जी. 33 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से पौधों के गोभ में अथवा क्यूनालफॉस 5 जी 15 कि.ग्रा./हैक्टर की दर से डालें।

इयर हेड मिज : इस कीट का व्यस्क नारंगी लाल रंग की मक्खी होती है। यह कीट पुष्पपत्र के अन्दर अंडे देती है जिनसे 2–3 दिन में निम्फ निकलकर विकसित हो रहे दानों का रस चूसकर हानि पहुँचाते हैं। परिणाम स्वरूप दाने सिकुड़ जाते हैं अथवा बाली में दाने बनते ही नहीं।

इस कीट के नियंत्रण के लिए फसल में डाइमेथोएट 30 ई.सी. 1.6 लीटर/हैक्टर अथवा मैलाथियान 50 ई.सी. का 1 लीटर/हैक्टर की दर से प्रयोग करना चाहिए।

कुरमुला/सफेद गिडार : कीटों में कुरमुला सर्वाधिक क्षतिकर कीट है जिसका प्रकोप प्रायः सभी वर्षा आधारित खेती में देखा जाता है। कुरमुला फसल की जड़ों को खाकर अत्यधिक नुकसान पहुँचाता है। इसके नियंत्रण हेतु प्रकाश प्रपंच का प्रयोग करना चाहिए। साथ ही वर्मीकम्पोस्ट का प्रयोग कर के भी इस कीट का प्रबन्धन कर सकते हैं। जैव कीटनाशी रसायन जैसे बुवेरिया बैसियाना अथवा बैसिलस थ्यूरिंजिएन्सिस का प्रयोग कर सकते हैं।

फसल की कटाई एवं गहाई

जब फसल सूखकर पीली–भूरी होने लगे तथा दानों में नमी की मात्रा 20–25 प्रतिशत हो, फसल की कटाई कर लेनी चाहिए। फसल पकने पर दाना कठोर हो जाता है तथा इसका रंग हरे रंग से बदलकर सफेद या हल्का पीला हो जाता है। इस फसल को 5–6 दिन धूप में सुखाने के पश्चात् हॅसिये से सिट्टों को काटकर थ्रेसर की सहायता से दानों को अलग कर लिया जाता है तथा अच्छी तरह सुखाने के पश्चात् जब नमी की मात्रा 13 प्रतिशत तक हो जाये, दानों को भण्डारित कर लेना चाहिए।

उपज : उन्नत विधि से खेती करने पर सिंचित दशा में 25–30 कु0/है0 तथा असिंचित दशा में 15–20 कु0/हैक्टर उपज प्राप्त की जा सकती है। इसी प्रकार चारे वाली एक कटान की प्रजातियों से 400–500 कु0/हैक्टर तथा बहु कटान संकर प्रजातियों से 800–1000 कु0/हैक्टर हरा चारा प्राप्त होता है।

चारा कटाई एवं हाइड्रोसायनिक अम्ल का प्रबन्धन:

एक कटान वाली ज्वार की कटाई 50 प्रतिशत फूल आने की अवस्था पर एवं बहु कटान वाली ज्वार की पहली कटाई, बुवाई के 55–60 दिन बाद करना उचित रहता है। फसल में पाये जाने वाला विषैला पदार्थ (हाइड्रोसायनिक अम्ल) उपरोक्त अवस्थाओं तक पहुँचने पर सुरक्षित सीमा तक आ जाता है। अतः किसी भी दशा में चारे की कटाई उक्त अवस्था से पूर्व नहीं करना चाहिए। यदि किसी कारणवश चारे की कटाई 40 दिन से पूर्व कर ली गयी हो तो पशु को खिलाने से पहले, चारे को 3–4 घंटे रखना आवश्यक होगा।

मंडुवा (रागी)

खरीफ में उगाये जाने वाली मंडुवा जिसे रागी भी कहते हैं, मोटे अनाज परिवार की प्रमुख फसल हैं। इसकी खेती घाटी से लेकर 2500 मीटर तक की ऊँचाई पर सफलता पूर्वक की जा सकती है।

यह फसल अधिकांशतः ढालू, कम उपजाऊ, वर्षाश्रित एवं सीमान्त भूमि में उगायी जाती है जो विपरीत परिस्थितियों में भी कम लागत में अच्छा उत्पादन देने की क्षमता रखती है। फसल को उगाने हेतु कम पोषक तत्वों की आवश्यकता, सूखा व शीत सहने तथा कीट एवं रोग प्रतिरोधी क्षमता अधिक पायी जाती है। मंडुवे से अनेक मूल्य वर्धित व्यंजन जैसे रोटी, लेसू रोटी, लुवा, फाना, बिस्किट, केक, नमकीन, पापड़, मोमो जैसे अनेक पौष्टिक उत्पाद बनाये जाते हैं।

इस फसल से स्वादिष्ट एवं गुणवत्तायुक्त चारा भी मिलता है, जो खेती एवं पशुपालन के पारम्परिक रिश्ते को मजबूत बनाता है। पर्वतीय क्षेत्रों में कृषक फसल की सीमान्त भूमि, परम्परागत बीज, मिश्रित खेती, रासायनिक उर्वरकों का न के बराबर प्रयोग, अधसड़े गोबर की खाद का प्रयोग और समय पर खरपतवार नियंत्रण न करने के कारण समुचित पैदावार नहीं ले पाते। यदि नवीनतम तकनीक का प्रयोग करते हुए फसल की खेती की जाये तो निश्चित् रूप से काफी अच्छी उपज मिल सकती है।

उन्नतशील प्रजातियाँ

प्रजाति का नाम	फसल अवधि	औसत उत्पादकता (कु0/है0)	संस्तुत उत्पादन क्षेत्र
वी.एल. मंडुवा 149	100–105	25–30	उत्तराखण्ड पर्वतीय क्षेत्र एवं तमिलनाडु व आंध्र प्रदेश को छोड़कर समस्त मंडुवा उत्पादक राज्य
वी.एल. मंडुवा 146	95–100	20–25	उत्तर प्रदेश, बिहार, उड़ीसा, कर्नाटक एवं महाराष्ट्र
वी.एल. मंडुवा 315	105–115	20–25	उत्तराखण्ड पर्वतीय क्षेत्र
वी.एल. मंडुवा 324	105–135	19–22	उत्तराखण्ड पर्वतीय क्षेत्र
वी.एल. मंडुवा 347	95–100	20–25	बिहार, गुजरात, झारखण्ड, कर्नाटक, मध्य प्रदेश एवं उत्तराखण्ड
वी.एल. मंडुवा 352	95–100	25–30	तमिलनाडु व महाराष्ट्र को छोड़कर समस्त मंडुवा उत्पादक राज्य
वी.एल. मंडुवा 348	104–112	18–20	उत्तराखण्ड पर्वतीय क्षेत्र
वी.एल. मंडुवा 376	103–109	28–30	आंध्र प्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र, झारखण्ड, कर्नाटक, बिहार, उत्तराखण्ड एवं तमिलनाडु
वी.एल. मंडुवा 379	105–107	30–32	उत्तराखण्ड, बिहार, झारखण्ड, मध्य प्रदेश, उत्तर पूर्वी राज्य
वी.एल. मंडुवा 380	105–110	18–20	उत्तराखण्ड
वी.एल. मंडुवा 382	103–109	20–22	उत्तराखण्ड
वी.एल. मंडुवा 378	103–109	20–22	उत्तराखण्ड

अपनायी जाने वाली फसल-प्रणाली

1. मंडुवा + सोयाबीन/भट्ट – जौ/जई (हरा चारा) (एक वर्ष)
2. मंडुवा + सोयाबीन/भट्ट – गेहूँ (एक वर्ष)
3. मंडुवा – मसूर (एक वर्ष)
4. मंडुवा – मटर (एक वर्ष)
5. मंडुवा + सोयाबीन/भट्ट – जई – धान – गेहूँ (दो वर्ष)

बुवाई का समय

मंडुवा की बुवाई ऊँचे पर्वतीय क्षेत्र (> 1500 मीटर), मध्य पर्वतीय क्षेत्र (1000–1500 मीटर) तथा निचले पर्वतीय क्षेत्रों (< 1000 मीटर) में क्रमशः मई का द्वितीय पखवाड़ा, मई अन्त से जून का प्रथम सप्ताह एवं जून का प्रथम पखवाड़े में करना चाहिए। मैदानी क्षेत्रों में इसकी बुवाई मानसून के वर्षा के बाद जुलाई के प्रथम पखवाड़े में करनी चाहिए। बुवाई के समय में विलम्ब नहीं करना चाहिए, अन्यथा उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

बीज दर एवं बुवाई की विधि

अच्छी तरह तैयार और जल निकास व्यवस्था युक्त खेत में 8–10 कि.ग्रा./है. (160–200 ग्राम/नाली) बीज दर से पंक्तियों में बुवाई करनी

चाहिए। कतार से कतार की दूरी 20 से.मी. रखते हुए बीज को 3–4 से.मी. गहराई में डालना चाहिए। यदि छिटकवाँ विधि से बुवाई कर रहे हों तो बीज दर 11–12 कि.ग्रा./है. रखें। बुवाई के लगभग 1 माह बाद निराई करते समय अतिरिक्त उगे पौधों की छटनी कर पौध से पौध की दूरी 10 से.मी. रख लें। बुवाई पूर्व जैव रसायन ''ट्राइकोडर्मा'' 10 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित कर बुवाई करने से फसल में रोगों का प्रकोप कम होता है। इस फसल की खेती रोपाई द्वारा भी की जा सकती है। इसके लिए पौधशाला में 4–5 कि.ग्रा./है. (80–100 ग्राम/नाली) की दर से बीज की बुवाई जून के प्रथम सप्ताह तक कर देनी चाहिए। पौधे 20–25 दिन के होने पर 20×10 सेमी. की दूरी पर रोपाई करें। रोपाई जून अन्त से जुलाई के प्रथम सप्ताह तक सम्पन्न कर लेनी चाहिए।

उर्वरक प्रबन्ध

उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करनी चाहिए। मृदा परीक्षण के अभाव में खेत में बुवाई पूर्व भली–भाँति सड़ी गोबर की खाद 4–8 टन/है. प्रयोग करें। इसके अतिरिक्त फसल के 40 कि.ग्रा. नत्रजन, 20 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 20 कि.ग्रा. पोटाश/है. की आवश्यकता रहती है। उर्वरकों की पूर्ति के लिए नत्रजन की आधी एवं फॉस्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा अंतिम जुलाई के समय खेत में बिखेर देनी चाहिए। नत्रजन की शेष आधी मात्रा बुवाई के करीब 25–30 दिन बाद प्रथम निराई के पश्चात् जब खेत में नमी हो, प्रयोग करनी चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण

मंडुवा खरीफ की फसल होने के कारण इसमें वर्षा उपरान्त काफी संख्या में खरपतवार उग आते हैं, जिनका समुचित नियंत्रण आवश्यक होता है। अन्यथा की स्थिति में खरपतवार फसल के साथ पोषक तत्व, नमी व जगह के लिए प्रतिस्पर्धा करते हुए फसल के उपज पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं। संकरी पत्ती वाले खरपतवारों के नियंत्रण हेतु खरपतवारनाशी–आइसोप्रोट्यूरान 0.75 कि.ग्रा./है. (15 ग्राम/नाली) का बुवाई बाद परन्तु अंकुरण पूर्व एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के नियंत्रण हेतु बुवाई के लगभग 3 सप्ताह बाद 2, 4–डी 80 प्रतिशत का 650 ग्राम/है. (13 ग्राम/नाली) की दर से छिड़काव करना चाहिए। बुवाई के 15–20 दिन एवं 30–35 दिन बाद दो निराईयों द्वारा भी फसल को खरपतवार मुक्त रख सकते हैं।

फसल सुरक्षा

मंडुवा में झोंका प्रमुख रोग है, जिसमें पत्तियों पर धूसर रंग के आँख के आकार के धब्बे बन जाते हैं। इस रोग के नियंत्रण हेतु जिनेब 75 प्रतिशत डब्ल्यू.पी. 1.25–1.50 कि.ग्रा. का 700–1000 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति है. की दर से छिड़काव करना चाहिए। इसके अतिरिक्त रोगरोधी प्रजातियों का प्रयोग, कार्बेंडाजिम 2 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से बीजोपचार एवं खड़ी फसल में कार्बेंडाजिम 1 ग्राम/लीटर पानी की दर से 2 छिड़काव (प्रथम–पौधों में 50 प्रतिशत बालियाँ बनने पर तथा द्वितीय–प्रथम छिड़काव के 10 दिन बाद) करें। रोग के जैविक नियंत्रण हेतु बीजों को 10 ग्राम स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें तथा खड़ी फसल में 10 ग्राम स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर दो छिड़काव (पहला 50 प्रतिशत बालियाँ बनने पर तथा दूसरा 10 दिन बाद) करें।

इस फसल को भी कुरमुला क्षति पहुँचाता है। इनका नियंत्रण ज्वार फसल की भांति करें।

उपज

उन्नत तकनीक का प्रयोग करते हुए खेती करने पर इस फसल से 18–20 कु0/है. (36–40 कि.ग्रा./नाली) उपज ली जा सकती है।

झंगोरा (मादिरा/सांवा)

झंगोरा भारत, चीन, जापान, कोरिया, पाकिस्तान आदि देशों में बहुतायत से उगाया जाता है। अपने देश में यह उत्तराखण्ड, उत्तर प्रदेश,

राजस्थान, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, गुजरात राज्यों में खरीफ फसल के रूप में उगाया जाता है। फसल दाना एवं चारा दोनों उद्देश्यों हेतु उगायी जाती है। उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में द्विवर्षीय फसल–चक्र यथा मंडुवा–परती–चैती धान/झंगोरा–गेहूँ के अन्तर्गत इस फसल की खेती की जाती है। न्यूनतम लागत वाली यह फसल वर्षा आधारित, कम उपजाऊ भूमि और वर्तमान में परिवर्तित हो रहे वातावरण में भी उत्तम उपज देने की क्षमता रखती है। इसमें पाये जाने वाले पोषक तत्वों जैसे रेशा, लोहा, कैल्शियम, मैग्नीशियम, जिंक आदि के कारण यह ''हेल्थ फूड'' के नाम से भी जाना जाता है।

उन्नत प्रजातियाँ

क्षेत्र	प्रजाति	परिपक्वता अवधि (दिन में)	औसत उपज-दाना कु./है. (कि.ग्रा./नाली)	औसत उपज-चारा कु./है. (कि.ग्रा./नाली)
कम व मध्यम ऊँचाई के क्षेत्र	वी.एल. मादिरा 29	95–100	15–20 (30–40)	100 (200)
	वी.एल. मादिरा 207	80–85	15–20 (30–40)	100 (200)
	वी.एल. मादिरा 172	95–100	15–20 (30–40)	150 (300)
	वी.एल. मादिरा 181	100–105	15–18 (30–36)	150 (300)
2500 मीटर ऊँचाई तक के क्षेत्रों के लिए	पी.आर.जे. 1	100–110	20–25 (40–50)	150 (300)

अपनायी जाने वाली फसल-प्रणाली

उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में झंगोरा को निम्न फसल, प्रजातियों में उगाया जाता है:

1. झंगोरा + सोयाबीन/काला भट्ट (एक वर्ष)
2. झंगोरा + गहत/नौरंगी – गेहूँ (एक वर्ष)
3. झंगोरा – मसूर (एक वर्ष)
4. झंगोरा – मटर (एक वर्ष)
5. झंगोरा – गेहूँ (एक वर्ष)
6. झंगोरा + नौरंगी – जई/जौ – धान – गेहूँ (दो वर्ष)

बुवाई का समय

पर्वतीय क्षेत्रों में अलग–अलग ऊँचाई वाले क्षेत्रों में विभिन्न समय पर बुवाई की जाती है:

स्थिति	बुवाई का समय
ऊँचें पर्वतीय क्षेत्र (1500 मीटर से ऊपर)	अप्रैल का द्वितीय पखवाड़ा
मध्य पर्वतीय क्षेत्र (1000–1500 मीटर)	मध्य अप्रैल–मई का प्रथम पखवाड़ा
निचले पर्वतीय क्षेत्र (1000 मीटर से नीचे)	मई अन्त से जून का प्रथम सप्ताह
मैदानी क्षेत्र	मानसून वर्षा के बाद जुलाई प्रथम पखवाड़ा

बीज की मात्रा एवं बुवाई विधि

पंक्ति में बुवाई 8–10 कि.ग्रा./है. (160–200 ग्राम प्रति नाली)

छिटकवां विधि 12 कि.ग्रा./है. (240 ग्राम प्रति नाली)

झंगोरा की बुवाई प्रायः छिटकवां विधि से की जाती है। अच्छी पैदावार के लिए बीजों को उथले कूँड़ों में बोना चाहिए तथा कूँड़ से कूँड़ की दूरी 25–30 से.मी. तथा बुवाई के 1 माह पश्चात् घने पौधों की छंटनी कर पौध से पौध के बीच की दूरी 10 से.मी. रखनी चाहिए।

उर्वरकों का प्रयोग

फसल में 40 कि.ग्रा. नत्रजन तथा 20 कि.ग्रा. फॉस्फोरस प्रति हैक्टर (क्रमशः 800 व 400 ग्राम प्रति नाली) प्रयोग करने से अच्छी उपज मिलती है। फॉस्फोरस की सम्पूर्ण मात्रा तथा नत्रजन की आधी मात्रा जुताई के समय कूँड़ों में तथा शेष नत्रजन को बुवाई के लगभग एक माह पश्चात् प्रथम निराई के शीघ्र बाद टॉप–ड्रेसिंग के रूप में प्रयोग करना चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण

फसल की बुवाई के लगभग एक माह के

अंदर दो निराईयाँ क्रमशः बुवाई के 15–20 एवं 30–35 दिन बाद करके खरपतवार निकाल देने चाहिए। रासायनिक नियंत्रण हेतु बुवाई के तुरन्त बाद 0.75 कि.ग्रा. आइसोप्रोट्यूरान का प्रति हैक्टर की दर से (15 ग्राम/नाली) छिड़काव करना चाहिए। बुवाई के लगभग 3 सप्ताह बाद 2, 4–डी. सोडियम साल्ट 650 ग्राम/है. (13 ग्राम/नाली) का छिड़काव करने से चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों का नियंत्रण किया जा सकता है।

फसल सुरक्षा

रोग नियंत्रणः कंडुवा तथा पत्ती का झुलसा रोग मुख्य रूप से इस फसल को हानि पहुँचाते हैं। कंडुवा रोग की रोकथाम हेतु 2 ग्राम कार्बेंडाजिम या 2.5 ग्राम वाइटावैक्स प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से बुवाई पूर्व बीजोपचार करना चाहिए। इसी प्रकार पत्ती के झुलसा रोग नियंत्रण हेतु मैंकोजेब 2.5 ग्राम/लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

कीट नियंत्रण

तना छेदक–ज्वार की भांति कीट का प्रबन्धन करें।

उपज

फसल से 20–25 कु./है. (40–50 कि.ग्रा. प्रति नाली) दाना तथा 100 कुन्तल प्रति हैक्टर (200 कि.ग्रा./नाली) चारा प्राप्त होता है।

कौणी (कंगनी/काकुन)

कौणी भी कदन्न फसल समूह की अत्यन्त महत्वपूर्ण फसल है। यह उत्तराखण्ड सहित आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, तेलंगाना, तमिलनाडु, राजस्थान, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश जैसे राज्यों में खरीफ की प्रमुख फसल है। उत्तराखण्ड में कौणी का मंडुआ व झंगोरा के पश्चात् तीसरा स्थान है जहाँ प्रायः इसकी खेती झंगोरा के साथ मिश्रित खेती के रूप में की जाती है। यह फसल गर्भवती, नवजात बच्चों को दुग्धपान कराने वाली एवं बच्चों में त्वरित ऊर्जा पहुँचाने का प्रमुख स्त्रोत है। इसके दानों में 12.5 प्रतिशत प्रोटीन तथा प्रचुर मात्रा में रेशा, विटामिन, सूक्ष्म पोषक तत्व व अनेक अमीनो अम्ल पाये जाते हैं।

अपनायी जाने वाली फसल-प्रणाली

उत्तराखण्ड में यह फसल मिश्रित या सहफसली खेती के तौर पर उगायी जाती है। कहीं–कहीं यह खेत के मेड़ों पर सिंचाई की नालियों के साथ–साथ उगायी जाती है। फसल को निम्नानुसार विभिन्न फसल–प्रजातियों में उगाया जाता हैः

1. कौणी + भट्ट – गेहूँ (एक वर्ष)
2. कौणी + गहत/नौरंगी – गेहूँ (एक वर्ष)
3. कौणी – राजमा – गेहूँ (एक वर्ष)
4. कौणी – तोरिया/सरसों – आलू (एक वर्ष)

उन्नत किस्में

पी.आर.के. 1 (हिमाद्रि): रानीचौरी परिसर से विकसित यह अगेती प्रजाति पर्वतीय क्षेत्रों में 1500–2200 मी. तक की ऊँचाई वाले क्षेत्रों में सफलतापूर्वक उगाई जा सकती है। इस फसल से प्रति है. 18–20 कु. उपज मिलती है। इसके पौधों की ऊँचाई 90–100 से.मी., घनी बालियाँ, पकने पर पत्तियों का रंग बैंगनी और दाने पीलापन लिये हुए भूरे रंग के होते हैं। यह फसल मैदानी क्षेत्रों में 75–80 दिन व ऊँचे पर्वतीय क्षेत्रों में लगभग 90–105 दिन में पक जाती है। इस किस्म में झोंका (ब्लास्ट) तथा पर्णीय झुलसा का प्रकोप कम होता है।

पी.एस. 4 : यह प्रजाति पंतनगर विश्वविद्यालय द्वारा वर्ष 1998 में मैदानी क्षेत्रों के लिये विकसित की गयी है। यह प्रजाति तराई क्षेत्र में 83–85 दिन में पक जाती है तथा इसकी उपज क्षमता 17–18 कु./है. पायी गयी है।

बुवाई का समय

स्थिति	बुवाई का समय
ऊँचे पर्वतीय क्षेत्र (1500 मीटर से ऊपर)	अप्रैल का द्वितीय पखवाड़ा
मध्य पर्वतीय क्षेत्र (1000–1500 मीटर)	मध्य अप्रैल–मई का प्रथम पखवाड़ा
निचले पर्वतीय क्षेत्र (1000 मीटर से नीचे)	मई अन्त से जून का प्रथम सप्ताह

बीज दर एवं बुवाई की विधि

कतार में बुवाई के लिए 8–10 कि.ग्रा. प्रति है. (160 से 200 ग्राम प्रति नाली) तथा छिटकवां बुवाई के लिए 10–12 कि.ग्रा./है. (200 से 240 ग्राम प्रति नाली) बीज की आवश्यकता होती है। बुवाई से पूर्व थीरम 2.5 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से बीजोपचार करना लाभदायक होता है। बीज की बुवाई कूँड़ों में लगभग 3–4 से.मी. की गहराई पर करें। अंकुरण के 15–20 दिन बाद अतिरिक्त उगे पौधों की छंटाई कर कतार से कतार की दूरी 25 से.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 10 से.मी. रखनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक की मात्रा

रासायनिक उर्वरकों में, 40 कि.ग्रा. नत्रजन तथा 20 कि.ग्रा. फॉस्फोरस प्रति है. (800 ग्राम नत्रजन एवं 400 ग्राम फॉस्फोरस प्रति नाली) प्रयोग करना चाहिए। फॉस्फोरस की पूरी एवं नत्रजन की आधी मात्रा बुवाई के समय तथा शेष आधी मात्रा खड़ी फसल में फूल खिलते समय प्रयोग करना लाभदायक होता है। जैविक दशा में खेत की जुताई से पहले प्रति हैक्टर 5–6 टन गोबर या कम्पोस्ट खाद बिखेर देनी चाहिए और जुताई कर भूमि में अच्छी तरह मिला देनी चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण

खरपतवार नियंत्रण हेतु बीज अंकुरण के 15–20 दिन बाद पहली निराई तथा 30–35 दिन बाद दूसरी निराई करनी चाहिए। खरपतवारों के रासायनिक नियंत्रण हेतु बुवाई के तुरन्त बाद 0.75 किग्रा. आइसोप्रोट्यूरान का प्रति है. (15 ग्राम प्रति नाली) छिड़काव करना चाहिए। चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के नियंत्रण के लिए बुवाई के लगभग तीन सप्ताह बाद 2, 4–डी 80 प्रतिशत का 650 ग्राम/है. (13 ग्राम/नाली) की दर से छिड़काव करना चाहिए।

रोग नियंत्रण

कौणी की फसल में यद्यपि कोई विशेष रोग नहीं लगते हैं परन्तु कभी–कभी झोंका तथा पत्ती का झुलसा रोग नुकसान पहुँचा सकते हैं। अतः झोंका रोग की रोकथाम हेतु कार्बेंडाजिम अथवा एडिफेनफॉस 1 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए। पत्ती के झुलसा रोग नियंत्रण हेतु मैंकोजेब (2.5 ग्राम/लीटर पानी) का छिड़काव करें।

कीट नियंत्रण

तना मक्खी–ज्वार की भांति कीट प्रबन्धन करें।

कटाई एवं उपज

फसल 90 से 105 दिन में पककर तैयार हो जाती है। जून प्रथम पखवाड़े में बोई गयी फसल की कटाई सितम्बर में हो जाती है, जिससे रबी की फसल आसानी से ली जा सकती है। फसल से 20–25 कु./है. (40–50 कि.ग्रा./नाली) दाना एवं 100 कुन्तल चारा/है. (2 कुन्तल/नाली) प्राप्त होता है।

चीना

चीना खरीफ में उगायी जाने वाली, कम अवधि एवं पर्याप्त सूखा सहन करने वाली फसल है। इस फसल की खेती मुख्यतः मध्य प्रदेश, बिहार, पूर्वी उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु तथा उत्तराखण्ड के कुछ पर्वतीय भागों में की जाती है। सिंचित घाटी क्षेत्रों में यह फसल गेहूँ व धान के फसल के बीच में ''कैच क्रॉप'' के रूप में भी उगायी जाती है। मध्य और ऊँचें पर्वतीय क्षेत्रों में इसकी खेती खरीफ फसल के रूप में की जाती है। ग्लूटेन मुक्त इस फसल में स्वास्थ्यवर्धक फैटी एसिड, कार्बोहाइड्रेट, मिनरल्स जैसे मैग्नीशियम, मैंग्नीज, फॉस्फोरस आदि प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। चीना में 12.5 प्रतिशत प्रोटीन, 1.1 प्रतिशत वसा, 68.9 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट, 2.2 प्रतिशत रेशा व 3.4 प्रतिशत भस्म होता है। यह रक्तचाप से बचाव के साथ–साथ जिंक, विटामिन बी6, लोहा आदि

उपलब्ध कराता है, जो मानव के दिन प्रतिदिन के कार्यक्षमता में वृद्धि करता है। इसके दानों का उपयोग चावल, चपाती अथवा मुर्गी आहार के लिये किया जाता है। चीना से मिलने वाले प्रोटीन में लाइसिन नामक अमीनो अम्ल पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है, जो अन्य अनाजों में अपेक्षाकृत कम होता है।

प्रजातियाँ

पी.आर.सी. 1: रानीचौरी परिसर से विकसित यह प्रजाति पर्वतीय क्षेत्रों में खेती हेतु वर्ष 2008 में विमोचित की गयी है। इस प्रजाति से 10–12 कुन्तल दाने के साथ–साथ 50–55 कुन्तल प्रति है. चारा प्राप्त किया जा सकता है। इसकी अवधि 70–75 दिन होती है। उपरोक्त प्रजाति के अतिरिक्त अन्य शोध संस्थानों से विकसित प्रजातियाँ जैसे टी.एन.ए.यू. 202, टी.एन.ए.यू. 164, प्रताप चीना 1, जी.पी.यू.पी. 21, भावना इत्यादि भी देश के अनेक हिस्सों में उगायी जाती हैं।

बुवाई का समय

सिंचित दशा में चीना को रबी की फसल की कटाई के पश्चात् एवं खरीफ फसल की बुवाई के पहले कैच क्रॉप के रूप में उगाया जाता है। इस दशा में फसल की बुवाई अप्रैल के द्वितीय पखवाड़े में की जाती है जबकि मध्यम/ऊँचाई वाले एवं असिंचित स्थानों पर चीना की बुवाई खरीफ की फसल के रूप में जून में की जाती है।

बीज दर एवं बुवाई

छिटकवां विधि से बुवाई करने पर 12–14 कि.ग्रा. प्रति है. (240–280 ग्राम/नाली) एवं कतार में बुवाई करने पर 8–10 कि.ग्रा. प्रति है. (160–200 ग्राम/नाली) बीज की आवश्यकता होती है। पंक्तियों के बीच की दूरी 25 सेमी. रखनी चाहिए तथा बीज को 3–4 से.मी. की गहराई पर बोना चाहिए। अंकुरण के 15–20 दिन बाद पौधों की छंटाई इस प्रकार करनी चाहिए कि पौध से पौध की दूरी 8–10 से.मी. रहे।

उर्वरक प्रबन्ध

सिंचित क्षेत्रों में अच्छी फसल प्राप्त करने के लिए 40 कि.ग्रा. नत्रजन, 20 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 20 कि.ग्रा. पोटाश प्रति है. प्रयोग करना चाहिए, परन्तु असिंचित क्षेत्रों में उपरोक्त मात्रा की आधी ही प्रयोग करनी चाहिए। यदि गोबर की खाद उपलब्ध हो तो 5–10 टन/है. की दर से बुवाई के एक माह पूर्व प्रयोग करना चाहिए। नत्रजन की आधी मात्रा तथा फॉस्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के समय तथा शेष नत्रजन पहली सिंचाई के समय प्रयोग करें।

सिंचाई/जल प्रबन्ध

खरीफ में बोई गयी फसल को सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है लेकिन यदि लम्बे समय तक सूखा रहता है तो कल्ले बनते समय सिंचाई करें। ग्रीष्म कालीन फसल में, मौसम के अनुसार 2–4 सिंचाईयों की आवश्यकता होती है। पहली सिंचाई बुवाई के 25–30 दिन पश्चात् तथा दूसरी बुवाई के 40–45 दिन बाद करें।

खरपतवार नियंत्रण

फसल की प्रारम्भिक अवस्था में खरपतवार नियंत्रण आवश्यक होता है। सामान्यतया दो गुड़ाईयाँ (पहली बुवाई के 20–25 दिन बाद तथा दूसरी बुवाई के 40–45 दिन बाद) कर फसल को खरपतवार मुक्त किया जा सकता है।

रोग नियंत्रण

फसल में कभी–कभी कंडुवा रोग का प्रकोप देखा जाता है। इसके नियंत्रण के लिए फसल की बुवाई विलम्ब से करें एवं कार्बेंडाजिम 2 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से बीज उपचार कर बुवाई करें। पत्ती के झुलसा रोग के नियंत्रण हेतु मैंकोजेब 2.5 ग्राम/लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

कीट नियंत्रण

तना मक्खी (शूट फ्लाई)–ज्वार की भांति कीट का प्रबन्धन करें।

कटाई एवं मड़ाई

फसल बुवाई के 65–75 दिन बाद कटाई योग्य हो जाती है। बालियों के शीर्ष वाले दाने निचले दानों की अपेक्षा जल्दी पक जाते हैं तथा गिरने लगते हैं। अतः जब बालियों में दो–तिहाई

दाने पक जाये तो कटाई कर लेनी चाहिए। फसल की मंड़ाई हाथ या बैलों द्वारा की जा सकती है।

उपज : उन्नत कृषि विधियों को अपनाकर खेती करने पर प्रति है. 20 कुन्तल दाना तथा 50–60 कुन्तल भूसा (40 कि.ग्रा. दाना एवं 1.0–1.2 कुन्तल भूसा प्रति नाली) प्राप्त किया जा सकता है।

कुटकी

सीमित क्षेत्रों में उगाया जाने वाला यह श्रीअन्न अपने उच्च पोषण मूल्य और सूखा सहिष्णुता के लिए जाना जाता है। इसे कम से कम पानी की माँग वाली फसलों में से एक माना जाता है। दाना और चारा के लिए उगाई जाने वाली इस फसल की खेती मैदान से लेकर 2000 मीटर तक की ऊँचाई वाले क्षेत्रों में की जा सकती है। इसकी खेती ज्यादातर उड़ीसा, गुजरात, महाराष्ट्र, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ तथा आंध्र प्रदेश के आदिवासी क्षेत्रों में की जाती है। यह अद्‌भुत फसल सभी आयु वर्ग के लोगों के स्वास्थ्य सुधार में मदद करती है। इसके सेवन से अपच और कब्ज जैसी समस्याओं से निदान, अच्छे कोलेस्ट्राल की मात्रा में वृद्धि एवं बढ़ते बच्चों के शरीर को मजबूती प्रदान करता है। इसमें मौजूद जटिल कार्बोहाइड्रेट्स का धीरे–धीरे पाचन होता है, जो मधुमेह रोगियों हेतु फायदेमंद होता है। इसका उच्च फाईबर शरीर में वसा के जमाव को कम करता है। कुटकी के 100 ग्राम दानों में 8.7 ग्राम प्रोटीन, 75.7 ग्राम कार्बोहाइड्रेट, 5.3 ग्राम वसा, 1.7 ग्राम खनिज एवं 9.3 मि.ग्रा. आयरन होता है।

भूमि एवं खेत की तैयारी

इस फसल को अच्छे जल निकास वाली लगभग सभी प्रकार की मिट्टियों में उगाया जा सकता है, किन्तु जीवांश युक्त गहरी दोमट मिट्टी जिसका पी.एच. मान 5.5–6.5 के बीच हो, इसकी खेती हेतु उत्तम होती है। बुवाई पूर्व गर्मी में एक गहरी जुताई कर खेत को छोड़ दें और मानसून के पश्चात् पुनः जुताई कर खेत को भुरभुरा बना लें और बुवाई करें।

राज्यवार उन्नत प्रजातियाँ

राज्य	प्रजातियाँ
उड़ीसा	ओ.एल.एम. 203, ओ.एल.एम. 208 एवं ओ.एल.एम. 217
मध्य प्रदेश	जे.के. 4, जे.के. 8 एवं जे.के. 36
आंध्र प्रदेश	ओ.एल.एम. 203 एवं जे.के. 8
तमिलनाडु	पैयूर 2, टी.एन.ए.यू. 63, सी.ओ. 3, सी.ओ. 4, के. 1, ओ.एल.एम. 203, ओ.एल.एम. 20
छत्तीसगढ़	जे.के. 8, बी.एल. 6, बी.एल. 4, जे.के. 36
कर्नाटक	ओ.एल.एम. 203, जे.के. 8
गुजरात	जी.वी. 2, जी.वी. 1, ओ.एल.एम. 203, जे.के. 8
महाराष्ट्र	फुले एकादशी, जे.के. 8, ओ.एल.एम. 203

बुवाई का समय

खरीफ–जून अन्तिम सप्ताह से जुलाई प्रथम पखवाड़ा
रबी (तमिलनाडु व आंध्र प्रदेश)–सितम्बर से अक्टूबर
जायद (बिहार व पूर्वी उत्तर प्रदेश–सिंचित फसल के रूप में)–मध्य मार्च से मध्य मई।

बीज दर एवं बुवाई

छिटकवां विधि से बुवाई करने पर 12–14 कि.ग्रा. प्रति है. (240–280 ग्राम/नाली) एवं कतार में बुवाई करने पर 8–10 कि.ग्रा. प्रति है. (160–200 ग्राम/नाली) बीज की आवश्यकता होती है। पंक्तियों के बीच की दूरी 25 से.मी. रखते हुए बीज की बुवाई 2–3 से.मी. की गहराई पर करनी चाहिए। अंकुरण के 15–20 दिन बाद पौधों की छंटाई इस प्रकार करनी चाहिए कि पौध से पौध की दूरी 8–10 से.मी. रहे।

खाद और उर्वरक

बुवाई से 1 माह पूर्व उपलब्धतानुसार 5–10 टन/है. कम्पोस्ट या गोबर की खाद डालें। अच्छी उपज हेतु 40 कि.ग्रा. नत्रजन, 20 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 20 कि.ग्रा. पोटाश/है. की दर से प्रयोग करना चाहिए। फॉस्फोरस और पोटाश की पूरी मात्रा एवं नत्रजन की आधी मात्रा बुवाई के समय तथा शेष आधी मात्रा खड़ी फसल में प्रथम सिंचाई के पश्चात् टॉप–ड्रेसिंग करें। उचित होगा कि उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर किया जाय।

सिंचाई

खरीफ फसल ज्यादातर वर्षा आधारित फसल के रूप में उगायी जाती है, किन्तु समय पर वर्षा न होने की स्थिति में आवश्यकतानुसार 1–2 सिंचाईयाँ पर्याप्त होती है। रबी और जायद की फसल को तापमान के अनुसार 2–4 सिंचाईयों की आवश्यकता पड़ती है।

खरपतवार प्रबन्धन

पंक्तियों में बोयी गयी फसल में खरपतवार नियंत्रण हेतु दो अंतः जुताई एवं एक निराई संस्तुत है। छिटकवां विधि से बुवाई की गयी फसल में पहली निराई–गुड़ाई बुवाई के 15–20 दिन एवं दूसरी 35–40 दिन के बाद करनी चाहिए।

फसल सुरक्षा

रोग

कुटकी की फसल को रोगों से बहुत क्षति नहीं होती तथापि 'अनाज कंडुवा' कुटकी में पाये जाने वाला एक प्रमुख रोग है। इसके नियंत्रण हेतु प्रतिरोधी किस्में DPI 2394, PLM 212, OLM 203, DPI 2386 आदि का प्रयोग करें। फसल की विलम्ब से बुवाई व कार्बेंडाजिम अथवा कार्बोक्सिन 2 ग्राम/कि.ग्रा. की दर से बीजोपचार कर भी इस रोग का प्रभावी नियंत्रण किया जा सकता है।

कीट

तना मक्खी (शूट फ्लाई)–ज्वार की भांति कीट का प्रबन्धन करें।

उपज : यह फसल लगभग 70–75 दिन में पक कर तैयार हो जाती है। उन्नत तकनीक से खेती करने पर 12–15 कुन्तल अनाज और 20–25 कुन्तल चारा/है. प्राप्त होता है।

कोदो

कम अवधि में पकने वाली यह श्रीअन्न सूखा अवरोधी, आदिवासी प्रिय विभिन्न नामों जैसे 'गरीबों का चावल' एवं 'अकाल के अनाज' इत्यादि से जानी जाती है। धान की तरह दिखने वाली इस फसल की खेती पारम्परिक रूप से कम उपजाऊ भूमि में बिना समुचित प्रबंधन के भी हो जाती है। ऋषि अन्न का दर्जा प्राप्त इस फसल की खेती महाराष्ट्र, मध्य–प्रदेश, छत्तीसगढ़, पश्चिम बंगाल, बिहार, गुजरात एवं उत्तर प्रदेश राज्यों में की जाती है। इस फसल की खेती अधिकतर असिंचित क्षेत्रों में खरीफ के मौसम में की जाती है। इसकी कटाई के बाद रबी में कम पानी की मांग वाली फसलें जैसे चना, मसूर, अलसी, जौ आदि की खेती की जा सकती है। पोषक तत्वों से भरपूर इस अनाज में 8.3 प्रतिशत प्रोटीन, 1.4 प्रतिशत वसा, 65.9 प्रतिशत कार्बोहाईड्रेट एवं 2.9 प्रतिशत राख मिलता है। कोदो मिलेट को 'ब्लड प्यूरीफायर' भी कहा जाता है, क्योंकि इसके सेवन से डायबिटीज, दिल, कैंसर और पेट सम्बन्धी समस्याओं से निजात पाया जा सकता है।

बुवाई का समय

फसल की बुवाई जून के अन्तिम सप्ताह से लेकर मध्य जुलाई तक, जब खेत में उपयुक्त नमी हो, करनी चाहिए।

उन्नत प्रजातियाँ : कोदो की अनेक उन्नतशील प्रजातियाँ यथा् जवाहर कोदो 2, जवाहर कोदो 41, जवाहर कोदो 62, जवाहर कोदो 101, जेके 137, डीएसपी 9–1, जेके 98, जेके 106, टीएनएयू 86, जीपीयूके 3, इन्द्रा, जेके 65, आरके 390 इत्यादि का उपलब्धतानुसार प्रयोग कर वैज्ञानिक विधि से खेती की जा सकती है।

बीज दर एवं बुवाई की विधि

अच्छी उपज लेने हेतु बीज की बुवाई पंक्तियों में 8–10 कि.ग्रा./है. की दर से करनी चाहिए। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 40–45 से.मी. रखते हुए बीज की बुवाई 3 से.मी. की गहराई पर करें। बुवाई के 15–20 दिन बाद निराई करते समय पौधों की छंटनी कर पौधे से पौधे की दूरी 8–10 से.मी. रखें। छिटकवां विधि से बुवाई करने पर बीज दर 10–12 कि.ग्रा./है. रखनी चाहिए।

उर्वरक प्रबन्धन

कोदो की अच्छी फसल लेने के लिए गोबर की सड़ी खाद 5–6 टन/है. की दर से अन्तिम जुताई के समय खेत में बिखेर कर प्रयोग करनी चाहिए। रासायनिक उर्वरकों में 40 कि.ग्रा. नत्रजन, 20 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 20 कि.ग्रा. पोटाश प्रति है. की आवश्यकता पड़ती है। उर्वरकों की सम्पूर्ण मात्रा को बुवाई पूर्व खेत में छिड़क देना चाहिए।

खरपतवार प्रबन्धन

अन्य फसलों की भांति कोदो को भी खरपतवारों से हानि होती है जिनके नियंत्रण के लिए बुवाई के 20–25 दिन बाद पहली और 35–40 दिन बाद दूसरी निराई करनी चाहिए। रासायनिक नियंत्रण हेतु एट्राजिन (50 प्रतिशत घुलनशील पाउडर) 2 कि.ग्रा. का 800 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टर की दर से अंकुरण पूर्व छिड़काव करें।

कटाई-मड़ाई

यह फसल 90–120 दिन में पककर तैयार हो जाती है। कटाई योग्य पौधे की पत्तियाँ सूखकर भूरी हो जाती हैं एवं दाना काला व कठोर हो जाता है। इस प्रकार पूर्ण रूप से पकी हुई फसल की बालियाँ काट लेते हैं और एक सप्ताह तक धूप में सुखाते हैं। इसके पश्चात् हाथ से पीटकर अथवा बैलों से मड़ाई कर दाना और भूसा अलग–अलग कर लेना चाहिए।

उपज

वैज्ञानिक विधि से खेती करने पर दाना 12–15 कुन्तल/है. एवं भूसा 30–35 कुन्तल/है. मिलता है।

सावधानी से करें कोदो का उपयोग

इसके दाने और पुवाल अगर पूर्ण रूप से सूखे नहीं होंगें तो इनमें एक विषैला यौगिक 'टोमेन' पैदा हो जाता है। अधिक नमी की अवस्था में कोदो का भण्डारण करने पर भी इसमें विष उत्पन्न होता है। अतः ध्यान रखें कि दाने खूब पके हो और कम से कम छः माह गोदाम में रखे हों तभी खाने हेतु प्रयोग करना चाहिए। चूंकि इसका पुवाल विष युक्त होता है अतः इसे मवेशी, घोड़े इत्यादि को नहीं खिलाना चाहिए।

कुट्टू (ऊगल)

कुट्टू पर्वतीय क्षेत्र की एक अल्प उपयोगी एवं सूडो मिलेट श्रेणी की फसल है, जिसकी खेती मध्य एवं उच्च हिमालयी क्षेत्रों में सुगमता से की जा सकती है। कम लागत में पैदा होने वाली इस फसल में कीड़े–मकोड़े एवं रोग भी न के बराबर लगते हैं। इसकी मुख्यतः दो प्रजातियाँ यथा–मध्य हिमालय में उगने वाली को 'उगल' एवं उच्च हिमालय क्षेत्र में उगने वाली को 'फाफर' कहते हैं। कुट्टू का बीज भूरा, काला या हल्का लाल सा दिखता है। तीन धारों वाला इसका बीज आगे से नुकीला होता है। पत्तियाँ नुकीली एवं धारी युक्त होती हैं जो पत्तियाँ प्रारम्भ में बड़े आकार की होती हैं परन्तु आगे चलकर धीरे–धीरे इनका आकार घटता जाता है। पौधे की ऊँचाई 1 से 1.5 मीटर तक होती है जिसका रंग शुरू में हल्का बादामी एवं बड़ा होने पर गुलाबी हो जाता है। पौधे में सफेद रंग के फूल आते हैं। बाजार में इसकी बढ़ती मांग, ऑटे का फलाहार के रूप में प्रयोग, औषधीय महत्व आदि को दृष्टिगत रखते हुए इसकी वैज्ञानिक विधि से खेती कर पैदावार में पर्याप्त वृद्धि की जा सकती है। कुट्टू में 12.9 प्रतिशत नमी, प्रति 100 ग्राम पोषक तत्व में 9.8 ग्राम प्रोटीन, 2.6 ग्राम

वसा, 1.9 ग्राम खनिज, 10 ग्राम रेशा और 62.8 ग्राम कार्बोहाइड्रेट पाया जाता है।

भूमि

इसकी खेती सभी तरह की मिट्टियों में की जा सकती है, अच्छी उपज के लिए मध्यम उपजाऊ, हल्की भूमि उपयुक्त होती है। यह फसल अम्लीय, पथरीली मिट्टी एवं कंकड़ पत्थर के ढेर में भी उगने की क्षमता रखता है। आर्द्र एवं ठण्डी जलवायु कुट्टू के लिए अच्छी होती है।

खेत की तैयारी

गर्मी में गहरी जुताई कर खेत को खुला छोड़ देना चाहिए। इससे तिपतिया, मोथा व अन्य खरपतवार की गांठें/बीज, कीड़े–मकोड़ों के अण्डे–बच्चे मृदा की सतह पर आ जाते हैं और तेज गर्मी से स्वतः ही सूख या मर जाते हैं। मानसून आने पर खेत की पुनः एक बार जुताई कर खेत को समतल कर लें। कार्बनिक खाद की संस्तुत मात्रा को भी इसी समय खेत में फैला दें।

उन्नतशील प्रजातियाँ

प्रजाति	पौधे की ऊँचाई (से.मी.)	फसल अवधि (दिन)	उत्पादन क्षमता (कु./है.)	उपयुक्त क्षेत्र/विशिष्ट गुण
पंत रानीचौरी वकह्वीट 1	125–130	100–105	16–18	मध्य एवं उच्च पर्वतीय क्षेत्रों हेतु उपयुक्त
वी.एल. उगल 7	100–110	60–70	8–10	उत्तराखण्ड के मध्य ऊँचाई वाले पर्वतीय क्षेत्र
हिमप्रिया	100–105	115–120	13–15	वर्षाश्रित मध्यम तथा ऊँची पहाड़ियाँ
शिमला बी. 1	100–105	115–125	9–10	वर्षाश्रित मध्यम तथा ऊँची पहाड़ियाँ
सांगला बी. 1	100–110	115–125	8–10	वर्षाश्रित मध्यम तथा ऊँची पहाड़ियाँ

बुवाई का समय

फसल की बुवाई उसके संस्तुत समय में ही करनी चाहिए। कुट्टू की बुवाई का उपयुक्त समय जून का द्वितीय पखवाड़ा है। बिलम्ब की स्थिति में बुवाई जुलाई प्रथम सप्ताह तक अवश्य कर देनी चाहिए।

बीज दर एवं बुवाई

कुट्टू के लिए 25–30 कि.ग्रा./है0 (500–600 ग्राम/नाली) बीज दर संस्तुत है। उन्नत बीज की बुवाई 30 से.मी. की दूरी पर कतारों में करें और बुवाई के 20–25 दिन बाद पहली निकाई–गुड़ाई के समय अतिरिक्त पौधों की छंटनी कर पौधे से पौधे की दूरी 10 सेमी रखें। अतिरिक्त पौधों को निकालने में विलम्ब नहीं करना चाहिए अन्यथा इनके साथ अगल–बगल के पौधों के भी उखड़ने की संभावना हो जाती है।

उर्वरक प्रबन्ध

अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए 40 कि.ग्रा. नत्रजन, 20 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 10 कि.ग्रा. पोटाश/है. पर्याप्त होता है। जैविक खेती के लिए 8–10 टन/है. (1.6–2.0 कु./नाली) अच्छी तरह सड़ी गोबर की खाद प्रयोग करनी चाहिए।

खरपतवार प्रबन्धन

फसल को प्रथम 30–40 दिनों तक खरपतवार मुक्त रखें। इसके लिए प्रथम निराई–गुड़ाई, बुवाई के 15–20 दिनों बाद एवं दूसरी 30–35 दिनों बाद करनी चाहिए। खरपतवार निकालने में विलम्ब होने पर ये फसल हेतु प्रयोग किये गये पोषक तत्व, नमी, हवा, प्रकाश, आदि के लिए प्रतिस्पर्धा करते हुए फसल के विकास और अन्ततः उपज पर विपरीत प्रभाव डालते हैं। रासायनिक नियंत्रण हेतु बुवाई के तुरन्त बाद एलाक्लोर 1.5 कि.ग्रा. (30 ग्राम/नाली) को 800 लीटर (एक नाली हेतु 16 लीटर) पानी में घोलकर प्रति हैक्टर छिड़काव करना चाहिए।

फसल सुरक्षा

फसल में कभी कभार कॉलर गलन रोग का प्रकोप होता है, जिससे भूमि की सतह के पास पौधों में भूरे से गहरे भूरे धब्बे बन जाते हैं और प्रभावित पौधे सूख जाते हैं। इनके नियंत्रण के लिए कार्बेंडाजिम 2 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें तथा खड़ी फसल में लक्षण दिखने पर इसी दवा का 1 ग्राम/लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करें।

कटाई

इस फसल के दाने एक साथ नहीं पकते, अतः दानों को झड़ने से बचाने हेतु 80–85 प्रतिशत दाने पक जाने की स्थिति में फसल कटाई कर लेनी चाहिए। कटाई सुबह के समय करें, जब ओस की हल्की नमी के कारण बीज नहीं झड़ते। कटाई के पश्चात् फसल को 3–4 दिन तक फैलाकर सुखायें एवं फिर मड़ाई कर दाने अलग कर लें।

उपज

उन्नत विधि से खेती कर इस फसल से 8–10 कुन्तल (16–20 कि.ग्रा./नाली) पैदावार ली जा सकती है।

रामदाना (चौलाई/चुआ)

सूडो मिलेट श्रेणी की यह फसल खाद्य और पोषण सुरक्षा की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। कम लागत एवं प्रतिकूल वातावरण में भी यह फसल पर्याप्त उत्पादन देने की क्षमता रखती है। यह चौलाई, चुआ, राजगीरा जैसे नामों से भी लोकप्रिय एक बहुउद्देशीय एवं अल्पप्रयुक्त खाद्यान्न है, जिसके पत्ते से लेकर तना और दाने उपयोग में लाये जाते हैं। सामान्य तौर पर रामदाना की खेती साग और अनाज के लिए की जाती है। इस फसल में गेहूँ की तुलना में 10 गुना से अधिक कैल्शियम, 4 गुना से अधिक वसा, 2 गुना रेशा व 3 गुना से अधिक लोहा पाया जाता है। इसके पत्तियों में ऑक्जलेट एवं नाइट्रेट की मात्रा कम होने के कारण इसे पौष्टिक एवं सुपाच्य हरा चारा भी माना जाता है। वर्तमान में उपवास के दौरान खाये जाने वाला 'रामदाना के लड्डू' काफी लोकप्रिय हैं और उत्पादको को इस मूल्यवर्धित उत्पाद से पर्याप्त लाभ हो रहा है।

बुवाई का समय :

ऊँचे पर्वतीय क्षेत्र (1500 मी. से ऊपर)–मई का द्वितीय पखवाड़ा

मध्य पर्वतीय क्षेत्र (1000–1500 मी.)–जून का प्रथम पखवाड़ा

उन्नत प्रजातियाँ

वी.एल. चुआ 44 : भा.कृ.अ.प.–विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा द्वारा वर्ष 2006 में विकसित यह प्रजाति उत्तराखण्ड के वर्षाश्रित पर्वतीय क्षेत्रों हेतु अनुमोदित है। फसल 115–120 दिन में परिपक्व होती है एवं उपज क्षमता 10–13 कुन्तल/है. है। इसके दानों में 14.1 प्रतिशत प्रोटीन तथा 12.2 प्रतिशत वसा होता है।

पीआरए 1 : वर्ष 1996 में रानीचौरी परिसर (टिहरी गढ़वाल) से विकसित यह प्रजाति 20–22 कुन्तल/है. उपज देने की क्षमता रखती है तथा उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों के लिए अनुमोदित है। इसके दानों में 14.5 प्रतिशत प्रोटीन तथा 9.2 प्रतिशत तेल होता है।

पीआरए 2 : यह प्रजाति वर्ष 2000 में रानीचौरी परिसर (टिहरी गढ़वाल) से विकसित की गयी है। उत्तर–पश्चिमी हिमालयी क्षेत्र के लिए उपयुक्त यह प्रजाति 20–22 कुन्तल/है. उपज देने की क्षमता रखती है। प्रजाति उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों के लिए अनुमोदित है एवं इसके दानों में 14.1 प्रतिशत प्रोटीन तथा 12.1 प्रतिशत वसा होता है।

पीआरए 3 : यह प्रजाति वर्ष 2003 में रानीचौरी परिसर (टिहरी गढ़वाल) से विकसित की गयी है जो

उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों के लिए अनुमोदित है। यह प्रजाति 20–25 कुन्तल/है. उपज देने की क्षमता रखती है। इसके दानों में 14.08 प्रतिशत प्रोटीन तथा 12 प्रतिशत वसा पाया जाता है।

अन्नपूर्णा : भा.कृ.अ.प.–राष्ट्रीय पादप आनुवंशिक संशाधन ब्यूरो, शिमला द्वारा वर्ष 1986 में विकसित यह प्रजाति 20–25 कुन्तल/है. उपज देती है। इसके बाल की लम्बाई 70–75 से.मी. एवं दानों में 14.5 प्रतिशत प्रोटीन पाया जाता है।

दुर्गा : भा.कृ.अ.प.–राष्ट्रीय पादप आनुवंशिक संशाधन ब्यूरो, शिमला द्वारा विकसित यह प्रजाति उत्तर पश्चिमी हिमालयी क्षेत्र के लिए उपयुक्त है। यह प्रजाति 110 दिन में पक जाती है एवं 22–25 कुन्तल/है. उपज देती है। इसके बाल की लम्बाई 70–75 से.मी. एवं दानों में 14.5 प्रतिशत प्रोटीन पाया जाता है।

बीज दर एवं बुवाई की विधि

एक हैक्टर क्षेत्रफल में बुवाई के लिए 1.5–2.0 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता पड़ती है। इसके बीज छोटे एवं हल्के होने के कारण बुवाई करने में काफी कठिनाई होती है। इस कठिनाई से बचने के लिए बीज को बारीक मिट्टी अथवा रेत में मिलाकर बुवाई करनी चाहिए। अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए रामदाना की बुवाई हेतु पंक्ति से पंक्ति की दूरी 50 से.मी. रखनी चाहिए। बीज की बुवाई 2–3 से.मी. की गहराई पर करें। बुवाई के 15–20 दिन के पश्चात् पहली निराई के समय अतिरिक्त उगे पौधों की छंटाई कर पौध से पौध की दूरी 15 से.मी. रखें।

उर्वरक प्रबन्धन

उपलब्धतानुसार गोबर की सड़ी खाद 5–6 टन/है. की दर से अन्तिम जुताई के समय खेत में प्रयोग करना चाहिए। रासायनिक उर्वरकों में 60 कि.ग्रा. नत्रजन, 40 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 20 कि. ग्रा. पोटाश प्रति है. की दर से प्रयोग करना चाहिए। नत्रजन की आधी, फॉस्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के समय तथा शेष नत्रजन बुवाई के 20–25 दिन बाद टॉप–ड्रेसिंग के रूप में प्रयोग करें। टॉप–ड्रेसिंग के समय खेत में पर्याप्त नमी होनी चाहिए।

खरपतवार प्रबन्धन

बुवाई के 15–20 एवं 35–40 दिन बाद दो निराईयाँ कर खेत को खरपतवार मुक्त करें।

कीट एवं रोग प्रबन्धन

रामदाना की फसल को मृदा जनित रोगों द्वारा काफी नुकसान पहुँच सकता है। पानी का उचित निकास न होने से पानी के जमाव वाली जगहों पर आर्द्र गलन की समस्या आती है। इस रोग के नियंत्रण हेतु थीरम 75 डी.एस. नामक फफूँदीनाशी (2.5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज) से बीज उपचारित करें। फसल में जड़ सड़न रोग के नियंत्रण हेतु फसल के निचले भागों पर 0.1 प्रतिशत कार्बेंडाजिम के घोल का 15 दिन के अंतराल पर आवश्यकतानुसार एक–दो बार छिड़काव करें।

रामदाना की फसल को पर्णजालक कीट अत्यधिक नुकसान पहुँचाता है। इस कीट की सूड़ी बाली निकलते समय पत्तियों की निचली सतह को खा जाती है, जिससे पत्ती जाली की तरह दिखने लगती है। इसके नियंत्रण हेतु लक्षण दिखते ही डाईमिथोएट अथवा मिथाइल–ओ–डिमेटान के 0.1 प्रतिशत घोल का छिड़काव या एन.एस.के.ई. 5 प्रतिशत अथवा नीम आधारित कीटनाशी रसायनों का प्रयोग करना चाहिए।

उपज : उपरोक्त वैज्ञानिक विधि से खेती करने पर 20–22 कुन्तल/है. (40–44 कि.ग्रा./नाली) उपज प्राप्त की जा सकती है।

मो. 9412952034 ☑

अल्प प्रयुक्त दलहनी फसलें

डा. बी.एस. कार्की एवं डा. अजय कुमार

गहत (कुल्थी)

भारतवर्ष में गहत (कुल्थी) की खेती प्रमुख रूप से कर्नाटक, उड़ीसा, छत्तीसगढ़, आन्ध्र प्रदेश, तमिलनाडु, मध्यप्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल, झारखण्ड, हिमाचल प्रदेश एवं उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में की जाती है, जिसे सामान्यतया खाद्य एवं चारे के लिए उगाया जाता है। देश में गहत की खेती लगभग 5.07 लाख हैक्टर क्षेत्रफल में की जाती है, जिससे 516 कि. ग्रा. प्रति हैक्टर उत्पादकता के साथ 2.62 लाख टन उत्पादन लिया जाता है।

उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में गहत खरीफ मौसम में उगायी जाने वाली एक पारम्परिक दलहनी फसल है। सूखा सहने की अद्भुत क्षमता के कारण इसकी खेती वर्षाश्रित क्षेत्रों में घाटियों से लेकर मध्यम ऊँचाई (समुद्र तल से 1800 मीटर की ऊँचाई तक) वाले क्षेत्रों में सफलतापूर्वक की जाती है। गहत पोषक तत्वों से भरपूर दलहनी फसल है जिसमें लगभग 22.0 प्रतिशत प्रोटीन, 57.2 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट, 0.50 प्रतिशत वसा, 5.3 प्रतिशत रेशा, 3.1 प्रतिशत खनिज लवण तथा विभिन्न विटामिन्स जैसे थायमिन, राइबोफ्लेविन व नियासिन पर्याप्त मात्रा में पाये जाते हैं। गहत में अनेक औषधीय गुण भी विद्यमान हैं। इसकी दाल पेट के सामान्य रोगों तथा विशेषकर गुर्दे की ब्याधियों (पथरी) में उपयोगी पायी गयी है। गर्म तासीर के कारण सर्दी के मौसम में इसकी दाल स्वास्थ्य के लिए विशेष लाभकारी है। पौष्टिकता से भरपूर एवं औषधीय गुणों के कारण इसकी खेती पर विशेष ध्यान दिया जाने लगा है।

पर्वतीय क्षेत्रों में कृषक गहत की खेती अधिकांशतया परम्परागत विधियों से ही करते हैं जिससे प्रति इकाई क्षेत्रफल उत्पादन बहुत कम है, किन्तु निम्न उन्नत तकनीकों को अपनाकर खेती करके इसकी फसल से अच्छा उत्पादन लिया जा सकता है:

भूमि व खेत की तैयारी

गहत की खेती प्रायः सभी प्रकार की मिट्टियों में की जा सकती है, किन्तु अच्छी उपज के लिए उचित जल निकास वाली जीवांशयुक्त बलुई दोमट मिट्टी उपयुक्त रहती है।

बीज के उचित अंकुरण के लिए मिट्टी का भुरभुरा होना आवश्यक है। इसके लिए बुवाई से पहले दो–तीन जुताईयाँ कर मौजूद ढ़ेलों को तोड़कर मिट्टी बारीक कर लेनी चाहिए।

उन्नत प्रजातियाँ

गहत की खेती से अच्छा उत्पादन लेने के लिए निम्नानुसार सारणी में दिये गये प्रजातियों की बुवाई करनी चाहिए:

बुवाई का समय

फसल की बुवाई का उचित समय जून का प्रथम पखवाड़ा है।

बुवाई की विधि

सामान्यतः किसान गहत की बुवाई छिटकवां विधि से करते हैं किन्तु अधिक उपज लेने के लिए बुवाई पंक्तियों में 30–35 से.मी. की दूरी पर करनी चाहिए। बीज 1.5–2.0 से.मी. गहराई पर बोयें। जमाव के

प्रजाति	अनुकूलन क्षेत्र	पकने की अवधि (दिन)	दानों का रंग	उत्पादकता (कु./है.)
वी.एल. गहत 8	उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्र	125–130	हल्का पीला	10–12 (20–24 कि.ग्रा./नाली)
वी.एल. गहत 10	उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्र	110–115	हल्का पीला	10–12 (20–24 कि.ग्रा./नाली)
वी.एल. गहत 15	उत्तर एवं मध्य भारत	95–105	पीला भूरा	8–10 (16–20 कि.ग्रा./नाली)
वी.एल. गहत 19	उत्तर भारत	88–94	भूरा	8–10 (16–20 कि.ग्रा./नाली)

पश्चात् पहली निराई–गुड़ाई के समय घने पौधों को निकालकर पंक्ति में पौधे से पौधे की दूरी 8–10 से.मी. कर दें।

बीज की मात्रा एवं बीजोपचार

एक हैक्टर क्षेत्रफल हेतु 20–25 कि.ग्रा. (400–500 ग्राम/नाली) बीज पर्याप्त रहता है। बुवाई से पहले बीज को 2.0 ग्राम थीरम एवं 1.0 ग्राम कार्बेंडाजिम अथवा 5 ग्राम ट्राइकोडर्मा विरिडी प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित कर लेना चाहिए।

दलहनी फसल होने के कारण बीज को राइजोबियम कल्चर से उपचारित करना भी आवश्यक है। एक पैकेट राइजोबियम कल्चर (200 ग्राम) 10 कि.ग्रा. बीज के उपचार हेतु पर्याप्त रहता है। कल्चर से बीजोपचार के लिए गुड़ अथवा चीनी के 10 प्रतिशत सांद्रता का 250–300 मि.ली. घोल बनाकर इसमें 200 ग्राम कल्चर मिला लें। तत्पश्चात् कल्चर के इस घोल को बीजों के साथ इस प्रकार मिलायें कि बीजों पर कल्चर की एक समान परत चिपक जाये। राइजोबियम कल्चर से उपचार फफूँदनाशी दवा से उपचारित करने के पश्चात् करना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक प्रयोग

भूमि की तैयारी के समय 6–8 टन प्रति हैक्टर (1.2–1.6 कुन्तल/नाली) सड़ी गोबर की खाद प्रयोग करें, इससे जड़ों में ग्रन्थियों का विकास भी अच्छा होगा। अच्छी पैदावार के लिए 20 कि.ग्रा. नत्रजन, 40 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 20 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर (400 ग्राम नत्रजन, 800 ग्राम फॉस्फोरस तथा 400 ग्राम पोटाश प्रति नाली) प्रयोग करना चाहिए। उर्वरकों की पूरी मात्रा अन्तिम जुताई के समय खेत में मिला देनी चाहिए।

निराई–गुड़ाई एवं खरपतवार नियंत्रण

खरीफ की फसल होने के कारण गहत में 40–45 दिन की अवस्था तक खरपतवारों की काफी समस्या रहती है। अतः पहली निराई–गुड़ाई फसल की बुवाई के 20–25 दिन पर तथा आवश्यकता पड़ने पर दूसरी निराई–गुड़ाई बुवाई के 40–45 दिन बाद करें। खरपतवारों का नियंत्रण बुवाई के 2–3 दिन के अन्दर पेंडीमिथेलिन 30 ई.सी. 3.3 लीटर प्रति हैक्टर (66 मि.ली. प्रति नाली) अथवा एलाक्लोर 50 ई.सी. नामक खरपतवारनाशी रसायन का 4.0 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर (80 ग्राम प्रति नाली) की दर से प्रयोग करके भी किया जा सकता है।

सिंचाई

गहत की फसल में सिंचाई की कोई खास जरूरत नहीं होती है, किन्तु आवश्यकता पड़ने पर फली बनते समय एक सिंचाई करने से दाने अधिक पुष्ट बनते हैं।

कीट नियंत्रण

गहत की फसल में अन्य दलहनी फसलों की अपेक्षा कीटों का प्रकोप कम होता है, किन्तु कभी–कभी फली छेदक तथा रस चूसने वाले कीट फसल को हानि पहुँचा सकते हैं। फली छेदक कीट की रोकथाम के लिए एनपीवी 250 एलई/हैक्टर अथवा क्वीनालफॉस 25 ई.सी. की 2.0 मि.ली. दवा प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए। रस चूसने वाले कीट की रोकथाम के लिए आक्सीडिमेटॉन मिथाइल 25 ई.सी. की 1.0 मि.ली. दवा प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

रोग नियंत्रण

जड़ विगलन रोग : रोग कारक फफूँद से बीज गलन तथा जड़ व पौध विगलन हो जाता है। इस रोग के निदान हेतु कार्बेंडाजिम 1.0 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

श्यामवर्ण रोग : इस रोग में पत्तियों की शिराओं के आस–पास काले–भूरे धब्बे बनते हैं, जिससे शिरायें गल जाती हैं। इस रोग के नियंत्रण हेतु मैंकोजेब का 2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

कटाई एवं मड़ाई : फसल परिपक्व होने पर फलियाँ पीली होने लगती हैं तथा अधिकांश पत्तियाँ सूखकर गिरने लगती हैं। इस समय फसल की कटाई कर लेनी

चाहिए, अन्यथा देरी से कटाई की स्थिति में दानों के चटककर जमीन में झड़ने का डर रहता है। कटाई के बाद फसल को 2–3 दिन धूप में फैलाकर रखें, तत्पश्चात् मड़ाई कर दानों को अलग करें एवं धूप में अच्छी तरह सुखाकर भण्डारित कर लें।

उपज

उन्नत विधि से खेती करने पर गहत की फसल से 10–12 कुन्तल प्रति हैक्टर (20–24 कि.ग्रा. प्रति नाली) उपज प्राप्त हो जाती है।

राइसबीन (नौरंगी)

राइसबीन एक बहुउद्देशीय दलहनी फसल है जिसके दानों को दाल के रूप में, हरी फलियों को सब्जियों के रूप में तथा सम्पूर्ण पौधे को पशुओं के लिए हरे चारे एवं खेतों में हरी खाद के रूप में प्रयोग किया जाता है। अच्छी वानस्पतिक वृद्धि के कारण राइसबीन की फसल पर्वतीय ढ़ालदार खेतों में मृदा अपरदन को रोकने में भी सहायक है।

राइसबीन के दानों में प्रोटीन (लगभग 22 प्रतिशत) के साथ–साथ खनिज लवण, विटामिन (थायमिन, राइबोफ्लेविन व एस्कोर्बिक एसिड) एवं वांछित अमीनो अम्ल–मेथियोनिन एवं ट्रिप्टोफेन प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होने के कारण इसे एक उत्तम दलहनी फसल माना जाता है। इस फसल में सूखा सहने की अद्भुत क्षमता के कारण किसान इसे सामान्यतया बलुई, ढ़ालदार एवं कम उर्वर खेतों में उगाते हैं। बहुउपयोगी होने के बावजूद भी राइसबीन की फसल अल्प प्रयुक्त व उपेक्षित रही है तथा इस पर अभी तक ज्यादा शोध कार्य भी नहीं हो पाया है।

भारतवर्ष में राइसबीन की खेती उड़ीसा, असम, नागालैंड, मेघालय, मणिपुर, मिजोरम, सिक्किम तथा उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में की जाती है। उत्तराखण्ड के मध्यम एवं अधिक ऊँचाई (1500–2200 मीटर तक) वाले क्षेत्रों, जहाँ खरीफ की अन्य दलहनी फसलें जैसे–अरहर, उर्द, मूँग आदि की खेती सम्भव नहीं होती, में राइसबीन की फसल सफलतापूर्वक ली जा सकती है। उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में इसे नौरंगी, रैस, रयांस और रगड़मास आदि नामों से जाना जाता है।

सामान्यतया राइसबीन की फसल मंडुवा, रामदाना, मक्का व अन्य दालों के साथ मिश्रित खेती के रूप में ली जाती है, किन्तु निम्न विधियाँ अपनाकर शुद्ध रूप में खेती करके इसकी फसल से अच्छा उत्पादन लिया जा सकता है:

उन्नत प्रजातियाँ

पर्वतीय क्षेत्रों के लिए पर्वतीय परिसर, रानीचौरी जो पूर्व में पंतनगर विश्वविद्यालय के अधीन था, द्वारा दो प्रजातियाँ विकसित की गयी हैं, जिनमें पी.आर.आर. 1 प्रादेशिक स्तर पर तथा पी.आर.आर. 2 राष्ट्रीय स्तर पर विमोचित की गयी है। इनकी विशेषताऐं निम्नवत् हैं:

पी.आर.आर. 1 : इस प्रजाति की ऊँचाई 77.8 से.मी, फलियों की लम्बाई 9.6 से.मी., दानों में प्रोटीन की मात्रा 19.4 प्रतिशत व रंग काला, पकने की अवधि 140 दिन तथा औसत उत्पादकता 16.0 कुन्तल प्रति हैक्टर (32 कि.ग्रा. प्रति नाली) है।

पी.आर.आर. 2 : यह प्रजाति अपेक्षाकृत ज्यादा लम्बी (83.7 से.मी.), फलियों की लम्बाई 10.2 से.मी., दानों में प्रोटीन की मात्रा 20.0 प्रतिशत व रंग हल्का पीला, पकने की अवधि 142 दिन तथा औसत उत्पादकता 16.0 कुन्तल प्रति हैक्टर (32 कि.ग्रा. प्रति नाली) है।

बुवाई का समय

ऊँचे पर्वतीय क्षेत्रों (1500–2200 मीटर) में मई का द्वितीय पखवाड़ा तथा निम्न व मध्यम ऊँचाई वाले पर्वतीय क्षेत्रों (1000–1500 मीटर) में जून का प्रथम पखवाड़ा बुवाई हेतु उपयुक्त रहता है।

बीज की मात्रा एवं बुवाई की विधि

एक हैक्टर क्षेत्र के लिए 15–20 कि.ग्रा. (300–400 ग्राम प्रति नाली) बीज पर्याप्त रहता है। अच्छी उपज लेने हेतु बुवाई पंक्तियों में 40–50 से.मी. दूरी पर करनी चाहिए।

उर्वरकों का प्रयोग

राइसबीन की फसल में नत्रजन स्थिरीकरण की क्षमता होने के कारण इसे सामान्यतया कृषक कम उर्वर भूमि में उगाते हैं। किन्तु फसल से अच्छी उपज लेने के लिए प्रति हैक्टर 20 कि.ग्रा. नत्रजन (400 ग्राम/नाली) एवं 40 कि.ग्रा. फॉस्फोरस (800 ग्राम/नाली) प्रयोग करना चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण

फसल में यथासमय खरपतवार नियंत्रण भी आवश्यक है। पहली निराई–गुड़ाई बुवाई के 20–25 दिन पर करनी चाहिए, इससे खरपतवारों के नियंत्रण के साथ–साथ फसल की जड़ों के विकास के लिए भी अच्छा वातावरण मिल जाता है। इसी समय लाइन में उगे घने पौधों को निकालकर पौधे से पौधे की दूरी 10 से.मी. कर देनी चाहिए। आवश्यकता पड़ने पर दूसरी निराई–गुड़ाई बुवाई के 45–50 दिन पर करनी चाहिए।

कीट एवं रोग नियंत्रण

इस फसल में अन्य दलहनी फसलों की अपेक्षा कीटों का प्रकोप बहुत कम होता है, किन्तु सफेद सड़न रोग एवं फोमा ब्लाइट (झुलसा रोग) द्वारा फसल को काफी क्षति पहुँचती है। सफेद सड़न रोग की रोकथाम के लिए 0.1 प्रतिशत कार्बेंडाजिम का घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए। फोमा ब्लाइट एक फफूँदी जनित रोग है जिसके लक्षण पत्तियों पर छोटे–छोटे भूरे धब्बों के रूप में आते हैं जो बाद में आपस में मिलकर विक्षतों में परिवर्तित हो जाते हैं, जिनके चारों तरफ वलयाकार घेरे स्पष्ट दिखाई देते हैं। उग्रावस्था में रोग के लक्षण पुष्पवृन्त एवं फलियों में भी आ जाते हैं जिससे कभी–कभी पूरा पौधा सूख जाता है। इसके निदान हेतु 1.0 ग्राम कार्बेंडाजिम अथवा 2.5 ग्राम मैंकोजेब नामक फफूँदनाशी रसायन का प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

कटाई

जब लगभग 75 प्रतिशत फलियाँ भूरे रंग में, बदल जायें, तब फसल की कटाई कर लेनी चाहिए। इसमें फलियों के चटकने की समस्या रहती है, इसलिए फलियों की तुड़ाई 2–3 बार में प्रातःकाल अथवा सायंकाल में करना चाहिए।

उपज

उपरोक्त विधि से खेती करने पर 15–20 कुन्तल प्रति हैक्टर (30–40 कि.ग्रा. प्रति नाली) उपज प्राप्त की जा सकती है।

सम्पर्क सूत्र : 7579174120

☑

विशेष सूचना

प्रिय पाठकों को अवगत कराना है कि पंतनगर किसान डायरी 2025 में लगभग सभी कृषि सम्बन्धी जानकारियों को समाहित करने का प्रयास किया गया है। फिर भी यदि आपको अन्य विशेष जानकारी की आवश्यकता हो या आपके पास ऐसी कोई किसानोपयोगी जानकारी अथवा सुझाव हो तो कृपया हमें सूचित करने का कष्ट करें ताकि उन्हें आगे प्रकाशित होने वाली पंतनगर किसान डायरी में सम्मिलित किया जा सके।

सम्पर्क सूत्रः

प्रभारी अधिकारी

कृषि प्रौद्यौगिकी सूचना केन्द्र (एटिक)

गोविन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

पंतनगर– 263 145, जिला– ऊधम सिंह नगर, (उत्तराखण्ड)

फोन– 05944–234810, 235580, ई.मेल : aticgbpuat@gmail.com

सब्जियों की उत्पादन तकनीकी

डा. एस. के. मौर्य, डा. ललित भट्ट
एवं डा. धीरेन्द्र सिंह

भारत एक प्रमुख सब्जी उत्पादक देश है। जलवायु में विभिन्नता होने के कारण यहाँ व्यावसायिक स्तर पर लगभग 50–60 प्रकार की सब्जियाँ उगाई जाती हैं।

सब्जियों के उत्पादन की सामान्य क्रियाएँ: सभी सब्जियों की खेती एक ही तरह से नहीं की जा सकती है, फिर भी कुछ कृषि क्रियाए ऐसी भी होती हैं जो सभी तरह की सब्जियों के उत्पादन में सामान्य रूप से अपनायी जाती हैं। इन सामान्य जानकारियों का वर्णन निम्नवत् दिया जा रहा है:

भूमि का चुनाव व तैयारी : सब्जियों का उत्पादन भिन्न–भिन्न प्रकार की मृदाओं में किया जा सकता है, परन्तु बलुई दोमट या दोमट मिट्टी जिसका पी.एच.मान लगभग उदासीन (6–7 के बीच) तथा जल धारण क्षमता के साथ–साथ जल निकासी अच्छी हो, सबसे उपयुक्त मानी जाती है। जिस खेत में सब्जी की खेती करनी होती है उस खेत को तैयार करने के लिए मिट्टी पलटने वाले हल से एक जुताई करने के पश्चात् एक या दो जुताई तवा हल से करके पाटा लगा देना चाहिए जिससे खेत समतल हो जाए।

उन्नतशील किस्में : अधिक उत्पादन हेतु बुवाई के समय (अगेती, मध्य या पछेती), मौसम (जायद, रबी या खरीफ) तथा उद्देश्य को देखते हुए स्थान विशेष हेतु संस्तुत उन्नतशील किस्मों का ही बुवाई के लिए प्रयोग करना चाहिए। विभिन्न सब्जियों की उन्नतशील किस्में सारणी–1 में दी गयी हैं।

बीज की बुवाई तथा पौधशाला प्रबन्धन : बीज की बुवाई करने से पूर्व बीज का शोधन 2 ग्राम थीरम तथा 1.0 ग्राम कार्बेंडाजिम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से अवश्य कर लेना चाहिए। सब्जियों की सीधी बुवाई हेतु किसी सुधरे हुए यंत्र का प्रयोग करना चाहिए। यदि बुवाई यंत्र उपलब्ध न हो तो बीज की बुवाई हाथ से हल के पीछे पक्तियों में करनी चाहिए। पौधशाला के लिए हमेशा ऐसे खेत का चुनाव करना चाहिए जहाँ धूप ठीक से आती हो तथा सिंचाई व जल निकास का उचित प्रबन्ध हो। पौधशाला वाले स्थान को प्रत्येक वर्ष बदलते रहना चाहिए।

बुवाई का समय, बीज की मात्रा तथा बुवाई/रोपाई दूरी : सब्जी से अधिकतम उत्पादन के लिए उसे अपने समयानुसार बोया जाना चाहिए। विभिन्न सब्जियों के बुवाई का समय, बीज की मात्रा तथा दूरी सारणी–2 में दर्शायी गयी है।

खाद व उर्वरक: विभिन्न सब्जियों में खाद व उर्वरक की मात्रा सारणी–3 में दी गयी है। अच्छी पैदावार के लिए सड़ी खाद को बुवाई से लगभग 2 सप्ताह पहले खेत में मिला देना चाहिए, साथ ही साथ मृदा जाँच कराकर उर्वरकों की सही मात्रा देना श्रेयकर होता है। नत्रजन की आधी मात्रा, फॉस्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा अन्तिम जुताई के समय खेत में प्रयोग कर लेना चाहिए। नत्रजन की शेष आधी मात्रा को दो भागों में बाँटकर विभिन्न सब्जियों में लगभग 20–30 दिन तथा 45–60 दिन के पश्चात् बुरकना चाहिए।

सिंचाई: जिन सब्जियों की बुवाई सीधी की जाती हो, उनकी बुवाई के समय खेत में पर्याप्त नमी होनी चाहिए। रोपाई द्वारा उगायी जाने वाली सब्जियों में रोपण के तुरन्त पश्चात् हल्की सिंचाई कर दें तथा उसके पश्चात् मौसम व फसल की आवश्यकता को देखते हुए सिंचाई करनी चाहिए।

खरपतवार नियन्त्रण: शुरू से ही खरपतवार रहित वातावरण मिलने से सब्जी फसल का विकास अच्छा होता है तथा अधिक उत्पादन मिलता है। वर्तमान में बाजार में विभिन्न तरह के खरपतवारनाशी रसायन उपलब्ध हैं जिनका प्रयोग बुवाई से पूर्व या कुछ दिन बाद (दवा के अनुसार) किया जा सकता है। कुछ सब्जियाँ जब 30–40 दिन की हो जाए, जरूरत के अनुसार उनके जड़ के पास मिट्टी चढ़ा देनी चाहिए। इससे पौधों को सहारा मिल जाता है और विकास तथा बढ़वार अच्छी होती है।

उपज: विभिन्न सब्जियों की उपज सारणी–3 में दी गयी है।

सारणी 1: विभिन्न सब्जियों की उन्नतशील किस्में:

टमाटर	सामान्य किस्में	सीमित बढ़वार	पूसा अर्ली डर्वाफ, पूसा शीतल, रोमा, पूसा रोहिणी, पूसा सदाबहार, आजाद टी. 2, आजाद टी. 3, एच.एस. 102, हिसार लालिमा, हिसार अरूण, हिसार अनमोल, नरेन्द्र टमाटर 2, पंजाब छुहारा।
		मध्यम बढ़वार	पंत टी 3, हिसार ललित, अर्का सौरभ, पूसा 120, अर्का आशीष, शक्ति, अर्का मेघाली।
		असीमित बढ़वार	पूसा रूबी, पूसा उपहार, नरेन्द्र टमाटर 1, सोलन गोला, अर्का विकास, अर्का आहुति, कल्यानपुर अंगूरलता, कल्यानपुर टाइप 1, आजाद टी 5।
	संकर किस्में		पूसा हाइब्रिड 1, पूसा हाइब्रिड 2, पूसा हाइब्रिड 4, पूसा हाइब्रिड 8 पूसा दिव्या, अर्का विशाल, अर्का श्रेष्ठ, अर्का अभिजीत, अर्का सम्राट, अर्का रक्षक, अर्का अन्नया, काशी अमृत, रूपाली, नवीन 2000, मनीषा, जी.एस. 600, रश्मि, मीनाक्षी, वैशाली, टॉल्सटोय, अविनाश 2, हिमराजा, हिमसोना, अपसरा, काशी शरद।
बैंगन	सामान्य किस्में	लम्बा फल	पंत सम्राट, पंत बैंगन 4, पूसा पर्पल लौंग, पूसा पर्पल क्लस्टर, पूसा क्रान्ति, पूसा अनुपम, पूसा अनमोल, पूसा भैरव, डी.बी.एल. 2, के.टी. 4, आजाद क्रान्ति, पंजाब सदाबहार, पंजाब बरसाती, अर्का केशव, अर्का नीलकंठ, एकृआर.यू. 1, ए.आर.यू. 2, पूसा बिन्दु, पूसा अंकुर, पूसा श्यामला।
		गोल फल	पंत ऋतुराज, पूसा पर्पल राउन्ड, हिसार श्यामला, पूसा उत्तम, पूसा उपकार, पूसा अंकुर, आजाद बी 1, हिसार जामुनी, पंजाब बहार, पंजाब नीलम, पंजाब चमकीला।
		हरा फल	अर्का कुसुमकार, अर्का शिरिश, राजेन्द्र बैंगन, स्वर्ण मणि, हरिता, ग्रीन लौंग, मयसूर ग्रीन।
	संकर किस्में		पंत संकर बैंगन 1, पूसा हाइब्रिड 5 (लम्बा), पूसा हाइब्रिड 6 (गोल), पूसा हाइब्रिड 9 (गोल), डी.वी.एच.एल. 20, एन.डी.वी.एच. 1 (गोल) एन.डी.बी.एच. 6 (लम्बा), अर्का आनन्द (लम्बा), अर्का नवनीत, ए.वी.एच. 1, ए.वी.एच. 2, आजाद हाइब्रिड, काशी सन्देश, छाया।
मिर्च	सामान्य किस्में		पंत सी. 1, पूसा ज्वाला, पूसा सदाबहार, पंजाब लाल, अर्पणा, भाग्यलक्ष्मी, नूमेक्स, कल्यानपुर मोहिनी, सोलन येलोव, हिसार षक्ति, काशी अनमोल, आन्ध्रा ज्योति, सूर्य रेखा, अर्का लोहित, उत्तकल एवा।
	संकर किस्में		अर्का मेघना, अर्का हरिता, अर्का श्वेता, सी.एच. 1, सी.एच. 3, अग्नि, सी.सी.एच. 2।
शिमला मिर्च	सामान्य किस्में		केलिफोर्निया वन्डर, बुलनोज, यलोवन्डर, निशान्त 1, अर्का गौरव, अर्का बसन्त, अर्का मोहिनी।
	संकर किस्में		भारत, इन्दिरा, पूसा दीप्ति, अनुपम, हीरा, सुप्रिया, ओरोविले, तन्वी।
भिण्डी	सामान्य किस्में		परभनी क्रान्ति, पूसा ए0 4, पूसा सावनी, पंजाब पदमनी, पंजाब 7, पंजाब 8, गुजरात भिण्डी 1, वर्षा उपहार, हिसार उन्नत, अर्का अनामिका, अर्का अभय, वी.आर.ओ. 3, आर.ओ. 5, आर.ओ. 6, उत्तकल गौरव।
	संकर किस्में		डी.वी.आर. 1, डी.वी.आर. 2, डी.वी.आर. 3।
खीरा	सामान्य किस्में		प्वाइनसेट, स्ट्रेट 8, जापानी लौंग ग्रीन, पूना खीरा, बालमखीरा, पंत खीरा 1, कल्यानपुर ग्रीन, सोलन ग्रीन, शीतला, स्वर्ण शीतल, स्वर्ण पूरना, स्वर्ण अगेती, पूसा उदय, पूसा बर्खा।
	संकर किस्में		पंत संकर खीरा 1, पूसा संयोग, सोलन हाइब्रिड 1, ए.ए.यू.सी. 1, ए.ए.यू.सी 2, प्रिया, सतीस, नुन्हेम्स 9729, नुन्हेम्स 3019, अमन, अमृत, हिंमागी, मालिनी, एन.एस. 404, आलमगीर 180।
लौकी	सामान्य किस्में		पूसा समर प्रोलिफिक लौंग, पूसा समर प्रोलिफिक राउन्ड, पूसा नवीन, पूसा समृद्धि, अर्का बहार, कोयंबटूर 1, पंजाब राउन्ड, पंजाब कोमल, कल्यानपुर लाँग ग्रीन, पंत लौकी 3, पंत लौकी 4, पूसा सन्तुष्टि, पूसा संदेश, नरेन्द्र रश्मि, काशी किरन, काशी कुंडल।

	संकर किस्में	पंत संकर लौकी 1, पंत संकर लौकी 2, एन.डी.बी.एच. 7, एन.डी.एच.बी.एच. 4, पूसा हाइब्रिड 3, केतन, गुटका, कावेरी, एन.एस. 421	
करेला	सामान्य किस्में	पंत करेला 1, पंत करेला 2, पंत करेला 3, कोयंबटूर लौंग, अर्का हरित, प्रिया, कोयंबटूर 1, पूसा दो मौसमी, पूसा विशेष, पूसा औषधि कल्यानपुर बारहमासी, कल्यानपुर सोना, एम. डी.यू. 1, प्रिती, पूसा पूर्वी, पूसा रसदार, पूसा औषधि।	
	संकर किस्में	पूसा हाइब्रिड 1, पूसा हाइब्रिड 2, समर ग्रीन, एन.एस. 431, एन.एच. 432।	
खरबूज	सामान्य किस्में	पंजाब सुनेहरी, हरा मधु, पूसा सरबती, पूसा मधुरस, दुर्गापुर मधु, अर्का जीत, अर्का राजहंस, पूसा सुनेहरी, पंजाब रसिला, हिसार मधुर, हिसार सरस।	
	संकर किस्में	पंजाब हाइब्रिड 1, पंजाब अनमोल, पूसा रसराज, एम.एच. 10, डी.एम.एच. 4, एम.एच.वाई 3, एम.एच.वाई 5।	
तरबूज	सामान्य किस्में	सूगर बेबी, आसाई यामाटो, दुर्गापुर मीठा, इम्प्रूव्ड शिपर, दुर्गापुर केसर, अर्का मानिक, न्यू हैम्पशयर मिजेट।	
	संकर किस्में	अर्का ज्योति, नुन्हेम्स 295, नाथ 102, एम.एच.डब्ल्यू. 6, नाथ 102, एच.एम.डब्ल्यू.11, नामधारी हाइब्रिड, अर्का मधुरा, अर्का ऐश्वर्या।	
चिकनी तोरई	सामान्य किस्में	पूसा चिकनी, कल्यानपुर चिकनी, पूसा सुप्रिया, कल्यानपुर हरा, पूसा स्नेहा।	
नसदार तोरई	सामान्य किस्में	पूसा नसदार, कोयंबटूर 1, अर्का सुमित, अर्का सुजात, पंजाब सदाबहार, कल्यानपुर धारीदार, पंत तोरई 1, सतपुतिया।	
कद्दू (सीताफल)	सामान्य किस्में	पूसा विश्वास, पूसा विकास, नरेन्द्र अमष्त, अर्का चन्दन, कोयंबटूर 1, कोयंबटूर 2, अम्बीली, अर्का सूर्यमुखी, सी.एम. 14, सोलन बादामी, काशी बसंत, काशी शिशिर।	
	संकर किस्में	पूसा हाइब्रिड 1।	
चप्पन कद्दू (पेपो)	सामान्य किस्में	अर्ली येलो प्रोलिफिक, ऑस्ट्रेलियन ग्रीन, पंजाब चप्पन कद्दू 1, पैटी पान।	
	संकर किस्में	पूसा अलंकार, डुकाटो, सियोल ग्रीन, ब्लम हाउस, कोरा।	
ककड़ी	सामान्य किस्में	अर्का शीतल, पंजाब लौंगमेलन, कर्नाल सलेक्सन।	
टिण्डा	सामान्य किस्में	अर्का टिन्डा, पंजाब टिन्डा, अन्नामलाई टिन्डा।	
पेठा	सामान्य किस्में	पंत पेठा 1, कोयंबटूर 1, कोयंबटूर 2, मडलियर, पूसा उज्जवल, काशी धवल, काशी उज्वल।	
	संकर किस्में	पूसा उर्मि, पूसा श्रेयली, काशी सुरभि।	
चिचिन्डा	सामान्य किस्में	कोयंबटूर 1, कोयंबटूर 4।	
परवल	सामान्य किस्में	स्वर्ण अलौकिक, स्वर्ण रेखा, एफ.पी. 1, एफ.पी. 3, एफ.पी. 4, राजेन्द्र परवल 16, राजेन्द्र परवल 2, वी.आर.पी. 101, वी.आर.पी. 102, वी.आर.पी. 103, वी.आर.पी. 104, नरेन्द्र परवल 260, 307।	
मूली	सामान्य किस्में	एशियाई किस्में	पूसा देशी, पूसा चेतकी, पूसा रेशमी, जापानीज व्हाइट, कल्यानपुर न0 1, पंजाब अगेती, पंजाब पसन्द, अर्का निषान्त, काशी श्वेता, पूसा जामुनी, पूसा गुलाबी, पूसा विधु।
		यूरोपियन किस्में	पूसा हिमानी, व्हाइट आइसीकिल, रैपिड रेड व्हाइट टिप्ड, पूसा मध्दुला, स्कारलेट ग्लोब, स्कारलेट लॉग।
गाजर	सामान्य किस्में	एशियाई किस्में	पूसा केसर, पूसा मेघाली, हिसार गैरिक, अर्का सूरज, पूसा आसिता, पूसा वृष्टि, पूसा रुधिरा।
		यूरोपियन किस्में	नैन्टिस, चैन्टेनी, पूसा यमदग्नि, चमन, डैनवरस, इम्पेरेटर।
	संकर किस्में	पूसा बसुधा, पूसा नयनज्योति।	
शलजम	सामान्य किस्में	एशियाई किस्में	पूसा कंचन, पूसा श्वेती, पंजाब सफेद।
		यूरोपियन किस्में	पर्पल टॉप व्हाइट ग्लोव, स्नोबाल, गोल्डन बाल, पूसा स्वर्णिमा, पूसा चन्द्रिमा, अर्ली मिलन रेड टॉप।

चुकन्दर	सामान्य किस्में (यूरोपियन)	क्रिमसन ग्लोब, ड्रेटॉइट डार्क रेड, अर्ली वन्डर, ऊटी 1	
फूलगोभी	सामान्य किस्में	अगेती	पूसा कातकी, पूसा दीपाली, पूसा मेघना, पंत गोभी 2, पंत गोभी 3, अर्ली कुंवारी, अर्का क्रान्ति।
		मध्य समय	पूसा शरद, इम्प्रूब्ड जापानी, पंत गोभी 4, पूसा शुभ्रा।
		मध्य पछेती	पूसा हिमज्योति, पूसा पौषजा, पूसा शक्ति, डी0 96, पंत शुभ्रा।
		पछेती समय	पूसा स्नोबाल 1, पूसा स्नोबाल 2, पूसा स्नोबाल 16, पूसा स्नोबाल के. 1, पूसा स्नोबाल के. 25
	संकर किस्में	पूसा हाइब्रिड 2, पूसा कार्तिक संकर, पूनम, प्रिया, अगेती हिमलता, एन.एस. 60, एन.एस. 66, पावस, समर किंग, पूसा अर्ली सिन्थेटिक, पूसा सिंथेटिक, स्नो क्राऊन।	
बन्दगोभी	सामान्य किस्में	गोल्डन एकर, प्राइड ऑफ इण्डिया, पूसा ड्रमहैड, पूसा मुक्ता, पूसा अगेती, ए.आर.यू. ग्लोरी, सितम्बर, रेड एकर, ड्रमहैड सवोय।	
	संकर किस्में	पूसा पत्तागोभी हाईब्रिड 1, कृष्णा, वरूण, चैलेन्जर, हरी रानी गोल, सुमित, श्री गणेश गोल, बंजरंग, नवक्रान्ति, पूसा सिन्थेटिक, पूसा सम्बन्ध, के.जी.एम.आर. 1, नाथ 401, 501, क्विस्टो, बी.एस.एस. 32,।	
गाँठगोभी	सामान्य किस्में	व्हाइट वियना, पर्पल विएना, लार्ज ग्रीन, पूसा विराट।	
ब्रोकोली	सामान्य किस्में संकर किस्में	पूसा के.टी.एस. 1, पालम समृद्धि, पालम विचित्रा, पालम कंचन, पंजाब ब्रोकोली 1। ऐश्वर्या, फिएस्ता ।	
सब्जी मटर	सामान्य किस्में	अगेती	अर्किल, पंत सब्जी मटर 3, पंत मटर 2, पंजाब अगेता, पूसा प्रगति, जवाहर मटर 3, जवाहर मटर 4, हिसार हरित, आजाद मटर 2, आजाद मटर 3, पूसा विपासा, काशी नन्दिनी, वी. एल. मटर 7, अर्का अजीत, अर्का कार्तिक, अर्का सम्पूर्ण, काशी कनक, काशी उदय, काशी मुक्ति, पूसा श्री।
		मध्य समय	पंत उपहार, आजाद मटर 1, आजाद मटर 4, जवाहर मटर 1, जवाहर मटर 2, नरेन्द्र सब्जी मटर 1, काशी शक्ति, बोनेविले, लिंकन, वी.एल. 3, विवेक मटर 6, विवेक मटर 8, विवेक मटर 9, पालम प्रिया, काशी शक्ति, काशी आरती, अर्का अजित।
		पछेती समय	अर्ली जाइन्ट, सिल्विया, न्यू लाइन परफेक्सन, एल्डरमेन।
फ्रासबीन (फ्रेंचबीन)	सामान्य किस्में	बौनी किस्में	पंत अनुपमा, पंत वीन 2, कन्टेडर, जाइंट स्ट्रिगलेस, पूसा पार्वती, पूसा हिमगिरि, अर्का कोमल, वी.एल. 1, अर्का सुविधा, अर्का बोल्ड, अर्का अनूप ।
		बेल (लता) वाली किस्में	केन्टुकी वन्डर, पूसा हिमलता, लक्ष्मी, एस.बी.एम. 1।
लोबिया	सामान्य किस्में	काशी कंचन, पूसा फाल्गुनी, पूसा बरसाती, पूसा दो फसली, पूसा कोमल, पूसा सुकोमल, पूसा ऋतुराज, नरेन्द्र लोबिया 1, अर्का गरिमा, अर्का सुमन, अर्का समृद्धि, विधान भारती 1, विधान भारती 2।	
ग्वार	सामान्य किस्में	पूसा मौसमी, पूसा सदाबहार, पूसा नवबहार, पूसा सरदबहार।	
सेम	सामान्य किस्में	पूसा अर्ली, पूसा सेम 2, पूसा सेम 3, अर्का जय, अर्का विजय।	
बाकला	सामान्य किस्में	पूसा सुमित, पूसा उदित।	
पालक	सामान्य किस्में	आँलग्रीन, पूसा ज्योति, पूसा हरित, पूसा भारती, पूसा पालक, अर्का अनुपमा, जोबनर ग्रीन, बनर्जी जाइन्ट, पंजाब ग्रीन।	
विलायती पालक (स्पिनैच)	सामान्य किस्में	बर्जीनिया सैवॉय, अर्ली स्मूथ लीफ।	
चौलाई	सामान्य किस्में	छोटी चौलाई, बड़ी चौलाई, पूसा कीर्ति, पूसा किरन, पूसा लाल चौलाई, सी.ओ 1, सी.ओ. 2, सी.ओ. 3, सी.ओ. 4, सी.ओ. 5, आर्का अरूनिमा, अर्का सुगुना, अरूण, मोहिनी, रेनुश्री, कृष्णाश्री।	
मेथी	सामान्य किस्में	पूसा अर्ली वंचिग, पंत रागिनी, कसूरी मेथी, सी.ओ. 1, हिसार सोनाली।	
सलाद (लेट्यूस)	सामान्य किस्में	ग्रेट लेक्स, चाइनीज येलो, डार्कग्रीन, इम्पेरियल 44, स्लोवोल्ट, विग वोस्टन, पेरिस सफेद।	

अरबी	सामान्य किस्में	नरेन्द्र अरबी 1, नरेन्द्र अरबी 2, फैजाबादी, श्री रश्मि, श्री पल्लवी, सतमुखी।		
आलू	संकर किस्में	अगेती समय	कुफरी चन्द्रमुखी, कुफरी अशोका, कुफरी ख्याति, कुफरी सूर्या।	
		मध्य समय	कुफरी ज्योति, कुफरी गिरिराज, कुफरी जवाहर, कुफरी बहार, कुफरी बादशाह, कुफरी सतलज, कुफरी पुखराज, कुफरी चिपसोना 1, चिपसोना 2, कुफरी लालिमा, कुफरी कंचन, कुफरी संगम, कुफरी किरन, कुफरी उदय, कुफरी लोहित।	
		पछेती समय	कुफरी स्वर्णा, कुफरी सिन्दुरी, कुफरी देवा, कुफरी आनन्द।	
प्याज	सामान्य किस्में	लाल रंग	रबी समय	पूसा रेड, नासिक रेड, पूसा रतनार, पूसा माधवी, पूसा रीधि, अर्का निकेतन, अर्का बिन्दु, अर्का प्रगति, पंजाब सलेक्सन, पंजाब रेड राउन्ड, एग्रीफाउन्ड
				लाइट रेड, एग्रीफाउन्ड रोज, उदयपुर 101, उदयपुर 103, कल्यानपुर रेड।
		सफेद रंग	रबी समय	पूसा व्याइट फलैट, पूसा व्याइट राउन्ड, उदयपुर 102, पंजाब 48, एन0 257–9 1।
	संकर किस्में	पीला रंग	रबी समय रबी तथा खरीफ	अर्का पिताम्बर। अर्का कीर्तिमान, अर्का लालिमा।

सारणी 2: विभिन्न सब्जियों की बुवाई/रोपाई का समय, बीज दर व रोपण दूरी

सब्जी फसल	बुवाई/रोपाई का समय	बीज दर (प्रति है0)	दूरी (से.मी.) पंक्ति से पंक्ति×पौधसे पौध
टमाटर	**उत्तरी भारत (मैदानी क्षेत्र):** जून–जुलाई, जुलाई–अगस्त **तराई क्षेत्र व भावर क्षेत्र:** दिसम्बर–जनवरी **पर्वतीय क्षेत्र:** 1. सिंचित दशा (5000 फुट तक): जनवरी–फरवरी तथा मई–जून 2. असिंचित दशा (2000 मी0 तक): अप्रैल–मई	सामान्य किस्में 400–500 ग्राम संकर किस्में 150–200 ग्राम	60 × 45 – सीमित बढ़वार 75 × 60–75 – मध्यम व असीमित बढ़वार 90 × 60–90 – संकर किस्में रोपण, बुवाई के 4–6 सप्ताह उपरान्त करते हैं या जब पौधे 7.5–10.0 सेमी0 ऊँचे हो जाते है।
बैंगन	**उत्तरी भारत (मैदानी क्षेत्र):** जून–जुलाई तथा नवम्बर अन्त तक **तराई व भावर क्षेत्र:** जनवरी–फरवरी तथा जून–जुलाई **पर्वतीय क्षेत्र:** सिंचित घाटी: जनवरी–फरवरी असिंचित दशा (5000 फुट):अप्रैल–मई	सामान्य किस्में 500–600 ग्राम संकर किस्में 200–300 ग्राम	60 × 45 – बौनी/लम्बे फल/ कम फैलने वाली किस्में 75 × 60–75 – मध्य समय/मध्यम बढ़वार/गोल फल वाली किस्में 90 × 60–75 – पछेती/फैलने वाली/ अधिक बढ़वार/संकर किस्में, रोपण, बुवाई के 4–8 सप्ताह उपरान्त या जब पौधे 10–12 से.मी. ऊँचे व 3–4 पत्तियों वाले हो जाए।
मिर्च	**उत्तरी भारत (मैदानी क्षेत्र):** जून–जुलाई तथा दिसम्बर **पर्वतीय क्षेत्र:** मार्च–अप्रैल	सामान्य किस्में: 800–1000 ग्राम संकर किस्में: 200–300 ग्राम	45–60 × 30–45 – बौनी व मध्यम ऊँचाई वाली किस्में 75–90 × 60–75 – संकर तथा ऊँचाई वाली किस्में रोपण बुवाई के 4–8 सप्ताह उपरान्त या जब पौधे 10–12 से.मी. ऊँचे व 3–4 पत्तियों वाले हो जाए।
शिमला मिर्च	**उत्तरी भारत (मैदानी क्षेत्र):** जुलाई–अगस्त	सामान्य किस्में: 1000–1250 ग्राम	45–60 × 30–45 – बौनी व मध्यम ऊँचाई वाली किस्में

	नवम्बर **पर्वतीय क्षेत्रों** में टमाटर की भाँति बुवाई व रोपाई करें।	संकर किस्में: 400–500 ग्राम	75–90 × 60–75 – संकर तथा ऊँचाई वाली किस्में रोपण, बुवाई के 4–8 सप्ताह उपरान्त या जब पौधे 10–12 से.मी. ऊँचे व 3–4 पत्तियों वाले हो जाए।	
भिण्डी	जायद : जनवरी–फरवरी खरीफ : मई–जून	जायद:18–22 कि.ग्रा. खरीफ:8–10 कि.ग्रा.	जायद : 45 × 20 खरीफ : 45–60 × 20–30	
खीरा	**1. पर्वतीय क्षेत्र:**	2.5-3.0 कि.ग्रा.	60–150	50-60
लौकी	(क) 5000 फिट : मार्च/अप्रैल तथा	4.0-5.0 कि.ग्रा.	250–350	75-100
करेला	पुनः जून–जुलाई	5.0-7.0 कि.ग्रा.	100–200	50-60
खरबूज	(ख) 6000 फिट : मई–जून	2.5-3.0 कि.ग्रा.	150–200	50-60
तरबूज	**2. मैदानी क्षेत्र:**	4.0-5.0 कि.ग्रा.	250–300	50-100
चिकनी तोरई	(क) नदी के कछार में (डियरा):	4.0-5.0 कि.ग्रा.	250–350	50-60
नसदार तोरई	नवम्बर–दिसम्बर	200–250	50-60	4.0-5.0
कद्दू (सीताफल)	(ख) किचन गार्डन में– फरवरी (ग) व्यावसायिक फसल:	4.0-6.0	300–400	75-100
चप्पन कद्दू	जनवरी–फरवरी तथा पुनः जून–जुलाई	7.0-8.0	70–100	40-50
ककड़ी	(घ) बीज फसल : फरवरी–मार्च	2.5-3.0	150–200	50-60
टिण्डा		3.5-5.0	60–150	50-60
पेठा		5.0-6.0	250–300	50-60
चिचिन्डा		5.0-7.0	200–250	50-60
परवल		2500-3000कलमें	200–250	150-200
मूली	**उत्तरी भारत (मैदानी क्षेत्र):** एशियाई किस्में: अगस्त–जनवरी यूरोपियन किस्में: सितम्बर–मार्च **तराई एवं भावर:** 15 दिन के अन्तर पर सितम्बर से जनवरी तक **पर्वतीय क्षेत्र:** घाटी में : सितम्बर –अक्टूबर ऊँचे क्षेत्र : जून–जुलाई	एशियाई किस्में: 8–10 किग्रा. यूरोपियन किस्में: 10–12 कि.ग्रा.	30–45 × 5–8 5–10 × 2–3	
गाजर	**उत्तरी भारत (मैदानी क्षेत्र):** एशियाई किस्में: अगस्त–सितम्बर यूरोपियन किस्में: सितम्बर–दिसम्बर **तराई एवं भावर:** सितम्बर–अक्टूबर **पर्वतीय क्षेत्र:** घाटी में: सितम्बर–अक्टूबर ऊँचे क्षेत्र : मई–जुलाई	5–6 किग्रा.	20–40 × 5–7	
शलजम	**उत्तरी भारत (मैदानी क्षेत्र):** एशियाई किस्में: जुलाई–सितम्बर यूरोपियन किस्में:अक्टूबर–दिसम्बर **तराई एवं भावर तथा पर्वतीय क्षेत्र:** गाजर के समान	3–4 किग्रा.	30–45 × 7.5–15	
चुकन्दर	**उत्तरी भारत (मैदानी क्षेत्र):** सितम्बर–नवम्बर	7–10 किग्रा.	30–45 × 10–15	

	तराई एवं भावर तथा पर्वतीय क्षेत्रः गाजर के समान		
फूलगोभी	**मैदानी, तराई व भावर क्षेत्रः** अगेती किस्में: मई–जून मध्य किस्में: जुलाई–अगस्त पछेती किस्में: सितम्बर–नवम्बर **पर्वतीय क्षेत्रः** अगेती किस्में: मार्च–अप्रैल मध्य किस्में: जून पछेती किस्में: सितम्बर अधिक ऊँचाई–(7000 फुट) मई–जून	अगेती–600 ग्राम मध्य–500–600 ग्राम पछेती 500 ग्राम	40–60 × 30–45 (अगेती किस्में थोड़ा सघन तथा पछेती थोड़ा विरल रोपी जाती है)। रोपण एवं बुवाई के 4–6 सप्ताह उपरान्त या जब पौधे 4–6 सत्य पत्तियों वाले हो जाए, तब करनी चाहिए।
बन्द गोभी	**मैदानी, तराई व भावर क्षेत्रः** अगस्त–सितम्बर **पर्वतीय क्षेत्रः** सिंचित घाटी (5000 फुट)–सितम्बर मध्य व ऊँचाई वाले क्षेत्र (7000 फुट): मई–जून	सामान्य किस्में–400–500 ग्राम संकर किस्में–300 ग्राम	45–60 × 45–60 (अगेती किस्में थोड़ा सघन तथा पछेती थोड़ा विरल रोपी जाती है)। रोपाई फूलगोभी के समान
गाँठगोभी	**मैदानी, तराई व भावर क्षेत्रः** सितम्बर–नवम्बर **पर्वतीय क्षेत्रः** 5000 फुट तक : सितम्बर मध्य तथा अधिक ऊँचाई वाले क्षेत्र : मई–जून	800–1000 ग्राम	30–40 × 20–25 (अगेती किस्में थोड़ा सघन तथा पछेती थोड़ा विरल रोपी जाती है)। रोपाई फूलगोभी के समान
ब्रोकली	**मैदानी, तराई व भावर क्षेत्रः** अगस्त –सितम्बर **पर्वतीय क्षेत्रः** गाँठगोभी के समान	300–400 ग्राम	40–60 × 30–50 (अगेती किस्में थोड़ा सघन तथा पछेती थोड़ा विरल रोपी जाती है)। रोपाई फूलगोभी के समान
सब्जी मटर	**मैदानी क्षेत्रः** अक्टूबर–नवम्बर **तराई क्षेत्रः** अक्टूबर का दूसरा पखवाड़ा/नवम्बर **भावर क्षेत्रः** सितम्बर **पर्वतीय क्षेत्रः** सिंचित घाटी (5000 फुट तक): अक्टूबर–नवम्बर असिंचित दशा (6000 फुट से ऊपर): अगस्त तथा नवम्बर–दिसम्बर (केवल अगेती किस्में)	80–120 किग्रा.	30–45 × 5–10
फ्रासबीन	**उत्तरी भारत (मैदानी क्षेत्र):** जनवरी–फरवरी तथा जून–जुलाई **तराई एवं भावरः** मध्य जनवरी से मध्य फरवरी **पर्वतीय क्षेत्रः** असिंचित दशा–जून सिंचित दशा– मार्च–अप्रैल	बौनी किस्में 85–90 कि.ग्रा. बेल (लता) वाली किस्में: 25–30 कि.ग्रा.	45–60 × 10–15 100 × 100

लोबिया	**मैदानी, तराई व भावर क्षेत्रः** जनवरी–फरवरी तथा मई–जून **पर्वतीय क्षेत्रः** फ्रासबीन की तरह	जायदः 20–30 कि.ग्रा. खरीफः 10–15 कि.ग्रा.	30–60 × 10–15
ग्वार	फरवरी–मार्च तथा जून–जुलाई	25–30 कि.ग्रा.	45–60 × 20–30
सेम	जून–जुलाई तथा सितम्बर–अक्टूबर	20–40 कि.ग्रा.	60–100 × 30–75
बाकला	फरवरी–मार्च तथा सितम्बर–अक्टूबर	70–100 कि.ग्रा.	45 × 15
पालक	**मैदानी, तराई व भावर क्षेत्रः** सितम्बर–नवम्बर **पर्वतीय क्षेत्रः** घाटी क्षेत्रः सितम्बर–अक्टूबर ऊँचाई क्षेत्रः अप्रैल–जुलाई	25–30 कि.ग्रा.	15–20 × 5–7
विलायती पालक	**मैदानी क्षेत्रः** सितम्बर–अक्टूबर **पर्वतीय क्षेत्रः** जुलाई–अक्टूबर	30–40 कि.ग्रा.	25–30 × 10
चौलाई	**उत्तरी भारत (मैदानी क्षेत्र):** जायदः फरवरी–मार्च खरीफः जून–जुलाई	2–3 कि.ग्रा.	20–30 × 10
मेथी	**मैदानी, तराई व भावर क्षेत्रः** सितम्बर–अक्टूबर **पर्वतीय क्षेत्रः** घाटीः अक्टूबर	20–25 कि.ग्रा.	20–40 × 5–10 कसूरी मेथी में फासला कम होता है।
सलाद (लेट्यूस)	**मैदानी क्षेत्रः** सितम्बर–नवम्बर **पर्वतीय क्षेत्र** (ऊँचाई वाले क्षेत्र): मार्च–जून	400–500 ग्राम	30–45 × 20–25
अरबी	**मैदानी, तराई व भावर क्षेत्रः** अगेती किस्मः मार्च–अप्रैल पछेती किस्मः जून–जुलाई **पर्वतीय क्षेत्रः** मार्च–अप्रैल	8–10 कुन्तल	60 × 25
आलू	**मैदानी, तराई व भावर क्षेत्रः** अक्टूबर का दूसरा पखवाड़ा **पर्वतीय क्षेत्रः** सिंचित घाटी (3000 फुट): मध्य सितम्बर–मध्य अक्टूबर सिंचित घाटी (5000 फुट): जनवरी–फरवरी असिंचित घाटी, अधिक ऊँचाई, उत्तरी ढ़लान (7000 फुट तक): मार्च–अप्रैल	25–30 कु0 (25–30 ग्रा. आकार के)	60 × 25
प्याज	**रबी फसलः**उत्तर भारत (मैदानी क्षेत्र): अक्टूबर–नवम्बर तराई व भावरः नवम्बर –दिसम्बर, पर्वतीय क्षेत्र (5000 फुट): सिंचित घाटीः अक्टूबर **खरीफ फसलः** अगेतीः अप्रैल–मई, मुख्यः मई–जून, पछेती खरीफ/अगेती, रबीः अगस्त–सितम्बर	8–10 कि.ग्रा.	15 × 10 (बड़ी प्याज) 8 × 5 (छोटी प्याज)

सारणी–3: विभिन्न सब्जियों हेतु खाद व उर्वरक एवं उपज

सब्जी फसल	खाद (टन/है0)	एन:पी:के. (कि.ग्रा./है.)	उर्वरक (कि.ग्रा./है.)			उपज (टन/है0)
			यूरिया	एन.पी.के. 12:32:16	एम.ओ.पी.	
टमाटर	20–25	120:60:60	212	188	50	सामान्य किस्में : 20–25 संकर किस्में : 40–80
			संकर किस्मों के लिए उर्वरक की मात्रा को बढ़ाकर लगभग डेढ़ गुना कर देते हैं तथा असिंचित दशा में उर्वरक की मात्रा आधी कर देते हैं।			
बैंगन	20–25	120:60:60	212	188	50	सामान्य किस्में : 20–40 संकर किस्में : 40–80
			संकर किस्मों के लिए उर्वरक की मात्रा को बढ़ाकर लगभग डेढ़ गुना कर देते हैं तथा असिंचित दशा में उर्वरक की मात्रा आधी कर देते हैं।			
मिर्च	20–25	100:60:60	172	188	50	सामान्य किस्में : 7.5–10.0(हरी) 1.5–2.5 (सूखी) संकर किस्में : 15–17.5 (हरी)
			संकर किस्मों के लिए उर्वरक की मात्रा को बढ़ाकर लगभग डेढ़ गुना कर देते हैं तथा असिंचित दशा में उर्वरक की मात्रा आधी कर देते हैं।			
शिमला मिर्च	20–25	120:60:60	212	188	50	सामान्य किस्में : 10–12 संकर किस्में : 15–20
भिण्डी	20–25	100:60:60	172	188	50	जायद : 7.0–8.0 खरीफ : 11.0–13.0
खीरा	15–20	80:40:40	143	125	35	12.5–15
लौकी	15–20	100:60:60	172	188	50	25–30
करेला	15–20	100:60:60	172	188	50	10–15
खरबूज	15–20	100:60:60	172	188	50	15–25
तरबूज	15–20	100:60:60	172	188	50	30–40
चिकनी तोरई	15–20	100:60:60	172	188	50	20–25
नसदार तोरई	15–20	100:60:60	172	188	50	20–25
कद्दू (सीताफल)	15–20	100:60:60	172	188	50	30–40
चप्पन कद्दू	15–20	80:40:40	143	125	35	20–25
ककड़ी	15–20	80:40:40	143	125	35	12.5–15
टिण्डा	15–20	80:40:40	143	125	35	10–13
पेठा	15–20	100:60:60	172	188	50	25–35
चिचिन्डा	15–20	100:60:60	172	188	50	10–12.5

परवल	15–20	100:60:60	172	188	50	120–150
मूली	10–15	50:40:40	77	125	35	एशियाई किस्में : 15–20 यूरोपियन किस्में : 5–7
गाजर	20–25	60:40:40	100	125	35	एशियाई किस्में : 25–30 यूरोपियन किस्में : 10–15
शलजम	15–20	50:60:60	62	188	50	20–25
चुकन्दर	20–25	60:40:40	100	125	35	25–30
फूलगोभी	20–25	100:60:60	172	188	50	टगेती : 15–20 मध्य : 20–25 पछेती : 25–30
बन्दगोभी	20–25	120:60:60	212	188	50	20–35
गाँठगोभी	10–15	100:60:80	172	188	84	12–20
ब्रोकली	20–25	100:60:60	172	188	54	5–15
सब्जी मटर	20–25	30:70:50	60	219	50	5–15
फ्रासबीन	15–20	120:70:50	207	218	25	बौनी किस्में : 5–15 बेल वाली किस्में : 12–15
लोबिया	15–20	30:60:60	20	188	50	5–10
ग्वार	15–20	100:50:25	178	156	–	4–6
सेम	10–15	50:15:40	–	125	–	5–8
बाकला	15–20	30:60:60	20	188	50	7–10
पालक	10–15	80:40:40	143	125	35	10–15
विलायती पालक	10–15	60:40:40	100	125	35	6–10
चौलाई	15–20	80:40:40	143	125	35	10–15
मेथी	10–15	50:40:40	77	125	35	7–10
सलाद (लेट्यूस)	15–20	80:40:40	143	125	35	10–15
अरबी	20–25	60:60:80	85	188	85	15–20
आलू	20–25	180:80:80	330	550	67	असिंचित दशा : 15–120 सिंचित दशा (पर्वतीय क्षेत्र) : 20–25 तराई व भावर : 30–35
प्याज	20–30	100:60:80	172	188	84	बड़ी प्याज : 25–30 छोटी प्याज : 16–20

सम्पर्क सूत्र : 9411159800

मसालों की खेती

डा. धीरेन्द्र सिंह

धनिया

धनिया अपने खुशबूदार बीज, पत्तियों तथा तने के लिए लोकप्रिय है। इसकी पत्तियाँ चटनी और सॉस बनाने के काम आती हैं।

जलवायु एवं भूमि

बीज के लिए धनिया की फसल जाड़ों अथवा रबी के मौसम में बोनी चाहिए। पाला धनिया की फसल के लिए हानिकारक होता है, अतः जिन इलाकों में पाला गिरता है अथवा अत्यधिक शीत होती है वहाँ धनिया की खेती नहीं करनी चाहिए। मुख्यतः फरवरी–मार्च के महीने में फूल आने व बीज बनते समय फसल पाले से मुक्त होनी चाहिए। पौधे की शुरूआती वृद्धि के समय कुछ ठंडा मौसम पौधे की वानस्पतिक वृद्धि को बढ़ाता है तथा बीज बनते समय कुछ गर्म मौसम से उपज तथा बीज की गुणवत्ता दोनों में वृद्धि होती है। धनिया की खेती लगभग सभी प्रकार की भूमि में की जा सकती है लेकिन पर्याप्त कार्बनिक पदार्थ वाली बलुई दोमट या दोमट भूमि इसके लिए उत्तम रहती है।

उन्नतशील किस्में

1. **पंत हरितिमा** : इस प्रजाति की फसल 150–160 दिन में पक कर तैयार हो जाती है। यह प्रजाति फँफूदजनित तना सूजन बीमारी के प्रति अवरोधी है। इसकी हरी पत्तियों की उपज 125–140 कुन्तल प्रति हैक्टर तथा बीज की उपज 15–18 कुन्तल प्रति हैक्टर प्राप्त होती है।
2. **हिसार सुगंध** : यह धनिया की अगेती प्रजाति है जिसके बीज की उपज 14–15 कुन्तल प्रति हैक्टर है। यह प्रजाति तना सूजन बीमारी के लिए अवरोधी है।
3. **हिसार आनन्द** : यह दोहरे उपयोग (पत्ती तथा बीज दोनों) के लिए उपयुक्त अधिक उपज देने वाली किस्म है। इसके बीज की औसत उपज 14 कुन्तल प्रति हैक्टर है।
4. **राजेन्द्र सोनिया** : बीज की औसत उपज 12 कुन्तल प्रति हैक्टर आती है। इसकी फसल 110 दिन में पक जाती है तथा तना सूजन बीमारी, मुरझान रोग, एफिड तथा झींगुर (weevil) के लिए अवरोधी तथा फल मक्खी के प्रकोप के लिए सहनशील है।

बुवाई

धनिया की बुवाई जब दिन का तापमान 20 डिग्री0 सेल्सियस से नीचे हो, की जा सकती है। अगेती फसल (खरीफ) के लिए बुवाई मई में करते हैं जो जुलाई–अगस्त में पककर तैयार हो जाती है। उत्तरी भारत के मैदानों में धनिया की बुवाई जुलाई से अगस्त तक करते हैं। बरसात के मौसम में फसल की बुवाई ऊँची उठी क्यारियों में करते हैं। बीज के लिए धनिया की बुवाई 15 अक्टूबर से 15 नवम्बर के बीच करते हैं। एक हैक्टर खेत की बुवाई के लिए 10–12 कि.ग्रा. बीज पर्याप्त रहता है। बीज को बोने से पहले कपड़े या बोरी से रगड़ कर दो दाने कर लें और 2–4 घण्टे पानी में भीगो कर बुवाई करेंगे तो अंकुरण अच्छा होगा।

खाद तथा उर्वरक

असिंचित दशा में धनिया की खेती के लिए 10–15 टन सड़ी हुई गोबर की खाद, 20 कि.ग्रा. नत्रजन, 30 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 20 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर की दर से भूमि में मिलानी चाहिए। सिंचित दशा में नत्रजन की मात्रा 50 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर तक बढ़ाई जा सकती है। असिंचित दशा में सारे उर्वरक एवं खाद की मात्रा बुवाई से पूर्व खेत में मिला देते हैं। सिंचित दशा में खाद एवं फॉस्फेटिक व पोटाशिक उर्वरकों की पूरी मात्रा खेत की तैयारी के समय भूमि में मिला देते हैं। नत्रजन की शेष मात्रा के दो बराबर भाग कर आधी मात्रा पहली सिंचाई के समय तथा शेष आधी मात्रा फूल खिलते समय देनी चाहिए।

सिंचाई

सिंचित दशा में तीन–चार सिंचाईयों की आवश्यकता होती है। पहली सिंचाई बुवाई के 35 से 40 दिन बाद, दूसरी सिंचाई 60 से 70 दिन बाद, तीसरी 80 से 90 दिन बाद तथा चौथी और अन्तिम 100 से 110 दिन बाद जब बीज बनने शुरू हो जाएँ, देनी चाहिए।

सिंचाई की बारम्बारता भूमि की नमी पर निर्भर करती है। काली कपास युक्त भूमि में धनिया की खेती वर्षा पर निर्भर करती है। धनिया की फसल अधिक नमी बर्दाश्त नहीं कर पाती है।

निराई–गुड़ाई एवं खरपतवार नियंत्रण

लगभग हर तीस दिन के अन्तराल पर निराई–गुड़ाई की जानी चाहिए। पहली निराई–गुड़ाई के समय घने पौधों को निकालना आवश्यक है। रासायनिक खरपतवार नियंत्रण के लिए फ्लूक्लोरेलिन 1 कि.ग्रा./हैक्टर 500–600 लीटर पानी में घोलकर बुवाई करने से पहले छिड़काव करके मिट्टी में मिला लेना चाहिए या पेन्डीमिथेलिन 1 कि.ग्रा./हैक्टर क्षेत्र में बुवाई के बाद व खपतवार जमाव से पूर्व 500–600 लीटर पानी में घोलकर मिट्टी में छिड़कें तथा छिड़काव के समय मिट्टी में पर्याप्त नमी होनी चाहिए।

कटाई एवं उपज

धनिया की फसल किस्मों तथा जलवायु के आधार पर 115 से 125 दिन में पक जाती है। धनिया के बीज की पैदावार सिंचित दशा में 10–15 कुन्तल प्रति हैक्टर तथा असिंचित दशा में 4–5 कुन्तल प्रति हैक्टर आती है।

प्रमुख रोग एवं रोकथाम

1. उकठा रोग (विल्ट)

यह रोग फ्यूजेरियम ऑक्सीस्पोरम कोरिएन्ड्री नामक कवक से होता है। यह रोग पौधे के विकास की किसी भी अवस्था में हो सकता है। रोगग्रस्त पौधे हरी अवस्था में ही मुरझा कर मर जाते हैं। इस रोग का आक्रमण पौधे की जड़ों में होता है अतः इस रोग पर काबू पाना बहुत मुश्किल हो जाता है। यह रोग धनिया उगाने वाले सभी इलाकों में भारी नुकसान पहुँचाता है।

रोकथाम

1. बीज को कार्बेंडाजिम 1.5 ग्राम+थीरम 1.5 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित कर बुवाई करें।
2. बीज को ट्राइकोडर्मा 5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज दर से उपचारित कर बोएं।
3. जहाँ उकठा रोग का प्रकोप हो, वहाँ आर.सी.आर. 41 तथा सी.एस. 287 जैसी उकठा रोगरोधक किस्मों की बुवाई करें।

2. चूर्णिल आसिता

यह रोग एराइसिफी पोलीगोनी हिराक्लेई नामक कवक से होता है। इस रोग के शुरूआती लक्षणों में पत्तियों और तने के ऊपर सफेद चूर्ण की चादर सी बिछ जाती है। शुरूआती समय में आक्रमण होने से बीज नहीं बन पाते और यदि आक्रमण देर से हो तो बीज तो बनते हैं पर बीज छोटे और मुड़े–तुड़े होते हैं, जिससे उपज और गुणवत्ता दोनों प्रभावित होते हैं।

रोकथाम

इस रोग की रोकथाम के लिए फसल में घुलनशील गंधक 1 कि.ग्रा. अथवा कैराथेन एल.सी. 500 मिलीलीटर को 500–600 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें। छिड़काव 10–15 दिन बाद दुबारा करें। फसल में गंधक के चूर्ण का 20–25 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से बुरकाव करने से भी इस रोग पर नियंत्रण हो जाता है। जरूरत पड़ने पर 10–15 दिन बाद पुनः बुरकाव करें।

3. तना पिटिका

यह रोग प्रोटोनाइसिस मैक्रोस्पोरम नामक कवक द्वारा होता है। इस बीमारी में पौधे के तने पर सूजन आ जाती है जिससे पौधे नष्ट हो जाते हैं। प्रभावित पौधों के बीज भी बेडौल हो जाते हैं जिससे उपज व गुणवत्ता दोनों घट जाती है।

रोकथाम

1. इस रोग से बचाव हेतु बोने से पूर्व बीज को कार्बेंडाजिम 1.5 ग्राम तथा थीरम 1.5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें।
2. खड़ी फसल पर कार्बेंडाजिम 1 ग्राम/लीटर अथवा कैप्टान 2 ग्राम/लीटर की दर से 10–15 दिन के अन्तराल पर 2 से 3 छिड़काव करें।
3. रोगरोधी किस्मों जैसे आर.सी.आर. 41, राजेन्द्र स्वाति, पंत हरितिमा तथा करन (यू.डी. 41) की बुवाई करें।

4. झुलसा रोग (ब्लाइट)

इस रोग में पौधे के तने व पत्तियों पर गहरे भूरे रंग के धब्बे दिखाई देने लगते हैं और पत्तियाँ झुलसी हुई दिखाई देती हैं।

रोकथाम

इस रोग से रोकथाम के लिए मैंकोजेब की 2 कि.ग्रा. मात्रा 500–600 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टर छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार दूसरा छिड़काव किया जा सकता है।

प्रमुख कीट एवं रोकथाम

1. माहू (चेपा या एफिड)

इस कीट का प्रकोप सामान्यतया फूल खिलने के बाद होता है। हालाँकि यह कीट कई कीटनाशी दवाओं द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है, परन्तु फूल खिलने के बाद कीटनाशकों के प्रयोग से मधुमक्खियाँ भी मर जाती हैं जो कि धनिया की फसल में परागण हेतु मुख्य कीट है। कोई भी ऐसा कीटनाशी नहीं है जो मधुमक्खियों को हानि पहुँचाए बिना माहू को मार दे। फिर भी रोगोर/मेटासिस्टॉक्स 1.5 मि.ली. प्रति लीटर या मैलाथियान 2 मि.ली. प्रति लीटर की दर से छिड़काव करें। छिड़काव शाम के वक्त करें जब मधुमक्खी की संख्या कम हो। उपरोक्त कीटनाशकों का फूल खिलने से पूर्व छिड़काव माहू से बचाव हेतु लम्बे समय तक कारगर रहेगा।

मेथी

मेथी की हरी व सूखी पत्तियाँ सब्जी बनाने के लिए की जाती हैं तथा इसके बीजों को इनके रोचक, तीखे स्वाद व विशिष्ट खुशबू के कारण मसाले के रूप में पसन्द किया जाता है।

जलवायु एवं भूमि

मेथी ठंडी जलवायु की फसल है। इसकी प्रारम्भिक वृद्धि के लिए नम जलवायु तथा कम तापमान की आवश्यकता होती है। परन्तु फसल पकते समय अपेक्षाकृत अधिक तापमान व शुष्क मौसम उपज के लिए लाभप्रद होता है। इसकी फसल पाले के प्रति काफी सहनशील होती है।

दोमट या बलुई दोमट मिट्टी जिसमें कार्बनिक पदार्थ प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हो, मेथी की खेती के लिए उत्तम होती है। यह क्षारीयता को अन्य फसलों की तुलना में अधिक सहन कर सकती है। बीज के लिए इसकी खेती जाड़ों में सिंचाई करके करते हैं तथा पहाड़ों पर गर्मियों में पत्तियों के लिए इसकी खेती वर्षा पर निर्भर रहकर करते हैं। अधिक वर्षा वाले इलाकों में इसकी खेती नहीं करनी चाहिए।

उन्नतशील किस्में

1. **पंत रागिनी** : यह पत्ती तथा बीज दोनों के लिए प्रयोग होने वाली उन्नतशील किस्म है। इसके पौधे लम्बे तथा झाड़ीनुमा होते हैं। यह किस्म मृदुरोमिल आसिता तथा जड़ सड़न रोग के प्रति रोगरोधी है। यह प्रजाति 170 से 175 दिन में पककर तैयार हो जाती है। इसके बीज की औसत उपज 15–20 कुन्तल प्रति हैक्टर है।
2. **पूसा अर्ली बंचिंग** : यह जल्दी बढ़ने वाली प्रजाति 100–125 दिन में पककर तैयार हो जाती है। इसके तने सीधी बढ़वार वाले तथा बीज मोटे होते हैं। इसे बीज तथा पत्ती दोनों के लिए उगाते हैं तथा इसके बीज की औसत उपज 12 कुन्तल/हैक्टर आती है।
3. **हिसार माधवी** : यह मध्यम दिनों में पकने वाली किस्म है। इसके बीज की औसत उपज 19–20 कुन्तल/हैक्टर है। यह किस्म चूर्णिल आसिता तथा मृदुरोमिल आसिता के प्रति रोगरोधी है।
4. **हिसार मुक्ता** : यह किस्म उत्तर भारत के सभी मेथी उगाने वाले इलाकों के लिए उपयुक्त है। इस किस्म की औसत उपज लगभग 20–23 कुन्तल/हैक्टर है। यह किस्म मृदुरोमिल आसिता तथा चूर्णिल आसिता रोग के प्रति रोगरोधी है।

बुवाई

बीज के लिए मेथी की बुवाई अक्टूबर के तीसरे सप्ताह से नवम्बर के दूसरे सप्ताह के मध्य करते हैं। पत्तियों के लिए बुवाई मध्य सितम्बर से मध्य मार्च तक करते हैं।

देशी मेथी के लिए 25–30 कि.ग्रा. बीज एक हैक्टर के लिए पर्याप्त होता है जबकि कसूरी मेथी के लिए 18–20 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता होती है। इसकी बुवाई कतार से कतार 25–30 से.मी. तथा

पौध से पौध 10 से.मी. रखते हैं। बीज को 2–3 से.मी. से अधिक गहरा नहीं बोना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

पौधे की शीघ्र बढ़वार और अधिक पत्तियाँ लेने के लिए भूमि में पर्याप्त खाद एवं उर्वरक देने चाहिए। बुवाई से एक माह पूर्व अच्छी प्रकार सड़ी हुई 10–15 टन गोबर की खाद प्रति हैक्टर की दर से खेत में एक समान बिखेरकर मिला देनी चाहिए। इसके अतिरिक्त सामान्य उर्वरता वाली भूमि में प्रति हैक्टर 25 कि.ग्रा. नत्रजन, 20 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 20 कि.ग्रा. पोटाश की पूरी मात्रा खेत में बुवाई से पूर्व देनी चाहिए।

सिंचाई

पलेवा करके बुवाई करने से जमाव अच्छा होता है। सामान्यतः 7–10 दिन में बीज का जमाव हो जाता है। शीघ्र व लगातार बढ़त के लिए भूमि में नमी आवश्यक है। हल्की भूमि में 6–8 सिंचाईयों व भारी भूमि में 4–5 सिंचाईयों की जरूरत होती है। अधिक सिंचाई करने से जड़ सड़न की समस्या आती है।

निराई–गुड़ाई एवं खरपतवार नियंत्रण

शुरूआती समय में पौधों की धीमी बढ़त के कारण खरपतवार समस्या करते हैं। अतः समय–समय पर निराई गुड़ाई करनी चाहिए। बुवाई के 20–25 दिन बाद पौधों की बढ़वार इतनी हो जाती है कि खरपतवार अधिक नुकसान नहीं पहुँचा पाते।

रासायनिक विधि से खरपतवार नियंत्रण के लिए फ्लूक्लोरेलिन 1.0 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व 500–600 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टर की दर से बुवाई से पहले खेत में मिला देना चाहिए। अच्छे परिणाम के लिए भूमि में पर्याप्त नमी होनी आवश्यक है।

कटाई तथा उपज

सब्जी के लिए उगायी गयी देशी मेथी बुवाई के 25–30 दिन बाद कटाई हेतु तैयार हो जाती है। 2–3 कटाई के बाद पौधों को बीज बनाने हेतु छोड़ सकते हैं अथवा 4–5 कटाई के बाद समूचे पौधे को उखाड़ देते हैं।

देशी मेथी से 80–90 कुन्तल प्रति हैक्टर हरी पत्ती तथा 15–18 कुन्तल प्रति हैक्टर बीज की उपज प्राप्त होती है।

प्रमुख रोग एवं रोकथाम

1) चूर्णिल आसिता

यह बीमारी लेबिलुला टॉरिका तथा एराइसिफी पोलीगोनी नामक कवक से होती है। इसके संक्रमण से पत्ती की दोनों सतह पर तथा पौधे के अन्य हरे भागों में सफेद कवक वृद्धि दिखाई देती है। अपेक्षाकृत सूखे मौसम में यह बीमारी अधिक होती है। सामान्यतः यह देर से आती है तथा फली बनते समय अत्यधिक नुकसान पहुँचाती है। इसका अधिक आक्रमण 15–25 डिग्री सेन्टीग्रेट तापमान तथा 60–70 प्रतिशत आपेक्षिक आद्रता पर देखा गया है।

रोकथाम

1. 15 दिन के अन्तराल पर तीन बार घुलनशील गन्धक (2.5 ग्राम प्रति लीटर) या कैराथेन (1.0 मि.ली. प्रति लीटर) का छिड़काव करें।
2. रोग के लिए सहिष्णु किस्में जैसे – RMt 305, राजेन्द्र क्रान्ति, हिसार माधवी, हिसार मुक्ता आदि का चयन करें।
3. फसल–चक्र अपनाएं, जिसमें मेथी की फसल तीन वर्ष में एक बार लगाएं।

2) मृदुरोमिल आसिता

इस रोग के आने पर पत्ती की निचली सतह में भूरी–सफेद कवक वृद्धि दिखाई देती है तथा पत्ती का ऊपरी भाग पीला पड़कर निर्जीव हो जाता है। इस बीमारी का प्रकोप सामान्यतः फरवरी–मार्च में अधिक होता है।

रोकथाम

1. रोगरोधी किस्मों जैसे हिसार मुक्ता, हिसार माधवी, पंत रागिनी आदि का चयन करें तथा स्वस्थ व रोगमुक्त बीजों का प्रयोग करें।
2. मेटालैक्सिल 35 डब्लू.एस. @ 6 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें।
3. गर्मियों में मृदा सौरीकरण करने से रोग की तीव्रता में कमी आती है।
4. ब्लाइटॉक्स 50 अथवा मैंकोजेब कवकनाशी का छिड़काव 3 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर करें।

3) जड़ सड़न

यह मृदा जनित रोग *राइजोक्टोनिया सोलेनाइ* नामक कवक द्वारा होता है। इस रोग के प्रभाव से जड़ों

में कई श्रेणी की सड़न पैदा होती है जिससे पौधा पीला पड़कर सूख जाता है।

रोकथाम

1. थीरम या कैप्टान 2–3 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से बीजोपचार करें या भूमि को कार्बेंडाजिम या बेविस्टीन या कैप्टान 1.0 ग्राम प्रति लीटर पानी से तर करें।
2. बीज को *ट्राइकोडर्मा* (4 ग्राम/कि.ग्रा. बीज) से उपचारित करें अथवा भूमि में नीम केक 150 कि.ग्रा./हैक्टर की दर से मिलाएँ।

4) पदगलन

यह बीमारी पीथियम एफेनी डरमेटम नामक कवक से फैलती है। प्रभावित बीज व पौधे गले हुए, रंगहीन होकर बुरी महक छोड़ते हैं। पौधे जड़ के पास से गलकर जमीन पर गिर जाते हैं और सूख जाते हैं।

रोकथाम

1. गर्मियों में मृदा सौरीकरण करने से रोग की तीव्रता में कमी आती है।
2. कार्बेंडाजिम का छिड़काव 1 ग्राम प्रति लीटर की दर से जड़ों के पास करें।
3. कार्बेंडाजिम 3 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से बीजोपचार करें।

कीट एवं रोकथाम

1) **एफिड/माहू** : मेथी की फसल को हानि पहुँचाने वाला सबसे सामान्य कीट एफिड है, जिनके झुंड कभी–कभी नाजुक पत्तियों, तने व पुष्पक्रम में बहुत अधिक संख्या में देखे जाते हैं। निम्फ तथा वयस्क दोनों ही पौधे के कोमल भागों से रस चूसकर हानि पहुँचाते हैं। प्रभावित पौधे कमजोर हो जाते हैं तथा उन पर इस कीट द्वारा मीठा पदार्थ छोड़ने से काली फफूँद पनप जाती है जिससे पत्तियाँ सिकुड़कर मर जाती हैं। माहू के रासायनिक नियंत्रण के लिए डाइमेथोएट 1.5 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए एवं आवश्यकतानुसार छिड़काव 10–15 दिन बाद दोहराना चाहिए।

लहसुन

लहसुन का प्रयोग अचार, चटनी, केचअप आदि संसाधित पदार्थों को बनाने में किया जाता है।

जलवायु

लहसुन की खेती मुख्यतः शरद ऋतु में की जाती है। लहसुन की गाँठ की परिपक्वता के समय अधिक तापक्रम और लम्बी प्रकाश अवधि की आवश्यकता होती है। पत्तियों की वृद्धि गाँठ बनने के साथ ही रुक जाती है। इसकी अच्छी उपज के लिए 13–24^0 सेन्टीग्रेड तापक्रम की आवश्यकता पड़ती है। लहसुन की खेती सभी प्रकार की भूमि जैसे बलुई दोमट और दोमट भूमि में की जाती है।

उन्नतशील किस्में

1. यमुना सफेद जी 1: इस किस्म का कंद सफेद रंग का तथा इसकी औसत उपज 14 टन प्रति हैक्टर आती है।

2. यमुना सफेद 2: इस किस्म का कंद चमकदार सफेद रंग का तथा इसकी औसत उपज 15–20 टन प्रति हैक्टर है।

3. पंत लोहित: यह अधिक उपज देने वाली किस्म परपल ब्लाच (बैंगनी धब्बा) रोग के प्रति अवरोधी है। परिपक्वता अवधि 175 दिन तथा उपज 12–13 टन प्रति हैक्टर होती है।

4. एग्रीफाउण्ड सफेद: इस किस्म का कंद सफेद रंग का, परपल ब्लाच (बैंगनी धब्बा) व झुलसा रोग के प्रति अवरोधी, तथा उपज 13–15 टन प्रति हैक्टर आती है।

5. एग्रीफाउण्ड पार्वती: उपज 18–22 टन प्रति हैक्टर है।

बुवाई

उत्तरी भारत के मैदानी भागों में लहसुन की खेती अक्टूबर से नवम्बर तक की जा सकती है। बुवाई के लिए गांठों से जुड़े हुए जवा का प्रयोग करते हैं। बीज को स्वस्थ गाँठो से लेना चाहिए। एक हैक्टर क्षेत्र के लिए 500–700 कि.ग्रा. जवा की आवश्यकता पड़ती है। अच्छी पैदावार के लिए लहसुन के जवा को 15 से.मी. पंक्ति से पंक्ति और 7.5 से.मी. पौधे से पौधे की दूरी पर बोना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक:

गोबर की खाद 25–30 टन, नत्रजन 100–125 कि.ग्रा., फॉस्फोरस 50 कि.ग्रा और पोटाश 50 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से तत्व के रुप में देना चाहिए। गोबर की खाद खेत की तैयारी के समय मिला देनी चाहिए तथा रासायनिक खादों में नत्रजन की एक तिहाई मात्रा

और फॉस्फोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई से पहले तथा शेष नत्रजन दो बराबर भागों में बाँटकर बोने के 40 व 60 दिन बाद खड़ी फसल में टॉपड्रेसिंग के रुप में दें।

निराई गुड़ाई एवं खरपतवार नियंत्रण

खरपतवारनाशी पेन्डीमिथेलिन 3.5 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से घोलकर बुवाई के एक सप्ताह बाद खेत में छिड़कते हैं। बुवाई के लगभग 6–7 सप्ताह के अन्दर एक बार खुर्पी से खरपतवार निकालते हैं।

सिंचाईः

सिंचाई का मुख्य समय गांठों के बनने के समय होता है। इस समय सिंचाई में देर करने और असावधानी बरतने पर गांठें फटने लगती हैं, जिससे उपज कम हो जाती है। लहसुन में 12–14 हल्की सिंचाईयों की आवश्यकता पड़ती है। पहली सिंचाई के 3–4 दिन बाद और अंतिम सिंचाई खुदाई के लगभग एक सप्ताह पहले करना चाहिए। अन्य सिंचाइयाँ 10–15 दिन के अन्तराल पर करते हैं।

खुदाई एवं उपज

फसल की ऊपरी पत्तियाँ जब पीली पड़कर गिरने लगें, तब खुदाई करनी चाहिए। लहसुन की फसल पकने में5–6 माह का समय लगता है। खुदाई के बाद गाँठों को 3–4 दिन तक छाया में सुखाया जाता है। गांठों को सुखाते समय उन्हें पत्तियों और डंठल के साथ ही रखना चाहिए तथा सूख जाने पर 1–1.5 से.मी. कन्द के ऊपर डंठल छोड़कर ऊपरी भाग काट कर अलग कर देते हैं। लहसुन की औसत उपज 8–10 टन प्रति हैक्टर आती है।

प्रमुख रोग एवं रोकथामः

1. बैंगनी धब्बा (*परपल ब्लॉच*) : यह रोग अल्टरनेरिया पोरी नामक फफूँद से होता है। प्रभावित पत्तियों और तनों पर छोटे–छोटे गुलाबी रंग के धब्बे पड़ जाते हैं जो बाद में भूरे होकर आँख के आकार के हो जाते हैं तथा इनका रंग बैंगनी हो जाता है।

रोकथामः

इस रोग से बचाव के लिए मैंकोजेब नामक दवा 2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर 10 दिन के अन्तर पर छिड़काव करें। लहसुन के सभी रोगों व कीटों की रोकथाम में प्याज की भांति दवा के साथ घोल में 1.0 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से ट्राइट्रोन या सैन्डोविट चिपचिपा पदार्थ अवश्य मिलायें।

2. झुलसा रोग (*स्टैम्फीलियम ब्लाइट*) : इस रोग से प्रभावित पौधों की पत्तियाँ एक तरफ पीली तथा दूसरी तरफ हरी रहती हैं।

रोकथामः

मैंकोजेब नामक कवकनाशी का 2.5 ग्राम/डिफेनोकोनाजोल 1 मि.ली. दवा एक लीटर पानी में घोल बनाकर फसल पर छिड़काव करें। यदि आवश्यक हो तो 15 दिन के अन्तराल पर पुनः छिड़काव करें।

3. मृदुरोमिल फफूँदी (*डाउनी मिल्डयू*) : इस रोग में पत्तियों की सतह पर बैंगनी रोयेदार वृद्धि दिखाई देती है जो बाद में हरा रंग लिए पीली हो जाती हैं तथा अन्त में पत्तियाँ सूखकर गिर जाती हैं।

रोकथामः

मैंकोजेब की 2.5 ग्राम दवा एक लीटर पानी की दर से घोल बनाकर फसल पर छिड़काव करें। आवश्यकता पड़ने पर 10–15 दिन के अन्तराल पर पुनः छिड़काव करें।

4. लहसुन का विषाणु रोग

इस रोग में रंगबिरंगे चितकबरे धब्बे पत्तियों पर बनते हैं जो बाद में पूरी पत्ती पर लम्बाई में धारी के रुप में दिखाई देने लगते हैं। पत्तियाँ ऐंठ जाती हैं और पैदावार प्रभावित होती है।

रोकथामः

रोगग्रस्त पौधों को उखाड़कर जला देना चाहिए। प्रोफेनोफॉस 1.5 मिली दवा प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करने से इसकी रोकथाम की जा सकती है।

प्रमुख कीट एवं रोकथामः

थ्रिप्स : ये कीड़े छोटे और पीले रंग के होते हैं, जो पत्तियों का रस चूसते हैं। पत्तियों पर हल्के हरे रंग के लम्बे–लम्बे धब्बे दिखाई देते हैं जो बाद में सफेद हो जाते हैं। इस कीट की रोकथाम के लिए इमिडाक्लोप्रिड 0.3 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोलकर 10–15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करें।

प्याज

प्याज का प्रयोग सलाद के रूप में, कच्चे तथा पकाकर कई तरह से शाकाहारी एवं मांसाहारी भोजन बनाने में, अचार, पाउडर, फ्लेक्स जैसे अभिसंस्कृत रूप में होता है।

जलवायु एवं भूमि

प्याज ठंड़ी जलवायु वाली फसल है। इसकी फसल दिन की लम्बाई की अवधि से अधिक प्रभावित होती है। कंद निर्माण के समय अधिक तापमान और लम्बी प्रकाश वाली अवधि की आवश्यकता होती है। पौधे की बढ़वार के लिये 15–18^0 से. तापमान और कंद बनने के लिये 20–25^0 से. तापमान और कंद पकने के लिये 25–30^0 से. तापमान की आवश्यकता होती है। अतः उन्हीं किस्मों को उगाना चाहिए, जो उस क्षेत्र उनके लिए उपयुक्त हो।

प्याज की खेती के लिए प्रचुर मात्रा में जीवांश युक्त बलुई दोमट या दोमट मिट्टी उपयुक्त होती है।

उन्नतशील किस्में:

1. पूसा रेड : इस किस्म के कंद मध्यम आकार के, चपटे गोल, लाल, कम तीखे, टी.एस.एस 12–13 तथा अच्छी भण्डारण क्षमता वाले होते हैं। यह रोपण के उपरान्त 135–140 दिनों में पककर तैयार हो जाती है तथा इसकी पैदावार 30 टन प्रति हैक्टर आती है।

2. अर्ली ग्रैनो : इस प्रजाति के कंद बड़े, लम्बाई लिए हुए गोल, पीले, हल्के तीखे, सलाद हेतु अच्छे, रोपण के उपरान्त 95 दिनों में पूरा आकार पा लेते हैं तथा 115–120 दिनों में पककर तैयार हो जाते हैं। इसकी पैदावार 50 टन प्रति हैक्टर आती है।

3. पूसा रतनार : इस प्रजाति के कंद बड़े, गहरे लाल, गोलाकार चपटे, टी.एस.एस. 10 प्रतिशत, भण्डारण में मध्यम तथा रोपण के उपरान्त 120 दिनों में पककर तैयार हो जाते हैं तथा इनकी पैदावार 35 टन प्रति हैक्टर आती है।

4. पूसा व्हाइट फ्लैट : इस किस्म के कंद मध्यम से बड़े, गोलाकार, आकर्षक, सफेद रंग के, टी.एस.एस. 12–14 प्रतिशत, भण्डारण हेतु अच्छे तथा रोपण के उपरान्त 125–130 दिनों में परिपक्व हो जाते हैं। इनकी पैदावार 33 टन प्रति हैक्टर आती है।

5. पूसा व्हाइट राउन्ड : इस प्रजाति के कंद मध्यम आकार के, गोल, सफेद रंग, टी.एस.एस. 12–14 प्रतिशत, भण्डारण हेतु अच्छे व रोपण के उपरान्त 125–130 दिनों में परिपक्व हो जाते हैं। इसकी पैदावार 33 टन प्रति हैक्टर है।

बुवाई

उत्तरी भारत में खरीफ के मौसम में मध्य जून से जुलाई प्रथम सप्ताह तथा रबी के मौसम में नवम्बर प्रथम सप्ताह में बीज की बुवाई करते हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में प्याज की बुवाई रबी मौसम में सितम्बर–अक्टूबर तथा ग्रीष्म काल में नवम्बर –दिसम्बर में करते हैं। प्याज को उसके बीज या कंदों को बोकर उगाया जाता है। पौधशाला में बोने के लिए प्रति हैक्टर 8–10 कि.ग्रा. बीज रबी और 12–15 कि.ग्रा. बीज खरीफ की फसल के लिए पर्याप्त होता है। यदि इसकी बुवाई छोटे कंदों के द्वारा करनी है, तो उसके लिए लगभग 12 कुन्तल कंद एक हैक्टर के लिए पर्याप्त होते हैं। छोटे कंद खरीफ प्याज की बुवाई के लिए ही उपयुक्त होते हैं। प्याज की रोपाई में लाइन से लाइन की दूरी 15 से.मी. तथा पौध से पौध की दूरी 10 से.मी. रखते हैं।

खाद एवं उर्वरक

प्याज के लिए प्रति हैक्टर गोबर की खाद 20–25 टन, नत्रजन 100 कि.ग्रा., फॉस्फोरस 50 कि.ग्रा. और पोटाश 60 कि.ग्रा. की आवश्यकता पड़ती है। नत्रजन की एक तिहाई और फॉस्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा अन्तिम जुताई के समय देना चाहिए। नत्रजन की शेष मात्रा दो बराबर भागों में बांटकर बुवाई के 30 और 45 दिन बाद टॉप ड्रेसिंग के रुप में दें। प्याज में 25 कि.ग्रा. गन्धक प्रति हैक्टर डालना लाभदायक पाया गया है।

सिंचाई

सिंचाई भूमि तथा जलवायु के ऊपर निर्भर करती है। सामान्य रुप से प्याज को 10–15 सिंचाइयाँ की आवश्यकता होती है। प्याज एक उथली जड़ वाली फसल है अतः इसे हल्की सिंचाई, कम दिनों के अन्तर पर देने से अधिक लाभ होता है। सिंचाई की मुख्य आवश्यकता कंद निर्माण के समय होती है। रबी की फसल में अन्तिम सिंचाई खुदाई के 4–6 दिन पहले करनी चाहिए।

निराई गुड़ाई एवं खरपतवार नियंत्रण

पेन्डीमिथेलिन 3.5 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से घोल कर रोपाई के 3–4 दिन बाद छिड़काव करते हैं। इसके लगभग 6 सप्ताह बाद एक खुर्पी से खरपतवार निकाल देना चाहिए। इससे खरपतवार नष्ट हो जाते हैं।

खुदाई एवं उपज

हरी प्याज को खाने की अवस्था में जब छोटे–छोटे कंद बन जायें, उखाड़ कर बाजार में बेचने के लिए भेज दिये जाते हैं। यदि पके कन्दों के लिए फसल उगाई गई हो तो, कंदों की खुदाई उस समय करनी चाहिए जब पौधों के ऊपरी भाग कंद के ऊपर गिर जायें। साधारणतया कंद 25–30 टन प्रति हैक्टर की दर से प्राप्त हो जाते हैं। प्याज के कंदों को भली भाँति छायादार स्थान पर सुखाने के उपरान्त हवादार कमरों में फैलाकर रखना चाहिए। भण्डारण से पूर्व कटे–फटे व रोगी कन्दों को निकाल देना चाहिए। भण्डार गृह से सड़े कन्दों को हर सप्ताह निकालते रहना चाहिए।

प्रमुख रोग एवं रोकथाम

1. आर्द्रगलन (*डैम्पिंग ऑफ*) : प्रभावित पत्तियों और तनों पर छोटे–छोटे गुलाबी रंग के धब्बे पड़ जाते हैं। प्याज की गांठे भण्डार गृह में सड़ने लगती हैं।

रोकथाम

इस रोग से बचाव के लिए मैंकोजेब 2.5 ग्राम दवा प्रति लीटर पानी में घोलकर 10 दिन के अन्तर पर छिड़काव करें। प्याज के सभी रोगों व कीटों की रोकथाम में दवा के साथ घोल में 1.0 मि.ली. ट्राइट्रोन या सैन्डोविट चिपचिपा पदार्थ प्रति लीटर पानी की दर से अवश्य मिलायें।

2. झुलसा रोग (*स्टैम्फीलियम ब्लाइट*) : पौधों की पत्तियाँ एक तरफ पीली तथा दूसरी तरफ हरी रहती हैं।

रोकथाम

इसकी रोकथाम हेतु मैंकोजेब नामक /डिफेनोकोनाजोल 1 एम.एल. कवकनाशी 2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर फसल पर छिड़काव करें। यदि आवश्यक हो तो 15 दिन के अन्तराल पर पुनः छिड़काव करें।

3. मृदुरोमिल फफूँदी (*डाउनी मिल्ड्यू*) : इस रोग में पत्तियों तथा पुष्प वृन्तों की सतह पर बैंगनी रोयेदार वृद्धि होती है जो बाद में हरा रंग लिए पीली हो जाती है तथा अन्त में पत्तियाँ व पुष्पवृन्त सूख कर गिर जाते हैं।

रोकथाम

मैंकोजेब 2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर फसल पर छिड़काव करें। यदि आवश्यक हो तो 15 दिन के अन्तराल पर पुनः छिड़काव करें।

प्रमुख कीट एवं रोकथाम

1. प्याज का थ्रिप्स : ये कीड़े छोटे और पीले रंग के होते हैं, जो पत्तियों का रस चूसते हैं। पत्तियों पर हल्के हरे रंग के लंबे–लंबे धब्बे दिखाई देते हैं जो बाद में सफेद हो जाते हैं। इसकी रोकथाम के लिए इमिडाक्लोप्रिड 0.3 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोलकर 10–15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करें।

हल्दी

हल्दी को उबालने के पश्चात् सुखाये व पॉलिश किए गए प्रकन्द को मसाले की तरह उपयोग करते हैं। हल्दी की बहुत कम मात्रा ही भोजन को स्वादिष्ट व रंग देने में सहायक है, साथ ही यह भोजन को सुरक्षित रखने की अवधि को भी बढ़ाती है।

जलवायु एवं मृमि

हल्दी की सफल खेती के लिए गर्म जलवायु एवं भली–भाँति वितरित 2500–4000 मि.मी. वर्षा की आवश्यकता होती है। इसके जमाव के लिए 30–35° सें., प्रकन्द बनते समय 20–25° सें. तथा प्रकन्द पकते समय 18–20° सें. तापमान की आवश्यकता होती है। कटाई से तीन सप्ताह पूर्व वर्षा न होने से प्रकन्दों की संरक्षण क्षमता में वृद्धि होती है।

हल्दी की खेती हल्की दोमट से भारी दोमट भूमि में की जा सकती है। अच्छे जल निकास वाली, भुरभुरी, अधिक जीवांश युक्त बलुई दोमट भूमि इसकी खेती हेतु उत्तम मानी गयी है। मिट्टी सतह से 15–20 से.मी. गहराई तक भुरभुरी होनी चाहिए ताकि प्रकन्दों का विकास भली–भाँति हो सके। क्षारीय भूमि हल्दी की खेती के लिए उपयुक्त नहीं होती है। इसकी फसल पानी के जमाव के लिए बहुत संवेदनशील है।

उन्नतशील किस्में

1. **सुवर्णा** : यह किस्म जल्दी पकने वाली (200 दिन में) है, जो 17.4 टन प्रति हैक्टर उपज देती है।

2. **सुदर्शन** : यह किस्म शीघ्र (190 दिन) तैयार होने वाली है तथा 28.3 टन प्रति हैक्टर उपज देती है।
3. **प्रभा** : इस किस्म की फसल अवधि 200 दिन है जो प्रति हैक्टर 37.47 टन उपज देती है।
4. **राजेन्द्र सोनिया** : इस किस्म की फसल 225 दिन में तैयार हो जाती है तथा 48 टन प्रति हैक्टर उपज देती है। यह किस्म पत्ती धब्बा रोग हेतु रोगरोधी है।
5. **सुगन्धम** : इस किस्म की फसल पकने में 210 दिन लेती है तथा प्रति हैक्टर 15 टन उपज देती है।
6. **पंत पीताभ** : यह किस्म भी 210 दिन में तैयार हो जाती है तथा 25 टन प्रति हैक्टर उपज देती है। इस किस्म के प्रकन्द बड़े व आकर्षक होते हैं।

बुवाई

सामान्यतः हल्दी की फसल की बुवाई अप्रैल–मई माह में करते हैं। एक हैक्टर खेत के लिए 18–20 कुन्तल प्रकन्दों की आवश्यकता होती है। हल्दी की फसल में लाइन से लाइन की दूरी 30–40 से.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 20 से.मी. रखते हैं।

खाद एवं उर्वरक

सामान्यतः 30–40 टन प्रति हैक्टर सड़ी गोबर की खाद तथा 120 कि.ग्रा. नत्रजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस व 60 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर देने पर फसल से अच्छी उपज मिलती है। नत्रजन की आधी व फॉस्फोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा अन्तिम जुताई के समय खेत में मिला देनी चाहिए। नत्रजन की शेष आधी मात्रा दो बराबर भागों में बुवाई के 45 तथा 90 दिन बाद देनी चाहिए। यह पाया गया है कि छाँव में उगाने पर हल्दी की फसल को लगभग 20 प्रतिशत अधिक खाद व उर्वरक की आवश्यकता होती है।

पलवार बिछाना तथा पौधों को छाया देना

बुवाई के तुरन्त बाद 125–150 कुन्तल प्रति हैक्टर सूखी पत्तियों की पलवार बिछानी चाहिए। पलवार बिछाने से बीज का अंकुरण शीघ्रता से होता है, जिससे प्रकन्दों की उपज में बढ़ोतरी होती है। दूसरी तथा तीसरी बार पलवार 50–60 कुन्तल प्रति हैक्टर की दर से बुवाई के 45 तथा 90 दिन बाद बिछानी चाहिए।

हल्दी एक छाया पसन्द करने वाला पौधा है, अतः इसे अन्तःफसल में सफलतापूर्वक ले सकते हैं। पौधों को 50 प्रतिशत छाया देने से सबसे अधिक उपज प्राप्त होती है।

अन्तः सस्य क्रियाएँ

खरपतवार निकालने व खाद देने के बाद पौधे के आस–पास मिट्टी चढ़ाना जरूरी है ताकि प्रकन्दों का विकास भली–भाँति हो सके तथा वे सूर्य के प्रकाश से बचे रहें। एकवर्षीय घास तथा चौड़ी पत्तियों वाली खरपतवार को नष्ट करने के लिए खरपतवार उगने से पहले फ्लूक्लोरेलिन 1.0–1.5 कि.ग्रा. या पेन्डीमिथेलिन 1.0–1.5 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर का छिड़काव 500–600 लीटर पानी में घोल बनाकर करें। परन्तु यदि पलवार भली–भाँति बिछायी जाए तो खरपतवार की अधिक समस्या नहीं आती है।

सिंचाई

सिंचाई की आवश्यकता, भूमि के नमूने तथा तापमान पर निर्भर करती है। सामान्यतः जब पानी की कमी लगे, सिंचाई करनी चाहिए। गर्मियों के दिनों में 10–15 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करनी चाहिए तथा बरसात के दिनों में जब आवश्यकता हो, सिंचाई करनी चाहिए। बुवाई के 90 तथा 135 दिन बाद, प्रकन्द के बनने तथा विकास के समय भूमि में आवश्यक नमी जरूरी है। कटाई के 3–4 दिन पूर्व हल्की सिंचाई करने से फसल कटाई में आसानी होती है।

कटाई तथा उपज

फसल सामान्यतया बुवाई के लगभग 8 से 9 माह बाद परिपक्व हो जाती है। हल्दी की पत्तियाँ जब पीली पड़कर सूखने लगें तो फसल पक कर तैयार हो जाती है। फसल पकने पर पत्तियों को भूमि के पास से काट देते हैं तथा प्रकन्दों को जमीन से निकाल लेते हैं। प्रकन्दों को सुरक्षित करने (curing) से पूर्व मातृ प्रकन्दों को अन्य भागों (fingers) से अलग कर लेते हैं। ऐसे प्रकन्द जिनमें जड़ें न निकली हों उन्हें छाँव में ढेर बनाकर 2 से 3 दिन के लिए रखते हैं ताकि उनकी बाहरी सतह कठोर हो जाए और वे चोट आदि सहन कर सकें।

सामान्यतः ताजी हल्दी की उपज 150–250 कुन्तल प्रति हैक्टर आती है जो कि सुरक्षित अवस्था में

(cured turmeric) 40–60 कुन्तल प्रति हैक्टर निकलती है।

प्रमुख रोग एवं रोकथाम

1. पर्ण चित्ती (Leaf spot) : सामान्यतः यह बीमारी अगस्त तथा सितम्बर में आती है जब वातावरण में लगातार नमी हो। इसमें पत्तियों पर भूरे धब्बे दिखाई देते हैं।

रोग प्रबन्ध

1. बीज हेतु रोगमुक्त प्रकन्दों का चयन करें।
2. प्रकन्दों को बुवाई से पूर्व मैंकोजेब 3 ग्राम प्रति लीटर पानी या कार्बेंडाजिम 1 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से 30 मिनट तक उपचारित करने के बाद छाया में सुखाएँ।
3. रोगी पत्तियों को इकट्ठा करके जला दें।
4. मैंकोजेब 2.5 ग्राम या कार्बेंडाजिम 1 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से 15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करें।
5. 3 से 5 वर्ष का फसल चक्र अपनाएं।

2. पर्ण धब्बा रोग (Leaf blotch disease) : सामान्यतः यह रोग अक्टूबर तथा नवम्बर माह में निचली पत्तियों पर आता है और फसल को काफी नुकसान पहुँचाता है। इस रोग में पत्तियों की दोनों सतहों पर कई पीले धब्बे बन जाते हैं। ये धब्बे पत्तियों की ऊपरी सतह पर अधिक होते हैं। रोगी पत्तियाँ ऐंठ जाती हैं और भूरे लाल रंग की हो जाती है और बाद में गिरने लगती हैं।

रोग प्रबंध

1. रोग मुक्त प्रकन्दों का चयन बीज हेतु करें।
2. प्रकन्दों को बुवाई से पूर्व मैंकोजेब 3 ग्राम प्रति लीटर या कार्बेंडाजिम 1 ग्राम/लीटर पानी की दर से 30 मिनट तक उपचारित करके छाया में सुखाएं।
3. रोगी पत्तियों को इकट्ठा कर जला दें।
4. मैंकोजेब 2.5 ग्राम/लीटर या कार्बेंडाजिम 1 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से 15 दिन के अन्तराल पर दो या तीन बार छिड़काव करें।
5. तीन से पाँच वर्ष का फसल चक्र अपनाएं।

3. मृदु गलन/प्रकन्द गलन (Rhizome rot or soft rot) : यह पीथियम नामक कवक की कई प्रजातियों द्वारा होता है। मृदा व प्रकन्द जनित इस रोग में पत्तियों के किनारे पीले पड़ कर सूख जाते हैं। तने का भूमि से सटा भाग नरम होकर गलने लगता है फलस्वरूप पौधा मर जाता है। तना खींचने पर आसानी से उखड़ जाता है। सड़न तने से होती हुई प्रकन्द तक जाती है, फलस्वरूप वे भी सड़ने लगते हैं। इस रोग से फसल तीन महीने की अवस्था पर सबसे अधिक प्रभावित होती है।

रोग प्रबन्ध

1. बीज के लिए उपयोग किए जाने वाले प्रकन्दों को मेटालैक्सिल 3 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर 30 मिनट तक उपचारित करें। इसके बाद ही प्रकन्दों को भन्डारण अथवा बुवाई हेतु उपयोग में लाएं।
2. प्रभावित रोगी पौधों को निकालने तथा उस स्थान को मैंकोजेब से धोने से रोग का फैलाव कम होता है।
3. जैविक खादों जैसे नीम की खली तथा मूँगफली की खली के प्रयोग से व जैविक कीटनाशी जैसे ट्राइकोडर्मा आदि के प्रयोग से रोग में कमी आती है।

प्रमुख कीट एवं रोकथाम

1. प्रकन्द बेधक कीट : यह हल्दी की फसल को नुकसान पहुँचाने वाला प्रमुख कीट है। इसकी इल्ली तने में घुसकर मृत ऊतक बनाती है। इसका प्रौढ़ कीट गुलाबी–पीले रंग का तथा पंखों पर काली धारियों वाला होता है। यह पत्तियों तथा पौधे के अन्य कोमल भागों में अंडे देता है। इसकी सूँड़ी लाल भूरे रंग की तथा पूरे शरीर पर काले धब्बे लिए होती है। इस कीट की उपस्थिति तनों पर छिद्र तथा उसमें से निकलती कीट की गन्दगी व मृत भागों से होती है।

इस कीट की रोकथाम के लिए क्लोरपाइरीफॉस नामक दवा की 4.0 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर बुवाई से पूर्व शोधित करें।

2. पत्ती लपेटक कीट (Leaf roller) : इसकी सूँड़ी मुड़ी पत्तियों के बीच में घुसकर उन्हें खाती है और वहीं अंडे देती है। इसकी रोकथाम के लिए क्वीनालफॉस नामक दवा की 2 मि.ली. मात्रा 1 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

अदरक

अदरक को मुख्यतः कई तरह के मसालों के मिश्रण के अवयव, खाद्य संसाधन तथा शराब व्यवसाय में उपयोग किया जाता है। यह करी पाउडर का अवयव है जिसका अदरक के ब्रेड, बिस्कुट, केक, पुडिंग, सूप, अचार तथा कार्बोनेटेड पेय बनाने में उपयोग किया जाता है। यह एक प्रसिद्ध प्राकृतिक रक्षक तथा मीट को नरम करने वाला पदार्थ है।

अदरक वायु विकार हटाने वाला तथा ऑतों की क्रियाशीलता को बढाने वाला है। वाह्य रूप में इसका उपयोग त्वचा को स्वस्थ रखने में करते हैं।

जलवायु तथा भूमि

अदरक के व्यावसायिक उत्पादन हेतु उष्णकटिबन्धीय तथा समशीतोष्ण नम जलवायु की आवश्यकता होती है। इसकी खेती समुद्रतल से 1500 मीटर ऊँचाई तक की जाती है। पौधे के विकास के समय 8–10 महीने के लिए अच्छी तरह वितरित वर्षा (1500 से 3000 मि.मी.) तथा भूमि की तैयारी व कटाई से पूर्व सूखा मौसम फसल की वृद्धि व अधिक उपज के लिए अच्छा रहता है। अदरक की फसल के लिए उचित तापमान 19–28 डिग्री सेन्टीग्रेट है। 32 डिग्री सेन्टीग्रेट से अधिक तापमान होने पर पौधे गर्मी से झुलस जाते हैं तथा कम तापमान से डॉरमेन्सी (निद्रितावस्था) आती है। अदरक के पौधे हल्के छायादार स्थान में अच्छी तरह पनपते हैं। अतः इसकी खेती अन्तःफसल की तरह करते हैं।

अदरक की खेती कई तरह की भूमि में की जा सकती है परन्तु अच्छे जल निकास व उर्वरता वाली दोमट, भुरभुरी, कम से कम 30 सेमी गहराई वाली मिट्टी सर्वोत्तम है। यह फसल पानी के जमाव, पाले व लवणीय भूमि के लिए संवेदनशील तथा हवा व सूखे के लिए सहिष्णु है। ढलान वाले पहाड़ी इलाकों के लिए यह उपयुक्त नहीं है क्योंकि तेज वर्षा में भू–क्षरण का खतरा रहता है।

उन्नत किस्में

नादिया : यह अधिक उपज वाली किस्म है तथा इसकी खेती भारत में अदरक उगाये जाने वाले सभी इलाकों में की जाती है। इसके हरे अदरक की उपज लगभग 19 टन प्रति हैक्टर आती है।

रियो–डी–जेनेरो : यह विदेशी किस्म भारत के कई अदरक उगाये जाने वाले इलाकों में भली–भॉति अनुकूलित हो गयी है। इसमें ओलिओरेजिन की मात्रा अधिक होती है परन्तु यह किस्म मृदु विगलन बीमारी के लिए सुग्राही है।

सुप्रभा : यह किस्म 229 दिन में पककर तैयार हो जाती है तथा इसकी औसत उपज 16.6 टन प्रति हैक्टर है। इस किस्म में शुष्क भाग (Dry recovery) 20.5 प्रतिशत, रेशे की मात्रा 4.4 प्रतिशत तथा वाष्पशील तेल 1.9 प्रतिशत पाया जाता है।

सुरूचि : यह किस्म 218 दिन में पककर तैयार हो जाती है तथा इसकी औसत उपज 11.6 टन प्रति हैक्टर है। इस किस्म में शुष्क भाग 23.5 प्रतिशत, रेशा 3.8 प्रतिशत तथा वाष्पशील तेल 2.0 प्रतिशत पाया जाता है।

सुरभि : यह किस्म 225 दिन में पककर तैयार हो जाती है तथा इसकी औसत उपज 17.5 टन प्रति हैक्टर है। इस किस्म में शुष्क भाग 23 प्रतिशत, रेशा 4.0 प्रतिशत तथा वाष्पशील तेल 2.1 प्रतिशत होता है।

वरद : इस किस्म की औसत उपज 22.5 टन प्रति हैक्टर है तथा परिपक्वता अवधि 200 दिन है। इस किस्म में शुष्क मात्रा 20.7 प्रतिशत होता है।

बुवाई

अदरक की बुवाई अप्रैल/मई माह में की जाती है। बुवाई के समय खेत में पर्याप्त नमी होना आवश्यक है। बुवाई के लिए रोगमुक्त प्रकन्दों के भाग जिन्हें बिट्स कहते हैं, का चुनाव करना चाहिए। बिट्स 2–5 से.मी. लम्बे, 15–20 ग्राम भार के व कम से कम एक जीवित कलिका युक्त होने चाहिए। प्रति हैक्टर 15–18 कुन्तल प्रकन्द की आवश्यकता होती है। बुवाई से पहले प्रकन्दों को 2 ग्राम कार्बेंडाजिम या 3 ग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराइड प्रति लीटर पानी के घोल में 15–20 मिनट तक उपचारित करके छायादार स्थान में सुखाने के बाद बुवाई करनी चाहिए। बुवाई मेंड़ पर 30–40 से.मी. लाइन से लाइन तथा 30 से.मी. प्रकन्द से प्रकन्द की दूरी पर 5–10 से.मी. की गहराई पर की जानी चाहिए। बुवाई के समय प्रकन्दों को मिट्टी से ढकने के बाद पलवार से ढकना आवश्यक है। पलवार

की मोटाई 5 से 7 से.मी. होनी चाहिए जिससे कि सूर्य का प्रकाश मिट्टी की सतह तक न पहुँच सके।

खाद एवं उर्वरक

बुवाई से तीन सप्ताह पूर्व 25–30 टन सड़ी गोबर की खाद खेत में मिलानी चाहिए। इसके अतिरिक्त फसल को 100–120 कि.ग्रा. नत्रजन, 75–80 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 100–120 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर की आवश्यकता होती है। नत्रजन की आधी मात्रा तथा फॉस्फोरस व पोटाशिक उर्वरकों की पूरी मात्रा अन्तिम जुताई के समय खेत में मिलानी चाहिए। नत्रजन की शेष आधी मात्रा टॉप–ड्रेसिंग के रूप में, दो बराबर भागों में बुवाई के 45 तथा 90 दिन बाद दें।

छॉव तथा पलवार बिछाना

अदरक की खेती खुले वातावरण की अपेक्षा 25–50 प्रतिशत आंशिक छॉव में करने पर गुणवत्ता व उपज में वृद्धि होती है। अदरक और मक्का की एक–एक लाइन लेकर खेती करने पर अदरक और मक्का दोनों की ही अच्छी उपज मिलती है। अदरक की खेती में कार्बनिक पलवार बिछाने से काफी लाभ होता है। पेड़ों की पत्तियाँ, गन्ने की सूखी पत्तियाँ, स्थानीय उपलब्ध पत्ती तथा खरपतवार, धान की पुआल आदि पलवार के रूप में प्रयोग की जा सकती हैं। पलवार बिछाने से अंकुरण में बढ़ोत्तरी होती है, पानी भूमि में अच्छी तरह नीचे जाता है, मिट्टी के कार्बनिक तत्व बढ़ते हैं, भूमि में नमी बनी रहती है, खरपतवार नहीं उगते तथा भारी वर्षा से भूमि का कटाव कम होता है। इसके अलावा यह सूक्ष्म जीवों की क्रियाशीलता तथा भूमि की उर्वरता को बढ़ाते हैं।

सिंचाई

कम वर्षा वाले इलाकों में बुवाई के तुरन्त बाद सिंचाई करने से अंकुरण शीघ्र होता है। सूखे मौसम (मध्य सितम्बर से मध्य नवम्बर तक) में प्रकन्दों की अधिक उपज व बेहतर गुणवत्ता के लिए 15 दिन के अन्तराल पर सिंचाई की आवश्यकता होती है। ऐसी मृदा में, जिसमें जल रोकने की क्षमता कम हो, बार–बार सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। कटाई से 5–6 दिन पूर्व हल्की सिंचाई करने से प्रकन्द मिट्टी से जल्दी निकलते हैं तथा कम टूटते हैं।

निराई गुड़ाई एवं खरपतवार नियंत्रण

पलवार बिछाने से खरपतवार दब जाते हैं। सामान्यतः अदरक की फसल में दो–तीन निराईयों की जरूरत पड़ती है। पहली निराई बुवाई के 30 दिन बाद करनी चाहिए, दूसरी तथा तीसरी निराई 45 व 60 दिन के अन्तराल पर करनी चाहिए। इसके बाद मेड़ों पर मिट्टी चढ़ा देनी चाहिए।

कटाई तथा उपज

कोमल प्रकंदों, जिन्हें हरा अदरक, अचार, मुरब्बा, कैंडी, शीतल पेय आदि बनाने में उपयोग करते हैं, की कटाई बुवाई के पॉच महीने बाद करते हैं।

सूखी अदरक हेतु फसल पकने के पैमाने हैं – पत्तियों का मुड़ना, पीला होना व टूटना तथा साथ में तने का सूखना और गिर जाना। यह अवधि बुवाई के 8–9 महीने बाद आती है तथा इस समय निकले प्रकन्द अधिक रेशेयुक्त व तीखे स्वाद वाले होते हैं।

सामान्यतः अदरक की उपज 12–15 टन प्रति हैक्टर आती है।

प्रमुख रोग एवं रोकथाम

1. प्रकन्द विगलन : रोग के लक्षण प्रायः अगस्त सितम्बर के महीने में दिखाई देने लगते हैं। रोगी पत्तियों का शीर्ष भाग पीला हो जाता है और कुछ समय में पूरी पत्ती पीली पड़कर झुक जाती है। इस रोग का प्रारम्भिक संक्रमण रोगी प्रकंदों को बीज के रूप में प्रयोग करने से तथा स्वस्थ प्रकंदों को रोगयुक्त क्षेत्रों में लगाने से होता है। रोग का फैलाव खेतों में हवा, वर्षा तथा सिंचाई के जल व कृषि यंत्रों द्वारा होता है। अधिक नमी वाले क्षेत्रों में रोग के फैलने की संभावना बढ़ जाती है।

रोकथाम

1. प्रकंदों को बोते समय मैंकोजेब, मेटालैक्सिल 2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर उसमें 5–10 मिनट उपचारित करने के बाद छॉव में अच्छी तरह सुखाकर बोना चाहिए।
2. ऊपर लिखे कवकनाशी का घोल बनाकर खड़ी फसल में छिड़काव करना चाहिए। पहला छिड़काव बुवाई के एक माह बाद या पौधे निकलने के बाद करना चाहिए। इसके बाद 10–15 दिनों के अंतराल पर 4–5 बार छिड़काव करने चाहिए। छिड़काव

के समय ध्यान देना चाहिए कि कवकनाशी पौधे के तने के पास जमीन की सतह पर अवश्य पड़े।

2. जीवाणुज म्लानि : रोग का फैलाव खेत में सिंचाई के पानी व कृषि यंत्रों द्वारा होता है। यह रोग पानी की अधिकता वाले स्थानों में अधिक लगता है।

इस रोग का मुख्य लक्षण पत्तियों का पीला होना, ढीला पड़ना और अन्त में सूख जाना है। रोग की तीव्रता में जमीन की सतह के पास तने पर जलीय धारियॉ या धब्बे बन जाते हैं। रोगी तने को उखाड़ने पर वह आसानी से प्रकन्द से अलग हो जाता है। ऐसे पौधे का भीतरी भाग भूरे या काले रंग का होता है। यदि रोगी पौधे के तने या प्रकन्द को काटकर थोड़े समय के लिए छोड़ दिया जाय तो उसमें से सफेद रंग का लसलसा पदार्थ निकलता है। रोगी प्रकंद का भीतरी भाग जलीय तथा मुलायम हो जाता है। ऐसे प्रकन्द सड़ने लगते हैं और उनमें से एक प्रकार की दुर्गन्ध आती है। ऐसे प्रकन्द बीज के लिए बेकार हो जाते हैं।

रोकथाम

प्रकन्दों का उपचार 3 ग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराइड प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर उसमें 30 मिनट तक डुबोकर करना चाहिए या स्यूडोमोनास क्लोरेसेन्स 6–10 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर 90 मिनट तक डुबोकर करना चाहिए। उपचारित प्रकन्दों को छाया में सुखाने के बाद ही खेत में लगाना चाहिए।

3. प्रकन्द का शुष्क विगलन : यह रोग भण्डारण के दौरान और अदरक के पकते समय खेत में अधिक होता है। रोगी पौधों की पत्तियाँ पीली हो जाती हैं। बाद में पूरा पौधा झुलसा हुआ दिखाई देता है। रोगी प्रकन्द का भीतरी भाग काले रंग का हो जाता है। रोगी ऊतक काले चूर्ण में बदल जाते हैं तथा रोग की तीव्रता में प्रकन्द सिकुड़कर सूख जाता है। रोग का फैलाव हवा व पानी द्वारा होता है।

रोग प्रबन्ध

1. कार्बेंडाजिम 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर उसमें कम से कम 20–30 मिनट तक डुबोकर प्रकन्दों का उपचार करना चाहिए। उपचारित प्रकन्दों को छाया में सुखाकर बोने के काम में लाना चाहिए।
2. प्रकन्दों का भंडारण हवादार व अच्छे भंडारगृह में करना चाहिए तथा भंडारण से पहले फॉर्मेलीन से भंडारगृहों को उपचारित कर लेना चाहिए।
3. प्रकन्दों की खुदाई करते समय सावधानी बरतनी चाहिए कि उनमें खरोंच और घाव न लगे। प्रकन्दों को अच्छी तरह साफ करके और उन पर उपस्थित नमी को सुखाकर ही भंडारण करना चाहिए। प्रकन्दों का बड़ा ढेर बनाकर भंडारण न किया जाए क्योंकि इससे हवा का आवागमन रूक जाता है।
4. प्रकन्दों का भंडारण 20 डिग्री सेन्टीग्रेट तापमान पर करने से सड़न कम होती है तथा प्रकन्दों का अंकुरण भी अच्छा होता है।

4. पर्ण दाग : इस रोग के प्रारंभ में पत्तियों पर छोटे पीले अण्डाकार या लम्बे आकार के दाग बनते हैं। बाद में दागों का आकार बढ़ जाता है और वे सफेद हो जाते हैं। उनके किनारे का हिस्सा गाढ़ा भूरा होता है। रोग की तीव्रता में पत्तियॉ पीली व बदरंग हो जाती हैं जो दूर से झुलसी हुई प्रतीत होती हैं। इस रोग से प्रकन्दों की उपज में भारी कमी आती है क्योंकि इससे पर्णहरित तथा ऊतकों की क्षति होती है।

रोकथाम

इस रोग की रोकथाम हेतु मैंकोजेब 3 ग्राम प्रति लीटर पानी या कार्बेंडाजिम 2 ग्राम प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें।

प्रमुख कीट एवं रोकथाम

तना छेदक : यह कीट उगती हुई कलिका तथा पत्ती की डंठल में अण्डे देता है। इसकी इल्ली अण्डे से निकलने के बाद मुख्य तने के भीतर के ऊतक को खाती है जिसके कारण तने सूख जाते हैं। बाद में यह प्रकन्दों को भी प्रभावित करती है। यह कीट सितम्बर–अक्टूबर में सबसे अधिक संख्या में होते हैं।

रोकथाम :

1. क्वीनालफॉस का 2 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोल का छिड़काव इस कीट की रोकथाम हेतु प्रभावी है।

सम्पर्क सूत्र : 7055621244

☑

उष्ण एवं उपोष्ण फलोत्पादन प्रबन्धन एवं महत्वपूर्ण तकनीक

डा. अशोक कुमार सिंह

बाग का अप्रत्यक्ष रूप से मनुष्य के जीवन से सीधा सम्बध है। सन्तुलित आहार के लिए मनुष्य के भोजन में फलों का होना बहुत ही आवश्यक है क्योंकि फलों में विटाामिन, लवण, पेक्टिन, सल्यूलोज तथा अन्य पोषक तत्व प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। इस समय भारत वर्ष में फलों के अन्तर्गत कुल क्षेत्रफल लगभग 6.50 मिलियन हैक्टर तथा उत्पादन लगभग 97.36 मिलियन टन है। फलों का यह क्षेत्रफल तथा उत्पादन भारतवर्ष की जनसंख्या एवं फलों की महत्ता को देखते हुए बहुत कम है। भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद के संस्तुति के हिसाब से प्रति व्यक्ति के लिए 140 ग्राम फल प्रति दिन आवश्यक है जब कि भारतवर्ष में इस समय इसकी उपलब्धता लगभग 85 ग्राम/व्यक्ति/दिन है। फलों की महत्ता को देखते हुए भारतवर्ष में व्यावसायिक फलोत्पादन हेतु उचित प्रबन्धन की नितान्त आवश्यकता है तथा अच्छी उत्पादकता हेतु महत्वपूर्ण तकनीक को अपनाना भी समय की मांग है। अतः व्यावसायिक फल उत्पादन हेतु प्रबन्धन एवं महत्वपूर्ण तकनीकियों के बारे में विस्तृत जानकारी निम्नवत् है :

1. उन्नतशील प्रजातियों का प्रयोगः किसी भी बाग की सफलता अच्छे तथा सही किस्म के पौधों पर निर्भर करती है। ऐसे पौध हमे किसी अच्छी नर्सरी से ही प्राप्त हो सकते हैं। अधिकांश बागवान बाग लगाने के लिए पौधे किसी भी पौधशाला से खरीद लेते हैं जो कि उतनी अच्छी गुणवत्ता वाले नहीं होते, जितना कि नर्सरी में खरीदते समय बताया जाता है। अतः पौधे खरीदने से पूर्व इस बात की पूरी गारन्टी होनी चाहिए कि सांकुर डाली के लिए चुना गया भाग संक्रामक रोगों से मुक्त, स्वस्थ एवं अच्छी किस्म के पौध से लिया गया हो। कुछ पौधशालाएं उपरोक्त बातों का ध्यान न रखकर निम्न श्रेणी के पौधे तैयार कर उनका विक्रय कर देती हैं। अतः किसी विश्वसनीय स्त्रोत/पौधशाला से ही पौध खरीदें। ये स्त्रोत समीपस्थ कृषि विश्वविद्यालय या कृषि महाविद्यालय, कृषि अनुसंधान केन्द्र, सरकारी उद्यान विभाग, उद्यान पौधशाला, राजकीय पौधशाला या विश्वसनीय निजी पौधशाला हो सकते हैं। विभिन्न फलों की मुख्य प्रजातियाँ, उनके पकने के समय एवं क्षेत्र के अनुसार सारणी 1 में दी गयी है।

सारणी 1 : विभिन्न फल वृक्षों की मुख्य प्रजातियाँ :

फल का नाम	मुख्य प्रजातियाँ
आम	**मैदानी क्षेत्रों के लिए अगेती** : बम्बई ग्रीन, गौरजीत, पंत सिंदूरी
	मध्य : लखनऊ सफेदा, दशहरी, लंगड़ा, मल्लिका, पूसा श्रेष्ट, पूसा लालिमा, अरूनिका
	पछेती : फजली, आम्रपाली, चौसा
	घाटी के लिए : दशहरी, बंम्बई ग्रीन, लंगड़ा, पंत चन्द्रा
	अचार वाली किस्म : रामकेला, केतकी, बथुई चेलेन्जर
	निर्यात के लिए : अरूनिका, केसर, पूसा अरूनिमा, हुस्नारा
अमरूद सफेदा,	पंत प्रभात, इलाहाबाद सफेदा, सरदार, रेड फ्लेस, श्वेता, इलाहाबाद सुर्खा, हिसार हिसार सुर्खा, अरका किरन, धवल, लालिमा
लीची	**पर्वतीय क्षेत्र** : रोज सेन्टेड
	मैदानी एवं भावर : रोज सेन्टेड, लेट बेदाना, कलकतिया, चाइना
	अन्य किस्म : स्वर्णरूपा, मधु

कटहल	पंत गरिमा, पंत महिमा, रूद्राक्षी, सिंगापुर
केला	ग्रेड नेने, हरीछाल (रोबस्टा), डवार्फ कावेंडिस, पूवन, निपुवल, हिल बनाना, नेन्नद्रन
नीबू वर्गीय फल	**पर्वतीय क्षेत्र के लिए सन्तरा** : नागपुर, श्रीनगर, हिल संतरा, किन्नों
	माल्टा : हैमलीन, वैलेसियालेट, कामन माल्टा
	लेमन : पंत लेमन 1, पहाड़ी नीबू, इटैलियन लेमन
	कागजी नीबू : विक्रम (घाटी क्षेत्र),
	मैदानी एवं भावर : पंत लेमन 1, कागजी नीबू
पपीता	पंत पपीता 1, पूसा नन्हा, पूसा डवार्फ, पूसा डेलीशियस, पूसा मेजेस्टी, फार्म सलेक्शन–1, सूर्या
आंवला	पंत आवला, बनारसी, हाथीझूल (फ्रांसिस), बलवन्त, भवानी सागर, चकईया, कृष्णा, कंचन, लक्ष्मी 52
बेर	उमरान, बनारसी, कड़ाका, दनदन, सनौर–2, कैथली, सेब (एप्पल बेर)
करौंदा	पंत मनोहर, पंत सुदर्शन, पंत सुवर्णा
चीकू	छतरी, काली पट्टी, क्रिकेट बाल, पी. के. एम. 1, पी. के. एम. 2, कोयम्बटूर 1, कोयम्बटूर 2
बेल	पंत शिवानी, पंत अपर्णा, पंत सुजाता, पंत उर्वशी, सी.आई.एस.एच.बी. 1 एवं सी.आई.एस. एच.बी. 2, एन.बी. 1, एन. बी. 5
अनार	गणेश, धोलका, अलॉडी, पेपर शैल, स्पेनिश रूबी, मृदुला, रूबी, भगवा
अंगूर	पूसा नवरंग, फ्लेम सीडलैस, एआरआई–516, परलेट, गुलाबी हिमरौड, ब्यूटी सीडलैस, अर्कावती, अर्का कंचन, अर्का श्याम, अर्का हंस, पूसा उर्वशी
स्ट्राबेरी	चौबटिया अभिचल, कटरायन स्वाट, एलवटीन, रेडफोट, रोबिन्सन, चाण्डलर

फल वृक्षों के लिए परागद किस्मों का चयन : फलोत्पादन में परागद एवं परागकर्ता की भी समुचित व्यवस्था होनी चाहिए। कुछ फलों (जैसे आंवला, नाशपाती, प्लम) की किस्मों में स्वयं–बन्ध्यता होने के कारण परागण की क्रिया ठीक तरह नहीं हो पाती है, जिससे फलत पर बुरा प्रभाव पड़ता है। परागण को ठीक करने के लिए मुख्य किस्मों के फल वृक्षों के बीच–बीच परागद वाली किस्मों को इस प्रकार लगाना चाहिए, जिससे सभी वृक्षों में परागण ठीक तरह से हो जाये। पपीता उद्यान में 10 प्रतिशत नर पौधे रहना आवश्यक हैं। आम की दशहरी किस्म के लिए बॉम्बे ग्रीन तथा लंगड़ा रतालू प्रजातियाँ परागण के लिए लगानी चाहिए। आंवले की किस्मों में पर–परागण आवश्यक होता है इसलिए कम से कम दो किस्मों का एकान्तर पर रोपण किया जाना चाहिए।

2. पोषण प्रबन्धनः फल पौधों की अच्छी वृद्धि एवं विकास के लिए उचित मात्रा में एवं उचित समय पर खाद एवं उर्वरक का पेड़ों में देना बहुत आवश्यक है। उर्वरकों का प्रयोग करने से पहले बाग की मिटटी की जॉच आवश्यक है, जिससे मिट्टी में पोषक तत्वों की मात्रा ज्ञात हो सके। फल पौधों को एक वर्ष में एक बार खाद एवं उर्वरक देना आवश्यक होता है। पौधों को गोबर की अच्छी सड़ी हुई खाद देना बहुत ही लाभकारी होता है। अगर वृद्धि ठीक नहीं हो रही हो तो नत्रजन को अति शीघ्र घुलनशील खाद जैसे अमोनियम सल्फेट के रूप में देना चाहिए। गोबर की खाद, फॉस्फेटिक तथा पोटेशिक उर्वरकों को प्रायः नबम्बर में दिया जाता है जबकि नत्रजन उर्वरक फूल तथा फल लगने के बाद दो बार में बराबर मात्रा में दिया जाता है। आम फल की तुड़ाई के तुरन्त बाद नत्रजन की अतिरिक्त मात्रा (500

ग्राम) दी जाती है। लीची में फल तुड़ाई के तुरन्त बाद जून–जुलाई माह में जैविक खाद की सम्पूर्ण मात्रा, फॉस्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा तथा नत्रजन की आधी मात्रा देनी चाहिए। जून–जुलाई माह में वर्षा लगातार होती रहने की दशा में उर्वरक सितम्बर–अक्टूबर माह में देने चाहिए। परन्तु ध्यान रहे लीची में फॉस्फोरस उर्वरक को कम से कम नये कल्ले आने के 15–20 दिन पूर्व मिट्टी में मिला देना चाहिए। खाद देने के पहले पर्याप्त नमी हेतु हल्की सिंचाई कर देनी चाहिए। एक वर्ष के पौधों के पोषण के लिए खाद एवं उर्वरक की मात्रा सारणी 2 के अनुसार देना चाहिए।

इन प्रमुख पोषक तत्वों के अतिरिक्त सूक्ष्म तत्वों को भी पौधों के पोषण में शामिल करना चाहिए। सूक्ष्म पोषक तत्वों में जिंक, बोरान एवं कॉपर बहुत ही महत्वपूर्ण हैं जिनके अभाव में फलों की उत्पातकता में प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। अतः इन सूक्ष्म तत्वों की कमी के लक्षणों को पहचानते हुए समय पर इनका छिड़काव या पौधों के थालों में प्रयोग करना चाहिए। पंतनगर विश्वविद्यालय में अखिल भारतीय समन्वित फल अनुसंधान परियोजना के अन्तर्गत आम में सूक्ष्म पोषक तत्वों के प्रभाव का अध्ययन करने के उपरान्त यह पाया गया है कि

सारणी 2 : फल पौधों के लिए प्रति एक वर्ष की उम्र के हिसाब से प्रमुख पोषक तत्वों की मात्रा :

क्र.सं.	फल वृक्ष	गोबर की खाद (कि.ग्रा.)	नाइट्रोजन (ग्राम)	फास्फोरस (ग्राम)	पोटाश (ग्राम)	खाद एवं उर्वरक की मात्रा स्थिर करने की आयु (वर्षों में)
1.	आम	10	100	75	100	10
2.	अमरूद	10	75	60	50	6
3.	लीची	10	100	50	100	10
4.	कटहल	10	75	60	50	10
5.	नींबू	10	100	25	50	10
6.	पपीता	10	200	100	200	तीन बराबर भाग में रोपण के बाद 1, 3, 6 माह पर दें
7.	आंवला	10	75	50	75	10
8.	बेर	10	100	50	50	5
9.	करौंदा	10	50	50	50	3
10.	चीकू	10	50	25	75	10
11.	बेल	10	75	60	50	10
12.	अनार	10	100	60	60	6
13.	अंगूर	10	75	75	150	5
14.	स्ट्राबेरी	गोबर की खाद 250–300 क्विंटल, नत्रजन 75–100 कि.ग्रा., फास्फोरस 80–120 कि.ग्रा. एवं पोटाश 50–75 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर के हिसाब से देना चाहिए।				

इस सारणी में दर्शाये गए खाद एवं उर्वरक एक वर्ष के पौधे हेतु है। जिसको पौधे की उम्र के हिसाब से प्रत्येक वर्ष गुणक रूप मे बढ़ाते जाते हैं। सारणी 2 के कालम 7 में वर्ष के अनुसार खाद एवं उर्वरक की मात्रा स्थिर कर देनी चाहिए।

उर्वरकों की संस्तुत मात्रा + 0.2 प्रतिशत जिंक सल्फेट + 0.1 प्रतिशत कॉपर सल्फेट + 0.1 प्रतिशत बोरिक एसिड/बोरेक्स (दो छिड़काव, एक पुष्पन के पहले तथा दूसरा मार्वल चरण पर) का प्रयोग करने से गुणवत्तायुक्त फल का अधिक उत्पादन होता है।

3. सधाई एवं कटाई–छंटाईः नये बाग मे कलमी पौधे लगाने के बाद मूलवृन्त से जो भी कल्ले निकले उन्हे तोड़ देना चाहिए। नए पौधों में जुड़ाव वाले स्थान से निकलने वाले सभी कल्लों को समय–समय पर काट कर निकाल देना चाहिए। फलों के पौधों में सधाई एवं कटाई की बहुत आवश्यकता होती है। सधाई का कार्य शुरू के 4–5 वर्षों में करना चाहिए, जिससे उनको सही आकार मिल सके। तत्पश्चात् 4–6 मुख्य शाखाओं को चारों दिशाओं में बढ़ने देना चाहिए। अधिक घने बागों में सूर्य का प्रकाश एवं वायु का संचार आसानी से नहीं हो पाता है, जिससे फलत पर भी इसका प्रभाव पड़ता हैं। अधिकांश फलों में सधाई का काम दिसम्बर एवं जनवरी में करते हैं। अमरूद एवं आंवला में सधाई एवं कटाई फरवरी–मार्च में करते हैं। आम एवं लीची में नियमित फलन के लिए कटाई का काम फल तोड़ने के तुरन्त बाद करते हैं।

4. फलदार पौधों का पाले से बचावः पाला किसी प्रकार की बीमारी न होते हुए भी फलोत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है, जिसके कारण फलदार पौधे जैसे पपीता, केला, आम, लीची इत्यादि में काफी नुकसान हो जाता है। पाले के द्वारा पपीता एवं केला में 80–90 प्रतिशत नुकसान देखा गया है। सर्दियों के दिनो में (दिसम्बर–जनवरी) जब रात्रि में वायु का तापमान 32^0 फारेनहाइट अथवा 0^0 सेन्टीग्रेट से कम हो जाता है तो वायु में निहित वाष्पजल कणों में न बदलकर सीधे हिमकणों में परिणत हो जाता है। इस प्रकार हिम के रूप में बने ओस को पाला कहते हैं। जब पानी बर्फ में बदलता है तो उसके आयतन में वृद्धि होती है और वृद्धि होने के कारण उसका दबाव चारों ओर से कोशिकाओं की दीवार पर पड़ता है। इस दबाव के असर से पौधों की कोशिकायें फट जाती है और अन्त में पौधा धीरे–धीरे सूखने लगता है। पाले का अधिक दुष्प्रभाव पत्तियों व फूलों पर पड़ता है। अधपके फल सिकुड़ जाते हैं। पपीता, आम, केला, जो कि मुख्यतः उष्ण जलवायु के फल है, को सर्दियों मे पाले से बचाने की बहुत आवश्यकता होती है। पाले के कारण छोटे पौधे क्षतिग्रस्त हो जाते हैं। पाले से बचाव के लिए कुछ क्रियाओं को करके पौधों का बचाव कर सकते हैं। पाले से फलदार पौधों को बचाने के लिए परम्परागत तरीके जैसे पौधों को ढकना (थैचिंग), पौधों की समय–समय पर सिंचाई करना, नए बागों में धुआँ करना, बाग की मेड़ों पर चारों ओर बड़े वृक्षों का रोपण, पाला अवरोधी फसलें उगाना, खेत में बालू मिलाकर, हीटर के प्रयोग द्वारा एवं रासायनिक तरीके जैसेः साइकोसिल का छिड़काव, ग्लूकोज का छिड़काव, गन्धक के तेजाब का छिड़काव, डाई मिथाइल सल्फो– ऑक्साइड का छिड़काव इत्यादि अपनाये जा सकते हैं। पाले से बचाव के लिए उपरोक्त दी गई विधियों में किसान भाईयों के लिए आसानी से प्रयोग में लायी जाने वाली विधियों का वर्णन निम्नवत् है :

(क) छाजन/थैचिंग (छप्परनुमा संरचना)ः पाले से पौधों को सबसे ज्यादा नुकसान या तो नर्सरी की अवस्था में या जब पौधे 2–3 साल के हो, तब होती है। पौढ़ पेड़ो पर कोहरे का प्रभाव बहुत ज्यादा नहीं होता है परन्तु किसी–किसी वर्ष यह देखा गया है कि व्यस्क पेड़ भी इससे प्रभावित हो जाते हैं। नये रोपित किये हुए छोटे फलदार पौधों जैसे आम, पपीता, केला, लीची, इत्यादि को खरपतवार, पुआल, सूखी पत्तियाँ, गत्ते या पॉलीथीन से ढक कर पौधों को पाले से बचा सकते हैं। पौधों की छोटी अवस्था में रात को प्लास्टिक की चादर से ढकना चाहिए। सीधे कतारों में लगे हुए छोटे–छोटे पौधों के ऊपर प्लास्टिक की छोटी–छोटी सुरंगें बनाकर भी पौधों को कोहरे से बचाया जा सकता है। ऐसा करने से प्लास्टिक के अन्दर का तापमान $2–3^0$ से.ग्रे. बढ़ जाता है, जिससे भूमि का तापमान जमाव बिन्दु तक नहीं पहुँच पाता और पौधे कोहरे से बच जाते हैं परन्तु यह तकनीक कुछ मंहगी पड़ती है। गाँव में उपलब्ध सस्ती पुआल या दूसरे खरपतवारों का प्रयोग पौधों को ढकने के लिए (छाजन हेतु) किया जा सकता है। पौधों को ढकते समय इस बात का ध्यान अवश्य रखें कि उन पौधों का पूर्वी–दक्षिणी हिस्सा खुला रहे ताकि पौधों को सुबह व दोपहर की धूप मिल सके। यह पुआल दिसम्बर से फरवरी के महीनों में प्रयोग करनी चाहिए तथा मार्च का महीना आते ही इसे हटा दें।

पौधशाला में छोटे–छोटे पौधों के ऊपर छप्पर डाल कर उन्हें पाले के प्रभाव से बचाया जा सकता है।

(ख) बगीचे की सिंचाई करना: पाले को नियंत्रित करने के लिए यह सबसे सुगम और आसान तरीका है। जब हवा स्थिर हो तथा वायु का तापमान 0^0 सेन्टीग्रेड से कम हो तो पाला पड़ने की सम्भावना अधिकतम होती है। यदि किसान भाई ऐसी स्थिति महसूस करते हैं तो फसल की अविलम्ब सिंचाई करें। इससे मृदा का तापमान 1–1.5^0 सेन्टीग्रेड तक बढ़ जाता है, जो पाले के प्रभाव को कम करने में सहायक सिद्ध होता है। लेकिन इस विधि में यह आवश्यक है कि किसान के पास सिंचाई की सुनिश्चित व्यवस्था हो जिससे आवश्यकतानुसार तुरन्त सिंचाई की जा सके।

(ग) बगीचे में धुआँ करना: बगीचे के नजदीक या मेड़ों पर धुआँ करने या आग जलाने का मूल उद्देश्य मृदा व उसके आस–पास के तापक्रम में वृद्धि करना होता है, जिससे पाले का न्यूनतम प्रभाव पड़े और फसल को बचाया जा सके। जब भी पाला पड़ने की सम्भावना नजर आये तो शाम को 8 बजे से सुबह 8 बजे तक बाग में धुआँ करें। इस विधि की सफलता कृषक के अनुभव व उस समय सूखे खरपतवार, पत्तियाँ व पुआल आदि के उपलब्धता पर निर्भर होता है। यदि किसान भाई अपने अनुभव के आधार पर पाला पड़ने की संभावना महसूस करें तो मेड़ों पर आग जला कर फसल को पाले से बचा सकते हैं।

5. सिंचाई: नए पौधों को पर्याप्त पानी की मात्रा देकर सींचना चाहिए। आवश्यकता से अधिक या कम पानी देना पौधों के लिए हानिकारक होता है। पौधों को लगाने के बाद थालों में उचित नमी बनी रहनी चाहिए, इसके लिए गर्मियो में एक सप्ताह के अन्तराल पर एवं सर्दियों में 10–12 दिन के अन्तराल पर मौसम व मिट्टी के प्रकार के अनुसार सिंचाई करते रहना चाहिए। जिन क्षेत्रों में पानी की कमी हो वहाँ घास अथवा काली पॉलिथीन की पलवार का प्रयेाग करके थालों में नमी को अधिक समय तक बनाये रखा जा सकता है। आधुनिक युग में टपक सिंचाई बहुत ही उपयुक्त पायी गयी है। मैदानी एवं पर्वतीय क्षेत्रों में फल पौधों की बढ़वार में सिंचाई की कमी सबसे बड़ी बाधा है। ऊँची–नीची सतह होने के कारण पहाड़ी क्षेत्रों में सिंचाई करना बहुत कठिन होता है एवं पौधों की आवश्यकता के अनुसार पानी भी उपलब्ध नहीं हो पाता है। इसके निराकरण के लिए सूक्ष्म सिंचाई विधि बहुत ही लाभदायक है। विभिन्न शब्द जैसे कि बूँद (ट्रिकल), स्प्रे एवं फोगर, सूक्ष्म सिंचाई पद्धति के अंतर्गत आते हैं। सूक्ष्म सिंचाई विधि में पानी को बहुत कम दाब पर बार –बार एवं सीधे पौधों की जड़ों में दिया जाता है। इस विधि में पानी की मात्रा को लम्बे समय के लिए कम अंतराल पर बार–बार दिया जाता है जिससे पौधे की जड़ में सारे समय के लिए नमी की सही मात्रा रखी जा सकती है। सिंचाई की इस विधि में पानी की बचत व श्रम के साथ पैसे की बचत, खरपतवार की समस्या का निदान इत्यादि लाभ है। सिंचाई के लिए फर्टीगेशन विधि भी उपयुक्त होती है। फर्टीगेशन का अर्थ सिंचाई जल और खाद के पोषक तत्वों को सूक्ष्म सिंचाई विधि से पौधों तक पहुँचाना होता है जिसके द्वारा खाद को पौधें की जड़ मण्डल मे सही समय मे प्रयोग करने एवं उसके देने के समय को निर्धारित करने में सहायता मिलती है।

6. आम एवं अमरुद में सघन बागवानी : आम में सघन बागवानी भी सफलतापूर्वक की जा सकती है। आम्रपाली किस्म सघन बागवानी के लिए सबसे उत्तम पाई गई है जिसमें पौधों को 2.5 × 2.5 मीटर पर रोपित करने पर 1600 पेड़ एक हैक्टर में लगाते हैं। दशहरी किस्म में भी सघन बागवानी (1333 पेड़ प्रति हैक्टर) की संस्तुति की गई है। इस किस्म को 2.5 x 3 मीटर की दूरी पर रोपकर प्रत्येक वर्ष फल तोड़ने के बाद जून के अन्तिम सप्ताह या जुलाई के प्रथम सप्ताह में फलने वाले कल्लों की छंटाई करते हैं। छंटाई के तुरन्त बाद 1 प्रतिशत यूरिया (5 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर) और 0.2 प्रतिशत कॉपर ऑक्सीक्लोराइड का छिड़काव करना चाहिए। सितम्बर माह में नए प्ररोह के पूर्ण विकसित होने पर पैक्लोब्यूट्राजॉल (कल्तार) 4 मि.ली. (25 प्रतिशत सक्रिय तत्व) प्रति मी. वृक्ष कैनोपी व्यास की दर से पानी में घोल कर तने के नजदीक बनाई गई नालियों में डाली जाती है। यह दवा डालने के बाद कुछ दिनों तक तने

के पास बनी नाली में नमी बनाये रखना चाहिये। यहॉ यह भी बतलाना उचित होगा कि यह एक खर्चीली तथा अधिक श्रम चाहने वाली तकनीक है जिसे किसान भाईयों को पहले से मानसिक रूप से तैयार होकर ही अपनाना चाहिए। परन्तु इस विधि में प्रति हैक्टर उत्पादकता पारम्परिक विधि से लगाये जाने वाले बागों की अपेक्षा अधिक होती है। अखिल भारतीय समन्वित फल अनुसंधान परियोजना के अन्तर्गत विकसित तकनीक में यह पाया गया है कि आम में उच्च गुणवत्तायुक्त अधिक फल उत्पादन के लिए सघन बागवानी को अपनाने हेतु, फल तुड़ाई के तुरन्त बाद प्रत्येक वर्ष शीर्ष शाखाओं की 10 से.मी. छंटाई तथा सितम्बर माह में पेड़ के छत्रक की प्रति मीटर फैलाव पर 1.0 मि.ली. पेक्लोब्यूट्राजोल का प्रयोग करना चाहिए।

आजकल अमरूद में मिडो एवं सघन बागवानी को बढ़ाने के लिए किसानों को प्रोत्साहित किया जा रहा है जिसमें प्रति हैक्टर उत्पादकता अधिक होती है। इस विधि में पौधे की ऊँचाई पर नियंत्रण रखने के लिए उसकी शीर्ष बढ़वार को शुरूवाती अवस्था में ही नियंत्रित किया जाता है। अमरूद में फलन नई शाखाओं पर ही होती है, इसलिए इस पर कटाई–छंटाई एवं सधाई का सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इसी कारण से अमरूद के वृक्ष को सघन बागवानी के लिए उपयुक्त पाया गया हैं। इस विधि में अमरूद को 1 × 2 मी. की दूरी पर (5000 पौधे प्रति हैक्टर) लगाया जाता है तथा शुरूआती दौर में वृक्ष के आकार को नियन्त्रित करने के लिए लगातार टॉपिंग व हेजिंग किया जाता है। यहॉ यह भी बतलाना उचित होगा कि इस विधि में अमरूद के पौधें को साल में तीन बार कृन्तित किया जाता है तथा मल्चिंग का प्रयोग भी आवश्यक होता है जिसके लिए किसान भाईयों को मानसिक रूप से शुरूआती दौर में तैयार होना पड़ेगा।

7. अमरुद में फसल नियमन/नियंत्रणः उत्तरी भारत में अमरूद में फूल तथा फल आने के दो प्रमुख मौसम हैं। पहला फूल मार्च से मई के महीने में आता है, जिनके फल बरसात के मौसम (जुलाई अंत से सितम्बर) में तुड़ाई करने योग्य हो जाते हैं। दूसरा फूल जुलाई से अगस्त, जिनके फल सर्दी (अक्टूबर से मध्य फरवरी) में तोड़ने योग्य हो जाते हैं। कभी–कभी एक तीसरी फसल बसन्त ऋतु में भी ली जाती है, जिसमें फूल अक्टूबर एवं फल मार्च में प्राप्त होते हैं। अमरूद में आमतौर पर वर्ष में केवल एक ही फसल लेने का सुझाव दिया जाता है। यह सर्वविदित है कि वर्षा ऋतु के फलों की अपेक्षा शरद् ऋतु के फल अधिक स्वादिष्ट, चमक वाले, मीठे एवं उच्चकोटि की गुणवत्ता वाले होते हैं तथा इनमें रोग एवं कीड़ों का प्रकोप भी कम होता है। शरद् ऋतु के फलों की कीमत भी बाजार में अधिक मिलती है। अतः यह आवश्यक हो जाता है कि किसी तरह वर्षा ऋतु की फसल कम करके शरद् ऋतु की फसल को बढाया जाये। वर्षा ऋतु की फसल को कम करके शरद् ऋतु की फसल लेने की विधि को ही फसल नियमन या बहार नियंत्रण के नाम से जाना जाता है। अब तक फसल नियंत्रण की कई विधियाँ सुझाई जा चुकी हैं इनमें से कोई एक विधि, जो गुण–दोष के आधार पर बागवान को अपनी भूमि एवं जलवायु के अनुसार उपयुक्त हो, प्रयोग में लानी चाहिए। विभिन्न विधियों का वर्णन निम्नवत् है :

i. फल एवं फूलों को हाथ से तोड़नाः इस विधि से फसल नियंत्रण के लिए फूलों को अप्रैल–मई में जब 50 प्रतिशत फूल खिल चुके हों, पेड़ के समस्त फूलों एवं छोटे फलों को हाथ से तोड़ दें। इसी कार्य को 15 दिन बाद दुबारा करें। यह खर्चीली विधि है। इस विधि में श्रम–शक्ति अधिक लगती है। फल तथा फूल तोड़ते समय कुछ नाम मात्र का फल एवं फूल छोड़ देना चाहिए जिससे कि वर्षा ऋतु मे थोड़ी सी फसल मिल जाये।

ii. नयी बढ़वार वाले प्ररोह का 3/4 कृन्तन अथवा एक जोड़ा पत्ती छोड़कर कृन्तन : शोध के आधार पर (अखिल भारतीय समन्वित फल अनुसंधान परियोजना के अन्तर्गत) यह पाया गया है कि नयी बढ़वार वाले प्ररोह का 3/4 भाग को मार्च–अप्रैल में कृन्तन करने से बरसात के फसल की जगह जाड़े में फसल प्राप्त किया जा सकता है जो कि उच्च गुणवत्तायुक्त एवं कीट विहीन होता है। दूसरी विधि में

नयी बढ़वार वाले प्ररोह के आधार पर एक जोड़ा पत्ती छोड़कर कृन्तन करने से भी बरसात वाली फसल के जगह जाड़े वाली फसल ली जा सकती है। इस विधि में अप्रैल के दूसरे पखवाड़े से मई के पहले पखवाड़े के बीच अमरूद के पेड़ के समस्त नये प्ररोहों (कल्लों) पर एक जोड़ा आधारीय पत्ती को छोड़ कर ऊपर से शेष भाग का सिकेटियर द्वारा कृन्तन कर देने से वर्षा ऋतु की फसल काफी कम हो जाती है जिससे जाड़े की फसल बढ़ जाती है। इस विधि का वृक्ष के ऊपर कोई विपरीत प्रभाव नहीं पड़ता है तथा साथ ही एक लाभ यह भी है कि काट कर नीचे गिराई गई पत्तियाँ गर्मियों में पेड़ों के लिए पलवार (मल्च) का काम करती हैं। फूलों को हाथ से तोड़ने की तुलना में यह विधि कम खर्चीली है क्योंकि कृन्तन केवल एक बार ही करना पड़ता है। यह विधि उत्तराखण्ड के तराई के क्षेत्रों में काफी सफल पाई गई है।

iii. यूरिया के छिड़काव द्वारा: इस विधि में 10–15 प्रतिशत यूरिया के घोल का दो छिड़काव (15 दिन के अन्तर पर) अप्रैल से मई के महीने में करने से अमरूद के फूल झड़ जाते हैं जिससे वर्षा ऋतु की फसल कम हो जाती है और जाड़े की फसल बढ जाती है। यह विधि भारत वर्ष के कुछ ही क्षेत्रों में जहाँ गर्मियों में वातावरण काफी शुष्क रहता है, उपयोग में लायी जाती है। यह विधि उत्तराखण्ड एवं उत्तर प्रदेश के तराई के क्षेत्रों के लिए उपयुक्त नहीं पायी गई है।

iv. नैफ्थलीन एसिटिक अम्ल के छिड़काव द्वारा: अमरूद के पेड़ पर जब 50 प्रतिशत फूल खिल चुके हो तो अप्रैल से मई के माह में नैफ्थलीन एसिटिक अम्ल (600–800 पी.पी.एम.) के घोल के दो छिड़काव (15 दिन के अन्तर पर) करने से वर्षा ऋतु की फसल काफी कम हो जाती है और जाड़े की फसल बढ़ जाती है। यह विधि, सामान्य बागवान के द्वारा सही सान्द्रता का घोल नहीं बना पाने के कारण अधिक लोकप्रिय नहीं हो पायी है तथा इस रसायन की कीमत ज्यादा होने के कारण खर्चीली भी है।

8.फलों के पुराने बागों का जीर्णोद्धार : फल उद्यान में जीर्णोद्धार का अर्थ पौधों को नया जीवन प्रदान करने से है। फल वृक्षों में एक निश्चित आयु के बाद कम उपज होने लगती है तथा वृक्ष आंशिक दृष्टि से अनुपयोगी हो जाते हैं। जीर्णोद्धार तकनीक को मुख्यतः उन बागों में अपनाना चाहिए, जिनमें उत्पादन अत्यधिक कम हो गया हो। इस तरह के बागों में वृक्षों की अत्यधिक बढ़वार के फलस्वरूप पूर्ण आच्छादन हो जाता है तथा शाखायें बढ़कर एक दूसरे को छूने लगती है। इन कारणों से सूर्य का प्रकाश नीचे की शखाओं पर पर्याप्त मात्रा में नहीं पहुंच पाता है जिसके वजह से प्रकाश संश्लेषण की क्रिया ठीक ढ़ग से नहीं हो पाती है। इसके वजह से पेड़ के निचली शाखाओं पर प्ररोह (कल्ले) अच्छी तरह विकसित नहीं हो पाते हैं तथा बागों में कीट एवं बीमारियों का अधिक प्रकोप हो जाता है जिसका नियत्रंण करना कठिन होता है। इस तरह के वृक्षों का जीर्णोद्धार करके बागों को पुनः उत्पादक बनाया जा सकता है। उचित कटाई–छंटाई के बाद वृक्ष के ऊपर नये कल्ले बनते हैं तथा इसका आकार दो वर्ष में छतरीनुमा बन जाता है जो पुष्पन एवं फलन में अत्यधिक सहायक होता है।

i. जीर्णोद्धार तकनीक (कटाई–छंटाई विधि) : पुराने एवं अनुत्पादक बागों का जीर्णोद्धार करने के लिए चिन्हित किये गये शाखाओं को धारदार आरी की सहायता से कृन्तन किया जाता है। आम एवं कटहल में जमीन की सतह से लगभग 3.5–4.0 मीटर, आंवला, बेल में 2.0–2.5 मीटर, सेब में 1.5–2.0 मीटर तथा अमरूद में 1.0–1.5 मीटर की ऊँचाई पर चिन्हित शाखाओं को दिसम्बर–जनवरी माह में इस उद्देश्य से काटा जाता हैं जिससे उनमें नये कल्लों का सृजन हो सके तथा स्वस्थ कल्लों से नयी कैनॉपी विकसित की जा सके। कटाई करते समय पहले शाखा को निचली सतह से फिर ऊपर की सतह से काटना चाहिए ताकि अनावश्यक रूप से शाखाएँ फटने न पायें। पंतनगर विश्वविद्यालय में स्थित अखिल भारतीय समन्वित फल अनुसंधान परियोजना के अन्तर्गत आम में जीर्णोद्धार हेतु एक तकनीक विकसित की गयी है। इस तकनीक में आम के जीर्णोद्धार हेतु घनी शाखाओं का हेड बैक (शाखा के ऊपरी छोर से पीछे की ओर लगभग 50

प्रतिशत भाग) करते हुए वृक्ष के केन्द्रीय भाग में स्थित शाखाओं को आधार से ही दिसम्बर–जनवरी माह में काटकर निकाल देते हैं। पैक्लोब्यूट्राजॉल की संस्तुत मात्रा (4 मि.ली. सक्रिय तत्व अथवा कल्तार लगभग 15–20 मि.ली.) प्रति वृक्ष की दर से मुख्य तना के पास एक गोल नाली में सितम्बर माह में प्रयोग करते हैं। पैक्लोब्यूट्राजॉल प्रयोग करने के उपरान्त वृक्ष के थाले में पर्याप्त नमी रहना चाहिए। इस प्रकार पुराने वृक्ष का आंशिक जीर्णोद्धार हो जाता है तथा साथ ही बिना किसी अन्तराल के हर साल फल उत्पादन होता है।

ii. पोषक तत्व प्रबंधनः जीर्णोधारित वृक्षों में खाद एवं उर्वरक डालने के पूर्व थालों की अच्छी प्रकार से निराई –गुड़ाई करनी चाहिए। इसके उपरान्त प्रति वृक्ष 50–75 कि.ग्रा. सड़ी हुई गोबर की खाद, 8–10 कि.ग्रा. नीम की खली वृक्ष के थालों में दिया जाना चाहिए। विभिन्न फलों के लिए संस्तुत फॉस्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा तथा नत्रजन की आधी मात्रा जनवरी से फरवरी माह में प्रत्येक कृन्तित वृक्ष के थाले में गोल नाली बनाकर देनी चाहिए। नत्रजन की संस्तुत मात्रा का आधा भाग जुलाई माह में प्रयोग करना चाहिए।

iii. सिंचाई प्रबंधनः कृन्तित वृक्षों की सिंचाई गर्मियों में 10–15 दिन के अन्तराल पर करनी चाहिए ताकि वृक्ष के कैनॉपी का विकास अच्छी तरह हो सके एवं नये कल्ले पानी के अभाव में सूखने न पायें। अप्रैल से जून माह तक नमी को संचित रखने के लिए काली पॉलीथीन, पत्ती, सूखी घास अथवा पुवाल थालों में बिछानी (मलचिंग) चाहिए।

iv. अन्तःफसलः बागों के जीर्णोद्धार उपरान्त वृक्ष की कैनॉपी का पूर्ण विकास होने में विभिन्न फलों में 3–5 वर्ष का समय लगता है। अतः शुरू के वर्षो में अन्तःफसलें उगाकर खुले स्थान का उचित उपयोग किया जा सकता है। इसमें गोभी, मिर्च, सूरन, परवल, मटर, आलू तथा आंशिक छाया में उगने वाली फसले जैसे अदरक, हल्दी आदि की फसल लेनी लाभदायक है। फलों में पपीता, केला तथा स्ट्राबेरी को पूरक एवं अन्तःफसल के रूप मे लगाया जा सकता है।

v. नये सृजित कल्लों का विरलीकरणः कटाई के 3–4 माह पश्चात् (मार्च–अप्रैल) से छांटे गए शाखाओं पर वाहुल्यता में नये कल्ले निकलते हैं जिनका उचित विरलीकरण अति आवश्यक होता है अन्यथा जल व पोषक तत्वों के लिए प्रति स्पर्धा के कारण स्वस्थ कल्लों का विकास नहीं हो पाता है तथा साथ ही साथ पर्णीय क्षेत्र झाड़नुमा हो जाता है जो फलन् के लिए अनुपयुक्त होते हैं। अच्छी तरह विकसित एवं बाहर की ओर फैले हुये 6–8 स्वस्थ कल्ले प्रति शाख रखकर अन्य सभी को काटकर जुलाई माह में निकाल देना चाहिए। विरलीकरण के तुरन्त बाद कॉपर ऑक्सीक्लोराइड फफूँदनाशक दवा (2 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर) का छिड़काव करना चाहिए।

vi. जीर्णोद्धार उपरान्त फल उत्पादनः जीर्णोद्धार उपरान्त काटी गई शाखाओं पर सृजित कल्ले लगभग दो वर्ष बाद पुष्पन एवं फलन में आने लगते हैं। इस तरह से प्रति वर्ष उत्पादन में बढ़ोत्तरी होकर पुराने एवं अनुत्पादक फलों के बाग पुनः आर्थिक रूप से लाभदायक सिद्ध हो जाते हैं।

vii. जीर्णोद्धार उपरान्त कीट एवं व्याधियों का प्रवन्धनः बाग में वृक्षों के जीर्णोद्धार उपरान्त निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना अत्यन्त जरूरी होता है :

- कटाई के उपरान्त कटे हुए सतह पर कॉपर ऑक्सीक्लोराइड लेप (1.0 कि.ग्रा. कॉपर ऑक्सीक्लोराइड, 250 ग्राम अण्डी का तेल एवं उचित मात्रा में पानी मिलाकर तैयार लेप) या ताजा गोबर और चिकनी मिट्टी, बराबर मात्रा में मिलाकर तैयार किये गये लेप का प्रयोग करना चाहिए ताकि सूक्ष्म जीवाणुओं एवं रोगों का संक्रमण न हो सके।
- विरलीकरण के तुरन्त बाद कॉपर ऑक्सीक्लोराइड फफूँदनाशक दवा (2.0 ग्राम प्रति लीटर पानी में) का छिड़काव करना चाहिए।
- तेज धूप के कारण वृक्षों के तनों एवं शखाओं को नुकसान से बचाने के लिए कॉपर ऑक्सीक्लोरारड तथा चूने का लेप लगाना चाहिए।

- तना भेदक का प्रकोप होने पर इसको तार या साईकिल की तिल्ली से निकाल कर मार देना चाहिए या रूई को नुवान कीटनाशक दवा में भिगोकर सुराख में रखते हुए गीली चिकनी मिट्टी से बन्द कर देना चाहिए जिससे कीट मर जाता है।
- पत्ती खाने वाले कीट का प्रकोप होने पर आवश्यक्तानुसार कार्बेरिल दवा (2.0 ग्राम प्रति लीटर पानी में) या मोनोक्रोटोफॉस (1.0 ग्राम प्रति लीटर पानी में) का घोल बनाकर 12–15 दिन के अन्तराल पर दो छिड़काव करने चाहिए।
- एन्थ्रेक्नोज का प्रकोप यदि नई पत्तियों में दिखे तो कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (2.0 ग्राम प्रति लीटर पानी) या कार्बेंडाजिम (1 ग्राम प्रति लीटर पानी) का 15 दिन के अन्तराल पर दो छिड़काव करने चाहिए।
- सितम्बर माह में अगर नये प्ररोह बाहुल्यता से दिखें तो उनका दोबारा आवश्यकतानुसार विरलीकरण करना चाहिए।
- जीर्णोद्धार यदि सेब में किया गया हो तो उसमें लगने वाली बीमारियों जैसेः जड़ सड़न, तना गलन, चूर्णी फफूँद, स्कैब एवं कीटों जैसेः स्केल, उली एफिड, तना वेधक, जड़ वेधक आदि का समय–समय पर उपचार अति आवश्यक होता है।

जीर्णोद्धार उपरान्त बीजू पौधों में शिखा रोपण तकनीकः आम, अमरूद, ऑवला, सेब आदि के पुराने, बीजू तथा अंवाछित किस्मों के पौधों को जीर्णोद्धार के तहत शिखा रोपण तकनीक द्वारा उन्नत किस्मों में परिवर्तित किया जा सकता है। आम के बाग में परागद किस्म के अभाव में इनके कुछ सृजित कल्लों पर बम्बई हरा, रतालू तथा लखनऊ सफेदा किस्मों की सांकुर शाख का प्रत्यारोपण कर बाग में परागण प्रक्रिया सुदृढ कर अच्छा उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। ऑवले की बागवानी में स्वअसंगता एक मुख्य समस्या है, इसलिए शिखा रोपण के समय बाग में दो–तीन विभिन्न व्यावसायिक किस्मों का मई माह में नए कल्लों पर चश्मा चढाना चाहिए। सेब के बगीचों में शीर्ष रोपण की विधि अपनाकर, कुछ शाखाओं पर नई परागद किस्में जैसे गोल्डन डिलिसियस, रेड गोल्ड, गोल्डन स्पर, मैन्चूरियन क्रेव, स्नोड्रिफ्ट आदि को रोपित कर बाग की उत्पादकता बढ़ा सकते हैं।

9. फल उत्पादन में पादप वृद्धि नियामकों का व्यावसायिक प्रयोगः फलोत्पादन में पादप वृद्धि नियामक का प्रयोग करके उत्पादन एवं गुणवत्ता बढ़ाकर अधिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है। इन नियामकों का प्रयोग न केवल उत्पादन बढ़ाने में ही सहायक होता है बल्कि फलों की गुणवत्ता बढ़ाने में भी उपयोगी है। परन्तु सही जानकारी के अभाव में किसान इस प्रकार के वृद्धि नियामकों का प्रयोग करके उचित लाभ नहीं ले पा रहे हैं। इन वृद्धि नियामकों का प्रयोग सही समय पर सही मात्रा में करके फलों की उत्पादकता एवं गुणवत्ता में वृद्धि किया जा सकता है तथा फलों की वृद्धि एवं विकास को प्रभावित करने वाले वाह्य एवं आन्तरिक क्रियाओं को संयुक्त रूप से नियन्त्रित करता है। पादप नियामक पौधे के विकास जैसे फूल आने की क्रिया, फल की गुणवत्ता, वृद्धि एवं पकने की क्रिया को संयुक्त संकेतों के माध्यम से नियन्त्रित करता है। फल उत्पादन में पादप वृद्धि नियामकों का मुख्य उपयोग सारणी 3 में दर्शायी गयी है।

सारणी 3 : फलोत्पादन में मुख्य पादप वृद्धि नियामकों का उपयोग

उपयोग	फसल	पादप वृद्धि नियामक	सान्द्रता (पी.पी.एम.)	अन्य
कर्तन में जड़ उत्पादन	नींबू, अमरूद, लोकाट, अंगूर इत्यादि	(i) आई.बी.ए. (ii) एन.ए.ए.	500–1000 (0.5–1.0 ग्राम प्रति ली.)	कर्तनों के निचले हिस्से को कुछ समय तक घोल में डुबोकर
	करौंदा	आई.बी.ए.	6000	कुहासा घर में कठोर शाख वाली कलम के लिए
गूटी में जड़	लीची, अमरूद,	आई.बी.ए.	500–1000	तदैव

उत्पादन	कटहल, लोकाट, आम			
	बेल	आई.बी.ए.	5000	तदैव
पुष्पन को उत्तेजित करने हेतु	अनानास	एन.एन.ए.	5–10	पौधे के ऊपर छिड़काव
		इथ्रेल	200–400	तदैव
	आम	इथ्रेल	200	अफलन वाले वर्ष में नए प्ररोह पर छिड़काव
	लीची	एन.ए.ए.	500–600	पुष्पन के पहले छिड़काव करें।
पुष्पों का विरलीकरण/ बहार नियंत्रण में	अंगूर	सेविन	1000	तदैव
	अमरूद	एन.ए.ए.	600– 800	अप्रैल–मई के माह में 15 दिन के अन्तर पर दो बार छिड़काव
		2,4–डी०	250–300	
फलों (Fruit set) की संख्या बढ़ाने में	आम, लीची	एन.ए.ए. (फ्रूटोन)	25–50	फल सेट (मटर के बराबर दाना) के बाद छिड़काव करें
	नीबू वर्गीयः			
	i किन्नों मेंड्रिन	2,4 डी., 2,4,5 टी. 10	5–10	तीन छिड़काव अप्रैल, जून तथा सितम्बर मे (मुख्यतः किन्नों में)
	ii मौसम्बी एवं माल्टा	2,4,5 टी.	30	तदैव
	iii पाइन एपल, माल्टा	2,4 डी.	15	तदैव
	iv संतरा	एन.ए.ए.	10	तदैव
	v लैमन	2,4 डी. या 2,4,5 टी.	20	दो छिड़काव, अप्रैल तथा जून में
	आम	एन.ए.ए. 2,4 डी.	40 10	दो छिड़काव 15 दिन के अन्तर पर फल लगने के उपरान्त
	लीची	एन.ए.ए.	20	फल का आकार मटर के आकार का होने पर
बीज की प्रसुप्ती तोड़ने एवं अंकुरण बढ़ाने में	अंगूर	जी.ए.$_{3,}$	5–10	बीजों को बोने से पूर्व जी.ए.$_{3,}$ के बने घोल में भिगोकर
	नीबू	जी.ए.$_{3}$	50–100	तदैव
पौधों की वृद्धि एवं विकास	बहुत से फलों में	जी.ए.$_{3,}$	10–20	समय –समय पर
	आम, लीची, अंगूर	साइकोसिल (सी.सी.सी.) मैलिक हाइड्राजाइड (एम.एच.)	250–1000	
बौनापन लाने या वृद्धि को रोकने के लिए	आम	पैक्लोब्यूट्राजॉल (कल्तार)	5–6 मि.ली. सक्रिय घटक/विकसित वृक्ष	सितम्बर माह में 15–20 ली. पानी में घोल बनाकर पौधे के मुख्य तना के पास गोल नाली में
नियमित फलन में				प्रयोग करें। (सघन बागवानी में पैक्लोब्यूट्राजॉल की मात्रा 1 मि.ली. सक्रिय घटक प्रति वृक्ष दिया जाना चाहिए)
फलों को पकाने में	आम, केला, चीकू, अनानास	इथ्रेल/इथेफान	200–300	फलों को घोल में डुबोकर या तोड़ने के पहले छिड़काव
फल का आकार एवं मीठापन बढ़ाने में	अंगूर	जी.ए.$_{3,}$	20–40	अंगूर के पौधों पर फल गुच्छों को जी.ए.$_{3,}$ के घोल में डुबोकर

सेब

डा. डी.सी. डिमरी एवं डा. श्वेता उनियाल

जलवायु

सेब की सफल बागवानी में ठंडी जलवायु का प्रमुख स्थान है। इसके लिए सर्दियों (सुसुप्तावस्था) में लगभग 90 दिन तक ठंडक (तापमान 7 डिग्री सेल्सियस से कम) की आवश्यकता होती है। किस्मों के अनुसार सेब की अवशीतन अवधि साधारणतया 1000 से 1600 घंटे होती है। उत्तराखण्ड के ऐसे पर्वतीय क्षेत्र जो समुद्र तल से 1800 से 2700 मीटर की ऊँचाई पर स्थित हैं, सेब की खेती के लिए उपयुक्त हैं। सेब के उद्यान की स्थिति ऐसी होनी चाहिए जहॉ पर सूर्य का प्रकाश पर्याप्त हो। साधारणतया फलों की वृद्धि के लिए 21–24 डिग्री सेन्टीग्रेड तापक्रम की आवश्यकता होती है। फूल आने के समय वर्षा, पाला एवं ओला से इसकी खेती को काफी क्षति होती है। फल पकते समय अधिक वर्षा तथा कोहरा के कारण फलों में आकर्षक रंग नहीं आ पाता है, साथ ही फफूँदीजनक बीमारियों के प्रकोप की संभावनायें भी बढ़ जाती हैं।

भूमि का चुनाव

सेब की बागवानी के लिए गहरी, उपजाऊ दोमट भूमि जिसमें जलनिकास का उचित प्रबन्ध हो तथा पी.एच. मान 5 से 6.5 के बीच हो, उपयुक्त है। जड़ों के समुचित विकास के लिए जमीन में कम से कम दो मीटर की गहराई तक कोई कठोर चट्टान या पत्थर आदि नहीं होने चाहिए। सेब के उद्यान के लिए ऐसी भूमि का चुनाव करना चाहिए जो कम ढाल पर स्थित हो, क्योंकि अधिक ढाल एवं समतल दोनों की परिस्थितियों में तेज हवाओं तथा पाले से सेब की फसल को काफी क्षति होती है।

प्रमुख किस्में

उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों के लिए सेब की कुछ प्रमुख आशातीत किस्में निम्न हैं :

1. **सामान्य किस्में**–रेड डिलिशियस, रोयल डिलिशियस, गोल्डन डिलिशियस, रिंच–ए–रेड, रेड गोल्ड, मैकिनटोश, अर्ली सनवरी, फेनी, बिनौनी, चौबटिया प्रिंसेज, राईमर, बकिंघम आदि।

   शीघ्र रंग वाली किस्में–वॉस डेलीसस, ब्राईट एन अर्ली, स्काईलाइन सुप्रिम डिलिशियस, टॉप रेड डिलिशियस, हार्डी मैन, स्टार क्रीमसन आदि।

   स्पर किस्में–रेड स्पर, सिल्वर स्पर, वैल स्पर, रेड चीफ, अरिगन स्पर, हार्डीमैन स्पर, गोल्डन स्पर, स्टार्क स्पर गोल्ड, सुपर चीफ, स्कारलैट स्पर 2, रेड वीलोक्स, जीरोमाइन आदि।

परागक किस्में एवं उनका अनुपात

सेब के बगीचों में व्यावसायिक किस्मों के साथ–साथ परागक किस्में भी लगाना आवश्यक है। आजकल परम्परागत परागक किस्मों के साथ–साथ क्रैब किस्में (जंगली सेब) को भी परागक के रूप में लगाया जा रहा है। क्रैब किस्मों में हर वर्ष फूल आता है एवं फूलों की अवधि भी बहुत लम्बी होती है, जबकि परम्परागत परागक किस्में जैसे–गोल्डन डिलिशियस, रेड गोल्ड आदि में द्विवर्षीय फलन की समस्या आ गई है, जिससे व्यावसायिक किस्में भी प्रभावित हो रही हैं। बगीचों में सेब की मुख्य एवं परागक प्रजातियों के अनुपात की निम्नवत् संस्तुति दी गयी है :

मुख्य डिलिशियस ग्रुप – 67 प्रतिशत

परागक प्रजाति : गोल्डन डिलिशियस, ग्रेनी स्मिथ, रेड गोल्ड, टाइडमैन्स अर्ली वरसैस्टर, लॉर्ड लैम्बोर्न, समर क्वीन, क्रैब सेब आदि – 33 प्रतिशत

सेब के उद्यानों में फूल आते समय परागण हेतु 4–5 मधुमक्खियों के बक्से भी अवश्य रखें।

प्रवर्धन

साधारणतया सेब के पौधे बीजू मूलवृन्तों पर प्रवर्धित किए जाते हैं। बीजू पौधे उगाने के लिए जंगली सेब (क्रैब) या व्यावसायिक किस्मों के बीजों का प्रयोग किया जाता है। बीजों को नर्सरी में बोने से पूर्व नमी युक्त बालू की तह में रखकर दो से तीन माह बाद फरवरी–मार्च में पौध क्यारी में बो दिये जाते हैं। बोने से पूर्व बीजों को किसी फफूंदीनाशक दवा से उपचारित करें।

साधारणतया सेब में टंग ग्राफ्टिंग (जिह्वा कलम) की वानस्पतिक प्रर्वधन की विधियां अपनायी जाती है, जिसका उपयुक्त समय फरवरी–मार्च है।

सेब के मूलवृन्त

वैसे तो भारत में मुख्यतः सेब के पौधों के प्रर्वधन के लिए बीजू मूलवृन्त को अपनाया जाता है, लेकिन अधिक उपज, जल्दी उत्पादन एवं वृक्ष का वांछित आकार पाने के लिए कुछ विदेशी उन्नत मूलवृन्त

प्रचलित हो रहे हैं। ये बौने, अर्द्धबौने एवं ओजस्वी होने के साथ–साथ कीट एवं व्याधियों के प्रति प्रतिरोधी भी है। कुछ उन्नत मूलवृन्त निम्न है :

एम 9

इस मूलवृन्त पर तैयार किए गये पौधों की ऊँचाई प्रायः 2–2.5 मीटर तक होती है। लेकिन इस मूलवृन्त में जड़ें उथली होने से इनका प्रयोग ऐसे उद्यानों में ही सम्भव है, जहाँ सिंचाई के पर्याप्त साधन सुलभ हों। असिंचित क्षेत्रों विशेषकर सूखे की परिस्थितियों को सहन करने की क्षमता का इस मूलवृन्त में अभाव है। यह मूलवृन्त तना विगलन (कॉलर रॉट) रोग के प्रति प्रतिरोधी है। इस मूलवृन्त पर तैयार किए गये पौधे 3–4 वर्ष में फल उत्पादित करना प्रारम्भ करने लगते हैं। इस मूलवृन्त पर तैयार किये गये पौधों को 3×2 मीटर की दूरी पर लगाना चाहिए।

एम 26

इस मूलवृन्त पर तैयार किए गये पौधों की ऊँचाई 3–4 मीटर तक होती है तथा इन पर तैयार किए गये वृक्षों की उत्पादन क्षमता अच्छी होती है और ये रोपण के 3–5 वर्ष के अन्दर फल उत्पादन प्रारम्भ कर देते हैं। इस मूलवृन्त की वृद्धि नम तथा भारी भूमि में अच्छी नहीं हो पाती है, साथ ही यह तना विगलन रोग से अधिक ग्रसित होते हैं। इस मूलवृन्त पर तैयार किये गये पौधों को 2.5 मीटर की दूरी पर रोपित करना चाहिए तथा दो कतारों के बीच का अन्तर 3–5 मीटर रखना चाहिए।

एम 7

इस मूलवृन्त पर तैयार किये गये पौधे 3–4 मीटर ऊँचे होते हैं। इस मूलवृन्त में जड़ें ज्यादा संख्या में तथा अधिक गहराई तक प्रवेश कर जाती है। फलस्वरूप ये पौधे को मजबूत सहारा देने की योग्य होती हैं। इस मूलवृन्त पर उगाये गये पौधे अच्छा फैलाव लिए होते हैं तथा 3–5 वर्ष में फल देना प्रारम्भ कर देते हैं। ये मूलवृन्त कॉलर रॉट (तना गलन) रोग से अधिक प्रभावित होते हैं। इस मूलवृन्त पर तैयार किये गये डिलिशियस वर्ग के पौधों को 4–5 मीटर की दूरी पर रोपित किया जाना चाहिए।

एम एम 106

इस मूलवृन्त पर तैयार किये गये पौधे मध्यम ऊँचाई लिए हुए होते हैं (3.5 से 4.5 मीटर ऊँचे)। जड़ों का फैलाव अधिक होने के साथ जड़ें भूमि में अधिक गहराई तक जाती है तथा पौधों को मजबूत सहारा प्रदान करती हैं। पौधों की उत्पादन क्षमता अच्छी होती है तथा पौधे 5 वर्ष में फल देना प्रारम्भ कर देते हैं। यह मूलवृन्त रूइया कीट (वूली एफिस) के लिए प्रतिरोधी है। इस मूलवृन्त पर तैयार डिलिशियस वर्ग के पौधों को 4–5 मीटर की दूरी पर रोपित किया जाता है।

एम एम 111

यह एक ओजस्वी मूलवृन्त है तथा इस पर तैयार किये गये पौधे 4.5 से 5.5 मीटर ऊँचे होते हैं, जो फलत में पाँच से सात वर्ष के बाद आते हैं। इस मूलवृन्त पर तैयार किये गये पौधे सभी प्रकार की मिट्टियों में उगाये जा सकते हैं, साथ ही ये सूखा सहने के योग्य हैं। एम एम 111 मूलवृन्त रूइया कीट के लिए प्रतिरोधी है। इस मूलवृन्त पर तैयार किये गये पौधे 5.5 मीटर से 6.0 मीटर की दूरी पर रोपित किये जाने चाहिए।

पौध रोपण

बीजू मूलवृन्त या जंगली सेब (क्रेब) पर तैयार किये गये सेब के पौधों की अच्छी बढ़वार होने के कारण 6 से 7 मीटर की दूरी पर रोपित किया जाता है। पौध रोपण के लिए एक मीटर गहरा, एक मीटर चौड़ा तथा एक मीटर लम्बा गड्ढा खोदना चाहिए। पौधों की रोपाई दिसम्बर से फरवरी प्रथम पखवाड़े तक की जा सकती है। अधिक ढाल वाली भूमि में उद्यानों की स्थापना कन्टूर विधि से की जानी चाहिए। सीढ़ीदार खेतों में वृक्ष हमेशा खेत के मध्य भाग में रोपित करें ताकि उद्यान प्रबन्धन क्रियायें जैसे खाद देना, कटाई–छंटाई, निराई–गुड़ाई, खरपतवार नियंत्रण, फलों की तुड़ाई आदि आसानी से किये जा सकें। अधिक गहरी तथा उपजाऊ भूमि में गड्ढ़े का आकार एक घनमीटर से अपेक्षाकृत कुछ कम भी रखा जा सकता है। गड्ढे पौध रोपण के एक माह पूर्व तैयार करें। रोपण से पूर्व गड्ढों में 40 से 50 कि.ग्रा. सड़ी हुई गोबर की खाद तथा 500–1000 ग्राम सुपर फॉस्फेट खाद मिट्टी में अच्छी तरह मिला दें। भूमिगत कीड़ों से बचाव के लिए मिट्टी में प्रति गड्ढ़ा 150–200 ग्राम कीटनाशक दवा भली–भॉति मिलायें।

पौध रोपण के समय यह ध्यान रखना आवश्यक है कि पौधों को गड्ढों के बीच में रोपित किया जाय

तथा कलम से जुड़ा भाग भूमि की सतह से 15–20 से.मी. ऊपर रहे।

खाद एवं उर्वरक

फल वृक्षों की आयु के अनुरूप खाद एवं उर्वरकों की उचित मात्रा देना आवश्यक है। बीजू मूलवृन्तों पर तैयार किये गये सेब के एक वर्ष की आयु के पौधों को प्रति वर्ष 30 कि.ग्रा. गोबर की खाद के साथ 70 ग्राम नत्रजन, 35 ग्राम फॉस्फोरस तथा 70 ग्राम पोटाश आवश्यक है। एक वर्ष की आयु के पौधों को दी जाने वाली निर्धारित उर्वरक की मात्रा को फल वृक्ष की आयु से गुणा करने पर उस आयु के वृक्ष के लिए उर्वरक की मात्रा निकाली जा सकती है। ओजस्वी मूलवृन्तों या बीजू मूलवृन्तों पर उगाये गये पौधों को 10 वर्ष की आयु के पश्चात् उर्वरकों की वही मात्रायें दी जानी चाहिए जो 10 वर्ष की आयु के लिए निर्धारित की गयी है।

खाद व उर्वरकों को सेब के फल वृक्षों के तने के निकट नहीं डालना चाहिए, क्योंकि ऐसा करने से ये फल वृक्षों की जड़ों तक नहीं पहुंच सकेंगें, साथ ही खाद व उर्वरक के सीधे सम्पर्क में आने से तने को हानि पहुँचेगी। फॉस्फोरस व पोटाश युक्त उर्वरकों को फल वृक्ष के फैलाव घेरे में 15–20 से.मी. गहरी नाली में प्रयोग करना चाहिए। नत्रजन युक्त उर्वरकों को थाले में छिड़कने के पश्चात् गुड़ाई कर मिट्टी में मिला देना आवश्यक है। गोबर की खाद को जाड़ों के दिनों (सुसुप्तावस्था) में किसी भी समय मुख्य तने से 40 से.मी. दूर थाले में फैलाकर मिट्टी में भलीभाँति मिला दें। दिसम्बर/जनवरी माह में गोबर की खाद के साथ–साथ पोटाश तथा फॉस्फोरस की पूरी मात्रा का प्रयोग करें। नत्रजन की कुल मात्रा का आधा भाग पौधों पर फूल आने से 2–3 सप्ताह पहले और शेष भाग इसके एक महीने बाद डालें। जिन क्षेत्रों में गर्मियों में सिंचाई की सुविधा नहीं है, वहाँ पर नत्रजन के दूसरे बचे हुए आधे भाग को पोटाश तथा फॉस्फोरस के साथ एक ही बार में डाल दें, या नत्रजन के आधे भाग की टॉपड्रेसिंग के स्थान पर पत्तियों पर 0.5 प्रतिशत यूरिया का छिड़काव करें। इसके अलावा फल तोड़ने के तुरन्त बाद 1.0 प्रतिशत यूरिया तथा 0.3 प्रतिशत ब्लाइटॉक्स का छिड़काव करें।

संधाई एवं काट–छाँट

सेब में संधाई व काट–छाँट का बड़ा महत्व है। पौधों को प्रारम्भिक 4–5 वर्ष की अवधि तक उचित ढांचा देना आवश्यक है, ताकि पौधा एक निश्चित सुदृढ़ आकार धारण कर ले तथा पौधों की शाखायें उचित स्थान से निकलें, जिससे विभिन्न कृषि क्रियायें जैसे रसायन का छिड़काव, उर्वरकों का प्रयोग और फलों का तोड़ना आदि में कोई असुविधा न हो। सेब में सधाई रूपान्तरित अग्र प्ररोह प्रणाली से की जाती है। इस विधि से मुख्य तने को 2–3 वर्षों तक प्राकृतिक रूप से बढ़ने दिया जाता है, जिस पर प्राथमिक शाखाओं की संख्या 6–7 हो जाने पर, मुख्य तने से ऊपर वाले हिस्से को भूमि की सतह से 1.50–2.0 मीटर की ऊँचाई से काट कर निकाल दिया जाता है।

सेब में कटाई छंटाई जाड़े के मौसम में जब पत्तियां गिर जाती हैं, तथा पौधे सुसुप्तावस्था में रहते हैं, नई कोपलें (कल्ले) अथवा फूल आने के एक माह पूर्व ही समाप्त कर लेना चाहिए। फलत में आने वाले सेब के वृक्षों की काट छाँट बहुत कम की जाती है। सेब की अधिकतर जातियों में फल छोटी ठहनियों पर आते हैं, जिन्हें स्पर कहते हैं। इसके अलावा कुछ किस्मों में इन छोटी टहनियों (स्पर) के अतिरिक्त पिछले ऋतु की वृद्धि की हुई लगभग एक साल पुरानी टहनियों पर भी फल आते हैं। 8–10 साल से पुराने स्पर को काट देना चाहिए। अधिक स्वस्थ तथा तीव्र गति से बृद्धि वाली शाखाओं की काट–छाँट कम करनी चाहिए। इन शाखाओं के नीचे कलियां स्पर बनायेंगी तथा सिरे की आंखों से कई प्ररोह निकलेंगी। इन प्ररोहों से एक या दो स्वस्थ तथा तीव्र वृद्धि करने वाले प्ररोहों को छोड़कर अन्य कमजोर टहनियों को लगभग 6–7 से.मी. की दूरी पर से काट देना चाहिए, जिससे सम्भवतः इनसे स्पर बन सकेगें। अधिक उर्वरता वाली भूमि में रोपित सेब के वृक्षों में काट–छाँट कम करनी चाहिए। इसके अतिरिक्त सेब के पेड़ों को जितनी अधिक नत्रजन दी जाय उसी अनुपात में काट–छाँट हल्की करनी चाहिए। अधिक ओज वाले प्रकन्द पर तैयार किये गये सेब के वृक्षों की काट–छाँट भी हल्की करनी चाहिए। जिन स्थानों की जलवायु अधिक आर्द्रता वाली हो वहाँ पर काट–छाँट हल्की करनी चाहिए। इसके अलावा काट–छाँट करते समय निम्न सावधारियाँ रखें :

1. कटान साफ एवं सीधा होना चाहिए।
2. कटान मुख्य शाखा या तने के पास देना चाहिए जिससे कि कटे हुए भाग पर ठूठ न रहने पाये।
3. कटे हुए स्थान के नीचे कली बाहर की ओर होनी चाहिए जिससे पौधे की बढ़वार बाहर की ओर हो।
4. रोग ग्रसित, सूखी, व्यर्थ एवं एक दूसरे को काटती हुई अन्दर की तरफ वृद्धि करने वाले अनावश्यक टहनियों को काट कर अलग कर देना चाहिए।
5. जड़ों के पास से निकलने वाले कल्ले (वाटर–स्प्राउट्स) को काट कर निकाल देना चाहिए।
6. भूमि को छूने वाली तथा नीचे की ओर झुकी या लटकी हुई शाखाओं को भी काटकर अलग कर देना चाहिए अन्यथा ये तेज हवा से प्रभावित होकर टूट सकती हैं।
7. काट–छाँट के बाद कटे हुए भागों को फंफूदीजनक रोगों से बचाने के लिए तथा कटे घावों को शीघ्रता से भरने के लिए चौबटिया पेस्ट लगायें।

प्रमुख कीट एवं रोग नियंत्रण

सैंजोज स्केल सेब का भयंकर नाशीकीट है। ग्रसित पौधों की छाल पर भूरे रंग के धब्बे बनते हैं जो मिल कर बिखरी राख जैसे नजर आते हैं। इससे पौधों की वृद्धि रूक जाती है और पौधे सूखने लगते हैं। रोकथाम के लिए सेब पौधों की सुसुप्तावस्था में ट्री स्प्रे आयल 2–3 प्रतिशत का छिड़काव करें। इसके अलावा 'वूली एफिड' का प्रकोप सफेद रूई जैसे स्त्राव के कारण दूर से ही पता चलता है। ये कीट पौधों की कोमल टहनियों, कटे भागों, भूमि में जड़ के पास झुण्ड में पाये जाते हैं। इनके शिशु तथा वयस्क पौधे का रस चूसते हैं, और उस स्थान पर गाँठे बन जाती हैं। कीट के नियंत्रण के लिए पौधों पर जनवरी/फरवरी माह में क्लोरपाइरीफॉस 0.04 प्रतिशत अथवा थियामिथोक्जाम 0.025 प्रतिशत का छिड़काव करें। ट्री स्प्रे आयल के साथ भी उपरोक्त कीटनाशकों का छिड़काव किया जा सकता है। इन कीटनाशकों का प्रयोग गुलाबी कली अवस्था शुरू होने पर करने से थ्रिप्स जो कि पत्तियों, कलियों और फलों का रस चूसते हैं, का भी नियंत्रण किया जा सकता है।

जिन क्षेत्रों में बरसात के समय अधिक पानी इकट्ठा होता है, जड़ सड़न की समस्या बनी रहती है। इनमें रोग ग्रस्त पौधों की सतह को सफेद रोयेंदार फफूँदी ढक लेती है। पत्तियाँ पीली पड़कर समय से पहले झड़ जाती हैं। इसके लिए बगीचों में पानी के निकास का उचित प्रबन्ध रखें। जड़ के रोग ग्रस्त भाग को काट दें और कटे भाग पर चौबटिया पेस्ट (रेड लैड ऑक्साइड, कॉपर कार्बोनेट और अलसी का तेल 1:1:1.25) अथवा कॉपर ऑक्सीक्लोराइड का लेप करें। ग्रसित पौधों में 15–20 दिनों के अन्तराल पर कार्बेंडाजिम (0.2 प्रतिशत) अथवा कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.3 प्रतिशत) मुख्य तने से 30 से.मी. की दूरी पर छेद करके डालें। इसके अलावा कॉलर रॉट रोग के लक्षण जड़ एवं तने के जोड़ के पास दिखाई देते हैं तथा तने की छाल भूरी व नर्म पड़ जाती है और स्पंज की तरह पिलपिली हो जाती है। जिन बगीचों में पानी की निकासी ठीक नहीं होती है, रोग तेजी से फैलता है। प्रभावित पौधों को नवम्बर–दिसम्बर महीनों में बीमारी वाले भाग के चारों ओर की मिट्टी हटा कर धूप में खुला छोड़ दें। रोग ग्रसित छाल को चाकू से छील दें और उस स्थान पर चौबटिया पेस्ट या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड का पेस्ट लगायें। पेड़ के तने के चारों ओर 30 से.मी. के दायरे में 0.3 प्रतिशत मैंकोजेब या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड या मेटालैक्सिल घोल से सिंचाई करें। बगीचों में पौधे का जोड़ वाला भाग भूमि की सतह से कम से कम 20–25 से.मी. की ऊँचाई पर रखें तथा रोग रोधी मूलवृन्तों का प्रयोग करें।

इसके अलावा असामयिक पतझड़ तथा स्कैब रोग भी सेब की प्रमुख व्याधियों में हैं। परन्तु उत्तराखण्ड के सेब उत्पादन क्षेत्रों में इनका प्रकोप कम देखा गया है।

झूला (लाइकेन्स) नियंत्रण

पर्वतीय क्षेत्रों में अधिक वर्षा के कारण वातावरण में अधिक नमी रहती है जिससे फल वृक्षों में झूले या लाइकेन्स का प्रकोप अधिक होता है। झूला (लाइकेन्स) प्रायः ऐसे फल वृक्षों पर लगता है जिसकी देखरेख ठीक से नहीं हो पाती है। इसका प्रकोप पुराने तथा कुप्रबन्ध युक्त उद्यानों में अधिक देखने में आता है। झूला नियंत्रण हेतु कास्टिक सोडा का 1 प्रतिशत घोल बनाकर शीतकाल (दिसम्बर–जनवरी) में पत्तियॉ गिर जाने के बाद छिड़काव करें।

सम्पर्क सूत्र : 9412984236, 9411103472 ☑

नाशपाती

डा. डी.सी. डिमरी एवं डा. श्वेता उनियाल

उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में उगाये जाने वाले शीतोष्ण फलों में सेब के पश्चात् नाशपाती का एक प्रमुख स्थान है। यह एक ऐसा फल है जो गर्म, आर्द्र, उपोष्ण मैदानी क्षेत्रों से लेकर शुष्क, शीतोष्ण, ऊँचाई वाले क्षेत्रों में बिना किसी बाधा के उगाया जा सकता है। परन्तु इसकी खेती कुछ सीमित क्षेत्रों में ही की जा रही हैं। यदि इसकी खेती को वैज्ञानिक संस्तुतियों के आधार पर किया जाय तो उद्यानपतियों को अपने उद्यानों से अधिक आर्थिक लाभ प्राप्त हो सकता है।

जलवायु

ऐसे क्षेत्र जो समुद्रतल से 600 मीटर से 2500 मीटर की ऊँचाई पर स्थित हैं, इसकी खेती के लिए उपयुक्त पाये गये हैं। इसके लिए 550–1500 घंटे शीत तापमान (7 डिग्री से. से कम) होना आवश्यक है। निचले क्षेत्रों में इसकी बागवानी की सम्भावना उत्तर–पूर्व दिशा वाले क्षेत्रों में और ऊँचाई वाले दक्षिण–पश्चिम दिशा के क्षेत्रों में अधिक है। ऐसे स्थान जहाँ वर्षा अधिक होती है, नाशपाती की खेती के लिए उपयुक्त नहीं होते। बसन्त ऋतु में पड़ने वाले पाले, ओलावृष्टि, कोहरे और ठंड से इसके फूलों को भारी क्षति पहुँचती हैं।

भूमि का चुनाव

नाशपाती के फल वृक्षों की अच्छी बढ़वार तथा नियमित फल उत्पादन के लिए अच्छे जल निकास व मध्यम बनावट वाली बलुई–दोमट तथा गहरी मिट्टी की आवश्यकता होती है। नाशपाती के पौधे चिकनी और अधिक पानी वाली भूमि पर भी उगाये जा सकते हैं, परन्तु पौधों के जड़ों की अच्छी बढोत्तरी के लिए मिट्टी कम से कम दो मीटर गहराई तक पथरीली या कंकड़ वाली नहीं होनी चाहिए।

प्रमुख्य किस्में

1. पर्वतीय क्षेत्रों के लिए

थम्बपियर, अर्ली चाइना, बग्गूगोशा, कान्फ्रेंस, बारटलैट, मेक्स रेड बारटलैट, फ्लेमिस ब्यूटी, विक्टोरिया, ब्यूरेहार्डी, जार्गनेल, विन्टर नेलिस, डोएने-डू-कोमिस, कलैप्स फेवरट

2. घाटी, तराई एवं भावर क्षेत्रों के लिए

चाइनापियर, लिंकान्टे, कीफर, गोला, पत्थरनाख, स्मिथ, पंजाब नाख, पंजाब सॉफ्ट, पंजाब नेक्टर, पंजाब ब्यूटी।

नाशपाती के फल वृक्षों से अच्छे एवं नियमित फलत लेने के लिए एक ही समय में आने वाली दो या तीन किस्मों को रोपित किया जाना चाहिए, ताकि फल वृक्षों में परागण ठीक प्रकार से हो सके। उद्यान में फूल आते समय मधु–मक्खियों के बक्से रखने से परागण क्रिया को प्रभावी बनाया जा सकता है।

प्रवर्धन

नाशपाती के पौधे मेहल (जंगली नाशपाती) या कैन्थ के बीज से बने मूलवृन्त (रूटस्टॉक) पर कलम करके तैयार किये जाते हैं। पौधे तैयार करने के लिए चश्मा या जिह्वा विधियों को अपनाया जा सकता है। चश्मा विधि से प्रसारण के लिए टी या शील्ड विधि प्रयोग में लायी जाती है तथा इसे जून–जुलाई में प्रयोग किया जाता है। कलम विधि से प्रवर्धन के लिए जिह्वा या टंग विधि प्रयोग में लायी जाती है तथा जनवरी–फरवरी का समय इसके लिए अधिक उपयुक्त है। मूलवृन्त के रूप में बीजू पौधे की मोटाई पेन्सिल के बराबर हो तथा यह एक वर्ष के आयु का होना चाहिए।

क्लोनल रूट स्टॉक

आजकल नाशपाती को प्रमुख रूप से 'क्वीन्स–सी' मूलवृन्त पर प्रवर्धन किया जाता है। यह एक बौना मूलवृन्त है जिस पर पौधों का आकार लगभग दूसरे मूलवृन्तों पर तैयार किये गये पेड़ों से 50–60 प्रतिशत कम होता है। इस मूलवृन्त की योग्यता अन्य व्यावसायिक किस्मों से कम है। इस असंगति को दूर करने के लिए ओल्ड होम या ब्यूरोहार्डी इंटर स्टॉक लगाना चाहिए।

बगीचे की रूपरेखा और पौध रोपण

सामान्य रूप से बीजू मूलवृन्त पर तैयार किये गये पौधे के बीच 5 × 5 मीटर की दूरी रखी जाती है। उद्यान में पौध रोपण से एक माह पूर्व रेखांकन के अनुसार 1 घनमीटर (1 मीटर लम्बा × 1 मीटर चौड़ा × 1 मीटर गहरा) आकार के गड्डे बना लेने चाहिए। गड्डे से निकाली हुई मिट्टी में 50 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी खाद, 150–200 ग्राम कीटनाशक दवा को मिट्टी में अच्छी तरह से मिलाकर गड्डे को भर देना चाहिए। पौध रोपण के समय यह ध्यान रखना आवश्यक है कि

कलम के जोड़ वाला भाग भूमि सतह से 10–15 से.मी. ऊपर रहे। पौध रोपण के पश्चात् सिंचाई करना आवश्यक है।

काट–छांट

नाशपाती में फल पुराने स्पर (दलपुट) एवं एक वर्ष पुरानी शाखा पर आते हैं। आपस में उलझी हुई, सूखी, टूटी तथा रोगग्रस्त शाखाओं को पेड़ों से अलग कर दें और सुसुप्तावस्था में शाखाओं के ऊपर का एक चौथाई भाग काट दें ताकि अधिक वानस्पतिक वृद्धि न हो। नाशपाती की काट–छांट सेब की ही भाँति, परन्तु अपेक्षाकृत कम करनी चाहिए।

खाद और उर्वरक

नाशपाती के लिए खाद तथा उर्वरक की मात्रा प्रयोग पर आधारित प्रमाणित सिफारिशें नहीं हैं, तथापि घाटी तथा तराई क्षेत्रों में 25–30 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी खाद, 50 ग्राम नत्रजन, 30 ग्राम फॉस्फोरस तथा 50 ग्राम पोटाश प्रति वृक्ष प्रति वर्ष आयु के अनुसार देना चाहिए। दस वर्ष पश्चात् उर्वरकों की यह मात्रा स्थिर कर देनी चाहिए। तदोपरान्त 500 ग्राम नत्रजन, 300 ग्राम फॉस्फोरस तथा 500 ग्राम पोटाश प्रति वृक्ष प्रति वर्ष देना चाहिए। गोबर की खाद की मात्रा 10 वर्ष पश्चात् 50 कि.ग्रा. प्रति वृक्ष देनी चाहिए। गोबर की खाद, फॉस्फोरस तथा पोटाश उर्वरक की सम्पूर्ण मात्रा दिसम्बर–जनवरी माह में दी जानी चाहिए। नत्रजन की आधी मात्रा का प्रयोग फूल आने से एक माह पूर्व तथा शेष आधी मात्रा को दो बराबर भागों में बाँट कर आधी मात्रा फल लग जाने के पश्चात् तथा शेष मात्रा फलों की तुड़ाई के पश्चात् अगस्त–सितम्बर में देनी चाहिए। बोरोन की कमी के लिए नाशपाती के पौधे संवेदनशील हैं तथा इसके अभाव में छोटी अवस्था के कच्चे फल फट जाते हैं। परिपक्व अवस्था तक पहुँचते, फल पर स्थान–स्थान पर दबाव पड़ जाता है। इसलिए 0.1% बोरिक एसिड (1 ग्राम बोरिक एसिड प्रति लीटर पानी) का छिड़काव करें।

कीट एवं रोग नियंत्रण

सेब पर लगने वाले प्रमुख कीट एवं रोगों का आक्रमण नाशपाती पर भी होता है। अतः सेब के समान ही फसल सुरक्षा कार्यक्रम अपनाना चाहिए।

सम्पर्क सूत्र : 9412984236, 9411103472 ☑

गुठलीदार फल (आड़ू, प्लम, खुमानी एवं बादाम)

डा. श्वेता उनियाल एवं डा. डी.सी. डिमरी

उत्तराखण्ड में गुठलीदार फलों में विशेषकर आड़ू, प्लम, खुमानी, बादाम, अखरोट आदि उगाये जाते हैं। इन फलों की सफल खेती के लिए विभिन्न जलवायु की आवश्यकता होती है। शीतोष्ण फलों में आड़ू को सबसे गर्म जलवायु की आवश्यकता होती है। आड़ू की बागवानी निचले एवं मध्य पर्वतीय क्षेत्रों में समुद्र तल से 1000 से 2000 मीटर ऊँचाई वाले क्षेत्रों में सफलतापूर्वक की जा सकती है। इसके अलावा उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में भी आड़ू की फ्लोरिडा ग्रुप की किस्मों के साथ–साथ कम अवशीतन वाली कुछ अन्य प्रजातियाँ भी उगायी जाती हैं।

प्रदेश में उगाये जाने वाले प्लम अधिकतर जापानी प्रजाति के हैं, और इनकी ठण्ड की आवश्यकता आड़ू एवं बादाम से अधिक होती है। समुद्र तल से 1000 मीटर से 2000 मीटर तक मध्यम ऊँचाई तथा निचले मध्यमवर्ती क्षेत्रों में प्लम की बागवानी की जा सकती है। खुमानी के लिए भी प्लम की तरह ही जलवायु की आवश्यकता होती है, परन्तु आड़ू एवं प्लम की तरह इसे मैदानी क्षेत्रों में नहीं उगा सकते हैं। सफेद गूदे और मीठी गिरी वाली खुमानी के लिए अधिक ठण्डी जलवायु की आवश्यकता होती है।

बसंत ऋतु में गुठलीदार फलों में फूल आते समय जहाँ पाला पड़ता है, इन फलों की बागवानी के लिए उपयुक्त नहीं है। इसके अलावा फल पकते समय सूर्य की रोशनी तथा गर्मी का होना आवश्यक है। साथ ही इन फलों की सफल खेती के लिए वातावरण में आर्द्रता कम होनी चाहिए अन्यथा फफूंदी जनक रोग पर्ण कुंचन के प्रकोप की सम्भावना बढ़ जाती हैं।

भूमि का चुनाव

आड़ू के लिए हल्की रेतीली, बलुई दोमट मिट्टी सबसे अच्छी पाई गयी है। अधिक उपजाऊ

भूमि में वानस्पतिक बढ़ोत्तरी अधिक होती है। यदि मिट्टी कंकड़ीली तथा गहरी हो तो भी आड़ू बहुत अच्छा पैदा होता है। अधिक पोषक तत्व वाली चिकनी मिट्टी जिसमें जल निकास अच्छा न हो, इसकी खेती के लिए उपयुक्त नहीं होती है। कम उपजाऊ उथली और पथरीली भूमि भी आड़ू के लिए उपयुक्त नहीं है।

प्लम, खुमानी और बादाम के लिए गहरी, उपजाऊ तथा उचित जल निकास वाली दोमट मिट्टी की आवश्यकता होती है।

प्रजातियाँ

1. आड़ू

मध्यम से ऊँचे पर्वतीय क्षेत्र : रेड जून, पैराडीलक्स, तोतापरी, सफेदा, अर्ली व्हाइट जाईंट, अलेक्जेन्डर, वर्ल्ड अर्लीइस्ट, टिशिया सेमेस्टो, रेड गोल्ड, सन हैवन, जुलाई एलवर्टा, स्नोक्वीन (नैक्ट्रीन)।

निचले पर्वतीय/घाटियों तथा मैदानी क्षेत्र : सहारनपुर प्रभात, प्रताप, अर्लीग्रेन्ड, फ्लोरिडासन, फ्लोरिडा प्रिन्स, फ्लोरिडा रेड, फ्लोरिडा गोल्ड, शरबती, शरबती सुर्खा, पंत पीच 1, शाने–पंजाब।

2. प्लम

ऊँचे पर्वतीय क्षेत्र : स्वीट अर्ली, मैथले, कैलसे, सतसूमा, बरबैंक, एलीफैण्ट हार्ट, मैरीपोजा।

मध्यम पर्वतीय क्षेत्र : सैन्टा रोजा, ब्यूटी, रेड ब्यूट, फ्रंटीयर, मैरीपोजा।

निचले पर्वतीय क्षेत्र/घाटियों तथा मैदानी क्षेत्रः सतलज परपल, काला अमृतसरी, अलूचा परपल, तितरों, काबुली ग्रीन गैंज, अलूचा।

3. खुमानी

ऊँचे पर्वतीय क्षेत्र : कैशा, नगेट, सफेदा, चारमग्ज, शक्करपारा।

मध्यम एवं शुष्क शीतोष्ण पर्वतीय क्षेत्र : न्यू कैसल, हरकोट, अर्ली शिप्ले तथा सुखाई जाने वाली किस्में यथा चारमग्ज, सफेदा, शक्करपारा और कैशा।

4. बादाम

शुष्क शीतोष्ण क्षेत्र : नी–प्लस–अल्ट्रा, टैक्सास थिनशैल्ड।

ऊँचे तथा मध्य पर्वतीय क्षेत्र : मर्सिड, नान पेरिल, आई–एक्स–एल।

निचले पर्वतीय तथा घाटी क्षेत्र : ड्रेक, नी–प्लस–अल्ट्रा, पीयरलैस।

मूलवृंत तथा प्रवर्धन

समस्त गुठलीदार फलों के पौधे वानस्पतिक विधि से तैयार किये जाते हैं। आमतौर पर चश्मा और कलम की विधियाँ अपनाई जाती हैं। आड़ू की जंगली आड़ू तथा आड़ू–बादाम के संकर मूलवृंत पर चश्मा (बडिंग)/कलम (ग्राफ्टिंग) की जाती है। प्लम और खुमानी की बडिंग/ग्राफ्टिंग जंगली खुमानी (चूलू) के मूलवृंत पर की जाती है। काबुली ग्रीन गैज क्लोनल मूलवृंत पर भी प्लम की ग्राफ्टिंग में अच्छी सफलता मिलती है। साधारणतया बादाम के प्रवर्धन के लिए कड़वा बादाम, जंगली आड़ू तथा आड़ू–बादाम संकर मूलवृंत प्रयोग में लाये जाते हैं।

संधाई एवं कांट–छांट

लगभग समस्त गुठलीदार फलों में खुले केन्द्र की विधि (ओपन सेन्टर प्रणाली) द्वारा बाग लगाने के साथ ही संधाई का कार्य प्रारम्भ हो जाता है। संधाई का प्रमुख उद्देश्य पौधों के केन्द्र तक सूर्य का प्रकाश एवं हवा का संचार है। पेड़ की शाखायें मजबूत होनी चाहिए ताकि फलों के बोझ को सहने में समर्थ हो। इसी के साथ फल पैदा करने वाले भागों (स्पर) का सन्तुलन पूरे पेड़ पर रहे।

पहले 3–4 सालों में पेड़ों का ढांचा तैयार कर फिर कटाई–छटाई का कार्य प्रारम्भ हो जाता है। आड़ू में जिस शाखा पर एक बार फलत हो गई है, उस पर फिर फल नहीं आते और सिर्फ एक साल पुरानी शाखा पर ही फसल लगती है। इसलिए टहनियों की उचित बढ़वार के लिए हर वर्ष आड़ू के पौधों में पर्याप्त काँट–छाँट की जाती है। बारीक टहनियों को काट दिया जाता है, और शेष शाखाओं में 1/3 भाग निकाल कर शेष 2/3 भाग रख लिया जाता है। लगभग 20 साल बाद भारी काँट–छाँट से जीर्णोद्धार किया जाता है। प्लम, खुमानी और बादाम में आड़ू से कम काँट–छाँट की जाती है। फलत शुरू

होने के बाद प्लम, खुमानी तथा बादाम में सिर्फ रोग ग्रस्त, सूखी व टूटी टहनियों को निकालना अधिक आवश्यक है। कुछ बड़ी शाखाओं के अग्रिम भाग को 1/3 से 2/3 तक निकाल दिया जाता है जिससे नई बढ़ोत्तरी बनी रहें। कॉट–छाँट के बाद कटे भागों पर चौबटिया पेस्ट (कॉपर कार्बोनेट एवं रेड लैड ऑक्साइड एक–एक भाग एवं अलसी का तेल सवा भाग) अथवा बोर्डो पेन्ट (नीला थोथा एक भाग, चूना 2 भाग एवं अलसी का तेल 3 भाग) अवश्य लगायें। साथ ही कटाई–छटाई उपरान्त 0.3 प्रतिशत कॉपर ऑक्सीक्लोराइड के घोल का तुरन्त छिड़काव करें।

पौध रोपण

समस्त गुठलीदार फलों का रोपण सर्दियों (दिसम्बर–जनवरी) में किया जाता है। गड्ढा पौधा लगाने के एक माह पहले तैयार कर लें, ताकि मिट्टी में मिले उर्वरक तथा खाद पौधों को पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हो सके, और मिट्टी अपने स्थान पर ठीक से बैठ जाये। सामान्य तौर पर एक घन मीटर ($1\times1\times1$ मीटर^3) का गड्ढा तैयार किया जाता है। पौधों को गड्ढों के ठीक मध्य में लगायें तथा जोड़ वाला भाग भूमि की सतह से 10–15 से.मी. उपर रखें। आडू के पौधों को 4×4 मीटर तथा प्लम, खुमानी एवं बादाम 5×5 मीटर पर लगायें।

खाद एवं उर्वरक

साधारणतया आडू, प्लम, खुमानी एवं बादाम के एक साल पुराने पौधों को 70 ग्राम नत्रजन, 35 ग्राम फॉस्फोरस तथा 100 ग्राम पोटाश की आवश्यकता होती है। उर्वरक की इस मात्रा को दूसरे, तीसरे, चौथे आदि सालों में क्रमशः दोगुना, तिगुना, चौगुना आदि करने के बाद सातवें साल के आगे मात्रा स्थिर करते हुए सातवें साल में 700 ग्राम नत्रजन, 350 ग्राम फॉस्फोरस एवं 100 ग्राम पोटाश का प्रयोग करें। लगभग 30–35 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी खाद के साथ फॉस्फोरस तथा पोटाश दिसम्बर–जनवरी में प्रयोग करें। यदि सिंचाई की सुविधा उपलब्ध हो तो नत्रजन खाद की कुल आधी मात्रा बसन्त ऋतु में फूल एवं पत्तियाँ आने से पहले और बाकी आधी मात्रा उसके एक माह पश्चात् डालें। यदि पानी के लिए वर्षा पर निर्भर हों तो नत्रजन की सम्पूर्ण मात्रा कलियों के फूटने से 15 दिन पहले ही प्रयोग करें।

प्रमुख कीट एवं रोग

आडू का पत्ता मरोड़ तेला सबसे नुकसानदायक कीट है। यह आडू के साथ–साथ प्लम, खुमानी एवं बादाम को भी काफी हानि पहुँचाता है। खिलती कलियों एवं फूलों का रस चूसने के कारण पत्तियाँ एवं फूलों की बालियाँ मुड़ने लगती हैं, जिससे फलत कम हो जाती है। इसके नियंत्रण के लिए फूल खिलने से एक सप्ताह पहले (गुलाबी कली अवस्था) में मिथाइल डिमेटॉन (0.025 प्रतिशत) या डाइमेथोएट (0.03 प्रतिशत) या मोनोक्रोटोफॉस (0.04 प्रतिशत) घोल का छिड़काव करें। इसके अलावा फल मक्खी नामक कीट आडू, प्लम एवं खुमानी को नुकसान पहुँचाती है। यह पके फलों के ऊपर अण्डे देती है और इसके शिशु गूदे को खाते हैं, जिससे फल सड़ने लगते हैं। अप्रैल एवं मई माह में जब मक्खी पत्तों पर नजर आये तो 0.1 प्रतिशत मैलाथियान और 1 प्रतिशत चीनी/गुड़ एक लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करें। साथ ही बाग की सफाई रखें।

इसके अलावा मध्यम/ऊँचे पर्वतीय क्षेत्रों में आडू में पत्ता मरोड़ रोग खिलती कलियों एवं पत्तों में ''टैफरिना डिफॉरमैन्स'' नामक कवक से भी होता है, जिसमें पत्तियाँ मुड़ने के साथ–साथ लाल बैगनी रंग की हो जाती हैं। साथ में पत्तियाँ मोटी, बड़ी एवं फल छोटे हो जाते हैं। इस रोग के नियंत्रण के लिए गुलाबी कली अवस्था में कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 0.3 प्रतिशत अथवा कार्बेंडाजिम 0.1 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें। आडू के पत्ता मरोड़ तेला तथा पत्ता मरोड़ कवक रोग के संयुक्त नियंत्रण के लिए उपरोक्त कीटनाशी एवं कवकनाशी का एक साथ संयुक्त छिड़काव भी किया जा सकता है।

सम्पर्क सूत्र : 9411103472, 9412984236

☑

पुष्प उत्पादन तकनीक

डा. वी.के. राव एवं डा. अन्जू पाल

वर्तमान समय में पुष्पोत्पादन एक उत्कृष्ट व्यवसाय के रूप में विकसित हुआ है। हमारे देश में पुष्पों का उपयोग काफी पहले से पूजा, अर्चना एवं सजावट के लिए किया जाता रहा है, परन्तु आजकल व्यवसाय के रूप में इसका प्रयोग काफी बढ़ गया है। उपयोग के आधार पर फूलों को दो भागों में बांटा गया है–ऐसे पुष्प जिनका प्रयोग पूजा–अर्चना एवं सामाजिक कार्यों में किया जाता है, जिनमें गेंदा, बेला, सिंगल रजनीगंधा, चाइना एस्टर, देशी गुलाब, बवूना (एनुअल क्राइसेन्थिमम) आदि प्रमुख हैं। दूसरे वे पुष्प हैं जिनको कटे फूलों के रूप में सजावट के लिए तथा निर्यात कर आमदनी के लिए उगाया जाता है। इनमें गुलाब, ग्लैडियोलस, जरबेरा, रजनीगंधा, कारनेशन, लिलियम, बर्ड आफ पैराडाइज, ट्यूलिप, एन्थूरियम, आर्किड आदि प्रमुख हैं। भारत में पुष्प उत्पादन अभी भ्रूणावस्था में है, परन्तु यह अच्छी आमदनी एवं रोजगार से परिपूर्ण है लेकिन अभी यहाँ पर उत्तम साधनों, उच्च तकनीक एवं कुशल श्रमिकों की कमी है जिसके द्वारा पुष्पोत्पादन को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर तक बढ़ाया जा सके। कृषि के विविधीकरण में पुष्प उत्पादन एक महत्वपूर्ण एवं आकर्षक व्यवसाय के रूप में उभरा है जिससे पारम्परिक फसलों की तुलना में अधिक आय मिलती है। निःसन्देह पुष्पोत्पादन ग्रामीण क्षेत्रों के लिए रोजगार का एक अच्छा साधन है। इन फसलों से वर्ष भर अच्छी आय मिलती रहती है तथा इनसे प्राप्त कुल लाभ : लागत अन्य फसलों की तुलना में अधिक होता है। आज–कल पुष्पों से बने उत्पादों की माँग विश्व के हर क्षेत्र में है। विगत समय में राज्य एवं केन्द्र सरकारों द्वारा कई बीज नीतियाँ बनाई गयी हैं जिससे द्वारा उच्च गुणवत्ता की विदेशी प्रजातियों के बीज एवं पौध–सामग्री को आयात किया जा रहा है। एपीडा पुष्पोत्पादन को बढ़ावा देने के लिए विभिन्न योजनाओं द्वारा पुष्प उत्पादकों की सहायता की जा रही है। उत्तराखण्ड में भी पुष्पोत्पादन उत्तम व्यवसाय के रूप में उभरा है क्योंकि यहाँ की जलवायु इसके लिए बहुत अनुकूल है, जिसके द्वारा उच्चकोटि के पुष्पों का उत्पादन कर राज्य के साथ–साथ देश की अर्थव्यवस्था को और मजबूत किया जा रहा है। केन्द्र एवं राज्य सरकार की विभिन्न योजनाएं भी इस व्यवसाय को बढ़ावा दे रही हैं।

विश्व के पुष्प बाजार में भारत की भूमिका अच्छी रही हैं। विगत वर्षों में न केवल घरेलू पुष्प उत्पादन बढ़ा है बल्कि निर्यात में भी काफी वृद्धि हुई है। गमले वाले पौधों के अतिरिक्त पुष्पों जैसे–गुलाब, कारनेशन, जरबेरा, ग्लैडियोलस, ऑर्किड एवं गुलदाउदी के पुष्पों की बाजार में अधिक माँग है। इसके अलावा पुष्पों की नई प्रजातियाँ, जैसे कैला लिली एवं जिप्सोफिला आदि की जरूरत महसूस होने लगी है। पुष्पों की उत्पादन प्रणाली में बहुत बदलाव आया है। गुणवत्तायुक्त पुष्पों की निरन्तर माँग बढ़ रही है जिसके लिए ग्राहक अधिक कीमत देने को तैयार है। पुष्प उत्पादक इसके लिए पॉलीहाउस एवं अन्य उच्च तकनीकी विधियों को अपनाने को अग्रसर हैं। जिसके लिए पुष्प उत्पादकों को सरकार द्वारा भी सुविधाएं उपलब्ध कराई जा रही हैं। पौध, बीज व फूलों से बने पदार्थ जैसे–तेल, इत्र, सूखे पुष्प आदि अधिक आय हेतु अच्छे विकल्प हैं जिनको अपनाकर किसान भाई अधिक आमदनी प्राप्त कर अपने जीवन को खुशहाल कर अपने स्तर को ऊपर उठा सकते हैं।

जरबेरा

जरबेरा एक बहुत ही महत्वपूर्ण पुष्प है जो कि विश्व के अनेक भागों में उगाया जाता है। इसके फूल अनेक रंगों तथा आकार के होने के कारण

काफी पसंद किये जाते हैं। इसको गमलों में भी उगाया जा सकता है। राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों में इसके काले रंग के केन्द्र वाले पुष्पों की बहुत माँग है। उद्यानों की शोभा बढ़ाने के लिए एकल तथा अर्द्ध डबल तथा कर्तित पुष्पों के लिए डबल प्रकार के पुष्पों को उगाया जाता है। जरबेरा के अच्छे फूल प्राप्त करने के लिए प्रकाश की तीव्रता 50 प्रतिशत होना आवश्यक है लेकिन गर्मी के महीनों में आंशिक रूप से छायादार जाल (शेडनेट) में भी इसकी खेती की जा सकती है। प्रायः जरबेरा की खेती के लिए दिन का तापमान 22–25 डिग्री सेल्सियस तथा रात का तापमान 12–16 डिग्री सेल्सियस उपयुक्त होता है। सर्दियों में प्रकाश की कमी से फूलों के उत्पादन पर बुरा प्रभाव पड़ता है। जरबेरा की व्यावसायिक रूप से महत्वपूर्ण किस्में जैसे– लिविया, ब्रेकडांस, पिंगारू, मेरीनील, रीयोनीग्रो, रोजालीन, बबलगम, रेजिना, नीरो, पैराडे मिक्स, अलसमीर, इबिजा, गोल्डस्पाट, सन सेट, तारा, लियोनेला, ओरनेला, रोजेटा, ग्लोरिया, अल्कजियास गिन्ना, मोनिका, अनेकी आदि भारत में संरक्षित खेती के रूप में उगायी जाती हैं। पॉलीहाउस में जरबेरा को लगाने से पूर्व रोगों से रोकथाम के लिए भूमि का शोधन फार्मेल्डिहाइड रसायन 25 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर (प्रति वर्ग मीटर 10 लीटर घोल) से किया जाता है। ऊतक संवर्धन विधि द्वारा तैयार पौधों का उपयोग किया जाता है। जरबेरा की अच्छी वृद्धि एवं गुणवत्तायुक्त उत्पादन के लिए अधिक खाद एवं उर्वरक की आवश्यकता होती है। रोपण के तीन हफ्ते बाद एन.पी.के. (10:15:20 ग्राम प्रति वर्ग मी. प्रतिमाह) का तीन महीने तक छिड़काव करने से पौधों की वृद्धि अच्छी होती है तथा जब फूल आना प्रारम्भ हो जाये उस समय 15:10:30 ग्राम एन.पी.के. प्रति वर्ग मी. प्रति माह देना चाहिए। इसके अतिरिक्त सूक्ष्म पोषक तत्व जैसे बोरॉन, कैल्शियम, मैग्नीशियम तथा कॉपर (1.5 मि.ली. प्रति वर्ग मी.) को सिंचाई के साथ देने से अच्छी गुणवत्ता के फूल प्राप्त होते हैं। जरबेरा में रोपण के 8–12 हफ्तों के बाद फूल आने शुरू हो जाते हैं। पूर्ण खिले फूल या फूल में पंखुड़ियों की 2–3 कतारें पूर्ण विकसित हो जायें तो उस समय उनको तोड़ लेना चाहिए। फूलों की सप्ताह मे दो से तीन बार तुड़ाई की जाती है। फूलों की तुड़ाई के समय डण्डी को पकड़कर एक ओर झुका ले फिर झटका देकर फूल तोड़ लें। जरबेरा की डण्डी बहुत ही नाजुक होती है जो मुड़ जाती है। मुड़ी हुई डण्डी की बाजार में मांग नहीं होती है। अतः इस पर विशेष ध्यान देना चाहिए। पुष्प डण्डी सीधी तथा इसकी लम्बाई 40 से.मी. से कम नहीं होनी चाहिए। फूल आकार में समान हों तथा सामान्यतया उनका आकार 7 से.मी. से कम नहीं होना चाहिए। जरबेरा के फूलों को छिद्रयुक्त बक्सों में पैक किया जाता है। इसकी डण्डी को सीधा रखने के लिए इस प्रकार के बक्से होने से डण्डी को एक स्थान से दूसरे स्थान को भेजने मे बहुत आसानी होती है। घरेलू बाजारों में भेजने के लिए पैकिंग से पहले प्रत्येक पुष्प को पॉलिथीन की स्लीव्स लगा देते हैं जिससे रगड़ से होने वाली क्षति को रोका जा सके। पुष्पों को प्रशीतक (4–5 डिग्री सेल्सियस) वाहनों के द्वारा या वायुयान द्वारा बाजारों में भेजा जाता है। प्लास्टिक घरों में इसका उत्पादन करने से लगभग 200 पुष्प प्रति वर्ग मी. प्रति वर्ष प्राप्त होते हैं जिसमें 85 प्रतिशत पुष्प उच्च गुणवत्ता के होते हैं।

ग्लैडियोलस

ग्लैडियोलस खुले क्षेत्र में लगाये जाने वाला एक महत्वपूर्ण पुष्प है। ग्लैडियोलस का प्रयोग किनारों, क्यारियों, गमलों व कर्तित पुष्पों के रूप में किया जाता है। इनकी पुष्प डण्डियों का प्रयोग पुष्प सज्जा व गुलदस्ते बनाने में भी किया जाता है। इसकी कुछ प्रजातियों के पुष्पों और कन्दों को अनेक रूपों में प्रयोग किया जाता है। इसे विभिन्न प्रकार

की जलवायु में सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। इसके उत्पादन के लिए औसत तापमान 15–20 डिग्री सेल्सियस होना चाहिए। यदि रात का तापमान 6 डिग्री सेल्सियस से कम हो जाता है तो पौधे काफी प्रभावित होते हैं। इसका उत्पादन विभिन्न प्रकार की मृदाओं में किया जाता है। इसकी सफलतापूर्वक खेती के लिए जल निकासयुक्त बलुई दोमट भूमि जिसका पी.एच. मान 5–8 के बीच हो, उपयुक्त रहती है। अधिक पी.एच. वाली भूमि में कार्बनिक पदार्थ और जिप्सम मिलाकर पी.एच. मान कम कर लेना चाहिए। खुली धूप व हवा वाली जगह का चयन इसकी खेती के लिए करना चाहिए। इसकी प्रमुख किस्में, **सफेद पुष्प वाली**–सिप्लीसिटी, स्नो डस्ट, सुपर स्टार, व्हाइट प्रोसपर्टी, व्हाइट फ्रेन्डशिप, व्हाइट वण्डर, व्हाइट ओक; **क्रीम पुष्प वाली**–क्रीम टॉपर, लैण्डमार्क, लैण्डमार्क पेल मून; **पीले पुष्प वाली**–जेस्टर, नोवालक्स, गोल्डन पीच, गोल्डन हार्वेस्ट,लेमन रफल्स; **नारंगी पुष्प वाली** –ऑरेन्ज ब्यूटी, ऑटम ग्लो, जिप्सी डान्सर, सेटिंग सन; **गुलाबी पुष्प वाली**–ऑस्कर, रेड ब्यूटी, विक्टोरिया, ब्लैक प्रिन्स, डेलिशियस; **बैंगनी पुष्प वाली**–फैडलियों, हरमेंजिरिटी, मयूर, पूसा सारंग, पूसा श्रृंगारिका आदि बुवाई के लिए स्वस्थ एवं रोगमुक्त कन्दों का चयन करना चाहिए। कन्दों के आकार का फूलों की गुणवत्ता और उत्पादन पर सीधा प्रभाव पड़ता है। मध्यम आकार के कन्दों का ही प्रयोग करना चाहिए जबकि छोटे आकार के कन्दों का प्रयोग रोपण सामग्री तैयार करने के लिए किया जाता है। कन्द का आकार पौधे की ऊँचाई, पत्तियों की संख्या, पुष्प डण्डी की लम्बाई तथा पुष्पों की संख्या को प्रभावित करता है। कन्दों का रोपण से पूर्व अच्छी तरह साफ करके कार्बेंडाजिम 2 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर उसमें आधा घण्टा डुबोकर रखना चाहिए। रोपण किए जाने वाले कन्दों का व्यास 4–5 से.मी. होना चाहिए। पर्वतीय क्षेत्रों में ग्लैडियोलस बुवाई का उचित समय मार्च–अप्रैल एवं मैदानों में सितम्बर–अक्टूबर होता है जबकि एक ही तरह सामान्य मौसम में इसका उत्पादन पूरे वर्ष भर किया जा सकता है। पौधे में तेजी से बढ़वार के लिए रासायनिक उर्वरकों की आवश्यकता, जलवायु एवं सिंचाई की विधि, प्रजाति पर निर्भर करता है। कंदों को 25×15 से.मी. की गहराई पर लगाना चाहिए। ग्लैडियोलस की अच्छी बढ़वार लेने के लिए गौण तथा सूक्ष्म दोनों प्रकार के तत्वों की आवश्यकता होती है। सामान्यतः 30 ग्राम नत्रजन, 20 ग्राम फॉस्फोरस एवं 20 ग्राम पोटाश प्रति वर्ग मी. देने से गुणवत्तायुक्त स्पाइक तथा कन्द उत्पादित किये जा सकते हैं। रोपण के तुरंत बाद एक हल्की सिंचाई कर देनी चाहिए परन्तु यदि खेत में उचित नमी हो तो रोपण के बाद सिंचाई करने की आवश्यकता नहीं होती है। बाद में 8–10 दिन के अन्तराल पर नियमित सिंचाई करनी चाहिए। मिट्टी चढ़ाना एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। पौधे गिरने से बचाने के लिए सहारा देना आवश्यक है। यह प्रक्रिया पौधों में तीन से पाँच पत्तियाँ आ जाने पर किया जाना चाहिए। कन्द रोपण के 60–90 दिन बाद स्पाइक काटने योग्य हो जाते हैं। स्पाइक को सुबह या शाम के समय ही काटना चाहिए। सुदूर बाजारों में भेजने के लिए स्पाइक काटने की सही अवस्था तब मानी जाती है जब कि इसके नीचे की 1–2 पंखुड़ी खिलने लगे। स्थानीय बाजारों में स्पाइक को बेचने के लिए नीचे की एक या दो पंखुड़ी थोड़ी अथवा पूरी तरह खिलने के बाद ही उन्हें काटना चाहिए। स्पाइक को काटने के तुरन्त बाद ताजे पानी से भरी बाल्टी में रखते हैं। फूलों की कटाई के बाद पुष्प डण्डियों को लम्बाई के आधार पर विभिन्न वर्गों में बांट दिया जाता है। ग्रेडिंग के बाद 10–12 स्पाइक का गुच्छा बनाकर उन्हें सुतली, धागे या रबर बैण्ड की सहायता से बांध दिया जाता है। 10–12 गुच्छों को अखबार मे लपेटना चाहिए ताकि उनको तापमान के उतार–चढ़ाव, झटकों तथा नमी की हानि से बचाया जा सके। उसके बाद इन

बण्डलों को 120×60×30 से.मी. आकार के गत्ते के बक्सों मे पैक कर बाजार भेजना चाहिए। ग्लैडियोलस की पुष्प डण्डियों तथा कन्द की उपज उनकी जाति, कन्दों के आकार और खेती की विधि आदि पर निर्भर करती है। एक हैक्टर फसल से 187000 लाख पुष्प डण्डियाँ और लगभग 187000 कन्द एवं 620–650 कि.ग्रा. घनकन्द प्राप्त किए जा सकते हैं।

रजनीगंधा

रजनीगंधा की दो किस्में पायी जाती हैं। पहली वे किस्में हैं जिस पर सिंगल फूल आते हैं। इन किस्मों में सुगन्ध अधिक होती है तथा इनका प्रयोग तेल निकालने एवं गजरा तथा वेनी बनाने के लिए किया जाता है। दूसरे वे किस्में हैं जिन पर डबल आकार के फूल आते हैं। इन किस्मों को कटे फूल के रूप में प्रयोग किया जाता है। ऐसी किस्में भी पाई जाती हैं जिन पर सिंगल फूल आते हैं परन्तु पत्तियाँ रंगीन होती है। इनमें रजत रेखा एवं स्वर्ण रेखा प्रमुख हैं। हाइब्रिड किस्में जैसे सुवासिनी, अर्का निरन्तर एवं श्रृंगार भारतीय औद्यानिकी अनुसंधान संस्थान, बैंगलूरू द्वारा विकसित की गई हैं। इनका पुष्प उत्पादन अन्य किस्मों की तुलना में अधिक होता है।

उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में रजनीगंधा के रोपण के समय फरवरी–मार्च सबसे उत्तम रहता है। रोपण से पूर्व शल्ककदों को फफूँदीनाशक रसायन से उपचारित कर शल्ककन्द से शल्ककन्द की दूरी 15–20 से.मी. तथा पंक्ति से पंक्ति की दूरी 25–30 से.मी. रखते हुए शल्ककन्द के आकार के अनुसार 4–7 से.मी. गहराई पर लगाना चाहिए। एक हैक्टर क्षेत्रफल में लगभग 60 से 80 हजार शल्ककन्दों का रोपण किया जा सकता है तथा एक बार रोपण करने के बाद उत्तम देखभाल कर तीन वर्षो तक उत्पादन लिया जा सकता है। तीन वर्ष बाद पुनः रोपण करना उचित रहता है। रोपण से पूर्व यदि खेत में 50 टन प्रति हैक्टर गोबर की सड़ी खाद डाल दी जाये तो अच्छी फसल प्राप्त होती है। नत्रजन, फॉस्फोरस एवं पोटाश 250: 200:100 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर देना उचित रहता है। समय–समय पर निराई–गुड़ाई एवं अन्य कर्षण क्रियाएं करते रहना चाहिए। रजनीगंधा में रोपण के तीन महीने में फूल आने शुरू हो जाते हैं। एक बार शल्ककन्दों का रोपण करने पर प्रति वर्ष लगभग 1–1.5 लाख पुष्प डन्डी एवं 35–60 कुन्तल प्रति हैक्टर शल्ककन्द प्राप्त होते हैं।

गुलाब

गुलाब में मुख्य रूप से हाइब्रिड टी वर्ग के फूल ही कटे फूल के रूप में प्रयोग किये जाते हैं। हाइब्रिड टी वर्ग के गुलाब बहुत सुन्दर तथा अनेक रंग के होते हैं। इसके पौधे लम्बे, ओजपूर्ण और फैलने वाले होते हैं। जिसमें बड़े आकार की कलियाँ आती हैं। इनकी एक शाखा पर एक ही फूल खिलता है। पॉलीएन्था वर्ग के गुलाबों में फूल कई महीनों तक गुच्छों में निकलते हैं और छोटे होते हैं। इस वर्ग की किस्में अधिक मात्रा में फूल देती है। फ्लोरीबन्डा वर्ग के गुलाब हाईब्रिड टी को पॉलीएन्था के साथ संकरण कराकर विकसित किए गये हैं। ये हाईब्रिड टी से अधिक फूल देते हैं और पॉलीएन्था से अच्छे आकार में होते हैं। ये गुच्छों में फूलते हैं। ग्रैन्डीफ्लोरा वर्ग के गुलाब हाईब्रिड टी और फ्लोरीबन्डा के संकरण से निकाले गये हैं। इसकी शाखा से एक फूल या कभी अधिक फूल निकलते हैं। मिनिएचर गुलाब को प्रचलित भाषा में बेबी या मिनी गुलाब कहते हैं। इनकी पत्तियाँ और फूल छोटे होते हैं। इनकी विशिष्टता यह है कि इनको गमलों और खिड़कियों के सामने तथा किनारा (ऐज) लगाने के लिए आसानी से उगाया जा सकता है। लता गुलाब वर्ग के पौधे लताओं के रूप बढ़ते हैं। हाईब्रिड टी गुलाब की किस्मों में लाल, नारंगी एवं गुलाबी रंग के फूलों की बाजार में अधिक मांग रहती है। इन

किस्मों को उत्तरी भारत में रोजा इंडिका वैराइटी ओडोरेटा की कलम लगाकर उस पर आँख बाँध कर (टी बडिंग) तैयार किया जाता है। यह कार्य मैदानी क्षेत्रों में अक्टूबर से फरवरी तक तथा पर्वतीय क्षेत्रों में फरवरी–मार्च माह में किया जाता है। घरेलू उपयोग एवं व्यावसायिक दृटिकोण से कट फ्लावर के लिए गुलाब की प्रमुख किस्में निम्न प्रकार हैं :

लाल–अर्जुन, हैप्पीनेस, जन्तर मन्तर, गार्डन हेक्कल, मिस्टर लिंकन।

गुलाबी–डा. बी.पी. पाल, एफिल टावर, सेंचुरी टू, क्वीन एलिजाबेथ ।

सफेद–विरगो, जान एफ. कैनेडी, माइवेल मिलिंद, व्हाइट मास्टर पीस, मदर टेरेसा।

ऑरेंज–सुपर स्टार, कमाण्ड परफारमेंस, मोंटेजुमा ।

पीला–गोल्डन जाइन्टस, गोल्डन टाइम, गोल्डन स्पेलेण्डर।

पॉलीहाउस हेतु–फस्ट रेड, सोनिया, ग्राण्ड गाला, विवल्डी,नोबलेस,कान्फेट्टी, वरसिल्लिया, पैसन, गोल्ड स्ट्राइक, एवेलैंच, टॉप सिक्रेट (ताज महल)।

गुलाब के रोपण का सबसे अच्छा समय अक्टूबर माह होता है। अधिक लाभ के लिए पॉलीहाउस में 6–12 पौधे प्रति वर्ग मी. के हिसाब से रोपित करना उचित रहता है। इसमें जून से अगस्त तक पौधों को सुसुप्तावस्था में रखा जाता है, अर्थात उनकी काट–छांट कर उनमें खाद तथा उर्वरक देते हैं। खुले क्षेत्रों में यह कार्य अक्टूबर माह में किया जाता है। रोपाई के बाद हल्की सिंचाई करनी चाहिए। टपक (ड्रिप) विधि से सिंचाई करना उत्तम रहता है। नत्रजन, फॉस्फोरस एवं पोटाश के साथ–साथ मैग्नीशियम की उचित मात्रा का प्रयोग भी उत्तम रहता है। 6 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी खाद, 40 ग्राम नत्रजन, 20 ग्राम फॉस्फोरस, 20 ग्राम पोटाश प्रति वर्ग मी. के हिसाब से पहले गढ्डों में मिला दी जाती है। मैग्नीशियम का प्रयोग कमी के लक्षण दिखाई देने पर किया जाता है। कीट तथा रोगों के नियंत्रण हेतु समय–समय पर उचित दवाओं का प्रयोग करते रहना चाहिए। फूलों की कटाई का सबसे अच्छा समय सुबह का होता है। यदि फूलों को दूर भेजना हो तो टाइट बड स्टेज पर अथवा फूल के आधा खिलने पर काटा जाता है। फूल को काटने के बाद कुछ समय तक ठण्डे तापमान (10 डिग्री सेल्सियस) पर रखने के बाद आवश्यक उपचार कर उसको 40–50 से.मी. लम्बे, 45 से.मी. चौड़े एवं 20 से.मी. गहरे गत्ते के डिब्बे में रखा जाता है तथा तत्पश्चात् वातानुकूलित वाहन द्वारा बाजार भेजा जा सकता है। 10 से 12 टन खिले पुष्प एवं 5 से 7.5 लाख पुष्प डंडियाँ प्रति हैक्टर प्रति वर्ष प्राप्त किया जा सकता है।

लिलियम

लिलियम के फूलों का प्रयोग मुख्य रूप से कटे फूल के रूप में किया जाता है। इसके अतिरिक्त इनको क्यारियों में बार्डर व गमलों में लगाने में प्रयोग किया जाता है। इनकी कुछ प्रजातियाँ भोजन में भी प्रयोग की जाती है। लिलियम के पुष्पों में लिलेलिन नामक एल्केलॉयड पाया जाता है। इनके शल्ककंदो से चिपचिपा पदार्थ निकलता है, जिसका प्रयोग दवा के रूप में किया जाता है। लिलियम (लिली) लिलिऐसी कुल का महत्वपूर्ण कंदीय पुष्प है। लिलियम के शल्ककंद का आधार सख्त होता है जो ऊपर की ओर शाकीय पत्तियों से ढका रहता है। पुष्पों की प्रति डंडी संख्या, पुष्प आकार व पुष्प स्थिति के आधार पर लिलियम को आठ वर्गो में बाँटा गया है। इनमें से केवल दो एशियाटिक व ओरियंटल वर्गों की प्रजातियों का व्यावसायिक स्तर पर कटे हुए पुष्पों के रूप में प्रयोग किया जाता है। एशियाटिक प्रजाति की प्रत्येक डण्डी में 2–3 छोटे पुष्प होते हैं। पुष्पों का व्यास 15–20 से.मी. के बीच होता है। कटे हुए फूलों की आयु 7–14 दिन होती है। पोलियाना (पीला), स्नो स्टार (सफेद), रोमा (पीला सफेद), अलास्का (पीला), कनेक्टीकट किंग

(पीले रंग पर भूरे धब्बे) आदि प्रमुख प्रजातियाँ है। ओरियंटल प्रजाति मे प्रायः प्रत्येक डंडी में 3 से 5 बड़े आकार के आकर्षक व सुगंधित पुष्प होते हैं। इनके फूलों का व्यास 10–30 से.मी. के बीच होता है। इनमें कटे हुए फूलों की आयु 10–15 दिन होती है। कासा ब्लानका (सफेद), स्टार गेजर (गुलाबी) मोनालीसा (गुलाबी/सफेद), एवरेस्ट (सफेद) एवं टाईगर (सफेद) इत्यादि मुख्य प्रजातियाँ हैं। मैदानी क्षेत्रों के लिए इसके रोपाण का समय अक्टूबर–नवम्बर में व पर्वतीय क्षेत्रों के लिए अप्रैल–मई के मध्य है। लिलियम में फूल मैदानी क्षेत्रों में जनवरी–फरवरी तथा पर्वतीय क्षेत्रों में जुलाई–अगस्त में आते हैं। शल्ककन्द से शल्ककन्द की दूरी 15 से.मी. व कतार से कतार की दूरी 25 से.मी. रखी जाती है। रोपाई के समय कन्दो को 15 से.मी. की गहराई पर लगाना चाहिए। कंदीय पुष्प होने के कारण इनमें निमेटोड का भी प्रकोप पाया जाता है। जिसके कारण पौधों की वृद्धि रूक जाती है व पत्तियों पर पीले रंग के धब्बे पड़ जाते हैं। इनकी रोकथाम के लिए शल्ककन्दों को फार्मेलिन के घोल में 40 डिग्री सेल्सियस तापमान पर 1 घंटे के लिए उपचारित करना चाहिए तथा निमेटोडनाशी जैसे मिथाइल ब्रोमाइड प्रयोग में लाया जाना चाहिए। पुष्पवृंतों को उस समय काटना चाहिए जब निचली कली में रंग दिखने लगे या कली आधी खुल जाये। फूलों की ग्रेडिंग पुष्प कलियाँ प्रति डंडी, डंडी की लम्बाई, परिपक्वता व स्थिरता पर निर्भर करती है। पुष्प डंडियों की लम्बाई में 5 प्रतिशत से ज्यादा का अन्तर नहीं होना चाहिए। एक पुष्प डंडी में कम से कम पाँच कलियाँ होना आवश्यक है। डच बाजार में छः ग्रेड (1, 1–2, 2, 2–3, 2–5, 4–7, 4–5) प्रयुक्त किए जाते हैं। इन छः ग्रेडों में कलियों की संख्या प्रति गुच्छा (बंच) क्रमशः 10, 15, 20, 25, 40 एवं 50 होनी चाहिए। 4–5 डंडियों का एक गुच्छा बनाया जाता है। हर एक गुच्छे में कम से कम 20 कलियाँ होती हैं। पैकिंग से पूर्व नीचे से 10 से.मी. तक की पत्तियों को हटा दिया जाता है। इसके पश्चात् पुष्प डंडियों को नीचे से बांध कर प्लास्टिक थैलियों से ढ़क दिया जाता है। लिलियम की उपज कन्द के आकार तथा पौधे की दूरी पर निर्भर करती है। औसत उपज प्रति पौधा निम्न प्रकार हैः

कन्द का आकार	फूलों की संख्या	पौधे प्रति वर्ग मी.
12–14 से.मी.	1.3	40
14–16 से.मी.	2.4	35
16–18 से.मी.	3.5	35
18–20 से.मी.	5.7	28
20–22 से.मी.	6.8	25

लिलियम को प्रशीतक वाहनों में (2–3 डिग्री सेल्सियस) तापमान पर भेजा जाना चाहिए। इसके कटे हुए फूलों से सजावट के लिए बाजार में बहुत मांग है अतः इन फूलों को बड़े शहरों के बाजारों में बेचा जा सकता है, जिनसे होटलों एवं अन्य संस्थाओं में इनकी आपूर्ति की जा सके। अधिक समय तक ताजगी बनाए रखने हेतु लिलियम के फूलों को वातानुकूलित वाहनों द्वारा ही भेजा जाना चाहिए।

दश्मिक गुलाब

दश्मिक या संगध गुलाब का व्यावसायिक उत्पादन मुगल काल से किया जा रहा है। यह पर्वतीय क्षेत्रों के ढलान एवं दूरस्थ क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है जो कि पारम्परिक फसलों की तुलना में अधिक लाभकारी फसल है। यह गुलाब उत्पादों जैसे गुलाब तेल (रोज आयल), गुलकंद, गुलाब जल का प्रमुख स्त्रोत है। संगध गुलाब 'रोजेसी' कुल में आता है एवं पौधे की फसल अवधि लगभग 10–15 वर्ष होती है। भारत में पायी जाने वाली प्रजातियों में रोजा डेमेसिना तेल उत्पादन की दर्षष्टि से सर्वोत्तम मानी जाती है। देश में दमिष्क गुलाब का उत्पादन जम्मू कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, उत्तर प्रदेश (अलीगढ, हाथरस, कन्नौज, एटा, बलिया, कानपुर, गाजीपुर),

राजस्थान (उदयपुर एवं चित्तौड़गढ़) एवं उत्तराखण्ड में किया जाता है। यह शीतोष्ण एवं समशीतोष्ण जलवायु में अधिक उपज देता है।

दमिश्क गुलाब से गुणवत्तायुक्त तेल उत्पादन के लिए शीतोष्ण एवं समशीतोष्ण जलवायु बहुत उपयुक्त होती है। समुचित सिंचाई की सुविधा होने पर पश्चिमी हिमालय के तराई क्षेत्रों, शिवालिक पहाड़ियों तथा उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में इसकी फसल अच्छी होती है। ऐसे क्षेत्र जहाँ पर अच्छी तरह ठंड नहीं पड़ती है तथा तापक्रम एवं आर्द्रता अधिक रहती है, इसके व्यवसायिक उत्पादन के लिए उपयुक्त नहीं होती है। दमिश्क गुलाब का उत्पादन विभिन्न प्रकार की भूमि में किया जा सकता है परन्तु दोमट एवं बलुई दोमट भूमि जिसमें पानी का निकास अच्छा हो, उपयुक्त होता है। पर्वतीय क्षेत्रों में इसकी खेती पहाड़ी ढलानों पर भी की जा सकती है। 250 से 300 कुन्तल सड़ी गोबर की खाद प्रति हैक्टर देना चाहिये। भूमि की तैयारी के उपरांत वांछित दूरी पर 30×30×30 से.मी. आकार के गहरे गड्ढे खोदकर प्रत्येक गड्ढे में 3–10 किलोग्राम गोबर की सड़ी खाद एवं 30 ग्राम फॉलीडॉल डस्ट अथवा 3–4 ग्राम फोरेट 10 जी मिट्टी में मिलाकर नवम्बर माह के प्रथम सप्ताह तक गड्ढों को भरकर पानी दे देना चाहिये। ज्वाला किस्म आई.एच.बी.टी, पालमपुर द्वारा विकसित की गयी है। यह किस्म उत्तर भारत के उपोष्ण मैदानी क्षेत्रों तथा समुद्र सतह से 1200 मीटर तक के ऊँचाई वाले क्षेत्रों में उत्पादन के लिए उपयुक्त होती है। इसके पौधे छोटे, घने, झाड़ीनुमा होते हैं। उपोष्ण क्षेत्रों में इसमें फूल मार्च–अप्रैल एवं सितम्बर माह में आते हैं जबकि अन्य क्षेत्रों में फूल वर्ष में केवल एक बार मार्च–अप्रैल में 25–35 दिन की अवधि तक आते हैं। इसमें तेल की मात्रा 0.030–0.06 प्रतिशत तक होता है। हिमरोज किस्म भी आई.एच.बी.टी., पालमपुर द्वारा विकसित की गई है। यह किस्म समुद्र सतह से 1200–2500 मीटर ऊँचाई वाले क्षेत्रों में उत्पादन के लिये उपयुक्त होती है। इसके पौधे लम्बे, टहनियों में वृद्धि अनियमित तथा उर्ध्वाकार होती है जिसके लम्बे तथा पतले डंठलों पर फूल गुच्छों में लगते हैं। इसमें पुष्पन अवधि ग्रीष्म के आरम्भ में 20–25 दिन होती है। इसमें तेल की प्रतिशतता 0.030 से 0.060 होती है। नूरजहाँ प्रजाति सीमैप लखनऊ द्वारा विकसित की गयी है। इसमें तेल की प्रतिशत मात्रा 0.025–0.030 (उपोष्ण) और 0.035–0.040 (शीतोष्ण) एवं फूल उत्पादन क्षमता क्रमशः 25–30 एवं 30–35 कुन्तल प्रति हैक्टर होती है। रानी साहिबा किस्म भी सीमैप, लखनऊ द्वारा विकसित की गयी है। यह मैदानी क्षेत्रों के लिए उपयुक्त किस्म है जिसमें तेल का प्रतिशत 0.04–0.05 और फूल का उत्पादन 35–40 कुन्तल प्रति हैक्टर होता है। सगंध गुलाब का वानस्पतिक पौध प्रवर्धन एक वर्ष पुराने शाखाओं के कर्तन (कटिंग) द्वारा किया जाता है। नवम्बर–दिसम्बर अथवा जनवरी माह में काट–छांट से प्राप्त शाखाओं के कर्तन का प्रयोग पौध प्रर्वधन के लिए किया जाता है। कर्तनों का जुलाई–अगस्त अथवा नवम्बर–दिसम्बर में मुख्य खेत में रोपण करना चाहिए। शीघ्र जड़ विकास के लिए कर्तनों को किसी जड़ वृद्धि नियामक जैसे आई.बी.ए. 500–1000 पी.पी. एम. से उपचारित कर लें। जड़युक्त कर्तनों के रोपण का कार्य वर्षा ऋतु (जुलाई–अगस्त) में करना उपयुक्त होता है जबकि शीतोष्ण या पर्वतीय क्षेत्रों में कर्तनों का रोपण अक्टूबर–नवम्बर या फरवरी–मार्च में करना चाहिए। पौधशाला में तैयार कर्तनों, जिसमें जड़ें अच्छी तरह विकसित हो, का चुनाव पौध रोपण के लिए करना चाहिये। इसका रोपण 30×30×30 से.मी. आकार के बने गड्ढों में करना चाहिए। सड़ी गोबर की खाद या कम्पोस्ट 10–15 टन प्रति हैक्टर की दर से और एनःपीःके (12:32:16) 25 ग्राम प्रति पौधे की दर से रोपण के पूर्व भूमि में प्रयोग करना चाहिए। पौधों का रोपण 1 मीटर × 1 मीटर की दूरी पर गड्ढों में किया जाता है। एक हैक्टर क्षेत्रफल में लगभग 10,000 पौधों की आवश्यकता होती है।

पर्वतीय क्षेत्रों में 2 मीटर × 2 मीटर की दूरी पर पौधों का रोपण करना चाहिए। दमिश्क गुलाब में सिंचाई की संख्या मौसम पर निर्भर करती है। सूखे की दशा में जब वर्षा न हो रही हो उस समय नवरोपित पौधों की सिंचाई आवश्यक है। परन्तु जब पौधे स्थापित हो जाये तब 1–2 सिंचाई अच्छी पैदावार प्राप्त करने के लिए पर्याप्त है। पर्वतीय क्षेत्रों में टपक विधि से सिंचाई करना एक उपयोगी पद्धति है। दमिश्क गुलाब की फसल के प्रथम वर्ष में खरपतवार नियंत्रण आवश्यक होता है। प्रथम वर्ष में लगभग तीन बार गुड़ाई करना आवश्यक होता है परन्तु बाद के वर्षों में केवल एक गहरी गुड़ाई काट–छांट के उपरान्त करनी चाहिए। दमिश्क गुलाब उत्पादन के लिए गोबर की सड़ी खाद या कम्पोस्ट 10–15 टन प्रति हैक्टर पर्याप्त होती है। सामान्यतः नत्रजन 90 कि.ग्रा., फॉस्फोरस 60 कि.ग्रा., पोटाश 60 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर प्रयोग करना चाहिए। दिसम्बर–जनवरी माह में गोबर की खाद एवं उर्वरकों को काट–छांट के बाद प्रयोग करना चाहिए। काट–छांट के बाद 200 पी.पी.एम. काइनेटिन के तीन छिड़काव फूल आने तक 15 दिन के अन्तराल पर करने से पुष्प उत्पादन में अच्छी वृद्धि होती है। काट–छांट पौधों को उचित आकार एवं ढांचा प्रदान करने, क्षतिग्रस्त एवं रोगयुक्त शाखाओं को निकालने तथा अधिक उपज लेने के लिए पौध वृद्धि के प्रारूप को बदलने तथा पौधों के बगल से बढ़ने वाले प्रांकुरों को निकालने के लिए किया जाता है। इसमें फूलों की उपज के लिए काट–छाँट की ऊँचाई, समय और आवृत्ति अति महत्वपूर्ण बिन्दु हैं। काट–छाँट के समय इन बातों को ध्यान में रखा जाता है कि सूखी, पतली शाखायें तथा ऐसी शाखाएं जो झाड़ी में अत्यधिक घनापन पैदा कर रही हों, निकाल दें। मैदानी क्षेत्रों में 15 से.मी. की ऊँचाई पर दिसम्बर–जनवरी माह में काट–छांट के उपरांत पौधे की चारों तरफ गहरी गुड़ाई कर अभिशीतन हेतु 25–30 दिनों के लिए छोड़ देना चाहिए। पर्वतीय क्षेत्रों में हल्की काट–छांट करते हैं। प्रथम वर्ष में पौधे की जमीन से 1 मीटर ऊँचाई रखते हुए काट–छांट करें तथा दूसरे वर्ष से 1.25–1.5 मीटर की ऊँचाई रखते हुए काट–छांट करनी चाहिए। एक पौधे में 6–8 शाखाएं रखना चाहिए। दमिश्क गुलाब की पौध प्रारम्भिक अवस्था में कुछ ही कीटों एंव रोगों के आक्रमण से प्रभावित होती है। यदि नियंत्रण व उपचार समय पर न किया जाय तो फूलों की उपज काफी कम हो जाती है। इसके पौधों पर कीड़ों व बीमारी का पता करने के लिए प्रक्षेत्र का प्रतिदिन निरीक्षण करते रहना आवश्यक है अन्यथा इनके प्रकोप से फूलों की उत्पादकता एवं गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में मार्च–अप्रैल तथा पर्वतीय क्षेत्रों में अप्रैल–मई के अंत तक फूल खिलते हैं। फूलों की तुड़ाई प्रतिदिन सूर्य उगने से पूर्व समाप्त कर लेनी चाहिए क्योंकि इस समय फूलों में तेल की मात्रा सर्वाधिक होती है। दमिश्क गुलाब का फूल बहुत कोमल होता है। इसमें तेल का प्रतिशत बहुत कम होता है इसलिए फूलों से तेल का आसवन अतिशीघ्र करना चाहिए। मुख्यतः डेग एवं भपका विधि से फूलों का आसवन किया जाता है। केतली की क्षमता 50–100 कि.ग्रा. पुष्प प्रति बैच होती है। इस विधि द्वारा आसवन पूर्ण होने में लगभग 6–8 घंटे का समय लगता है। स्वचालित आसवन विधि में एक केतली, एक स्तम्भ, संघनक और रिसीवर होता है। सम्पूर्ण यूनिट तांबे या स्टेनलेस स्टील की बनी होती है। इसके केतली की क्षमता 100–250 कि.ग्रा. पुष्प प्रति बैच होती है। इस विधि से आसवन करने के लिए 4–6 घंटे प्रति बैच का समय लगता है। भाप द्वारा संचालित आसवन विधि आसवन करने की अत्याधुनिक विधि है। यह इकाई तीन भागों से मिलकर बनी होती है जिसमें एक ब्वायलर, एक आसवन और एक कोहोवेशन (शीतलक) इकाई होती है। इस प्रकार से आसवन करने में 4–5 घंटे लगते हैं। गुलाब जल एवं तेल का उत्पादन जल आसवन विधि से किया जाता है। गुलकंद एक

वैक्सी अर्ध ठोस पदार्थ होता है जिसे एक कार्बनिक घोलक जैसे– हेक्सेन के साथ एक्सट्रैक्शन कर किया जाता है। गुलकंद को शुद्ध एल्कोहल में घोलने के बाद फिल्टर कर अवांछित चिकनाई को निकाल कर वैक्यूम डिस्टिलेशन द्वारा घोलक के अंशों को अलग करने के पश्चात् जो द्रव प्राप्त होता है उसे रोज एब्सोल्यूट कहते हैं। दमिश्क गुलाब के फूलों को विभिन्न उत्पादों के लिए प्रसंस्कृत किया जाता है। पर्वतीय क्षेत्रों में मैदानी क्षेत्रों की अपेक्षा 25 प्रतिशत अधिक फूलों की पैदावार होती है। फूल की उपज 30–40 कुन्तल प्रति हैक्टर, तेल की रिकवरी 0.02–0.03 प्रतिशत, तेल उत्पादन 0.6–1.0 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर, गुलकंद 0.35–0.45 प्रतिशत, रोज एब्सोल्यूट 0.15–0.20 प्रतिशत एवं रोज वाटर 1800–4000 लीटर प्रति हैक्टर प्राप्त किया जा सकता है।

गेंदा

गेंदा हर प्रकार के जलवायु के प्रति सहनशील, लम्बे समय तक फूल एवं अधिक उपज देने के कारण बहुत लोकप्रिय पुष्प है। इसका फूल माला बनाने, विवाह तथा धार्मिक अनुष्ठान में पूजा आदि के काम आता है। इसके अतिरिक्त फूलों को फूलदानों में सजाने एवं क्यारियों में उगाने के साथ–साथ सुगन्धित तेल एवं खाने योग्य रंग (हेलेनिन) के उत्पादन में होता है। गेदें का प्रयोग सूतकृमि (निमेटोड) रोधक के रूप में किया जाता है। गेंदा के फूलों का प्रयोग मुर्गियों के अण्डे की जर्दी का रंग अधिक गहरा करने में हो रहा है। गेंदा मुख्यतः दो प्रकार का होता है। अफ्रीकन गेंदा एवं फ्रेंच गेंदा। अफ्रीकन गेंदा की प्रमुख किस्मों में पूसा नांरगी, पूसा बसन्ती, पूसा बहार, अर्का अग्नि, अर्का बंगारा, अर्का बंगारा 2 एवं विधान मेरीगोल्ड 1 एवं 2। फ्रेंच गेंदा की प्रमुख किस्में जैसे पूसा अर्पिता एवं पूसा दीप हैं। गेंदा उत्पादन के लिए अच्छे जल निकास वाली बलुई मिट्टी जिसका पी.एच. मान 7 से 7.5 के मध्य हो, उत्तम रहता है। अधिक गर्म या ठण्डी जलवायु में पौधों की वृद्धि तथा पुष्पोत्पादन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। गेंदे की अच्छी खेती हेतु रात का तापमान 18.5^0 सेल्सियस उपयुक्त रहता है। गेंदा की पौध तैयार करने के लिए स्वस्थ बीज की बुवाई की जाती है। स्वस्थ बीज काले रंग के होते हैं। एक ग्राम बीज में औसतन 300 से 350 बीज आते हैं। बीजों के अंकुरण के लिए 18–30^0 सेल्सियस तापमान की आवश्यकता होती है। लगभग 20–25 दिन में गेदे की पौध रोपण के लिए तैयार हो जाती है। एक हैक्टर भूमि के लिए 1–1.5 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता होती है। गेंदा की पौध बीज बुवाई के लगभग 20–25 दिन बाद रोपाई के लिए तैयार हो जाते हैं। मैदानी क्षेत्र में लगाने का समय मध्य जुलाई, मध्य अक्टूबर तथा फरवरी–मार्च उपयुक्त होता है। पर्वतीय क्षेत्रों में फरवरी–मार्च महीना उपयुक्त होता है। अफ्रीकन गेंदा को 40×40 से.मी. एवं फ्रैन्च गेंदा को 20×20 से.मी. की दूरी पर लगाना चाहिए। गेंदे में गोबर की खाद 50 टन, नत्रजन 90 कि.ग्रा. फॉस्फोरस 90 कि.ग्रा. एवं पोटाश 75 किग्रा. प्रति हैक्टर की दर से देना चाहिए। फॉस्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा तथा नत्रजन की आधी मात्रा खेत तैयार करते समय डाल दी जाती है। शेष नत्रजन की मात्रा को रोपण के दो भागों में बांटकर एक भाग 20–30 दिन बाद एवं शेष मात्रा 40–50 दिन बाद या पुष्प कलिका प्रारम्भ होने के समय देने से फूलों का आकार एवं संख्या में वृद्धि होती है। रोपण के तुरंत बाद सिंचाई कर देनी चाहिए। गर्मी में 4–5 दिन के अंतराल पर एवं सर्दियों में 8–10 दिन के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए तथा बरसात के मौसम में सिंचाई वर्षा पर निर्भर करती है। पौधों के अच्छे विकास के लिए 3–4 बार निराई–गुड़ाई करनी चाहिए। इसके अतिरिक्त खरपतवार नियन्त्रण के लिए 2–3 बार निराई–गुड़ाई करना चाहिए। पिंचिग (कलिका नोचन) प्रक्रिया में गेंदा के पौधे में

प्रारम्भिक अवस्था में फूलों की कलियों को हाथ से तोड़ दिया जाता है ताकि पौधा अधिक बढ़ें और फूलों की अधिक उपज प्राप्त की जा सकें। गेंदा में पिचिंग का उपयुक्त समय रोपण के 40–45 दिन बाद आता है, जब पौधों में 1–2 पुष्प कलियाँ बननी शुरू होती हैं। पिंचिग न करने पर पौधों में कम शाखाऐं बनेंगी, जिस कारण कम फूल लगेंगें तथा कम उत्पादन होगा। फूलों को पूर्ण विकसित होने के बाद ही तोड़ना चाहिए। फूल तोड़ने के लिए सुबह या शाम का समय जब धूप खिली हो अच्छा रहता है। वर्षा ऋतु में पुष्पों की उपज 200–225 कुन्तल प्रति हैक्टर, शीत ऋतु में 150–175 कुन्तल प्रति हैक्टर एवं ग्रीष्म ऋतु में 100–120 कुन्तल प्रति हैक्टर प्राप्त की जा सकती है। गेंदा एक परपरागित पुष्प है। इसके बीज उत्पादन के लिए दो किस्मों के बीच की दूरी 1.0–1.5 किलोमीटर होनी चाहिए। बीज की फसल 5–6 माह में तैयार हो जाती है। अफ्रीकन गेंदा में बीज की उपज 312–375 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर एवं फ्रैन्च गेंदा में 1000–1250 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर प्राप्त की जा सकती है। गेंदा बहुत ही सहनशील पौधा है जिसमें कीट का प्रकोप आसानी से नहीं हो पाता है। फिर भी कुछ कीट जैसे रेड स्पाइडर माइट एवं थ्रिप्स का प्रकोप होता है। फूल खिलने के समय पत्तों पर स्पाइडर माइट लगने की सम्भावना रहती है। इसके नियंत्रण के लिए प्रोपरजाईट 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी या वर्टीमेक 0.8 मिली. प्रति लीटर पानी के घोल का छिड़काव करना चाहिए। थ्रिप्स कीट के व्यस्क एवं शिशु दोनों ही पुष्प कलिकाओं एवं पत्तियों से रस चूसते हैं। ग्रसित पत्तियाँ एवं पुष्प कलिकाएं बादामी भूरे रंग की हो जाती है जो बाद में सूख जाती है। प्रकोप दिखाई देने पर फिप्रोनिल 1.5 मि.ली. प्रति लीटर पानी के घोल का छिड़काव 10–15 दिन के अंतराल पर करना चाहिए। गेंदा के पौधों पर खर्रा रोग (पाउड्री मिल्ड्यू) के लक्षण सफेद छोटे–छोटे धब्बों के रूप में शुरूआत में पत्तियों पर आते हैं तथा ये धब्बे समस्त पौधे पर फैल जाते हैं। इसके नियंत्रण के लिए कैराथेन 0.5 से 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी अथवा सल्फेक्स 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करें।

सम्पर्क सूत्र : 9411142806

☑

आदर्श पुष्प विज्ञान केन्द्र, पंतनगर

उच्च गुणवत्तायुक्त शोभाकार पौधों एवं पुष्पों के लिए

गुलाब, कारनेशन, जरबेरा, ग्लैडियोलस, रजनीगंधा, गेंदा, गुलदाउदी, डहेलिया आदि

पुष्प उत्पादन से सम्बन्धित जानकारी हेतु।

सम्पर्क करें– **संयुक्त निदेशक, आदर्श पुष्प विज्ञान केन्द्र**

गोविन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

पंतनगर – 263 145, जिला– ऊधम सिंह नगर

फोन– 05944–233055 मो. 7500241434

मुख्य औषधीय एवं सगंध फसलों की वैज्ञानिक खेती

डा. अजीत कुमार, डा. संचिता घोष,
डा. रंजन श्रीवास्तव एवं डा. सुनिता टी. पाण्डेय

कैमोमिल/जर्मन चमेली

1. वानस्पतिक नामः *मैट्रीकेरिया कैमोमिला*

2. उपयोगः जर्मन चमेली का कई आयुर्वेदिक औषधियों में प्रयोग किया जाता है। इसका उपयोग श्वास रोगों में, बुखार, जोड़ दर्द, कृमिनाशक, निद्राकारक, वातानुलोमक, कर्क रोग, इत्यादि की दवाइयाँ बनाने में किया जाता है। इसके अलावा इसके तेल का उपयोग भूख बढ़ाने, पेट सम्बन्धी समस्या ठीक करने, सर्दी–जुकाम, ताकत बढ़ाने एवं बालों के लिए डाई बनाने के लिए किया जाता है। इसका तेल नीला रंग का होने के कारण ब्लू ऑयल भी कहलाता है। इसके तेल में लेवेन्डर जैसी भीनी–भीनी खुशबू आती है। रोमन एवं जर्मन चमेली के सूखे पुष्पों का प्रयोग हर्बल चाय बनाने में किया जाता है और इसके फूलों को आसानी से चाय पत्ती के साथ मिलाया जा सकता है।

3. भूमि तथा जलवायु : कैमोमिल की उत्तम खेती के लिए रेतीली दोमट मिट्टी, जिसमें जल निकास की अच्छी व्यवस्था हो और जिसका पी.एच. मान 8–9 के बीच हो, सर्वोतम मानी जाती है। जर्मन चमेली का पौधा शीतोष्ण जलवायु का पौधा है। जर्मन चमेली के पौधे की अच्छी बढ़वार हेतु 7–26^0 से. तक तापमान अच्छा माना जाता है हालांकि इसके पौधे कम तापमान (–2^0 से.) को भी सहन कर सकते हैं। इसकी अच्छी पैदावार हेतु 400–1400 मि.मी. वर्षा फसल अवधि के दौरान आवश्यक है।

4. प्रजातियाँः केन्द्रीय औषधीय एवं सगंध पौधा संस्थान, लखनऊ द्वारा वैलारी, सिम सम्मोहक और प्रशांत नामक तीन प्रजातियाँ विकसित की गई हैं।

5. प्रवर्धनः जर्मन चमेली का प्रवर्धन मुख्यतः बीज द्वारा किया जाता है।

6. बीज दरः 1.0 कि.ग्रा. बीज/हैक्टर

7. खेत की तैयारीः कैमोमिल की जड़ें अधिक गहरी नहीं जाती हैं इसलिए ज्यादा गहरी जुताई की आवश्यकता नहीं है। फिर भी हैरो से जुताई करके खेत को समतल कर लेना चाहिए। खेत में 15–20 टन/हैक्टर की दर से गोबर या कम्पोस्ट खाद मिला देनी चाहिए।

8. नर्सरी तैयार करनाः जिस स्थान पर नर्सरी बनानी है वहाँ की मिट्टी में अच्छी तरह से गोबर की खाद मिलाकर 3×1 वर्ग मी. आकार की क्यारी बना लेनी चाहिए। एक हैक्टर के लिए लगभग 1 कि.ग्रा. बीज से तैयार पौध पर्याप्त होती है। नर्सरी तैयार करने का उपयुक्त समय मैदानों में नवम्बर तथा पहाड़ों पर मार्च का महीना है। बुवाई के 30–35 दिन बाद पौध रोपाई योग्य तैयार हो जाती है।

9. रोपाईः अधिकतम फूल तथा तेल प्राप्त करने के लिए 40–45 दिन की तैयार पौध खेत में 30×30 से.मी.^{2} की दूरी पर रोपाई करनी चाहिए। रोपाई के तुरन्त बाद सिंचाई करनी चाहिए।

10. रोपाई का समयः दिसम्बर माह के अन्तिम सप्ताह से जनवरी माह तक इसका रोपण करना चाहिए।

11. खाद एवं उर्वरकः कैमोमिल की अच्छी फसल लेने के लिए पर्याप्त मात्रा में खाद का प्रयोग करना चाहिए। इसके लिए 15–20 टन/हैक्टर जैव उपचारित गोबर की खाद या कम्पोस्ट को खेत की तैयारी के समय भूमि में डालना चाहिए।

12. सिंचाईः फसल अवधि के दौरान लगभग 5–6 बार फसल की सिंचाई करनी चाहिए। पुष्प आने के बाद प्रत्येक 15 दिन में एक बार फसल की सिंचाई करनी आवश्यक है।

13. निराई–गुड़ाईः अच्छी फसल लेने के लिए 3–4 बार निराई–गुड़ाई की आवश्यकता होती है। प्रारम्भिक अवस्था (30–35 दिन) में फसल को खरपतवार रहित रखा जाय तो फसल से अच्छी उपज ली जा सकती है। निराई खुरपी से करनी चाहिए।

14. कीट एवं रोगः जर्मन चमेली में कीट और रोग का प्रकोग बहुत कम देखा गया है। लेकिन कभी–कभी

सफेद मक्खी, माहू तथा थ्रिप्स का प्रकोप पाया जाता है। जिनकी रोकथाम हेतु जैविक कीटनाशी जैसे निम्बीसिडिन इत्यादि का छिड़काव करना चाहिए। इसके अलावा खेत में अधिक पानी व अधिक मात्रा में नत्रजन देने से पौधों में तना गलन बीमारी लग जाती है। रोग के लक्षण दिखाई देते ही सिंचाई बन्द कर देनी चाहिए। खेत से जल निकास की समुचित व्यवस्था करनी चाहिए और खेत में नत्रजन खाद का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करना चाहिए, और 0.1 प्रतिशत बाविस्टिन के घोल का छिड़काव करना चाहिए।

15. फूलों की तुड़ाई: इस फसल में पौध रोपण के दो–तीन माह पश्चात् फूल आना शुरू हो जाते हैं। पूर्ण विकसित फूलों को 15–20 दिनों के अन्तराल पर तोड़ा जाता है। फूल लगभग दो माह तक आते रहते हैं और उससे 4 बार फूलों को तोड़ा जा सकता है। फूलों से अधिक तेल उत्पादन हेतु पूर्णतः खिले हुए फूलों का ही प्रयोग करना चाहिए।

16. फूलों को सुखाना: ताजा तोड़े गये फूलों में 60–85 प्रतिशत तक नमी रहती है। इसलिए तुड़ाई के बाद फूलों को सुखाना जरूरी है। फूलों को सुखाने के लिए किसी छाया वाले साफ स्थान पर पतली परत में बिछाकर सुखाना चाहिए। इस विधि के द्वारा 10–12 दिन में फूल सूख जाते हैं।

17. आसवन: जर्मन चमेली के फूलों से अधिक तेल उत्पादन हेतु फूलों को 3–4 दिन छाया में सुखा कर फिर आसवन विधि द्वारा तेल निकालना चाहिए। यद्यपि चैमोजिलिन की मात्रा धूप में सूखाए गए फूलों में ज्यादा (22.77%) पाई जाती है लेकिन तेल की मात्रा कम पाई जाती है। इसके तेल का घनत्व पानी से कम होने के कारण पानी के ऊपर तेल तैरता रहता है, जिसको अलग बर्तन में इक्ट्ठा कर लिया जाता है।

18. उपज: इस फसल में औसतन 60 कुन्तल/हैक्टर ताजे फूल और 10–15 कुन्तल/हैक्टर सूखे फूल प्राप्त किए जा सकते हैं। फूलों की अंतिम तुड़ाई के बाद पौधों को खेत में छोड़ दिया जाता है। जिनसे बाद में 150–200 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर प्राप्त किया जा सकता है। जर्मन चमेली में तेल की मात्रा 0.3–1.3 % तक पायी जाती है।

सुगन्धित गुलाब

1. वानस्पतिक नाम: *रोजा डेमिसीना*

2. उपयोग: सुगन्धित गुलाब से विभिन्न प्रकार के उत्पाद तैयार किए जाते हैं, जिनका विवरण इस प्रकार है:

(क) सुगन्धित तेल: गुलाब के पुष्प की पंखुड़ियों से आसवन विधि द्वारा सुगन्धित तेल निकाला जाता है। एक कि.ग्रा. तेल उत्पादन हेतु 30–40 कुन्तल गुलाब की पंखुड़ियों की जरूरत होती है। गुलाब के तेल का इस्तेमाल सौन्दर्य प्रसाधन के अलावा इत्र बनाने में भी किया जाता है। इसके अतिरिक्त इसमें औषधीय गुण भी पाए जाते हैं जिस कारण आयुर्वेद में इसका प्राचीन काल से उपयोग किया जा रहा है। इसके तेल का उपयोग पित्ताशय की पत्थरी के उपचार में भी किया जाता है।

(ख) गुलाब जल: गुलाब जल को गुलाब के फूल की पंखुड़ियों से तैयार किया जाता है, जिसका उपयोग इत्र, मिठाई एवं औषधि निर्माण हेतु किया जाता है। इसका उपयोग शरीर में ठंडक प्रदान करता है और दृष्टि लोशन, दृष्टि बून्द की दवाईयाँ बनाने में प्रयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त गुलाब जल का उपयोग शादी एवं अन्य सामाजिक समारोह में अतिथियों के ऊपर छिड़कने में भी किया जाता है।

(ग) गुलकन्द: गुलाब की पंखुड़ियों से गुलकन्द नामक पदार्थ सीधे उपभोग हेतु तैयार किया जाता है। गुलकन्द बनाने हेतु गुलाब की पंखुड़ियों और मिश्री को बराबर मात्रा में मिलाकर बनाया जाता है। गुलकन्द का सेवन स्वास्थ्यवर्धक एवं कब्जनाशक है।

3. भूमि तथा जलवायु: गुलाब की खेती के लिए दोमट या बलुई दोमट मिट्टी, जिसमें खाद एवं पोषक पदार्थों की उचित मात्रा हो, उपयुक्त होती है। मृदा जिसका पी.एच. मान 5.6–7.0 के बीच हो तथा जल निकास की उचित व्यवस्था हो, गुलाब की खेती हेतु सर्वोत्तम है। गुलाब की खेती के लिए मध्यम व हल्का तापमान होना चाहिए, क्योंकि यह शीतोष्ण जलवायु

का पौधा है। उपोष्ण जलवायु में भी इसकी खेती की जा सकती है। भारत में अधिक उत्पादन वाले क्षेत्र उपोष्ण जलवायु में आते हैं। गुलाब की खेती के लिए पूरे वर्ष धूप, आर्द्रता 60–65 प्रतिशत एवं तापमान लगभग 22–30^0 से. हो तो अधिक उपज प्राप्त की जा सकती है।

4. प्रजातियाँ: हमारे देश में सुगन्धित गुलाब की मुख्यतः निम्न किस्में है, जिनकी खेती सुगन्धित तेल निकालने हेतु की जाती है:

i) **नूरजहाँ:** इस किस्म में 0.04 प्रतिशत तेल की प्राप्ति होती है।

ii) **रानी साहिबा:** यह किस्म हल्के गुलाबी रंग की होती है और इसमें पूरे वर्ष पुष्प खिलते रहते हैं।

iii) **ज्वाला:** इस किस्म में लगभग 0.03 से 0.06 प्रतिशत तेल की मात्रा पाई जाती है।

iv) **हिमरोज:** यह कम तापमान वाली किस्म है तथा इसको पहाड़ी क्षेत्रों में आसानी से उगाया जा सकता है।

5. खेत की तैयारी: गुलाब की खेती के लिए 2–3 बार हैरो से जुताई करने के बाद खेत को समतल कर लेना चाहिए। जल निकास की उचित व्यवस्था होनी चाहिए। खेत तैयार होने के बाद खेत में उचित आकार की क्यारियाँ बना लेनी चाहिए जिससे सिंचाई करने में सुविधा रहे।

6. प्रवर्धन: गुलाब का प्रवर्धन कलमों के द्वारा किया जाता है। गुलाब की कलम तैयार करने के लिए नवम्बर–दिसम्बर माह में परिपक्व पौधे से 10–15 से. मी. लम्बी तथा पेंसिल की मोटाई के तने की कटिंग काट लेते हैं तथा कलम को ऊपर से तिरछे आकार में व नीचे से सीधा काटा जाता है। नीचे के भाग को गाँठ के पास से काटते हैं तथा कलम के निचले सिरे पर आई.बी.ए. का 100 पी.पी.एम. का घोल लगाकर क्यारी में रोप दिया जाता है। कलम का एक तिहाई हिस्सा जमीन से ऊपर तथा दो तिहाई जमीन में रहना चाहिए। 50–55 दिन की पौध रोपाई के लिए तैयार हो जाती है।

7. रोपण: रोपाई हेतु कम से कम 20 से 25 दिन पहले गड्ढों को खोद लेना चाहिए ताकि मृदा का उपचार हो सके तथा कीट एवं बीमारियाँ इत्यादि से पौधों को बचाया जा सके। पौध रोपण का उचित समय फरवरी–मार्च एवं जुलाई–अगस्त है। रोपाई के लिए खेत में 1–1 मीटर की दूरी पर 45×45×45 से.मी.^{3} आकार के गड्ढों को खोद लेना चाहिए, तथा रोपाई से पहले गड्ढों को जैव उपचारित गोबर की सड़ी खाद एवं मिट्टी से भर लेना चाहिए। पौधों को दीमक से बचाने के लिए नीम की खली 100 ग्राम मात्रा प्रति गड्ढे के हिसाब से प्रयोग करनी चाहिए।

8. खाद एवं उर्वरक: गुलाब की खेती के लिए खेत में जीवाँश खाद का होना बहुत जरूरी है। इसके लिए खेत में गडढा तैयार करते समय 2 कि.ग्रा. प्रति गड्ढे के हिसाब से जैव उपचारित गोबर की सड़ी हुई खाद मिलानी चाहिए।

9. सिंचाई: गुलाब की खेती से अधिकाधिक लाभ लेने के लिए नियमित अन्तराल पर सिंचाई करते रहना चाहिए। मुख्य रूप से जब पौधों पर कलियों का निर्माण हो रहा हो तो सिंचाई अवश्य करनी चाहिए। वर्ष भर में लगभग 6–9 सिंचाईयों की आवश्यकता होती है।

10. कटाई–छंटाई एवं विन्टरिंग (Wintering): दो साल का पौधा हो जाने पर उसकी कटाई–छँटाई करना अति आवश्यक हो जाता है, जिसका उचित समय अक्टूबर–नवम्बर है। कटाई–छंटाई से पौधों की उत्पादकता बढ़ती है। इस क्रिया में पौधों को जमीन से 10–12 से.मी. छोड़ते हुए काटते हैं। सर्दियों में गुलाब के पौधों की कटाई के उपरान्त 30 से.मी. व्यास के गोलाकार गड्ढे बनाए जाते हैं, जिसकी गहराई 15–20 से.मी. होती है। गड्ढा बनाते समय ऊपर की मिट्टी को अलग तथा नीचे की मिट्टी को अलग रखा जाता है और गड्ढों को एक सप्ताह खुली धूप में छोड़ दिया जाता है। तदोपरांत 5–6 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी हुई खाद, 100–150 ग्राम हड्डी का चूरा, 50 ग्राम यूरिया, 100 ग्राम सिंगल सुपर फॉस्फेट, और 50 ग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश प्रति पौधे की दर से मिट्टी में मिला दिया जाता है और इस मिश्रण से फिर गड्ढों को भरा जाता है तथा तुरन्त सिंचाई

की जाती है। कुछ समय पश्चात् पौधों पर नई शाखायें निकलने लगती हैं, जिनकी पैदावार पुरानी शाखाओं की अपेक्षा कहीं ज्यादा होती है।

11. रोग एवं कीट :

गुलाब में लगने वाले प्रमुख रोग निम्न प्रकार से हैं:

1. उल्टा सूखा रोग (डाइबैक): यह रोग गुलाब की भंयकर बीमारी है जिसका प्रभाव गुलाब के पौधों की काट–छाँट के बाद सामान्यतः देखा जाता है। इस रोग में पौधे के कटे हुए भाग से पौधा सूखना शुरू करता है और जिन टहनियों में काट–छाँट की होती है वह ऊपर से नीचे की ओर काली पड़ती जाती हैं और बाद में सूख जाती हैं। इस रोग के नियंत्रण के लिए कटे हुए हिस्सों को चौबटिया पेस्ट या बॉरडेक्स पेस्ट से पेन्ट करना चाहिए और साथ ही साथ उर्वरकों की खेत में उचित मात्रा डालनी चाहिए तथा जल निकास की उचित व्यवस्था होनी चाहिए। इस रोग को कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (50 प्रतिशत) @ 3 ग्राम प्रति ली. पानी के घोल के छिड़काव से भी नियंत्रित किया जा सकता है।

2. काला धब्बा रोग: यह गुलाब का एक घातक रोग है। इस रोग में रोगी पौधे की पत्तियों में काले भूरे रंग के धब्बे दिखाई देते हैं। इस रोग को कार्बेंडाजिम एक ग्राम प्रति ली. पानी अथवा कैप्टान दो ग्राम प्रति ली. पानी के घोल से 15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करने से नियंत्रण में लाया जा सकता है।

कीट : गुलाब के पौधों में कभी–कभी चेपा या तना वेधक कीट का भी आक्रमण पाया जाता है। इन कीटों की रोकथाम हेतु जैविक कीटनाशी जैसे बैलमाइट या निम्बिसिडिन का छिड़काव उचित पाया जाता है। इसके अलावा कुछ अन्य कीट जिनको कभी–कभी सुगन्धित गुलाब के पौधों पर देखा जा सकता है उनमें मुख्यतः रेड स्पाइडर बरूथी, माइट्स, माहू आदि प्रमुख हैं। रेड स्पाइडर बरूथी की रोकथाम के लिए अबामेक्टिन 1.9% ई.सी. @ 0.025–0.050% छिड़काव करना चाहिए। माइट्स की रोकथाम के लिए फ्ल्यूफेनोक्सुरान 10.0% डी.सी. का 500 ग्राम ए.आई. प्रति हैक्टर के हिसाब से तथा माहू की रोकथाम के लिए 0.1 प्रतिशत रोगोर का छिड़काव उपयुक्त है।

12. फूलों की तुड़ाई: आमतौर पर फूलों को पूरी तरह खिलने से पहले सुबह के समय तोड़ा जाना चाहिए क्योंकि जैसे–जैसे तापमान बढ़ता जायेगा, फूलों में तेल की मात्रा कम होती जायेगी, तथा टूटे हुए फूलों से जितनी जल्दी हो सके, आसवन क्रिया के द्वारा तेल प्राप्त कर लेना चाहिए। यदि किसी भी कारणवश फूलों का तुरन्त आसवन सम्भव नहीं है तो तोड़े गए फूलों को ठंडे पानी में डुबोकर रखना चाहिए।

13. आसवन: सामान्यतः सुगन्धित गुलाब में वाष्प आसवन विधि का प्रयोग किया जाता है। यह संयंत्र जल वाष्प विधि जैसा ही होता है। इस विधि में अलग से बॉयलर लगा होता है। वाष्प आसवन विधि में सर्वप्रथम बॉयलर में वाष्प को तैयार किया जाता है। तत्पश्चात् वाष्प को पाईप द्वारा टैंक के अन्दर उच्च दबाव के साथ प्रवाहित किया जाता है। ताजे पुष्पों के भार के आधार पर औसत 0.045 प्रतिशत तेल की प्राप्ति की जा सकती है। सामान्यतः गुलाब के फूलों में तेल की मात्रा 0.03–0.05 प्रतिशत होती है। यद्धपि गुलाब के तेल को जल वाष्प आसवन विधि से भी निकाला जा सकता है परन्तु इस विधि द्वारा तेल की गुणवत्ता वाष्प आसवन विधि द्वारा निकाले हुए तेल से कम होती है।

14. उपज: गुलाब लम्बे समय तक चलने वाली फसल है। एक बार रोपाई के बाद फसल 9–10 वर्ष तक अच्छा उत्पादन देती है। पहले दो साल उत्पादन कुछ कम होता है, लेकिन तीसरे साल से अच्छा उत्पादन प्राप्त होने लगता है। वैज्ञानिक विधि से खेती करने पर उपोष्ण एवं शीतोष्ण जलवायु वाले क्षेत्रों में क्रमशः 2000–3000 कि.ग्रा. एवं 4000–5000 कि.ग्रा. फूल प्रति वर्ष प्रति हैक्टर प्राप्त कर सकते हैं। प्रथम वर्ष में लगभग 0.15 कि.ग्रा. तेल प्रति हैक्टर प्राप्त होता है। इसके बाद दूसरे वर्ष 0.42 कि.ग्रा. तेल तथा तीसरे से पाँचवे वर्ष तक 1.5–1.6 कि.ग्रा. तेल प्रति हैक्टर प्रति वर्ष प्राप्त होता है।

जिरेनियम

1. वानस्पतिक नामः *पेलारगोनियम ग्रेवियोलेन्स*

2. उपयोगः जिरेनियम की पत्तियों व मुलायम टहनियों से सुगन्धित तेल आसवन विधि द्वारा निकाला जाता है। इस तेल में गुलाब के समान खुशबु आती है, जिसके कारण इसका उपयोग साबुन व सौन्दर्य प्रसाधन सामग्री बनाने में किया जाता है। शुद्ध अवस्था में जिरेनियम का तेल अपने आप में इत्र का काम करता है।

3. भूमि तथा जलवायुः जिरेनियम की जड़ें उथली होती हैं इसलिए भूमि में जल निकास व्यवस्था अच्छी होनी चाहिए। इसकी सफल खेती के लिए हल्की भुरभुरी अम्लीय मिट्टी जिसका पी.एच. मान 5.5–8.0 के आस–पास हो उचित पाई गई है। इसके साथ–साथ मिट्टी में जीवांश की मात्रा अच्छी होनी चाहिए। जिरेनियम शीतोष्ण एवं समशीतोष्ण जलवायु का पौधा है और यह 15–29^0 से. तापमान और समुद्र तल से 1000 से लेकर 2200 मीटर तक ऊँचाई वाले स्थानों पर आसानी से उगाया जा सकता है। बरसात के समय जल भराव से जड़ें सड़ जाती हैं और पौधे मर जाते हैं। यद्यपि जिरेनियम सूखे के लिए काफी प्रतिरोधक है लेकिन लम्बे समय तक सूखे जैसी स्थिति रहने पर तेल की पैदावार में कमी आती है।

4. प्रजातियाँः केन्द्रीय औषधीय एवं सगंध पौधा संस्थान, लखनऊ द्वारा हेमन्ती, कुंती, सिम पवन एवं विपुली नामक प्रजातियाँ विकसित की गयी हैं। उद्यान अनुसंधान केन्द्र, कोडैईकनाल, तमिलनाडू द्वारा कोडैईकनाल 1 प्रजाति विकसित की गई है। केलकर, ऊटी और सैलेक्शन 8 इस फसल की अन्य प्रजातियाँ है।

5. खेत की तैयारीः खेत की अच्छी प्रकार जुताई करके उसमें गोबर की खाद या कम्पोस्ट मिलाकर समतल कर लेते हैं।

6. प्रवर्धनः जिरेनियम का प्रवर्धन तने की कटिंग के द्वारा किया जाता है क्योंकि हमारे देश में इस फसल में बीज नहीं बनता है। कलम की लम्बाई 15–20 से.मी. होनी चाहिए और जिसमें 7–8 गांठें हो पौध प्रवर्धन हेतु प्रयोग की जाती हैं। इन कलमों में ऊपर की दो तीन पत्तियों को छोड़कर बाकी सभी पत्तियों को निकाल दिया जाता है। रूटेक्स से उपचारित कलमों को रेत की क्यारियों में जिसकी लम्बाई एवं चौड़ाई 3.0 मी. × 1.5 मी. होती है, में 10 से.मी. × 10 से.मी. की दूरी पर लगाया जाता है। क्यारियों में फुव्वारे से हल्की सिंचाई की जाती है और पत्तों में नमी बनी रहनी चाहिए ताकि जड़ें अच्छे से बन सकें। कटिंग लगाने का उचित समय मैदानी क्षेत्रों के लिए नवम्बर–दिसम्बर तथा पर्वतीय क्षेत्रों के लिए फरवरी–मार्च है।

7. पौध रोपणः रोपण का उचित समय मैदानी क्षेत्रों में फरवरी में तथा पर्वतीय क्षेत्रों में अप्रैल–मई है। जड़ युक्त कलमों को उखाड़ने के लिए कलम उखाड़ने से पहले पौधशाला में पानी लगा देना चाहिए। तैयार खेत में पौधों का रोपण 60 से.मी. × 60 से.मी. की दूरी पर करना चाहिए। एक हैक्टर में 30,000 कलमों की आवश्यकता होती है।

8. खाद एवं उर्वरकः जिरेनियम के पौधे को प्रचुर मात्रा में खाद देनी चाहिए क्योंकि यह पौधा अधिक मात्रा में पोषक तत्वों का सेवन करता है। खेत तैयार करते समय 25 टन जैव उपचारित गोबर की सड़ी हुई खाद, 100 कि.ग्रा. यूरिया, 200 कि.ग्रा. सुपर फॉस्फेट और 100 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश/हैक्टर की दर से खेत की तैयारी के समय मिलाना चाहिए। नत्रजन की 40 कि.ग्रा./हैक्टर मात्रा पौध रोपाई के 2 हफ्ते बाद और प्रत्येक कटाई के बाद 30 कि.ग्रा./हैक्टर के हिसाब से खेत में 2 बार छिड़काव करना चाहिए।

9. सिंचाईः रोपण के तुरन्त बाद सिंचाई करना अत्यन्त आवश्यक है। दूसरी सिंचाई 15 दिन बाद तथा शेष सिंचाईयाँ आवश्यकतानुसार 25–30 दिन के अन्तराल पर करना उचित रहता है। सम्पूर्ण फसल अवधि में लगभग 6–8 सिंचाईयों की आवश्यकता पड़ती है।

10. कीट एवं रोगः फसल में चूसने वाले कीट पौधों को हानि पहुँचाते हैं। इसके लिए निम्वीसिडीन के छिड़काव से कीटों पर नियंत्रण किया जा सकता है। पौधों की जड़ों में निमाटोड और दीमक की समस्या से निजात पाने के लिए रोपण से पूर्व खेत में नीम की खली एक टन/है. का प्रयोग करें। जिरेनियम के पौधों में उकठा नामक बीमारी काफी खतरनाक होती है। इस बीमारी के मुख्य लक्षण पौधों की पत्तियों में पाये जाते हैं जो अपरिपक्व अवस्था में गिरने लगती हैं और पौधा सूखने लगता है। इस बीमारी की रोकथाम हेतु जैसे ही फसल पर बीमारी के लक्षण दिखाई दें, सिंचाई को तुरन्त रोक देना चाहिए और 0.03 प्रतिशत बेनलेट के घोल का छिड़काव पूरे पौधों पर करना चाहिए। इसके अतिरिक्त फसल की प्रत्येक कटाई के बाद इसी कवकनाशी रसायन के 0.03 प्रतिशत घोल का छिड़काव करना चाहिए।

11. कटाई व संग्रहणः फसल रोपाई के चार माह पश्चात् पहली बार पत्तों की कटाई की जाती है और उसके बाद 3–4 माह के उपरान्त दोबारा फसल की कटाई की जाती है। जलवायु अनुकूल होने पर जिरेनियम की फसल 5 वर्ष तक उन्ही पौधों से ली जा सकती है तथा साल में तीन कटाइयाँ आसानी से की जा सकती हैं। पत्तियों के परिपक्व हो जाने पर उनका रंग हल्का हरा होने लगता है एवं उनसे गुलाब के फूल जैसी खुशबू आने लगती है तथा पौधों से गुलाबी रंग के पुष्प निकलने लगते हैं। इस अवस्था में फसल को काट कर चौबीस घण्टे के लिए खेत में सूखने के लिए छोड़ दिया जाता है, फिर इसका जल वाष्प आसवन अथवा वाष्प आसवन विधि द्वारा तेल निकाल लेते हैं।

12. तेल प्रतिशत एवं उपजः एक हैक्टर क्षेत्र में 25 हजार पौधों से लगभग 150 से 200 कुन्तल हरी पत्तियाँ/वर्ष प्राप्त होती हैं और जिनको आसवन करने पर 15–20 कि.ग्रा. तेल/हैक्टर/वर्ष प्राप्त किया जा सकता है।

लैमनग्रास/नींबू घास

1. वानस्पतिक नामः *सिम्बोपोगॉन फ्लैक्सुओसस*

2. उपयोगः लैमनग्रास की व्यवसायिक खेती तेल प्राप्ति के लिए की जाती है। इसके तेल का उपयोग मुख्यतः इत्र बनाने तथा नींबू की ताजगी वाले साबुनों में किया जाता है। तेल निकालने के उपरान्त बचे हुए पदार्थ को जानवरों के चारे के रूप में भी इस्तेमाल कर सकते हैं अथवा उसे साइलेज के रूप में भी परिवर्तित किया जा सकता है। यह विटामिन ए का बहुत अच्छा स्रोत है, जिसका उपयोग दवा आदि बनाने में किया जाता है। इसके अलावा इसकी पत्तियों को चाय में डालकर पीने से ताजगी आती है तथा सर्दी से राहत मिलती है। तेल का उपयोग कीटनाशी, जीवाणुनाशी आदि के रूप में और दर्द निवारक दवाईयाँ बनाने हेतु भी किया जाता है। इसकी खेती बगीचों एवं सेमल, पॉपलर, सागौन, यूकेलिप्टस जैसे कृषिवानिकी वृक्षों के बीच में भी की जा सकती है।

3. भूमि तथा जलवायुः लैमनग्रास की खेती के लिए रेतीली दोमट हल्की मिट्टी, जिसका पी.एच. मान 6.0–7.0 तक हो, सर्वाधिक उपयुक्त होती है। भूमि में जल निकास की उचित व्यवस्था होनी चाहिए। लैमनग्रास की फसल के लिए उष्ण तथा समशीतोष्ण जलवायु उपयुक्त होती है।

4. प्रजातियाँः एस.डी. 16, ओ.डी. 19, आर.एल.एल. 16, आर.एल.एल. 17, प्रगति, प्रमाण, सुगन्धी, कृष्णा, कावेरी, सी.के.पी 25, चिरहरित एवं नीमा इसकी प्रमुख प्रजातियाँ हैं।

5. खेत की तैयारीः फसल को बोने से पूर्व खेत की दो–तीन बार हैरो से आड़ी–तिरछी जुताई करके, आखिरी जुताई के समय गोबर की खाद या कम्पोस्ट मिट्टी में अच्छी प्रकार मिला देनी चाहिए। लैमनग्रास एक बहुवर्षीय फसल है और एक बार फसल लगाने के बाद आगामी 4–5 वर्षों तक उसी खेत में लगातार फसल ली जा सकती है।

6. खाद : लैमनग्रास की सफल खेती हेतु खेत की तैयारी के समय 20–25 टन गोबर की सड़ी हुई खाद तथा आखिरी जुताई के समय 250 कि.ग्रा. नत्रजन, 50 कि.ग्रा. फॉस्फोरस और 175 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर की दर से डालना चाहिए। नत्रजन की 2/3 मात्रा एवं

फॉस्फोरस और पोटाश की पूरी मात्रा खेत की तैयारी के समय डालनी चाहिए और शेष नत्रजन का प्रयोग 3–4 बार टॉप–ड्रैसिंग के रूप में करना चाहिए।

7. प्रवर्धन : लैमनग्रास का प्रवर्धन मुख्यतः वानस्पतिक विधि (स्लिप) द्वारा किया जाता है।

8. रोपाई का समय : लैमनग्रास की रोपाई का उचित समय फरवरी–मार्च तथा जुलाई–अगस्त है, लेकिन सिंचाई की उचित व्यवस्था होने पर नवम्बर से जनवरी (शीत ऋतु) को छोड़कर किसी भी माह में इसकी रोपाई की जा सकती है।

9. रोपाई की विधि : रोपण से पहले लैमनग्रास के स्लिप्स को दो घण्टे गो–मूत्र में डूबोकर रखना चाहिए। खेत में हल्की सिंचाई करनी चाहिए और कुदाल अथवा लकड़ी से 5–10 से.मी. गहरे छिद्र बनाने चाहिए और पौध से पौध एवं कतार से कतार की दूरी दोनों 60 से.मी. × 60 से.मी. होनी चाहिए। स्लिप्स लगाते समय सभी पुरानी पत्तियाँ हटा देनी चाहिए और जड़ का अधिकांश भाग जमीन के अन्दर होना चाहिए। स्लिप्स लगाने के बाद निचले हिस्से को मिट्टी से अच्छी तरह दबा दें और खेत में पानी छोड़ दें।

10. सिंचाई एवं जल निकास : पहली सिंचाई रोपण के तुरन्त बाद करनी चाहिए तथा तदोपरान्त ग्रीष्म ऋतु में 15–20 दिन तथा शीत ऋतु में 30–40 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करते रहना चाहिए। इस फसल में पानी बिल्कुल खड़े नहीं रहना चाहिए क्योंकि लगातार पानी खड़ा रहने से जड़ें सड़ जाती हैं और पौधे मर जाते हैं।

11. निराई–गुड़ाई : नींबू घास को रोपाई के 45–50 दिन तक ही निराई–गुड़ाई की आवश्यता होती है, इसके बाद प्रत्येक कटाई के बाद फावड़े से गुड़ाई करनी चाहिए।

12. कीट एवं रोग : इस फसल में रोग एवं कीटों का प्रकोप कम होता है। वर्षा ऋतु में नींबू घास पर कभी–कभी पत्तियों का रस चूसने वाले कीटों का आक्रमण होता है, जिसके कारण पत्तियाँ सिकुड़ जाती हैं। जिनकी रोकथाम हेतु जैविक कीटनाशी जैसे निम्बीसिडिन इत्यादि का छिड़काव करना चाहिए। अगर खेत में दीमक की समस्या हो तो बुवाई के समय 1 टन प्रति हैक्टर की दर से नीम की खली डालनी चाहिए। कभी–कभी पर्ण विन्दु (लीफ स्पॉट) तथा अंगमारी (लीफ ब्लाइट) रोग दिखाई पड़ते हैं। इन रोगों में पत्तियों पर छोटे–छोटे गुलाबी बिन्दु दिखते हैं तथा पत्तियाँ पीली पड़कर सूख जाती हैं। इन रोगों की रोकथाम के लिए मैंकोजेब या डायफोलेटान का 0.3 प्रतिशत घोल पत्तियों पर छिड़कना चाहिए।

13. कटाई : रोपण के लगभग 90 दिन बाद फसल कटाई के लिए तैयार हो जाती है। कटाई के समय फसल लगभग 3–3.5 फीट ऊँची होनी चाहिए। कटाई हमेशा जमीन से 10 से.मी. ऊपर से करनी चाहिए। लेमनग्रास की कटाईयों की संख्या भूमि की उर्वरता तथा पानी की उपलब्धता पर निर्भर करती हैं। प्रथम कटाई में उपज बहुत कम प्राप्त होती है लेकिन पहली कटाई के बाद फसल तेजी से बढ़ती है तथा 90–100 दिन के अन्तराल पर अन्य कटाईयाँ ली जाती हैं। यह क्रम अगले 3–4 साल तक लगातार चलता रहता है। समस्त परिस्थितियाँ अनुकूल होने पर एक वर्ष में 5–6 कटाईयाँ ली जा सकती हैं।

14. पत्तियों से तेल प्राप्ति : इसकी पत्तियों का जल वाष्प आसवन विधि द्वारा निकाला जाता है। फसल को काटने के बाद छाया में डालकर हल्का सुखा लिया जाता है। इसके बाद घास को टुकड़ों में काटकर आसवन टैंक में डालकर तेल प्राप्त कर लिया जाता है। पत्तियों में तेल की मात्रा 0.28–0.50 प्रतिशत तक होती है। इस पूरी प्रक्रिया में ढाई से तीन घन्टे लग जाते हैं। आसवन विधि द्वारा बची हुई लैमनग्रास की पत्तियों को मल्चिंग के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। जिससे नमी बनी रहती है, तथा इसके सड़ने पर पौधों को खाद भी मिलती है तथा खेत में खरपतवार भी कम निकलते हैं। 4 वर्ष के पश्चात् पूर्व में लगाये गये पौधों से तेल की पैदावार में 20–25 प्रतिशत की कमी आ जाती है। इसलिए लैमनग्रास की फसल को किसी अन्य खेत में अच्छी गुणवत्ता की पौध (स्लिपस) लेकर दोबारा लगाना चाहिए।

15. उपजः सिंचित क्षेत्रों में ताजा शाक की मात्रा लगभग 60 टन/हैक्टर होती है जबकी असिंचित क्षेत्रों में यह उपज घट कर लगभग 20 टन/हैक्टर रह जाती है। उन्नत विधि से खेती करने पर 2 या 3 कटाईयों से अधिकतम 100–150 कि.ग्रा. तेल प्रति हैक्टर प्रथम वर्ष में, जबकि शेष 3–4 वर्षों तक चार कटाईयों से 300–350 कि.ग्रा. तेल/हैक्टर/वर्ष प्राप्त किया जा सकता है।

पुदीना

1.वानस्पतिक नामः *मेन्था स्पीसिज*

2. उपयोगः पुदीना का घरेलू स्तर पर चटनी बनाकर प्रयोग किया जाता है जबकि व्यावसायिक स्तर पर इसके तेल का उपयोग दवाईयों, प्रसाधन सामग्रियों एवं खाने में किया जाता है।

3. भूमि एवं जलवायुः मेन्था की सफल खेती हेतु बलुई दोमट मिट्टी, जिसका पी.एच. मान 6.0–7.5 के बीच हो तथा जिसमें जल निकास की उचित व्यवस्था हो, उपयुक्त मानी जाती है। इसके साथ–साथ खेत में जीवांश की मात्रा भी अच्छी होनी चाहिए। समशीतोष्ण से उपोष्ण क्षेत्रों की जलवायु इसकी खेती के लिए सर्वोत्तम मानी जाती है।

4. प्रजातियाँः केन्द्रीय औषधीय एवं संगध पौधा संस्थान (सीमैप), लखनऊ द्वारा पुदीना की कई उन्नतशील किस्मों का विकास किया गया है। जिसमें हिमालय, कोसी, सक्षम, कुशल, सिम सरयू, सिम क्रान्ति और सिम उन्नति प्रमुख हैं।

5. खेत की तैयारीः मेन्था की सफल खेती हेतु दो–तीन बार खेत की गहरी जुताई करनी चाहिए और पाटा लगा देना चाहिए। आखिरी जुताई के समय गोबर की खाद या कम्पोस्ट मिट्टी में अच्छी तरह मिला देना चाहिए। जब मिट्टी भुरभुरी हो जाए तब उचित आकार की क्यारियाँ बनानी चाहिए।

6. खाद एवं उर्वरकः इस फसल के अधिक उत्पादन हेतु बीस टन गोबर की खाद, 80–120 कि.ग्रा. नत्रजन, 50–60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 40–60 कि.ग्रा. पोटाश/हैक्टर/दो कटाई की दर से खेत में मिलाना चाहिए। फॉस्फोरस और पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के समय तथा नत्रजन का 1/3 भाग कल्ले निकलने के बाद तथा शेष 2/3 भाग फसल अवधि के दौरान खड़ी फसल में 2–3 बार करना चाहिए।

7. प्रवर्धनः इस फसल का प्रवर्धन जड़ और तना दोनों से किया जाता है। जापानी पुदीने में मुख्यतः अंतः भूस्तारी (सकर्स) एवं अन्य प्रजातियों में उपरि भूस्तारी (रनर्स) का प्रवर्धन हेतु प्रयोग किया जाता है।

8. रोपाई का समयः उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में पुदीना की रोपाई का समय 15 जनवरी–15 फरवरी तक होता है। इस समय पुदीना लगाने से दो कटाईयाँ ली जा सकती हैं। कुछ क्षेत्रों में पुदीने की रोपाई लाही या गेहूँ के बाद की जा सकती है। इस समय पौध लगाने पर केवल एक ही कटाई ली जा सकती है।

9. रोपाईः मेन्था की सीधी बुवाई हेतु 3.5–4.0 कुन्तल एवं रोपाई द्वारा फसल तैयार करने के लिए 1–1.25 कुन्तल अंतः भूस्तरी (सर्क्स)/रनर्स की जरूरत पड़ती है। इसकी बुवाई कतारों में 40–45 से.मी. की दूरी पर करनी चाहिए और पौधे से पौधे की दूरी 4–5 से.मी. एवं गहराई 5 से.मी. होनी चाहिए। बुवाई के तुरन्त बाद जड़ों को मिट्टी से ढक देना चाहिए।

10. सिंचाईः पुदीना की अच्छी पैदावार हेतु सिंचाई की उचित व्यवस्था होना अति आवश्यक है। रोपण से लेकर मार्च तक दो सप्ताह के भीतर सिंचाई करनी चाहिए, जबकि मार्च–जून के माह में सिंचाई दस दिन के अन्तराल पर करनी चाहिए। इस बात का ध्यान रखें कि खेत में जलभराव की स्थिति न हो।

11. खरपतवार नियंत्रणः पुदीना की रोपाई के तुरन्त बाद पेन्डीमिथेलिन @ 1.0 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व (3.3 लीटर दवा) प्रति हैक्टर अथवा ऑक्सीफ्लुओरफेन 23.5% ई.सी. @ 900 ग्राम की दर से छिड़काव करना चाहिए तथा लगभग 30–40 दिनों के बाद पहली गुड़ाई कर देनी चाहिए। तदोपरान्त फसल काफी बढ़ जाती है एवं खरपतवार स्वतः कम हो जाते हैं।

12. निराई/गुड़ाईः सकर्स द्वारा उगाई गई फसल में पहली निराई फसल लगाने के 45 दिन के बाद तथा दूसरी एवं तीसरी निराई क्रमशः 65 व 80 दिनों के बाद अवश्य करनी चाहिए।

13. पुदीना में लगने वाले प्रमुख कीटः

(क) दीमकः दीमक का प्रकोप मुख्यतः सूखी जमीन में ज्यादा पाया जाता है। अतः दीमक के नियंत्रण हेतु

कीटनाशी क्लोरपायरीफॉस 20 % ई.सी. @ 2–3 लीटर/हैक्टर से मृदा शोधन करें। मिट्टी को हमेशा नम रखें तथा रोपण से पूर्व नीम की खली एक टन/हैक्टर की दर से खेत में डालना चाहिए।

(ख) माहू: माहू का प्रकोप फरवरी माह में अधिक पाया जाता है। जिसके नियंत्रण हेतु रोगोर 1.5–2.0 मि.ली./ली. पानी के हिसाब से घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

14. पुदीना में लगने वाले प्रमुख रोग:

(क) चूर्णिल आसिता (Powdry mildew): इस रोग के कारण पत्तियों के ऊपर बारीक चूर्ण जैसे सफेद रंग के धब्बे दिखाई देते हैं। इसकी रोकथाम हेतु घुलनशील गंधक का 0.25 प्रतिशत का घोल बनाकर एक माह में दो बार छिड़काव करना चाहिए अथवा कैराथेन 0.1 प्रतिशत का छिड़काव भी रोग नियंत्रण में सहायता करता है।

(ख) पर्णचित्ती (Leaf spot): इस रोग के लक्षण पत्तों पर ऊतकक्षयी धब्बे के रूप में दिखाई देते हैं। बाद में ये धब्बे पूरे पत्ते पर फैल जाते हैं और अन्त में पत्तियाँ सूख कर नीचे गिर जाती हैं। इस रोग के नियंत्रण हेतु स्टोलन को डाइफोलेटान रसायन के 0.3 प्रतिशत घोल से उपचारित करना चाहिए। इसके पश्चात् कॉपर ऑक्सीक्लोराइड के 0.3 प्रतिशत घोल का छिड़काव 15 दिन के अन्तराल पर 3 बार करना चाहिए।

15. कृषिवानिकी में पुदीना की फसल: कृषिवानिकी में पुदीना को एक अन्तः फसल के रूप में लिया जा सकता है। पॉपलर एवं यूकेलिप्टस के पेड़ों के बीच पहले 5–7 वर्षों में पुदीना का रोपण करके अतिरिक्त आमदनी प्राप्त की जा सकती है।

16. कटाई: पुदीना की कटाई के समय खिली हुई तेज धूप एवं सूखे मौसम का होना अति आवश्यक है। फसल पकने पर पत्तियाँ पीली पड़ने लगती हैं और इसी समय फसल को काट लेना चाहिए। जनवरी–फरवरी माह में रोपित फसल की दो बार कटाई की जा सकती है। पहली कटाई फसल रोपण के 100–120 दिनों बाद मई माह में तथा दूसरी कटाई पहली कटाई के 60–75 दिनों बाद की जा सकती है। मार्च–अप्रैल महीने में रोपित फसल से केवल एक ही बार कटाई की जा सकती है।

17. आसवन: पुदीना से अधिक तेल प्राप्त करने हेतु कटे हुए शाक को 12–24 घण्टे हवा में छोड़ दिया जाता है। पुदीना के शाक से आसवन विधि द्वारा तेल निकाला जाता है तथा तेल निकालने से पूर्व शाक को आसवन टैंक में भरा जाता है। पुदीना के शाक को यदि कटाई के 3–4 दिन बाद आसवित किया जाता है तो इसके तेल की मात्रा एवं गुणवत्ता में वृद्धि पाई जाती है।

18. उत्पादन: पुदीने की विभिन्न प्रजातियों से निम्न विवरणानुसार उपज होती है:

प्रजाति	शाक की उपज (कु./है.)	तेल का उत्पादन दो कटाईयों में (कि.ग्रा./है.)	मेन्थॉल की प्रतिशतता
कुशल	250–275	175–200	77–82
हिमालय	275–300	200–225	73–75
सक्षम	300–325	200–225	77–82
कोसी	300–325	225–250	75–80
सिम सरयू	275	265–290	79–80
सिम क्रान्ति	173	270	78

सम्पर्क सूत्र : 9412451262 ☑

बैकयार्ड कुक्कुट पालन

डा. संजय चौधरी एवं डा. शिव प्रसाद

उत्तराखण्ड में मुर्गी पालन एक तेजी से बढ़ता हुआ व्यवसाय है। जोकि खाद्य सुरक्षा के साथ साथ आर्थिक स्वावलम्बन में भी सहायक है। उत्तराखण्ड के पर्वतीय भागों में अधिकांश किसान कृषि एवं पशुपालन आधारित व्यवसाय से जुड़े हैं चूँकि अधिकांशतः कृषि वर्षा आधारित है जिसमें हानि की संभावना बनी रहती है। मांस एवं अंडों की बढ़ती मांग को देखते हुए मुर्गी पालन एक सफल कमाई वाला साधन है। कम लागत में अधिक कमाई का यह एक बेहतर विकल्प साबित हो रहा है। बढ़ती आबादी और घटते रोजगार में बेरोजगार युवक कृषि और पशुपालन को व्यवसाय के रूप में मुर्गी पालन व्यवसाय को तेजी से अपना रहे हैं।

बैकयार्ड मुर्गी पालन किसानों के लिए एक लाभदायक व्यसाय साबित हो रहा है। यह एक ऐसा व्यवसाय है जो आय का अतिरिक्त साधन उपलब्ध कराता है। यह व्यवसाय कम लागत में शुरू किया जा सकता है और इसमें मुनाफा भी ज्यादा है। घर के पिछवाड़े में छोटे स्थान पर मुर्गियों को घरेलू श्रम और स्थानीय उपलब्ध दाना–पानी तथा घरेलू अवशेष खाद्य पदार्थों का उपयोग करते हुए कम से कम आर्थिक व्यय से मुर्गी पालन को बैकयार्ड कुक्कट पालन या घर के पिछवाड़े मुर्गी पालन कहते हैं जोकि आर्थिक रूप से पिछड़े लोगों, गरीब किसानों, ग्रामीण महिलाओं को आर्थिक स्वावलम्बन प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। ग्रामीण या दूरस्थ क्षेत्रों में जहाँ मांस एवं अंडों की उपलब्धता कम होती है या अधिक कीमत पर यह उपलब्ध होते हैं ऐसे क्षेत्रों में बैकयार्ड मुर्गी पालन वरदान साबित हो सकता है। विभिन्न शोध संस्थानों द्वारा विभिन्न मुर्गियों की नस्लों के मिश्रित प्रजनन से मुर्गियों की बहुत सी नस्लों को विकसित किया गया है जो की अच्छी मात्रा में मांस एवं अंडे उत्पादन के साथ–साथ वहाँ की स्थानीय जलवायु में पूरी तरह अनुकूल होती है।

बैकयार्ड मुर्गी पालन की शुरूआत

10 से 50 मुर्गियों से इस व्यवसाय को शुरू कर सकते हैं। इन मुर्गियों के 1 दिन के चूजों की कीमत लगभग 20 से 60 रुपये तक हो सकती है। देसी मुर्गियों में अंडे सेने का गुण होता है। जिसका लाभ यह होता है कि किसानों को बार–बार चूजे खरीदने की आवश्यकता नहीं पड़ती है। देसी मुर्गी साल में 160 से 180 अंडे देती हैं, जिनका बाजार में मूल्य अधिक होता है। देसी मुर्गी के अंडों की मांग भी ज्यादा है। आजकल इसको जैविक अंडा के रूप मे इस्तेमाल किया जा रहा है। इसकी कीमत आमतौर पर साधारण अंडे के मुकाबले ज्यादा होती है और इसकी मार्केटिंग में कोई परेशानी नहीं होती है।

बैकयार्ड मुर्गी पालन के लाभ

- बैकयार्ड मुर्गीपालन के लिए कम जमीन, श्रम, एवं पूंजी की आवश्यकता होती है।
- यह ग्रामीण लोगो को फसल नुकसान या अन्य आपात की स्थिति में अतिरिक्त आय प्रदान करती है।
- लघु सीमांत और भूमिहीन किसानों, जिनके पास बजट कम होता है, वे आसानी से कम लागत में अतिरिक्त पैसे अर्जित कर सकते हैं।
- मुर्गी के विष्टा से भूमि उपजाऊ होती है क्यूंकि इसमें नाइट्रोजन की मात्रा प्रचूर मात्रा में मिलती है।
- बंजर भूमि भी बैकयार्ड मुर्गी पालन करने में उपयोग में ले सकते हैं जिससे बंजर भूमि को उपजाऊ बनाया जा सकता है।

- बैकयार्ड मुर्गी पालन के माध्यम से देसी नस्ल की मुर्गियों का संरक्षण भी कर सकते हैं।
- पोषक तत्वों से भरपूर अंडा प्रोटीन का सबसे अच्छा स्त्रोत है जो घर–परिवार पोषण स्तर में भी सुधार करता है।
- रसोई से निकले हुए अवशिष्ट पदार्थ जिन्हें फेंक दिया जाता है, बैकयार्ड मुर्गी पालन में इसका उपयोग मुर्गियों के चारे के लिए किया जा सकता है।
- घर के आस–पास पड़े खाली स्थानों का सदुपयोग होता है और आर्थिक आवश्यकताओं को पूरी करने में योगदान देता है।
- देसी मुर्गा का बाजार मूल्य ज्यादा और मांग भी अधिक होती है।

बैकयार्ड कुक्कट प्रबंधन

- बैकयार्ड मुर्गी पालन में पक्षियों को घर के पिछवाड़े में प्राकृतिक खाद्य आधार के पर 10 से 50 मुर्गियों के झुण्ड में रखा जाता है।
- मुर्गियों को दिन के समय खुली जगह के लिए छोड़ दिया जाता है जबकि रात में उन्हें आश्रय में रखा जाता है।
- मुर्गियों को घर पिछवाड़े में खुली जगह में जाने से पहले प्रतिदिन स्वच्छ पेयजल उपलब्ध करवाना चाहिए।
- चूजों को हमेशा साफ और ताजा पानी देना चाहिए। दिन में कम से कम 3 बार पानी बदल देना चाहिए। चूजों को फीडर और ड्रिंकर खोजने के लिए 2 मीटर से अधिक नहीं चलना चाहिए।
- मुर्गियों को दिन में रसोई के बचे हुए अपशिष्ट, स्थानीय रूप से उपलब्ध अनाज, कीड़े–मकोड़े, कोमल पत्ते और उपलब्ध सभी सामग्री का उपयोग खाद्य पदार्थ के रूप में करती है जिससे बैकयार्ड मुर्गी पालन में आहार पर काफी कम खर्च होता है।
- मुर्गियों को मौसम के आधार पर घर में उपलब्ध अनाज दाना भी दे सकते हैं।
- चूजे उत्पादन हेतु 10 मादा पक्षियों के लिए 1 नर पक्षी की अवश्यकता होती है।
- बैकयार्ड मुर्गीपालन के लिए विकसित की गयी किस्मों में बेहतर रोग प्रतिरोधक क्षमता/प्रतिरक्षा क्षमता होती है। हालाँकि, इन पक्षियों को रानीखेत रोग और फाउल पॉक्स जैसी कुछ बीमारियों से सुरक्षा हेतु टीकाकरण की आवश्यकता होती है।
- मुर्गियों को रानीखेत रोग के वचाब के लिए हर 6 महीने के अंतराल पर टीका लगाया जाना चाहिए। टीकाकरण से एक सप्ताह पहले मुर्गियों को कृमि नाशक दवाई देनी चाहिए।
- बैकयार्ड मुर्गियों अन्तः परजीवी के संक्रमण का भी काफी खतरा बना रहता है इससे बचाव के लिए एल्बेनडाजोल (5 मि.ली. ग्राम/किलोग्राम शारीरिक भार) या पाइपराजीन (50–100 मिलीग्राम/पक्षी) पीने के पानी के साथ देनी चाहिए।
- बैकयार्ड मुर्गी पालन के विभिन्न उद्देश्यों की हेतु कैरी श्यामा, कड़कनाथ, उत्तरा, कैरी देवेन्द्रा, कैरी गोल्ड, कैरी निर्भिक, वनराजा, इत्यादि नस्लों को मुख्यतः पाला जाता है।

बैकयार्ड कुक्कुट में टीकाकरण

क्र. सं.	उम्र (दिन में)	बीमारी (टीका) का नाम	डोज	रूट
1.	1	मरेक्स	0.20 मि. ली.	पंख में
2.	7	रानीखेत (लासोटा)	एक बूंद	आँख में
3.	18	रानीखेत (लासोटा)	एक बूंद	आँख में
4.	28	रानीखेत (आर.टू.वी.)	0.50 मि.ली.	खाल में
5.	42	फाउल पॉक्स	0.20 मि. ली.	मांस में

बैकयार्ड मुर्गीपालन का महिला सशक्तिकरण व् खाद्य सुरक्षा में भागीदारी

- बैकयार्ड मुर्गीपालन ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं एवं बच्चों के कुपोषण की समस्या से निजात दिलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है क्यूंकि

मुर्गियों से मिलने वाले मांस एवं अंडों में पर्याप्त मात्रा में मिनिरल एवं प्रोटीन होते हैं।

- यह महिलाओं में व्यवसायिकता के गुणों को विकसित करने में सहायक है।
- बैकयार्ड मुर्गीपालन महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण में सहायक रहती है जिससे उनकी पुरुषों पर आर्थिक निर्भरता भी कम रहती एवं उनके निर्णय लेने की क्षमता को भी प्रबलता मिलती है।
- अपशिष्ट पदार्थ (कीड़े, सफेद चींटियाँ, गिरे हुए दाने, हरी घास, रसोई का कचरा आदि) को कुशलतापूर्वक उपयोग कर मानव उपभोग के लिए अंडे और चिकन मांस में परिवर्तित किया जा सकता है।
- ग्रामीण/आदिवासी लोगों को रोजगार प्रदान करता है और शहरी क्षेत्रों में लोगों के पलायन को रोकने में मदद करता है।
- देशी नस्ल की मुर्गियों का मांस एवं अंडो भी ज्यादा कीमत में बिकते हैं।

कैसे करें बैकयार्ड कुक्कुट पालन?

बैकयार्ड कुक्कुट पालन की सफलता हेतु किसानों का इस व्यवसाय में प्रशिक्षित होना आवश्यक है। प्रशिक्षण केन्द्रीय पक्षी अनुसंधान केन्द्र, कुक्कुट प्रजनन केन्द्रों, प्रादेशिक कृषि विश्वविद्यालयों तथा पशु पालन विभाग के माध्यम से प्राप्त किया जा सकता है। प्रशिक्षण आयोजित न होने की स्थिति में इन संस्थानों में उपलब्ध कुक्कुट विशेषज्ञों से इसके बारे में पूर्ण जानकारी प्राप्त करनी चाहिए। इन विशेषज्ञों से मिलकर बैकयार्ड कुक्कुट पालन की पूरी रूपरेखा तैयार कर लें, जैसे–नस्ल कौन सी पालनी है, आहार व्यवस्था कैसी होनी है, चूजे पालने के लिए क्या सुविधाएं चाहिए तथा इन्हें कैसे पालें, रोग नियंत्रण के लिए क्या करें तथा कौन–कौन से टीके लगायें, बैकयार्ड कुक्कुट पालन के लिए चूजों, टीकों, दवाओं तथा आहार की उपलब्धता कहां से और कैसे होगी, परेशानियों के निराकरण के लिए तकनीकी सहायता का स्रोत क्या होगा तथा यह सुविधा कैसे प्राप्त होगी?

बैकयार्ड कुक्कुट पालन में चूजे कैसे पालें ?

उचित नस्ल के चूजों का चुनाव कर कोशिश करें कि इन्हें ऐसे मौसम में पालें, जब मौसम ठीक हो (जैसे सितम्बर से नवम्बर, मार्च से जून)। ऐसे मौसम में चूजों को पालना आसान रहता है। हमेशा एक दिन के चूजों को पालने की कोशिश करें। अब प्रश्न उठता है कि एक दिन के चूजे पालने के लिए क्या विधि अपनाएं तथा क्या–क्या तैयारियां करें ? चूजे पालने के लिए दिन एवं रात्रि में अलग–अलग व्यवस्था करनी पड़ती है। सामान्यतः चूजे पालने के लिए एक लकड़ी की पेटी 3 × 3 × 2 फुट आकार की अथवा इसी प्रकार की बड़ी अनाज रखने वाली टोकरी का प्रयोग किया जा सकता है। खुला हुआ हिस्सा ऊपर की ओर रखें तथा ऊपर से ढकने के लिए मुर्गी जाली/मच्छर दानी का कपड़ा अथवा अन्य कोई बारीक कपड़ा या टाट का प्रयोग कर सकते हैं। ढकने की ऐसी व्यवस्था हो जिसमें से गैस निकल सके। यदि बिजली की सुविधा हो तो इसमें एक बल्ब लटका दें। पेटी की तली (निचली सतह) पर चावल का ढूटा/चावल का छिलका/लकड़ी का बुरादा या अन्य बिछावन की 1–2 इंच मोटी परत बिछा दें। इसी पेटी में एक प्लेट व छोटे डिब्बे में पानी की व्यवस्था करें। दाने के लिए भी गहरी प्लेट/लोहे की नाली अथवा आधी कटी प्लास्टिक का पाइप (2 इंच व्यास वाला) अथवा तीन इंच चौड़े दो लकड़ी के तख्तों को V आकार में जोड़कर प्रयोग किया जा सकता है। पेटी में चूजों को छोड़ दें तथा इसे रात में घर के अन्दर ही रखें। इस प्रकार 50 चूजों को 2–3 सप्ताह तक पाला जा सकता है। दिन में 6–7 दिन के बाद से जाली से घिरे हुए स्थान

पर घर के बाहर रखें। कुछ किसान इसके लिए चारपाई का प्रयोग भी करते हैं। चारपाई को मच्छर दानी से ढक देते हैं तथा इसके नीचे चूजे छोड़ देते हैं। मच्छर दानी के कारण चूजे इससे बाहर नहीं निकल पाते हैं तथा इन्हें स्वच्छ हवा तथा धूप भी मिलती रहती है। चूजों को रात में घर के अन्दर पेटी में रखते हैं। प्रारम्भ में आहार के रूप में चावल की कनकी/मक्का का दलिया अथवा थोड़ा बहुत संतुलित आहार (उपलब्ध होने पर) दें। यदि सम्भव हो तो पानी में एंटीबायोटिक औषधि, विटामिन मिश्रण एवं इलेक्ट्रोलाइट दें। एक या दो सप्ताह के बाद से इन्हें घर का बचा हुआ भोजन तथा हरा चारा दें। तीन या चार सप्ताह के होने पर चूजों को घर के बाहर जाली का बड़ा सा दड़बा बनाकर रखें तथा आहार की पूर्ति घर की जूठन बचे हुए अनाज, हरी शाक–सब्जियों, चारे तथा राइस पॉलिश आदि से करें। इस प्रकार की व्यवस्था में ये पड़ोसियों अथवा अपनी शाक–सब्जी को बरबाद नहीं करेंगे। समूह में पालने पर इनका टीकाकरण, जो कि अत्यन्त आवश्यक है, सरल होता है। रानीखेत रोग का टीका पहले सप्ताह तथा कुक्कुट चेचक का टीका 8–10 सप्ताह पर लगवायें। यदि अंडा उत्पादन के लिए मुर्गियों को पालना है तो रानीखेत रोग का टीका पुनः दें। इसमें स्थान विशेष की परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तन भी किया जा सकता है। इस प्रकार चूजों को पालने से चूजों की मृत्यु भी कम होती है तथा पालना आसान रहता है। किसी भी प्रकार की परेशानी का सामना होने पर तुरन्त कुक्कुट विशेषज्ञ से संपर्क कर समस्या का निराकरण करें। यदि कुक्कुट पालन मांस के लिए किया जा रहा है तो 1.5 से 2.0 कि.ग्रा. भार होने पर इन्हें बेच दें। यदि अंडा उत्पादन के लिए किया जा रहा है तो मुर्गों एवं मुर्गियों को अलग कर दें तथा 10 मुर्गियों पर 1 या 2 मुर्गे रख कर शेष मुर्गो को बेच दें। अंडा उत्पादन करने वाली मुर्गियों के लिए अंडा उत्पादन शुरू होने से पहले अंडा देने के लिए दड़बे (लकड़ी की पेटी) की व्यवस्था करें। यदि इन्हें जाली के घेरे में रखा जा रहा है तो एक बर्तन में मारबल चिप्स रखना चाहिए। इससे इनकी कैल्सियम की अतिरिक्त आवश्यकता की पूर्ति हो जाती है। इन्हें समय–समय पर पेट के कीड़े की दवा भी देते रहें। मुर्गियों में किसी भी प्रकार की परेशानी देखते ही कुक्कुट रोग विशेषज्ञ की सलाह के अनुरूप उचित व्यवस्था करनी चाहिए। सूझ–बूझ, उचित आवास एवं पोषण व्यवस्था तथा वैज्ञानिक तकनीकों के आधार पर किये जाने वाले बैकयार्ड कुक्कुट पालन से अतिरिक्त आय अर्जित करना संभव है।

सम्पर्क सूत्र : 9412162673 ☑

पशुओं के प्रमुख संक्रामक रोग और बचाव

डा. निधि अरोड़ा, डा. वी.एस. राजौरा एवं डा. मीना मृगेश

वैज्ञानिक ढंग पशु प्रजनन एवं नस्ल सुधार, समुचित भरण पोषण तथा उत्तम पशु प्रबन्ध के अलावा पशुओं में होने वाली बीमारियों का नियंत्रण जितने प्रभावी ढंग से किया जायेगा उतनी ही पशुओं की उत्पादकता बढ़ेगी और पशुपालकों को अधिक लाभ होगा।

पशुओं की बीमारियों को मुख्यतः निम्नलिखित समूहों में बाँटा जा सकता हैः

1.	सामान्य (प्रणाली से संबंधित) रोग	:	मुख–पाक, ग्रसनीशोथ, आमाशय शोथ, अपच, अफरा (पेट फूलना), वाह्य पदार्थ, पीलिया, श्वसनीशोथ, श्वसनी तथा चूषण निमोनिया, नकसीर, एनीमिया, भमरी रोग, हीट स्ट्रोक, बर्न, वृक्कशोथ, मूत्रश्मरता, पित्ती, छाजन तथा त्वचाशोथ आदि।
2.	उत्पादन (मेटाबोलिक) तथा खनिज विटामिन अल्पता रोग	:	दुग्ध ज्वर, ग्रास टिटैनी, कीटोनमयता, रिकेट्स, गलगण्ड, मधुमेह, पराकिरेटिनता, रतौधी आदि।
3.	विषाक्तता	:	सर्प विषाक्तता तथा कृषि के विकास व पशुधन उत्पादन में प्रयुक्त पदार्थों से होने वाली विषाक्तताएँ।
4.	परजीवीजनित रोग	:	बिस्सी रोग, गिल्लर–पिट्टू रोग, पटेरे रोग, फाइलेरिएसिस, कॉक्सीडियोसिस, बबेसियोसिस, थाइलेरियोसिस, सर्रारोग तथा बाह्य परजीवी।
5.	जीवाणुजनित रोग	:	एन्थ्रेक्स, संक्रामक गर्भपात, गलघोटू, लंगडी, क्षय रोग, टिटेनस, एक्टीनोबेसीलोसिस, एक्टीनोमाइकोसिस तथा थनैला आदि।
6.	विषाणुजनित रोग	:	पौंका, खुरपका–मुँहपका, अढैया रोग तथा रेबीज आदि।
7.	फफूँदीजन्य रोग	:	रिंगवर्म रोग आदि।

जीवाणुजनित रोग

(क) गलघोंटू रोग (हीमोरेजिक सेप्टीसीमियां)

गलाघोंटू या हीमोरेजिक सेप्टीसीमिया को साधारण भाषा में 'घरखा', 'घौंटुआ', 'अशढ़िया', 'डकहा' आदि नामों से भी जाना जाता है। इस रोग से मुख्य रूप से गाय तथा भैंस प्रभावित होती है व सामान्यतः 6 माह से 2 साल की उम्र के पशु प्रभावित होते हैं। इस रोग से पशु की अकाल मृत्यु हो जाती है। यह मानसून के समय व्यापक रूप से फैलता है।

गलाघोंटू बहुत खतरनाक रोग है जिसकी शुरूआत तेज बुखार (105–107 डिग्री फारेनहाइट) से होती है। पीड़ित पशु के मुँह से ढेर सारा लार निकलता है। गर्दन में सूजन के कारण साँस लेने के दौरान घर्र–घर्र की आवाज आती है और अंततः 12–24 घंटे में मौत हो जाती है।

बचाव

- पशुशाला में साफ–सफाई का पूरा ध्यान रखें व स्वच्छ हवा के आवागमन हेतु उचित उपाय करना चाहिए।
- समय से टीकाकरण करें। रोग की रोकथाम के लिए वर्षा से पूर्व अप्रैल–मई माह में टीका लगाना चाहिए। लम्बी यात्रा के बाद पशु को पानी और गुड़ का मिश्रण देना चाहिए।

गलाघोंटू रोग

(ख) संक्रामक गर्भपात (ब्रूसिलोसिस)

यह रोग ब्रूसैला नामक जीवाणु द्वारा होता है। इस रोग में गर्भ के अन्तिम तिमाही में गर्भपात हो जाता है। गर्भपात वाली जेर को सावधानी से अन्य स्थान पर गाड़ देना चाहिए। यह रोग पशु से मनुष्य में भी हो सकता है। वैक्सीन का प्रयोग प्रायः चार माह से कम आयु के मादा जानवरों में किया जाता है। इस रोग में काटन स्ट्रेन 19 वैक्सीन का प्रयोग किया जाता है। इस वैक्सीन से मादा पशु में जीवन भर के लिए रोग निरोधक क्षमता उत्पन्न हो जाती है। इस वैक्सीन को नर पशु में नहीं लगाना चाहिए।

(ग) लंगड़ी बुखार (ब्लैक क्वार्टर)

यह रोग क्लॉस्ट्रिडियम नामक जीवाणु द्वारा होता है। इस रोग में पशु को तेज बुखार तथा एक या दो पैरों में लंगड़ापन हो जाता है। पशु की अगले या पिछले पैरों के ऊपरी भाग की मांस पेशियों में सूजन आ जाती है जिसके दबाने पर हवा भरी हुई प्रतीत होती है। इस रोग का टीका भी वर्षा ऋतु से पूर्व लगाया जाता है। टीके की 2.3 मि.ली. मात्रा त्वचा के नीचे लगाई जाती है। गलघोंटू तथा लंगडी का टीका लगने के 15 दिन बाद 4.5 माह के लिए रोग निरोधक क्षमता उत्पन्न हो जाती है।

लंगडी बुखार एवं गलघोंटू दोनों का टीका एक साथ या अलग–अलग दोनों प्रकार से दिया जा सकता है।

(घ) बछड़े–बछड़ियों में सफेद दस्त

यह प्राणघातक रोग है जो कि 24 घंटे में ही बछड़े की मृत्यु का कारण बन सकता है। इसमें बुखार आता है, भूख कम लगती है और बदहजमी हो जाती है। पतले दस्त होते हैं जिसमें बदबू आती है। इसमें खून भी आ सकता है। इससे बचाव के लिए बछड़ों को पर्याप्त खीस पिलाऐं। खीस को जन्म के 12 घंटे में ही पिला दें।

(च) क्षय रोग

क्षय रोग एक चिरकालीन जीवाणु जनित रोग है और विश्व के सभी देशों में पाया जाता है। रोग कारक जीवाणु माइकोबैक्टीरियम ट्यूबरकुलोसिस कहलाता है। क्षय रोग पैदा करने वाले जीवाणु की तीन किस्में होती हैं जो गोपशुओं, मनुष्यों तथा पक्षियों में रोग उत्पन्न करती हैं। क्षय रोग के जीवाणु आमतौर पर अपने आश्रयदाता प्राणी के शरीर में ही पाये जाते हैं। यह सही है कि मनुष्य में क्षय रोग आमतौर पर उन्हीं जीवाणुओं से पैदा होता है जो मनुष्य में क्षय रोग पैदा करते हैं, पर जिन देशों में गो पशुओं में क्षय रोग एक सामान्य सी बात है वहाँ मनुष्यों, विशेषकर बच्चों में क्षय रोग के कारण वे जीवाणु भी देखे गये जो गो पशुओं में क्षय पैदा करते हैं।

यक्ष्मा या क्षय रोग जीवाणु विश्व के अधिकांश भागों में मानव तथा गो–पशुओं में व्याप्त हैं। इस रोग का प्रारम्भ सभ्यता के आगमन से हुआ। एक ही स्थान पर बांधे गये अथवा पशुशालाओं में निकट सम्पर्क में रखे गये गो पशुओं में यह रोग अधिकतर फैलता है।

क्षय रोग पैदा करने वाला जीवाणु पशु के शरीर में किसी भी जगह से प्रवेश कर सकता है। पर यह आमतौर पर श्वास नली के रास्ते से शरीर में प्रवेश करता है और इस प्रकार क्षय के रोगी पशुओं द्वारा अपनी साँस के साथ छोड़े गये हवा में मौजूद क्षय रोग के जीवाणु साँस लेने के साथ ही स्वस्थ पशुओं के फेफड़ो में पहुँच जाते हैं, इसलिए क्षय रोग की छूत अधिकांशतः पशुओं के बाड़ों या दूसरी बंद या तंग जगहों में लगती है। इस तरह बड़े गो यूथों में इस रोग की घटनायें बहुत होती हैं। खाने के साथ जीवाणुओं के आमाशय में पहँचने पर भी क्षय रोग की छूत लग सकती है। ऐसा मालूम होता है कि माँ का दूध पीने वाले, विशेषकर क्षय रोग से प्रभावित अयन वाली गायों का दूध पीने वाले बछड़ों और बछियों को यह रोग अधिकांशतः क्षय रोग के जीवाणु दूध के साथ पेट में पहुँचने से ही होता है।

लक्षण : संक्रमण के बाद जीवाणु मंद गति से विकास करते हैं और कभी–कभी तो बाहरी लक्षण अनेक वर्षों तक प्रकट नहीं होते। फेफड़ों के क्षय रोग से ग्रस्त पशु खाँसता है एवं उसके मुँह और नथुनों से

सूखा कफ निकलता है। प्रारम्भ में हल्का बुखार होता है। क्षीणता और दुर्बलता बढ़ने लगती है। इसके बाद नथुनों से श्लेष्मा व पस मिश्रित स्राव आता है, लसिका ग्रन्थियाँ बढ़ जाती है और शरीर की प्रायः सभी श्लेष्मा कलायें रक्त की कमी के कारण पीली पड़ने लगती है। गोश्त की कमी के कारण खाल हड्डियों से चिपक जाती है और पशु हड्डियों का ढाँचा मात्र रह जाता है।

उपचार : जब तक आइसोनिकोटिनिक एसिड हाइड्राजीन की खोज गो यक्ष्मा के उपचार के लिये नहीं हुई थी तब तक इस रोग की चिकित्सा हेतु कोई व्यवहारानुरुप औषधि नहीं थी। पशुओं में यक्ष्मा रोग का आइसोनियाजिड औषधि से उपचार आर्थिक दृष्टि से लाभकर रहता है।

नियंत्रण : भारत में क्षय रोग गो पशुओं में व्यापक रुप से पाया जाता है। इसलिए जैसे ही किसी गो यूथ में इस रोग का कोई मामला देखने में आये उसको शीघ्रातिशीघ्र नियंत्रण में लाने की कोशिश की जाये। यदि कोई पशु खुले क्षय रोग का रोगी है तब तो यह और भी आवश्यक हो जाता है या ऐसा पशु रोग के लाक्षणिक रुप से पहचाने जाने तक अपने यूथ के अनेक पशुओं को रोगी बना देगा। यदि रोग को समय पर ही रोकने के प्रयत्न नहीं किये जाते तो वह इतना अधिक फैल जाता है कि उसकी रोकथाम के लिए कोई भी उपाय करना अति कठिन हो जाता है। भारत में आजकल दूध और दूध के पदार्थों का उत्पादन बढ़ाने हेतु उत्तम पशुधन पैदा करने के लिए गो पशुओं के बड़े समूह पाले जा रहे हैं। ऐसी हालत में क्षय रोग को फैलने से जितनी शीघ्रता से रोका जाये उतना ही अच्छा है।

जब किसी छोटे गो यूथ में क्षय रोग होने का संदेह हो तब तुरन्त ही उसके पशुओं में क्षय रोग का निदान करने के लिए ट्यूबरक्यूलिन टैस्ट किया जाना चाहिए और जो पशु रोगी पाये जायें, उन्हें गो यूथ से हटा देना चाहिए। बड़े गो यूथों के मामले में कुछ लोगों के बैग की विधि का प्रयोग सर्वोत्तम बताया है। इस विधि का मुख्य आधार का यह तथ्य है कि क्षय रोगी गायों से पैदा हुये बच्चे आमतौर पर पैदा होने के समय निरोगी होते हैं और उनमें क्षय रोग का संक्रमण नहीं होता। इस विधि के अनुसार यूथ के उन सभी पशुओं को निकाल दिया जाता है जिनमें क्षय रोग के लक्षण स्पष्ट रुप से दिखाई देते हैं। शेष पशुओं की ट्यूबरक्यूलिन परख विधि द्वारा जाँच की जाती है और जो पशु क्षय रोगी पाये जाते हैं उन्हें निरोग पशुओं से अलग रखा जाता है। रोगी और निरोगी दोनों समूहों को अलग अलग चरागाहों में चराया जाता है और उनके रखरखाव और देखभाल के लिए अलग अलग पशुसेवक रखे जाते हैं। स्वस्थ एवं निरोग पशुओं के समूह की हर तीन महीने के बाद जाँच की जाती है। निरोग गायों से पैदा होने वाले बच्चे अपनी माताओं के साथ ही रखे जाते है परन्तु रोगी गायों से पैदा होने वाले बच्चों को माँ का दूध जन्म से ही छुड़ा दिया जाता है और उन्हें अपनी माताओं से अलग स्वस्थ गो पशुओं में रखा जाता है। उन्हें उबालकर गर्म किया हुआ या पास्चुरीकृत दूध दिया जाता है। जिन बछड़ों को माँ का दूध पैदा होते ही नहीं छुड़ाया जा सकता उनको अपनी माताओं के साथ यथासंभव कम समय तक रहने देते हैं और फिर उनको ट्यूबरक्यूलिन परख द्वारा एक महीने के अंतर से दो बार अच्छी तरह से जाँच कर और निरोग सिद्ध होने पर ही स्वस्थ गो समूह के साथ रहते हैं। ट्यूबरक्यूलिन परख द्वारा रोगी पाये जाने वाले पशुओं पर कड़ी निगाह रखी जाती है। जिन पशुओं में क्षय रोग के लक्षण जाहिर हों उन्हें तुरन्त ही यूथ से अलग निकाल लेते हैं और बेच देते हैं। इस प्रकार इस विधि के प्रयोग से स्वस्थ और निरोगी पशुओं का समूह धीरे–धीरे बढ़ता है और रोगी पशुओं का समूह छोटा होता रहता है और अन्त में सारे यूथ में एक भी रोगी पशु नहीं रहता। भारत में सामान्यतः लोग पशुवध के, विशेषकर गो वध के, विरुद्ध हैं, इसलिए यहाँ रोगी पशुओं को दूर किसी ऐसी जगहों पर रखा जाये, जो स्वस्थ पशुओं की पहुँच से काफी दूर हो। इससे रोगी पशु, रोग की छूत को और आगे न फैला सकेगें। ऐसे पशु समूहों

की गायों का दूध सदैव पास्चुरीकृत करके या उबालकर काम में लाना चाहिए।

क्षय रोग हाने पर पशु का उपचार करने से कोई लाभ नहीं होता। क्षय रोग की छूत से बुरी तरह प्रभावित गो यूथो में पशुओं को बी.सी.जी. का टीका लगाना रोग की रोकथाम के लिए उपयोगी पाया गया है, पर आमतौर पर इस टीके का लगाना अच्छा नहीं समझा जाता। इसका कारण यह है कि जिन पशुओं को बी.सी.जी. का टीका लगाया जाता है उन पर ट्यूबरक्यूलिन परख की प्रतिक्रिया होने लगती है और इस प्रकार उनमें और स्वाभाविक छूत से ग्रसित पशुओं में भेद नहीं किया जा सकता।

(छ) टिटेनस

यह रोग घोड़ों में सबसे अधिक पाया जाता है। इस रोग का जीवाणु टॉक्सिन उत्पन्न करता है। छोटे पशुओं में नाभि का घाव, बधियाकरण का घाव, पूंछ या टांग काटना, भेंड़ की ऊन काटना, नाल बंदी के समय यह जीवाणु घावों को दूषित कर वहाँ टॉक्सिन उत्पन्न करता है। यह रोग एक पशु से दूसरे पशु में नहीं फैलता है तथा जीवाणु रोगी पशु के रक्त में भी नहीं पाया जाता है। इस रोग की उत्पत्ति का समय 7 दिन से 4 माह तक होता है।

इस रोग में ऐच्छिक मांसपेशियों में दर्द तथा तेज एवं लगातार संकुचन, शरीर के अंग या पूरा शरीर अकड़ जाना, घोड़ों में पूँछ का बार–बार उठाना तथा हिलाना तथा आँख की तीसरी आइलिड बाहर दिखाई पड़ना, जबड़ों की मांसपेशियों में संकुचन से खाने तथा निगलने में कष्ट, उनमें अधिक जकड़न से जबड़े बन्द हो जाना, आँखे लाल तथा घूरती हुई, भूख रहते हुए भी जबड़े की जकड़न के कारण भोजन लेने में असमर्थता तथा श्वसनी मांस पेशियों के पक्षाघात के कारण पशु की दम घुटने से मृत्यु हो जाती है।

रोग के उपचार के लिए किसी प्रकार का घाव होते ही उसकी चिकित्सा अविलम्ब करानी चाहिए। सामान्य से अधिक मात्रा में पेनीसिलीन प्रति दिन तथा मांस पेशियों को संकुचन से बचाने की दवा अगर प्रारम्भिक अवस्था में दी जाय तो पशु बचाया जा सकता है। इस रोग से बचाव के लिए शरीर पर घाव न होने दें तथा घाव होने पर गम्भीरता से यथाशीघ्र उपचार कराने तथा टिटनेस से बचाव का टीका लगवायें।

(ज) एक्टिनोबैसीलोसिस

यह गोवंशीय तथा भेंड वंशीय पशुओं का प्रमुख रोग है। इस रोग में गोवंशीय पशुओं के नीचे वाले जबड़े व गर्दन में तथा भेंड वंशीय पशुओं में इन स्थानों के अतिरिक्त चेहरे तथा नथुने में भी कड़ी गाँठें बन जाती हैं। ये गाँठे फूट जाती हैं जिनसे मवाद निकलने लगता है तथा गहरे अल्सर बन जाते हैं। बाद में गाँठे जीभ में भी बन जाती हैं जिससे जीभ मोटी तथा कड़ी हो जाती है। इस अवस्था को ''वुडेन टंग'' कहा जाता है। इससे पशु को खाने में परेशानी हाती है तथा अधिक लार स्रवण होता है। भेंड़ में जीभ पर बहुधा गाँठें नहीं पायी जाती हैं।

इसके उपचार में आयोडाइड का प्रयोग तुरन्त लाभकारी होता है। पोटेशियम आयोडाइड की 6–10 ग्राम मात्रा प्रतिदिन 7–10 दिन तक अथवा सोडियम आयोडाइड के 10 प्रतिशत घोल को अन्तशिरा इंजेक्शन द्वारा एक बार देने से अपेक्षित लाभ होता है।

(झ) एक्टिनोमाइकोसिस

यह सभी पालतू पशुओं का जीवाणु जनित रोग है। इस रोग में मेन्डिबल तथा मैक्जिला में सूजन तथा दाने–फोड़े बन जाते हैं जिसमें फिस्चुला बन जाते हैं। इनको चीरने पर पीला दानेदार पस मिलता है, दाने 2.5 मि.ली. व्यास के होते हैं। अत्यधिक सूजन के कारण कष्टश्वांस होता है। पशु चारा खाने में असमर्थ रहता है तथा सूखने लगता है। इस रोग के उपचार हेतु विक्षति का काटकर टिंचर आयोडीन लगाना तथा स्ट्रेप्टोमाइसिन या स्ट्रेप्टोपैनीसिलिन की 2–3 गुनी मात्रा का कई दिन तक उपयोग लाभदायक होता है।

(ट) थनैला (मैस्टाइटिस)

यह दूध देने वाले पशुओं की छूत से लगने वाली प्रमुख बीमारी है जो जीवाणु या फफूँदी द्वारा होती है। इस रोग का यथाशीघ्र उपचार नहीं कराने पर पूरा थन खराब हो सकता है। यह रोग थन या अयन में चोट लगने या घाव बनने, त्रुटिपूर्ण दोहन तथा दुग्धशाला में पर्याप्त सफाई न होने के कारण होता है। इस रोग के कारण अधिक दूध देने वाले तथा उच्चस्तरीय राशन खाने वाले पशु ज्यादा प्रभावित होते हैं।

ऊपर बताये गए प्रमुख लक्षण एवं दूध की परीक्षा करके इस बीमारी का पता चल सकता है। दूध परीक्षण हेतु स्ट्रिप कप की सहायता से दूध के रंग परिवर्तन या छीछड़े होने का पता लगाया जा सकता है। थनैला रोग का निदान व्हाइट साइड टेस्ट द्वारा आसानी से पशुपालक द्वारा किया जा सकता है। इस टेस्ट में 4–5 बूंद में 4 प्रतिशत सोडियम हाइड्रोक्साइड की एक बूंद मिलाकर लगभग आधा मिनट तक फेंटने पर बनना थनैला रोग प्रदर्शित करता है। जीवाणु परीक्षण तथा एंटीबायोटिक सेंसटिविटी टेस्ट कराने से थनैला रोग के उपचार में मदद मिलती है।

रोग की रोकथाम

1. पशु बाँधने का स्थान साफ रखें। भीगे, ठंडे तथा गीले फर्श पर पशुओं को न बॉधे।
2. दूध दुहने का सही तरीका (पूरे हाथ से दूध निकालना) अपनायें। पशु का दूध अत्यधिक धीमी या तीव्र गति से नहीं निकालना चाहिए।
3. प्रत्येक पशु का दूध दुहने से पूर्व तथा बाद में अपने हाथ, पशु के अयन तथा थनों को पोटाश युक्त पानी से धो लें।
4. थनैला रोग की शीघ्र पहचान के लिए दुहान के समय स्ट्रिप कप का नियमित उपयोग करें।
5. पहले स्वस्थ पशुओं का दुहान करें, बाद में थनैला ग्रसित पशु का दूध निकालें। रोगी थन का दूध बाद में निकालें।
6. रोग–ग्रस्त थन का दूध जमीन पर न गिरने दें। ऐसे दूध को बाहर न फेंककर गड्ढे में दबायें तथा बर्तन को उबलते पानी से साफ करें।
7. रोग ग्रसित पशु को स्वस्थ पशुओं से अलग रखें और उसकी शीघ्र चिकित्सा की व्यवस्था हेतु निकटतम पशुचिकित्सा अधिकारी से संपर्क करें।
8. दुधारु गायें जब दूध देना बन्द कर दें, उस समय उसके ब्याने से एक सप्ताह पूर्व चारों थनों में दवा का एक–एक ट्यूब भरकर छोड़ दें।
10. पशु को विटामिन 'ई' एवं सेलेनियम मुक्त खनिज मिश्रण खाने को दें। पशु के थन और अयन को चोट लगने से बचायें। थन या अयन पर चोट लगने/घाव होने पर तुरंत पशुचिकित्सक को दिखायें।

थनैला

(ठ) इनटेरोटॉक्सेमिया

बारिश के दिनों में सूक्ष्म जीवाणुओं के बढ़ने से भेड़ों की आँतों में सूजन आ जाती है और दस्त लग जाते हैं, इसे इनटेरोटॉक्सेमिया रोग कहते हैं। पशुओं को शुद्ध पानी पिलाए। भेड़ों को भी खुरपका–मुँहपका रोग की रोकथाम के लिए एक एफ.एम.डी का टीका लगवाना चाहिए।

विषाणु-जनित रोग

(क) खुरपका-मुँहपका रोग

खुरपका–मुँहपका रोग पशुओं का एक प्रमुख संक्रामक रोग है। देश के विभिन्न भागों में इसे

अनेक नामों से जाना जाता है जैसे मुख की बीमारी, खुरपका, खुरिया रोग, खोंरा। पिछली 4–5 शताब्दियों में भारत में इस रोग का भयंकर प्रकोप होता रहा है। अमेरिका और आस्ट्रेलिया जैसे अनेक विकसित देशों में इस रोग का पूरी तरह उन्मूलन किया जा चुका है लेकिन विकासशील देशों में आज भी यह पशुओं का एक प्रमुख रोग है। हमारे देश के सभी प्रदेशों में यह रोग गाय और भैंसों पर गंभीर रुप से आक्रमण करता है। भेड़, बकरी, सूअर और हिरन जैसे जंगली पशु भी इस रोग से पीड़ित हो सकते हैं। यदा कदा यह रोग मनुष्य में भी हो सकता है। यद्यपि 1 प्रतिशत से अधिक व्यस्क पशुओं की मृत्यु इस रोग के कारण नहीं होती, फिर भी इससे प्रभावित पशु कमजोर हो जाते हैं, दूध उत्पादन तथा प्रजनन शक्ति में भारी कमी हो जाती है और काम करने वाले पशुओं की काम करने की क्षमता घट जाती है। इस रोग से छोटी उम्र के पशुओं को अधिक हानि होती है और लगभग 20 प्रतिशत तक छोटे पशु इसके कारण मर जाते हैं।

संचरणः खुरपका रोग के विषाणु, रोगी पशु के खून, लार, आँसू, दूध, पसीना तथ मलमूत्र में पाये जाते हैं। संदूषित पानी, गोबर, चारा और चारागाहों से यह रोग फैल सकता है। मुख्य रुप से लार और पैर के फफोलों से निकले दूषित द्रव के कारण बीमारी तेजी से फैलती है। अनेक जंगली पशु, पक्षी तथा चूहे भी इस रोग को फैलाने में सहायक हो सकते हैं। यह रोग मनुष्यों के कारण ही सबसे अधिक फैलता है क्योंकि वह पशुओं के संपर्क में रहते हैं और उनके माध्यम से रोग के विषाणु दूसरे पशुओं में पहुँच जाते हैं। हवा के झोंकों के साथ भी रोग के विषाणु फैल सकते हैं। छोटे पशुओं में रोगी पशुओं का दूध भी इस रोग को फैलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

लक्षण : इस रोग से ग्रस्त पशु को बुखार आने लगता है। वह चारा नहीं खाता और जुगाली भी नहीं करता। रोगी पशु को प्यास अधिक लगती है। इसके बाद मसूँड़े, थूथन तथा जीभ की ऊपरी सतह या खुरों के बीच या उनके ऊपर छोटे–छोटे छाले बन जाते हैं। मुँह और खुर पर छाले दिखाई पड़ते हैं। ये छाले थनों पर भी प्रकट हो सकते हैं। दुधारु पशु का दूध कम हो जाता है, पैरों में लंगड़ापन शुरु हो जाता है। किसी–किसी रोगी पशु के पिछले पैर कांपने लगते हैं और वह अक्सर अपने खुरों के बीच के भाग को चाटता रहता है। पशु के मुँह से लार अधिक टपकने लगती है और होठों पर हर समय झाग देखे जा सकते हैं। छाले शीघ्र ही फूट जाते हैं जिससे पीड़ा बढ़ जाती है। खुरों के छालों से एक विशेष बदबूदार स्राव निकलता है जिससे मक्खियाँ आकर्षित होती हैं। मक्खियों द्वारा दिये गये अंडों से निकले लार्वा/कीड़े गलाव पैदा करते हैं जिससे पशुओं में बेचैनी होती है और कभी–कभी खुर झड़ जाते हैं। रोगी पशु का दूध पीने वाले छोटे बछड़े–बछिओं का बचना कठिन हो जाता है। फुंसियों के कारण थन बेकार हो जाते हैं और उनकी कार्य क्षमता घट जाती है।

नियंत्रण : इस रोग के नियंत्रण हेतु स्वच्छता पर पूरा ध्यान रखना तथा टीका लगाना अति आवश्यक है। कई विकसित देश नियमित रुप से टीका लगाकर इस रोग पर विजय पा चुके हैं। रोग की रोकथाम के लिये वैक्सीन की 10 मि.ली. मात्रा त्वचा के नीचे लगाई जाती है। इसका पहला टीका वर्ष में किसी भी समय, जब नव जन्मे बछड़े–बछिया की उम्र डेढ़ से दो माह हो, लगवाना चाहिए। इसके बाद हर 4 से 6 माह के बाद टीका लगवाते रहना चाहिए।

स्वच्छता हेतु पशुओं को सूखी जगह पर बांधना चाहिए। रोगी पशु को स्वस्थ पशु से अलग कर देना चाहिए और उसके चारे व विछावन को जला देना चाहिए। स्वस्थ पशुओं को घुमाना फिराना बंद कर देना चाहिए। रोगी पशु के बैठने के स्थान पर अच्छी तरह चूना छिड़क देना चाहिए। यदि फर्श पक्का हो तो फिनाईल का घोल भी छिड़का जा सकता है।

रोगी पशु के मुँह को 2 प्रतिशत फिटकरी के घोल या पोटेशियम परमैगनेट (लाल दवा) के

हल्के गुलाबी घोल से धोयें। खुरों के घाव फिनाईल या 1 प्रतिशत नीले थोथे (तूतिया) के पानी से धोने चाहिए। रोगी पशु को हल्का चारा खिलाना चाहिए।

यदि किसी डेरी फार्म में इस रोग के कारण 1–1 करके पशु बीमार पड़ रहे हैं तो यह जरुरी है कि कोई ऐसी विधि अपनाई जाए कि फार्म के सभी पशु रोग ग्रस्त होकर रोग मुक्त हो जायें। इस विधि ा (एफथाइजेशन) में अल्प रोग ग्रसित पशु की लार अन्य पशुओं के मुँह पर लगा दी जाती है। ऐसा करने से सभी स्वस्थ पशुओं पर रोग का आक्रमण हो जाता है और इसके बाद उनमें रोग के तीव्र आक्रमण से बचने की शक्ति उत्पन्न हो जाती है।

जब बहुत से पशुओं का उपचार करना हो तो उन्हें जीवाणुनाशी घोल जैसे नीला थोथा या फिनाईल के घोल में चलाया जाता है, (पाद स्थान) घोल में पशु के खुर भीग जाने चाहिए।

(ख) अढ़ैया रोग (थ्री डे सिकनैस)

यह एक विषाणुजनित उत्पन्न तीव्र ज्वर वाला रोग है जिससे गाय, भैंस आदि लगभग तीन दिन तक ग्रसित रहते हैं। इसमें ज्वर, कम्पन, मांसपेशियों की जकड़न, जो एक पैर से दूसरे पैर में आती जाती है तथा पीठ, गर्दन तथा अन्य मांसपेशियों में पहुँच जाती है, पशु के चलने फिरने में कष्ट होना, भूख न लगना, सुस्त पड़ जाना, लार बहना तथा दांत किटकिटाना आदि स्पष्ट लक्षण होते हैं। दूध देने वाले पशु का दूध एकदम सूख जाता है।

इसके उपचार के लिए एण्टीपाइरेटिक तथा बुखार कम करने की दवाएं तथा अन्य औषधियाँ पशु चिकित्सक की सलाह से दें।

(ग) रेबीज (पागलपन)

यह रोग मुख्य रुप से कुत्तों का रोग है परन्तु अन्य पशु तथा मनुष्य भी इस रोग से ग्रसित कुत्ते, बिल्ली, भेड़िया, श्रंगाल, लोमड़ी, शेर, चीता आदि के काटने से ग्रस्त हो जाते हैं।

यह रोग कुत्तों/भेंड़/सूअर में 3 से 6 सप्ताह, गाय/भैंस में 4 से 8 सप्ताह और मनुष्यों में 14 दिन से 90 दिन तक हो सकता है। कुत्तों में यह रोग उत्तेजित रुप में या चुप्पी वाले रुप में हो सकता है।

पालतू कुत्तों में इस रोग से बचाव का टीका 2 से 3 महीने की उम्र पर लगवाना चाहिए। गौ पशुओं में वैक्सीन का प्रयोग कुत्ता काटने के तुरन्त बाद करना चाहिए। टीकाकरण के लिए वैक्सीन की 10 मि.ली. मात्रा त्वचा के नीचे प्रतिदिन 14 दिनों तक दी जाती है। आजकल 6 इन्जेक्शन की नई वैक्सीन भी कुत्ते के काटने के बाद लगायी जाती है जो 0, 3, 7, 14, 30 एवं 90 दिनों पर मांस में दिया जाता है। परन्तु वैक्सीन काफी महंगी होने के कारण इसका उपयोग केवल अत्यन्त मूल्यवान पशुओं में ही किया जाता है।

(घ) बकरी–प्लेग या पी०पी०आर०

पी०पी०आर० या पेस्टी डिस पेटिट्स रुमिनेन्ट्स या बकरी–प्लेग रोग एक विषाणु जनित रोग है। वर्तमान में यह रोग महामारी का रूप ले चुका है तथा इस रोग में प्रभावित पशुओं की मृत्यु दर 80–90 प्रतिशत होने के कारण, इससे होने वाली आर्थिक हानि बहुत अधिक है। पी०पी०आर० रोग का विषाणु बकरी के शरीर में मुख्यतः श्वास द्वारा पहुँचता है। प्रकोप होने पर सर्वप्रथम पशु को उच्च ज्वर हो जाता है, जो 105 से 106 डिग्री फारेनहाइट तक पहुँच सकता है। इस अवस्था में बकरी की भूख तथा प्यास समाप्त हो जाती है। पशु के नासा छिद्रों से तरल स्त्राव बहने लगता है जो कुछ समय पश्चात् गाढ़ा हो कर चिपचिपा हो जाता है। ठीक इसी समय, उसके मुँह, जीभ व मसूड़ों पर छाले पड़ जाते हैं एवं पशुओं को भयंकर दस्त शुरू हो जाते हैं। श्वसन–तन्त्र में पहुँच कर रोग का विषाणु न्यूमोनिया पैदा कर देता है, जिससे सांस लेना कठिन हो जाता है। रोग ग्रसित पशुओं को समय पर सही उपचार न मिलने पर अधिकांश की मृत्यु हो जाती है। रोगी पशुओं को तत्काल अलग करके लक्षण के आधार पर उपचार करना चाहिए।

भारतीय पशुचिकित्सा अनुसंधान संस्थान, मुक्तेश्वर द्वारा विकसित किये गये पशु–प्लेग के

टीके का प्रयोग करके, इस बीमारी से रोकथाम की जा सकती है। इसका टीका लगाने पर पशु में इस रोग से 4 वर्ष तक रोकथाम सम्भव है।

(च) शीप-पॉक्स

यह भेड़ों का विषाणुजन्य भयानक रोग है। इसमें भेड़ के गालों, नथुनों, ओठों तथा ऊनरहित शरीर अंगों में चेचक के छाले पाये जाते हैं। मेमनों में तीव्र सुस्ती, उच्च तापमान तथा आँख व नाक से स्राव होता है और वे चेचक के छाले बनने से पहले ही मर सकते हैं। व्यस्क भेड़ों में केवल त्वचीय लक्षण विशेषकर पूँछ के नीचे ही पाये जाते हैं। इसका बचाव टीकाकरण द्वारा संभव है।

ढेलेदार त्वचा रोग/लंपी स्किन डिजीज

ढेलेदार त्वचा रोग 'नेथलिंग पॉक्स (कैप्रिकॉक्स विषाणु) विषाणु' के कारण से होता है जो 'पॉक्सविरिड़ि' वर्ग से सम्बन्धित विषाणु है। बीमारी गीली गर्मी के मौसम में सबसे अधिक होती है, लेकिन सर्दियों के मौसम में भी हो सकती है। यह पानी के पास के इलाकों में सबसे अधिक प्रचलित है क्योंकि यहॉ कीड़ों और मच्छरों के विकास की अधिक संभावना होती है । विषाणु संक्रमित जानवरों के नाक और लार में मौजूद होता है। जब अतिसंवेदनशील जानवर उन सतहों के संपर्क में आते हैं जो संक्रमित जानवरों के नाक और लार से दूषित है, तो वह संक्रमित हो जाते हैं। इसके साथ–साथ मच्छरों और मक्खियों जैसे खून चूसने वाले कीड़े से फैलती है। सभी उम्र के जानवर संवेदनशील होते है, हालांकि बहुत युवा बछड़े, स्तनपान कराने वाले जानवर और कुपोषित जानवरों में अधिक गंभीर नैदानिक संकेत विकसित होते हैं। हाल ही में रोग से मुक्त जानवरों में लगभग 3 महीने के लिए प्रतिरोधक क्षमता रहती है। गर्मी के मौसम में आम में रोग जो कीड़ो के विकास को बढावा देता है।

मृत्यु दर आमतौर पर कम होती है हालांकि अधिक आर्थिक नुकसान, शरीर के वजन में कमी, दाना पानी में कमी, दुग्ध उत्पादन में कमी और थनैला होने की संभावना बढ़ जाती है। गंभीर मामले में बुखार, जो एक सप्ताह से अधिक समय तक रहता है, कभी–कभी नाक और लार बहती है और लंगड़ापन भी दिखाई देता है। इस बीमारी में शरीर पर गांठे बड़ी होने लगती हैं और फिर ये घाव में बदल जाती है बाद में इसमें से मवाद निकलता है। प्रभावित क्षेत्र की लिम्फ नोड्स बढ़ जाते हैं, और सूजन हो सकती है। बैल में प्रजनन क्षमता में कमी और मादा पशुओं में गर्भपात हो जाता है। कई बार गाय की मौत भी हो जाती है। सबसे बड़े नुकसान कम दूध उपज, शरीर की हालत में कमी, और चमड़े की कम गुणवत्ता से कम मूल्य के कारण होता है।

ढेलेदार त्वचा रोग का कोई विशिष्ट उपचार उपलब्ध नहीं है, लेकिन एंटीबायोटिक दवाओं का उपयोग कर के अन्य जीवाणु के संक्रमण की रोकथाम किया जाता है। ढेलेदार त्वचा रोग एक क्षेत्र से नए क्षेत्र में मुख्य रूप से सक्रमित पशुओं की आवाजाही से होता है, और संभवतः हवा जनित वैक्टर द्वारा संचरण भी जाना जाता है। इसलिए असंक्रमित से संक्रमित क्षेत्रों तक पशुओं की आवाजाही पर नियंत्रण बीमारी को रोकने के लिए महत्वपूर्ण उपाय है। अभी तक इस बीमारी को कोई टीका नहीं आया है, लेकिन ये बीमारी बकरियों में होने वाली गोट पॉक्स की तरह है, ऐसे में गाय–भैंस को गोट पॉक्स का टीका लगवा सकतें है, इसके जानवरों में अच्छे परिणाम देखने का मिलें है। इसके साथ ही दूसरे पशुओं को बीमारी से बचाने के लिए संक्रमित पशु को अलग बांधना चाहिए चारा अलग–अलग देना चाहिए।

सम्पर्क सूत्र : 9557625700 ☑

विभिन्न मशरूम प्रजातियों की खेती से वर्षभर लाभ कमायें

डा. निर्मला भट्ट, डा. अभिषेक बहुगुणा,
डा. अलंकार सिंह एवं डा जितेन्द्र क्वात्रा

मशरूम एक प्रकार की कवक या फफूंद होती है। यह उच्च–वर्गीय फफूंद की प्रजातियाँ होती हैं। जो कि उचित तापमान तथा आर्द्रता मिलने पर अपनी वृद्धि करती है। यह जिस माध्यम पर उगती हैं उसी माध्यम से अपनी वृद्धि हेतु भोजन अवशोषित करती हैं। फफूंदियों को अपनी वृद्धि हेतु सूर्य के प्रकाश की आवश्यकता नहीं होती है। चूंकि इसकी खेती कमरे या झोपड़ी के अन्दर की जाती है, इस कारण जंगली जानवरों की समस्या का भी इसकी खेती पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। मशरूम उत्पादन के द्वारा कृषि अवशेषों को पौष्टिक खाद्य पदार्थ में परिवर्तित कर जहाँ एक ओर कुपोषण की समस्या का समाधान किया जा सकता है। वही कृषि अवशेषों को जलाने से भी रोका जा सकता है। उत्तराखण्ड के मशरूम कृषक केवल शरद ऋतु में मुख्यतः बटन मशरूम की खेती करते आ रहे हैं तथा अन्य ऋतुओं में मशरूम उत्पादन बंद कर देते हैं जबकि यहाँ के मैदानी व पहाड़ी क्षेत्रों की जलवायु भिन्न–भिन्न प्रकार के मशरूम की खेती के लिए उपयुक्त है। यदि यहाँ की जलवायु पर नजर डालें तो पायेंगे कि यहाँ गर्म, आर्द्र, शीतोष्ण, उपोष्ण आदि जलवायु उपलब्ध है। इसी प्रकार जलवायु के आधार पर ऋतुओं का भी जैसे शीत ऋतु, ग्रीष्म ऋतु, बसंत ऋतु आदि का वर्गीकरण किया गया है। भिन्न–भिन्न प्रकार के मशरूम को ऋतु क्रम में उगाना संभव है क्योंकि भिन्न–भिन्न प्रकार की मशरूम की वृद्धि हेतु तापमान आवश्यकता अलग–अलग है। विभिन्न प्रकार की मशरूम प्रजातियों को उगाने हेतु तापमान आवश्यकता सारणी 1 में है:

सारणी 1 : प्रमुख मशरूम प्रजातियों के लिए अनुकूल तापमान

वैज्ञानिक नाम	प्रचलित नाम	अनुकूल तापमान (से0 ग्रे0)	
		बीज फैलाव हेतु	फलन हेतु
एगेरिकस बाइस्पोरस	श्वेत बटन मशरूम	22–25	14–18
एगेरिकस बाइटॉरकिस	ग्रीष्मकालीन श्वेत बटन मशरूम	28–30	25–28
ऑरकुलेरिया प्रजातियाँ	कठकर्ण मशरूम	20–34	12–30
लेन्टीनुला इडोड्स	शिटाके मशरूम	22–27	15–20
प्लूरोटस इरिन्जाई	काबुल ढिंगरी मशरूम	18–22	14–18
प्लूरोटस फ्लेविलेटस	ढिंगरी मशरूम	25–30	22–26
प्लूरोटस फ्लोरिडा	ढिंगरी मशरूम	25–30	18–22
प्लूरोटस सजोर–काजू	ढिंगरी मशरूम	25–32	22–26
वॉल्वेरियेला वॉल्वेसिया	धान के पुआल का मशरूम	32–34	30–35
कैलोसाइबी इंडिका	दूधिया मशरूम	25–30	28–35
गैनोडर्मा ल्यूसिडम	ऋषि मशरूम	22–32	28–35

मशरूम प्रजातीय फसल-चक्र

सारणी 1 में दिये गये विभिन्न प्रकार की मशरूम प्रजातियों की वानस्पतिक वृद्धि (बीज फैलाव) व फलनकाय (फलन) अवस्था के लिए अनुकूल तापमानों को देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि मशरूम को कृषि फसलों की भाँति फेरबदल कर

चक्रों में उगाया जा सकता है जैसे मैदानी भागों व कम ऊँचाई पर स्थित पहाड़ी भागों में शरद् ऋतु में श्वेत बटन मशरूम, ग्रीष्म ऋतु में ग्रीष्मकालीन श्वेत बटन मशरूम व ढिंगरी तथा वर्षा ऋतु में धान के पुआल का मशरूम, ऋषि मशरूम व दूधिया मशरूम।

मैदानी भागों में श्वेत बटन मशरूम को शरद् ऋतु में नवम्बर से फरवरी तक, ग्रीष्मकालीन श्वेत बटन मशरूम को सितम्बर से नवम्बर व फरवरी से अप्रैल तक, कठकर्ण मशरूम को फरवरी से अप्रैल तक, ढिंगरी मशरूम को सितम्बर से मई तक, धान के पुआल के मशरूम व ऋषि मशरूम को जुलाई से सितम्बर तक तथा दूधिया मशरूम को फरवरी से अप्रैल व जुलाई से सितम्बर तक उगाया जा सकता है।

मध्यम ऊँचाई पर स्थित पहाड़ी स्थानों में श्वेत बटन मशरूम को सितम्बर से मार्च तक, ग्रीष्मकालीन श्वेत बटन मशरूम व ऋषि मशरूम को जुलाई से अगस्त तक व मार्च से मई तक, शिटाके मशरूम को अक्टूबर से फरवरी तक, ढिंगरी मशरूम पूरे वर्ष भर, कठकर्ण मशरूम को मार्च से मई तक तथा दूधिया मशरूम व ऋषि मशरूम को अप्रैल से जून तक उगाया जा सकता है। अधिक ऊँचाई पर स्थित पहाड़ी क्षेत्रों में श्वेत बटन मशरूम को मार्च से नवम्बर तक, ढिंगरी मशरूम को मई से अगस्त तक तथा शिटाके मशरूम को दिसम्बर से अप्रैल तक उगाया जा सकता है।

देश के विभिन्न भागों में मौसम अथवा तापक्रम के अनुसार विभिन्न मशरूम प्रजातियों की खेती के लिए संक्षिप्त विवरण निम्नवत् हैः

1. ढिंगरी या सीपी मशरूम (प्लूरोटस स्पीसीज)

प्रजातियाँ : *प्लूरोटस सजोर काजू, प्लू0 फ्लेबेलेटस, प्लू0 सेपीडस, प्लू0 आस्ट्रीएटस, प्लू0 फ्लोरिडा, प्लू0 साइट्रीनोपाइलियेट्स* एवं *प्लू0 डिजामोर* आदि।

आवश्यक तापक्रम एवं आर्द्रता : 20^0–30^0 से0ग्रे0 एवं 70–85 प्रतिशत

पोषाधार : कटा हुआ (4–5 से.मी.) धान का पुआल अथवा गेहूँ का भूसा।

खेती की विधि

पानी की टंकी में प्रति 100 ली0 साफ पानी में 7–10 ग्राम कार्बेंडाजिम तथा 100–150 मि.ली. फार्मलीन मिलायें। भूसे अथवा पुआल को बोरियों में भरकर उपरोक्त घोल में 18 घंटे तक भिगायें। घोल से भूसे को निकालकर 4–6 घंटे के लिए पानी निथरने के लिए पक्के फर्श पर रख दें। बोरी का मुंह खोलकर मुट्ठी में भूसे को रखकर दबाएं। यदि पानी नहीं टपक रहा है तो इसमें बीजाई की जा सकती है। 1 कि.ग्रा. भूसे से 4 कि.ग्रा. पोषाधार बीजाई हेतु उपलब्ध होता है।

उपचारित भूसे के भार का 2 प्रतिशत स्पान मिलाए। स्पान मिले हुए भूसे को पॉलीथीन के बैगों में 4–6 कि.ग्रा. भरकर बैगों के मुंह को बंद कर दें। बीजाई किए थैलों के चारों तरफ आधा–एक से.मी. व्यास के 8–10 छिद्र बना दें। बीजाई किए थैलों को एक दूसरे से 15–20 से.मी. की दूरी पर फसल कक्ष के भीतर रैक पर रखें। यदि तापक्रम 25^0 से0 से ऊपर हो तो दीवार व फर्श पर पानी का छिड़काव कर तापक्रम 25^0 से0 के आसपास ही रखें जो कि सर्वथा उपयुक्त है। 15–20 दिन में इस मशरूम का कवकजाल पूरे भूसे में थैलों के भीतर फैल जाता है। तदोपरान्त थैलों को काटकर निकाल दें अथवा थैलों के मुंह को खोलकर पलटकर निकाल दें। कवकजाल से लिपटा हुआ ढेर रैक पर उपरोक्त दूरी पर रखें। इस पर दिन में दो बार हल्के पानी का छिड़काव करें। तीन चार दिन के बाद मशरूम की आरम्भिक अवस्था दिखाई देने लगती है जो अगले 2–3 दिन में बढ़कर चुनाई हेतु तैयार हो जाती है जिसे अंगूठे व उंगलियों से ऐंठकर तोड़ लें।

तुड़ाई के पश्चात् निचले हिस्से में लगे कवकजाल एवं भूसे को चाकू से काटकर निकाल देना चाहिए। मशरूम की दूसरी तुड़ाई, पहली तुड़ाई

से 10 दिन के बाद तथा तीसरी तुड़ाई दूसरी के 6 दिन के बाद होती है। इस प्रकार कुल 3 तुड़ाई प्रत्येक कवकजाल युक्त ढेर से की जाती है। प्रति किलो सूखे भूसे अथवा पुआल से 500–600 ग्राम तक ताजा मशरूम प्राप्त होता है।

2. धान के पुआल का मशरूम (वालवेरियल्ला स्पीसीज)

प्रजातियाँ: *वालवेरियल्ला वालवेसिया* एवं *वा0 डिप्लेसिया*

आवश्यक तापक्रम एवं आर्द्रता: 30^0–40^0 से0ग्रे0 एवं 70–85 प्रतिशत।

पोषाधार: धान का पुआल (भीगा हुआ न हो तथा एक वर्ष से पुराना न हो)

खेती की विधि : धान की पुआल को 1/2 किलो0 से 1.0 किलो के गट्ठों में बाँध लिया जाता है जो कि 80–100 से.मी. लम्बे और 15–20 से.मी. व्यास के होने चाहिए। इन गट्ठों को भिगोने के लिए साफ पानी में 10–12 घण्टे तक किसी भारी वस्तु से दबाकर डुबाया जाता है। इसके बाद बाहर निकालकर 3–4 घंटे के लिए रख देते हैं ताकि फालतू पानी निकल जाए। इसके बाद फसल कक्ष के भीतर 35 गट्ठों से बांस के टुकड़ों द्वारा निर्मित फ्रेम पर इस मशरूम की शैय्या बनाते हैं। फ्रेम के नीचे ईंट रखकर इसे फर्श से थोड़ा ऊपर कर देते हैं। इस फ्रेम पर चार उपरोक्त गट्ठों को एक तरफ व चार उसके विपरीत तरफ इस प्रकार रखते हैं कि स्वतंत्र किनारे अंदर की ओर आमने–सामने रहें और बंधे हुए किनारे बाहर की ओर रहें। यह शैय्या की प्रथम तह होगी। इस पर किनारे से 10 से.मी. छोड़कर 23 से.मी. अंदर तक चारों तरफ बीजाई कर दें और उसके ऊपर चने के बेसन का हल्का बुरकाव कर दें। पहली तह के ऊपर ठीक उसी प्रकार पुआल के बंडलों को दूसरी ओर चौथी तह बना दें। दूसरी और तीसरी तह की बीजाई पहली तह के समान कर दें। तीसरी तह के ऊपर चौथी तह लगाकर उसकी बीजाई संपूर्ण सतह पर कर दें। अब बचे हुए तीन पुआल के गट्ठों को खोलकर पुआल की लगभग 6 से.मी. तह से चौथी तह को ढक दें। इस प्रकार से बनायी गयी प्रति शैय्या हेतु 250 ग्राम स्पान व 250 ग्राम बेसन की आवश्यकता होती है।

बीजाई के 12 दिन बाद यह मशरूम उगने आरम्भ हो जाते है और फसल 15–20 दिन तक मिलती रहती है। लगातार मशरूम लेने के लिए 10–12 दिनों के अंतर पर नयी बीजाई करते रहें। अण्डाकर मशरूम की झिल्ली फटने से पूर्व अंगुलियों के सहारे ऐठ कर चुनाई कर लें। प्रत्येक शैय्या से तीन से चार कि.ग्रा. मशरूम प्राप्त होता है।

3. दूधचट्टा मशरूम (कैलोसाइबी स्पीसीज)

प्रजातियाँ : *कैलोसाइबी इन्डिका*

आवश्यक तापक्रम एवं आर्द्रता : 25^0–35^0 से0ग्रे0 एवं 70–85 प्रतिशत।

पोषाधार : गेहूँ का भूसा अथवा धान का पुआल।

खेती की विधि

माध्यम तैयार करने के लिए भूसे को 24 घंटे तक के लिए भिगो कर 2–3 घंटे तक उबाला जाता है। अतिरिक्त पानी को निथार कर एवं ठंडा कर इस भूसे में 5 प्रतिशत की दर से गेहूँ का चोकर अच्छी तरह मिलाकर उसमें 4 प्रतिशत की दर से बीजाई की जाती है। बीजाई किए हुए माध्यम को पॉलीथीन के बैगों में भरकर 20^0–30^0 से0ग्रे0 तापमान पर 20–40 दिन तक रखा जाता है। स्पान के माध्यम में फैलने के बाद दो वर्ष पुरानी गोबर की खाद को शोधित करके आवरण मृदा (4 से.मी.) बिछा दी जाती है। तथा तापमान 30^0 से0ग्रे0 से अधिक रखा जाता है। आवरण मृदा बिछाने के बाद फसल में प्रतिदिन दो बार पानी दिया जाता है। आवरण मृदा बिछाने के 10–12 दिन बाद मशरूम निकलना प्रारम्भ होते हैं जो कि 5–6 दिन बाद तोड़ने योग्य हो जाते हैं। प्रति कि.ग्रा. भूसे से 500–600 ग्राम तक मशरूम प्राप्त किये जा सकते

हैं। इस मशरूम को उगाने का मुख्य लाभ यह है कि यह ग्रीष्म ऋतु में 35^0 से0ग्रे0 पर भी उगाया जा सकता है जबकि वालवेरियल्ला के अलावा अन्य मशरूम नहीं उगाये जा सकते हैं तथा इसको तुड़ाई के बाद कमरे के तापक्रम पर अन्य मशरूम की तुलना में सबसे अधिक समय तक रखा जा सकता है। मशरूम को ताजा उपयोग करने के अतिरिक्त धूप में सुखाकर, डिब्बाबंदी द्वारा अथवा अचार बनाकर लम्बे समय तक रखा जा सकता है।

4. कनपचड़ा मशरूम (आरीक्यूलेरिया स्पीसीज)

आवश्यक तापक्रम एवं आर्द्रता : 20^0–30^0 से0ग्रे0।

पोषाधार : गेहूँ का भूसा अथवा कटा हुआ (4–5 से.मी.) धान का पुआल एवं 4 प्रतिशत गेहूँ का चोकर।

खेती की विधि

भूसे अथवा पुआल को रातभर भिगोकर रखें। प्रातः पानी निथरने के लिए 3–4 घंटे रखें। अब इसे उबलते पानी में 2 घंटे तक अथवा पालीप्रोपाइलीन के थैलों में 2 कि.ग्रा. डालकर इसमें 4 प्रतिशत भूसे के भार का गेहूँ का चोकर मिलाकर निर्जीवीकृत कर लें। यदि भूसे को उबलते पानी में 2 प्रतिशत डालकर निर्जीवीकृत किया गया है तो इसमें 2 प्रतिशत चोकर मिलाकर पॉलीथीन के थैलों में 2 कि.ग्रा. की दर से भर दें।

उक्त शोधित भूसे में 2 प्रतिशत की दर से स्पान मिलायें तथा थैलों को कवकजाल वृद्धि हेतु 25^0 से0ग्रे0 पर फसल कक्ष में 15–20 दिन के लिए रखें। कवकजाल फैलने के पश्चात् फसल कक्ष का तापमान 22–25^0 से0ग्रे0 रखें तथा थैलों की पालीथीन अथवा पालीप्रोपाइलीन में ब्लेड द्वारा 2–3 से.मी. की दूरी पर स्लिट काट दें। दिन में दो बार हल्का पानी का छिड़काव कमरे के भीतर व थैलों पर करते रहें। 6–8 दिन में मशरूम निकलना आरम्भ होकर अगले दो महीनों तक निकलते रहते हैं। इस बीच 4 से 5 बार तुड़ाई की जाती है। एक कि.ग्रा. भूसा से 600–800 ग्राम ताजा मशरूम प्राप्त हो जाता है।

5. शिटाके मशरूम (लेन्टीनुला स्पीसीज)

आवश्यक तापक्रम एवं आर्द्रता : 12^0–24^0 से0ग्रे0 एवं 70–85 प्रतिशत।

पोषाधार : लकड़ी का बुरादा एवं 20 प्रतिशत गेहूँ का चोकर।

खेती की विधि

40 कि.ग्रा. लकड़ी के बुरादे को अच्छी प्रकार गीला करके 12 घंटे के लिए छोड़ दें। तत्पश्चात् आठ कि.ग्रा. चोकर मिलायें और इस प्रकार बने पोषाधार को 2 कि.ग्रा. की दर से पालीप्रोपाइलीन के थैलों में भरकर रिंग लगाकर रूई का प्लग लगा दें। अब इन थैलों को 121^0 से0/15 पौण्ड दबाव पर आधा घंटा से एक घंटा निर्जीवीकृत कर लें। थैलों को ठण्डा करके 2 प्रतिशत की दर से स्पान मिलायें तथा पुनः रूई का प्लग लगा दें तथा इन्हें 4–5^0 से0ग्रे0 के पानी में पाँच मिनट डुबोयें फिर ब्लॉक को 15 से 20 से0ग्रे0 पर फसल कक्ष में रैक पर रख दें। आठ से 12 दिन में इस मशरूम की आरम्भिक अवस्था निकल आयेगी जो अगले 4–5 दिन में बढ़कर तोड़ने योग्य हो जायेगी। प्रति किलो लकड़ी के सूखे बुरादे के भार का 400–500 ग्रा0 ताजा मशरूम प्राप्त हो जाता है।

6. बटन मशरूम (अगेरिकस स्पीसीज)

प्रजातियाँ : *अगेरिकस बाइस्पोरस*

आवश्यक तापक्रम एवं आर्द्रता : 15^0–25^0 से0ग्रे0 एवं 80–85 प्रतिशत।

पोषाधार : इस मशरूम की खेती के लिए विशेष प्रकार से बनाई कम्पोस्ट, शुद्ध स्पान व अनुकूल तापक्रम एवं आर्द्रता की आवश्यकता होती है।

खेती की विधि

कम्पोस्ट

कम्पोस्ट कृत्रिम ढंग से बनाया गया वह माध्यम है जिससे मशरूम की कायिक संरचना भोजन प्राप्त कर अपने फलनकाय के रूप में मशरूम पैदा करती है। अतः कम्पोस्ट बनाने के पीछे मशरूम को

उचित भोजन सामग्री उपलब्ध कराना निहित है। कम्पोस्ट बनाने हेतु पक्के फर्श अथवा विशेष कम्पोस्टिंग शेड उपयोग में लाये जाते हैं। कम्पोस्ट बनाने की दो विधियाँ है :

1. दीर्घ अवधि विधि : इस विधि द्वारा कम्पोस्ट बनाने में 28 दिन लग जाते हैं और इस अवधि में 8 पल्टाई की जाती है। दीर्घ अवधि विधि से कम्पोस्ट बनाने हेतु निम्नलिखित सूत्र प्रयोग में लायें।

गेहूँ का भूसा	1000 कि.ग्रा.
या	
धान का पुआल	1200 कि.ग्रा.
अमोनियम सल्फेट एवं कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट	30 कि.ग्रा.
सुपर फास्फेट	10 कि.ग्रा.
पोटाश	10 कि.ग्रा.
यूरिया	10 कि.ग्रा.
जिप्सम	100 कि.ग्रा.
गेहूँ का चोकर	50 कि.ग्रा.
निमेटीसाइड	500 ग्राम

कम्पोस्ट बनाना आरम्भ करने से 48 घंटे पूर्व भूसे की पतली तह पक्के फर्श पर बिछा कर उसे अच्छी तरह उलट–पलटकर पानी के फौव्वारे से तर कर दें।

आरम्भ या शून्य : इस अवस्था में भूसे में नमी की मात्रा 75 प्रतिशत होनी चाहिए। इस नमी युक्त भूसे में चोकर, कैल्शियम, यूरिया, म्यूरेट आफ पोटाश तथा सुपर फॉस्फेट अच्छी तरह मिला देते हैं। अब लकड़ी के पूर्व निर्मित तख्तों की सहायता से भूसे का लगभग 1.5 मी0 चौड़ा×1.25 मी0 ऊँचा किसी भी लम्बाई का ढेर बनायें। ढेर बनाने के पश्चात् लकड़ी के तख्तों को ढेर से अलग कर दें। चौबीस घंटे के भीतर ढेर का भीतरी तापक्रम 70–75^0 से0ग्रे0 तक होना चाहिए। इस ढेर की नमी बनाये रखने के लिए एक या दो बार बाहरी सतह पर पानी का छिड़काव करें।

पहली पलटाई : छठे दिन ढेर के बाह्य भाग को (15 से.मी. अन्दर तक का) निकाल कर एक जगह फर्श पर फैला दें, शेष भाग को दूसरी जगह फर्श पर फैला दें। अब बाहरी भाग की कम्पोस्ट को अन्दर डालकर व भीतरी भाग की कम्पोस्ट को बाहर डालकर लकड़ी के तख्तों की सहायता पुनः ढेर बनाकर तख्तों को अलग कर दें।

दूसरी पलटाई : दसवें दिन बाहरी व भीतरी भाग को अलग करके बाहरी भाग पर अच्छी तरह पानी का छिड़काव करके ढेर को इस तरह बनायें कि बाहरी ढेर के भीतर व भीतरी भाग ढेर के बाहर पहुँच जाये।

तीसरी पलटाई : 13 वें दिन पूर्व की भाँति पलटाई व ढेर का निर्माण करें। जिप्सम व फ्यूराडान मिला दें।

चौथी पलटाई : 16 वें दिन पूर्व की भाँति पलटाई व ढेर का निर्माण करें।

पाँचवी पलटाई : उन्नीसवें दिन पूर्व की भाँति पलटाई ढेर का निर्माण करें तथा बी.एच.सी. मिला दें।

छठी पलटाई : 22 वें दिन पूर्व की भाँति पलटाई ढेर का निर्माण करें।

सातवीं पलटाई : 25 वें दिन यदि कम्पोस्ट अमोनिया गैस मुक्त है तो कम्पोस्ट बीजाई के लिए तैयार है अन्यथा 28 वें दिन करें तथा बीजाई 30 वें दिन करें।

2. अल्प अवधि विधि

इस विधि द्वारा कम्पोस्ट तैयार करने की प्रक्रिया दो चरणों क्रमशः आउट डोर कम्पोस्टिंग व इन डोर कम्पोस्टिंग में पूरी की जाती है। इस प्रकार से बनायी गयी कम्पोस्ट की पैदावार बहुत अच्छी होती है और बीमारियों तथा कीड़ों का प्रकोप बहुत कम होता है।

सूत्र

गेहूँ का भूसा	1000 कि.ग्रा.
मुर्गी की खाद	600 कि.ग्रा.
यूरिया	15 कि.ग्रा.
गेहूँ का चोकर	60 कि.ग्रा.
जिप्सम	60 कि.ग्रा.

आउट डोर कम्पोस्टिंग

गेहूँ के भूसे में कुक्कुट खाद मिलाकर अच्छी प्रकार भिगोकर 45 से.मी. ऊँचा ढेर प्लेट फार्म पर सात दिन के लिए बनाते हैं। इसी बीच इसकी एक पलटाई 4 दिन बाद दे देते हैं। इसके पश्चात् सातवें दिन गेहूँ का चोकर जिप्सम व यूरिया गीले भूसे में अच्छी प्रकार मिलाकर 125–150 से.मी. ऊँचा 1.25–150 से.मी. चौड़ा तथा लम्बाई स्थान की उपलब्धता के अनुसार रख कर ढेर बनाया जाता है जिसका भीतरी तापक्रम (24 घंटे के अंदर) 70–75^0 से0ग्रे0 तक चला जाता है।

चौथे दिन कम्पोस्ट ढेर की प्रथम, छठे दिन द्वितीय, आठवें दिन तृतीय पलटाई तथा 10 वें दिन कम्पोस्ट को पास्तुरीकरण हेतु टनेल में भर देते हैं। जिप्सम तीसरी पलटाई में मिलाते हैं।

इन डोर कम्पोस्टिंग

प्रथम दिनः कम्पोस्ट को पास्तुरीकरण कक्ष में भरने के बाद कक्ष के दरवाजे व हवादान को बंद कर दें। ब्लोवर (पंखे) को चलाकर कम्पोस्ट का तापमान 40–45^0 से0ग्रे0 पर ले आयें। ध्यान रहे चैम्बर के भीतर हवा व कम्पोस्ट के तापक्रम में 1–3^0 से0ग्रे0 से अधिक होने पर ब्लोअर को और समय दें।

दूसरे दिनः कम्पोस्ट का तापक्रम वाष्प द्वारा धीरे–धीरे (1–3^0 से0ग्रे0 प्रति घण्टा) बढ़ाकर धीरे–धीरे 58–60^0 से0ग्रे0 पर लायें तथा इस तापमान को 6–8 घंटे तक रोके रखें। वाष्प की प्रविष्टि बंदकर हवा डेंम्पर को 15–20 प्रतिशत खोलकर कम्पोस्ट का तापमान 48–52^0 से0ग्रे0 लायें। साथ ही अमोनिया रिलीज 5–10 प्रतिशत खोले रखें।

तीसरे से पाँचवे दिनः इस बीच कम्पोस्ट का तापक्रम 48–52^0 से0ग्रे0 तथा हवादान को 20 प्रतिशत खोलकर शुद्ध हवा कम्पोस्ट कन्डीशनिंग के लिए दें और अमोनिया रिलीज डैंम्पर खोले रखें।

छठें दिनः कम्पोस्ट को पास्तुरीकरण कक्ष से बीजाई कक्ष में ले जायें तथा कम्पोस्ट का तापक्रम 20–25^0 से0ग्रे0 आने से पूर्व बीजाई कर दें।

अच्छी प्रकार तैयार कम्पोस्ट गहरे भूरे रंग की, अमोनिया गंध रहित, पी.एच. 7.5, 68.72 प्रतिशत नमी तथा 2.2 प्रतिशत नत्रजन युक्त होती है।

बीजाई

तैयार माध्यम में बीज मिलाने को बीजाई (स्पानिंग) कहते हैं। प्रति क्विंटल तैयार कम्पोस्ट में 500 ग्राम से 750 ग्राम स्पान (0.5–7.5 प्रतिशत की दर से) अच्छी प्रकार मिलाया जाता है। बीजाई की हुई कम्पोस्ट को सेल्फ अथवा पॉलीथीन बैग में हल्का दबाकर भरना चाहिए। सेल्फ में 80–100 कि.ग्रा./मीटर^2 तथा बैग में 10–15 कि.ग्रा. कम्पोस्ट भरते हैं।

बीजाई की हुई कम्पोस्ट को निर्जीवीकृत अखबार द्वारा ढक देते हैं। अखबारों को प्रयोग में लाने से एक सप्ताह पूर्व फार्मलीन के घोल से अथवा वाश्प द्वारा 20 पौण्ड पर आधा घंटा निर्जीवीकृत कर लेना चाहिए। यदि पॉलीथीन बैग इस्तेमाल कर रहे हैं, तो बैग को ऊपर से मोड़कर बन्द कर दें। बीजाई के बाद फसल कक्ष का तापक्रम 22–23^0 से0ग्रे0 व अपेक्षित आर्द्रता 85–90 प्रतिशत बनाये रखना चाहिए। दिन में दो बार हल्के पानी का छिड़काव अखबार के ऊपर तथा फसल कक्ष की फर्श व दीवार पर करें।

बीजाई के छः सात दिन पश्चात् धागेनुमा फंफूदी की वृद्धि दिखाई देने लगती है जो 12–15 दिन में कम्पोस्ट की सतह को सफेद कर देते हैं। बिछे हुए अखबार के ऊपर फैली हुई फंफूदी को आवरण मृदा द्वारा ढ़क दिया जाता है।

आवरण मृदा (केसिंग स्वायल)

आवरण मृदा का तात्पर्य है कम्पोस्ट पर फैली हुई फंफूदी के ऊपर मृदा मिश्रण का स्तर बिछाना, जिससे नमी बनाये रखने एवं गैसों के आदान–प्रदान में कवक को सहायता मिलती रहे। आवरण मृदा बीमारियों तथा कीड़ों से मुक्त एवं इसका पी.एच. मान 7.5 से 7.8 होना चाहिए। अपने देश में निम्नलिखित सामग्री से आवरण मृदा तैयार की जाती है।

1. गोबर की खाद (दो साल पुरानी) / (3:1)
+ बगीचे की मिट्टी
2. गोबर की खाद (दो साल पुरानी) / (1:1)
+ स्पेन्ट कम्पोस्ट
3. गोबर की खाद (दो साल पुरानी) / (2:1)
+ स्पेन्ट कम्पोस्ट

आवरण मृदा का शोधन

आवरण मृदा को फार्मलीन द्वारा शोधित किया जा सकता है। आवरण मृदा का मिश्रण पक्के फर्श पर ढेर के रूप में रखकर उसमें 4 प्रतिशत फार्मलीन का घोल पानी में बनाकर अच्छी तरह मिला लें। तदोपरान्त ढेर को पॉलीथीन चादर को हटाकर आवरण मृदा को उलट कर फार्मलीन की गंध उड़ने के लिए छोड़ देते हैं। इस प्रकार 3–4 दिन तक आवरण मृदा को उलटते–पलटते रहते हैं और सम्पूर्ण रूप से ढेर को फार्मलीन गंध रहित कर लेते हैं। आवरण मृदा का शोधन वाष्प द्वारा 65^0 से0ग्रे0 पर 6–8 घंटे करना आधिक उपयोगी है।

आवरण मृदा का प्रयोग

आवरण मृदा की चार से.मी. मोटी सतह कवकजाल युक्त कम्पोस्ट के ऊपर बिछा दिया जाता है। आवरण मृदा बिछाने के पश्चात् 2 प्रतिशत फार्मलीन घोल का छिड़काव इस पर करना चाहिए। तथा फसल कक्ष का तापक्रम $15–18^0$ से0ग्रे0 तथा आर्द्रता 80–85 प्रतिशत कर देना चाहिए। साथ ही समुचित वायु संचार का इस अवस्था में प्रबन्ध करना आवश्यक होता हैं। आवरण मृदा के ऊपर से दिन में एक या दो बार पानी का हल्का छिड़काव करना चाहिए।

फसल की चुनाई

आवरण मृदा बिछाने के 12 से 18 दिन पश्चात् (मशरूम) निकलना शुरू हो जाता है तथा 50–60 दिन तक निरन्तर निकलते रहते हैं। दिन में एक अथवा दो बार मशरूम को टोपी खुलने के पहले (जिसकी परिधि एक से डेढ़ इंच हो) अंगुलियों के सहारे ऐंठकर निकाल लेनाा चाहिए। मशरूम खुल जाने तथा छितरी बन जाने पर मशरूम की गुणवत्ता एवं बाजार मूल्य कम हो जाता है।

पैदावार

दीर्घ अवधि से बनायी गयी प्रति 100 कि.ग्रा. कम्पोस्ट से 12 से 14 कि.ग्रा. मशरूम व इतनी ही मात्रा में पास्तुरीकृत कम्पोस्ट से 18 से 20 कि.ग्रा. मशरूम की पैदावार प्राप्त हो जाती है।

औषधीय मशरूम–ऋषि मशरूम– गैनोडर्मा ल्यूसिडम

प्रजातियाँ : *गैनोडर्मा ल्यूसिडम*

आवश्यक तापमान व आर्द्रता : 28–35 से0ग्रे0 एवं 80–85 प्रतिशत

पोषाधार : चौड़ी पत्तों की लकड़ी एवं लकड़ी का बुरादा

गैनोडर्मा एक महत्वपूर्ण औषधीय मशरूम है जिसे आम भाषा में ऋषि मशरूम या लिंगझी भी कहा जाता है। गैनोडर्मा मशरूम फफूंदियों के गैनोडर्मेटेसी परिवार का एक सदस्य है। यह मशरूम अन्य खाद्य मशरूमों से भिन्न है क्योंकि यह लकड़ी या उसके बुरादे पर उगता है तथा लकड़ी में उपलब्ध पोषक तत्वों को कवकजाल द्वारा उत्पन्न विभिन्न इन्जाइमों की मदद से विघटित कर उनका अवशोषण करते हैं। आमतौर पर इस मशरूम को बरसात के मौसम में पेड़ के तनों या सड़ी–गली लकड़ियों के ऊपर उगता हुआ देखा जा सकता है। परिपक्व होने पर यह लाल रंग का हो जाता है। चौड़ी पत्ती वाले वृक्षों की शाखाओं पर यह सामान्य रुप से उगता हुआ दिखाई देता है। इस मशरूम का वैज्ञानिक नाम गैनोडर्मा है तथा प्रकृति में इसकी कई प्रजातियाँ पाई जाती हैं। ये प्रजातियाँ रंग एवं आकार में भिन्न–भिन्न होती है औषधीय रुप में महत्वपूर्ण प्रजाति का नाम गैनोडर्मा ल्यूसिडम है। इसे भारत में 50 एवं विश्वभर में 140 से अधिक वृक्ष प्रजातियों पर उगते हुऐ देखा गया है। इस मशरूम का प्रयोग 2000 वर्ष पूर्व चीन में किया जाता था। इसका

उपयोग प्राचीन चीनी चिकित्सकीय सभ्यता के साथ–साथ प्राचीन चीनी कलाकृतियों में भी पाया जाता है। इसका उपयोग कई देशों जैसे जापान, कोरिया, ताइवान, थाइलैंड, मलेशिया, वियतनाम, इंडोनेशिया इत्यादि में एक हर्बल दवा के रुप में काफी लंबे समय से प्रयोग किया जा रहा है। हमारे देश में भी इस मशरूम के उपयोग का वर्णन प्राचीन काल से ही मिलता है। ऋषि–मुनियों के द्वारा बनाये जाने वाले हर्बल दवाओं में इसका उपयोग किया जाता था।

खेती की विधि

गैनोडर्मा की खेती सामान्यतः दो विधियों से की जाती है।

1. वुडलाग में खेतीः इस विधि से खेती करने हेतु पॉपलर की लकड़ी के 06 इंच लंबाई व 2–3 इंच व्यास की लकड़ियों में काट कर तैयार कर दिया जाता है। जिन्हें बिलेट कहा जाता है। इन बिलेट्स को मक्के के आटें से बने माल्ट घोल (01 प्रतिशत) में 01 दिन के लिए डुबा दिया जाता है, इसके पश्चात् इन बिलेट्स को माल्ट घोल से निकाल कर अच्छी तरह से सुखाया जाता है। इन बिलेट्स को माल्ट घोल में इसलिये भिगाया जाता है ताकि गैनोडर्मा का कवक जाल आसानी से लकड़ी की सतह पर चिपक जाए। इसके बाद इन विलेट्स को पालीप्रोपिलीन की थैली के अन्दर 03 बिलेट प्रति थैली के हिसाब से रख कर बन्द कर दिया जाता है। इन विलेट्स को 03 घंटे तक 121^{0}c तापमान व 15 PSI प्रेशर पर ऑटोक्लेव में जीवाणुमुक्त कर दिया जाता है। इसके बाद इन्हें सामान्य तापमान पर ठंडा होने दिया जाता है। ठंडा होने के बाद लैमिनार एयर फ्लो में बिलेट्स से भरी थैलियों में गैनोडर्मा का स्पान डाला जाता है। यह स्पान औसतन 5 ग्राम प्रति बिलेट या 15 ग्राम प्रति थैली की दर से मिलाया जाता है। स्पान डालने के पश्चात् इन बिलेट की थैलियों को एयर टाइट करके बाँध दिया जाता है। इन थैलियों को कवकजाल फैलने हेतु 15 दिन के लिए लगभग 27–32^{0}c तापमान पर रखा जाता है इसमें बिलेट्स पूरी तरह से सफेद माइसीलियम से ढक जाती है इस प्रकार से गैनोडर्मा के उत्पादन हेतु माइसीलियम रन बिलेट तैयार हो जाती है। तैयार होने के पश्चात् इन बिलेट्स को मिट्टी में संरोपित किया जाता है, जिस मिट्टी में इन बिलेट्स को संरोपित किया जाता है उस मिट्टी को तैयार करने हेतु बगीचे की मिट्टी को छानकर 4:1 (चार भाग मिट्टी में एक भाग रेत) के अनुपान में रेत मिला दी जाती है। यह रेत मिट्टी में उचित निकासी बनाए रखने के लिए मिलाई जाती है। रेत के साथ–साथ इस मिट्टी में 0.5 प्रतिशत की दर से चूना मिलाया जाता है जिससे कि मिट्टी को रोगमुक्त किया जा सके। इसके पश्चात् मिट्टी को धूप में मृदा सौरीकरण करने हेतु ढक कर रख दिया जाता है। सौरीकरण की प्रक्रिया से मिट्टी में उपस्थित अधिकांश कीडे–मकौडे एवं जीवाणु नष्ट हो जाते हैं। सौरीकरण के पश्चात् इस मिट्टी को कम से कम 8×12 से.मी. आकार की पॉलीबैग मे भर दिया जाता है। मिट्टी से भरी प्रत्येक पालीबैग में एक बिलेट संरोपित कर दी जाती है। मिट्टी में संरोपित थैलियों को उत्पादन कक्ष में 28–35^{0}c पर रख दिया जाता है तथा पानी का छिड़काव किया जाता है।

इन संरोपित बिलेट्स से लगभग 14–15 दिनों में मशरूम की आरंभिक अवस्था दिखाई देना प्रारम्भ होती है। इन आंरभिक अवस्था वाले मशरूम को पिनहैड या प्राइमोर्डिया कहा जाता है। ये पिन हेड्स हल्के क्रीम रंग के होते हैं एवं धीरे–धीरे पीले रंग में परिवर्तित होने लगते है। एक बिलेट में अक्सर एक से अधिक व 6–7 पिनहेडस तक भी निकलते हुए देखे जा सकते हैं। पिनहेडस निकलने के लगभग 5–7 दिनों के पश्चात् पिनहेडस की ऊपरी सतह कैप या गोल छतरी के आकार की एवं सपाट होने लगती है। यह अवस्था कैप फार्मेशन अवस्था

कहलाती है। धीरे–धीरे इन कैप का आकार बढ़ने लगता है तथा इनका रंग बीच से बाहर की तरफ पीले एवं भूरे रंग का होने लगता है। पिनहेडस निकलने के लगभग 14–15 दिनों के बाद इन मशरुमों का अधिकतर विकास हो जाता है। तथा इनकी ऊपरी सतह पूरी तरह से गहरी लाल–भूरे रंग की एवं चमकदार हो जाती है। जब यह मशरुम पूरी तरह से परिपक्व हो जाते हैं इनसे लाल रगं के पाउडर की तरह बीजाणु उत्पन्न होने लगते है।

2. सॉडस्ट (बेडलाग या सिंथेटिक लाग) विधि : ऋषि मशरूम को चौड़ी पत्तियों वाली लकड़ियों के बुरादे पर भी उगाया जाता है। यह बुरादा किसी भी आरा मशीन से एकत्र किया जा सकता है। इस बुरादे में 20 प्रतिशत की दर से गेहूँ का भूसा मिला दिया जाता है तथा इसे भिगा कर इसकी नमी को 65 प्रतिशत तक लाया जाता है। स्पान तैयार करने की तरह इसमें 10 ग्राम चूना एवं 5 ग्राम जिप्सम प्रति कि.ग्रा. की दर से प्रयोग किया जाता है, जिससे इसका पी.एच. संतुलित रहें। इस बुरादे–गेहूँ के भूसे मिश्रण को पॉलिप्रोपिलीन बैग में भर दिया जाता है व इन्हें एयरटाइट कर दिया जाता है। इसे 120 डिग्री सेंटीग्रेड तापमान व 15 PSI प्रेशर पर 1 घंटे के लिए ऑटोक्लेव में जीवाणु रहित कर दिया जाता है। इन बैगों को ठंडा करके लेमिनार एयर फ्लो के भीतर इनमें 3 प्रतिशत की दर से स्पान डाल दिया जाता है। इन इनाकुलेटेड/संरोपित बुरादे के बैगों को 28 से 35 डिग्री सेंटीग्रेड तापमान एवं CO_2 के उच्च स्तर में अंधेरे कमरे में माइसीलियम रन होने के लिए रख दिया जाता है। इनाकुलेशन के लगभग 25 दिनों बाद इन बैगों में माइसीलियम रन हो जाता है तथा बुरादे से भरे ये बैग सफेद हो जाते हैं। माइसीलियम रन होने के बाद पॉलीबैग के उपरी हिस्से को काट दिया जाता है, जिससे कि इसकी ऊपरी सतह दिखने लगती है व मशरूमों को बढ़ने के लिए पर्याप्त स्थान मिल जाता है। इस समय पिनहेड अवस्था के लिए उपयुक्त 28 डिग्री सेंटीग्रेड तापमान व 95 प्रतिशत आर्द्रता संतुलित करनी चाहिए। इसके पश्चात् कैप फार्मेशन अवस्था में आर्द्रता 80 प्रतिशत तक संतुलित होनी चाहिए। इस अवस्था के बाद आर्द्रता को घटाया जाता है तथा 60 प्रतिशत तक लाया जाता है, जिससे फ्रूटिंग बॉडी का सही विकास हो। इस विधि द्वारा यह मशरूम लगभग एक से डेढ़ माह में तुड़ाई के लिए तैयार हो जाता है। जब मशरूम द्वारा पाउडर जैसे लाल स्पोर गिर जाते हैं तब यह तोड़ने के लिए तैयार होते हैं।

मशरूम उत्पादन का प्रजातीय मौसमी फसल चक्र अपनाकर किसान वर्षभर मशरूम की खेती से आमदनी प्राप्त कर सकते है। एक ही प्रकार की मशरूम की खेती करते रहने से बीमारियों व कीड़े–मकोड़े का प्रकोप भी बए जाता है। मशरूम फसल चक्र को अपनाकर इनका प्रकोप कम किया जा सकता है।

सम्पर्क सूत्र : 9412044788 ☑

मशरूम बीज (स्पान) की उत्पादन तकनीकी एवं विशेषताएं

डा. गीता शर्मा

वर्तमान समय में मशरूम की खेती स्वरोजगार का मुख्य साधन है। यह पढ़े–लिखे युवक–युवतियों को दो प्रकार से स्वरोजगार उपलब्ध कराता है। एक मशरूम की खेती द्वारा स्व–व्यवसायी बनकर तथा दूसरा खेती के लिए अति आवश्यक बीज उत्पादन द्वारा। अन्य फसलों जैसे कि धान, गेहूँ, आलू, मटर अथवा अन्य किसी भी दलहनी फसल की भाँति मशरूम में स्वयं बीज उत्पादन नहीं होता है। अतः मशरूम की खेती करने वाले कृषकों को प्रतिवर्ष बीज खरीदना पड़ता है जो कि मशरूम प्रयोगशाला में तकनीकी विधि से तैयार होता है जिसे स्पान कहते हैं।

स्पान शुद्ध संवर्धन (Pure Culture) से तैयार करते हैं। मशरूम का शुद्ध संवर्धन, कल्चर माध्यम पर मशरूम के ऊतक द्वारा कवक जाल से प्राप्त वृद्धि को कहते हैं। मशरूम के शुद्ध संवर्धन कल्चर को रेफ्रिजरेटर में 3 माह तक रखा जा सकता है। इसके उपरान्त इस कल्चर को पुनः सब कल्चर द्वारा कल्चर माध्यम पर बढ़ाया जाता है।

शुद्ध संवर्धन बनाने की विधि

मशरूम उत्पादन हेतु स्पान तैयार करने के लिए मशरूम का शुद्ध कल्चर ऊतक संवर्धन (Tissue Culture) विधि द्वारा तैयार किया जाता है जो निम्न चरण में पूरा होता है :

सबसे पहले स्वस्थ, स्वच्छ, ताजा, साफ किया हुआ मशरूम छांट लें और उसे सादे साफ पानी से धो लें। फिर एक निर्जीवीकृत ब्लेड से मशरूम के छोटे–छोटे टुकड़े ऐसे स्थान से काटें, जहाँ वे हवा के सम्पर्क में न आये हों। इन टुकड़ों को 0.1% मरक्यूरिक क्लोराइड के घोल में आधा मिनट तक डुबोकर उनकी सतह को निर्जीवीकृत करें। अब इन टुकड़ों को निर्जीवीकृत पानी में तीन–चार बार अच्छी तरह धोलें, जिससे कि मरक्यूरिक क्लोराइड का अंश टुकड़ों पर से धुल जाये। अब इन टुकड़ों को एक–एक करके निवेशन सुई (Inoculation Needle) द्वारा संवर्धन नली (Culture Tube) में कल्चर माध्यम में डालें। निवेशित संवर्धन नलियों को उद्‌भवक (Incubator) में 25^0C तापमान पर 5–6 दिन तक उद्‌भवित करें। कल्चर माध्यम पर 5–6 दिनों में, इन टुकड़ों के आसपास सफेद कवक जाल की बढ़वार दिखाई देने लगती है जो 8–10 दिनों में पूरे कल्चर माध्यम पर फैल जाती है।

मशरूम स्पान और उसे बनाने की विधि

मशरूम अथवा खुम्भ की खेती में प्रयुक्त होने वाले बीज को खुम्भ का बीज या स्पान कहते हैं जो एक प्रकार से वानस्पतिक बीज ही है। इस बीज को बड़ी सावधानी से वैज्ञानिक विधियों से प्रयोगशाला में तैयार किया जाता है। मशरूम कल्चर से प्रथम चरण में मास्टर/मदर स्पान तैयार किया जाता है जिसे द्वितीय चरण में व्यावसायिक स्पान बनाने के लिए प्रयोग में लाया जाता है। यह व्यावसायिक स्पान फिर कृषकों को खेती हेतु दिया जाता है।

मास्टर/मदर स्पान तैयार करने की विधि

सबसे पहले ज्वार या गेहूँ के दानों को डेढ़ गुना पानी की मात्रा में डालकर 10–15 मिनट तक उबालते हैं तथा 15–20 मिनट तक इसे ऐसे ही पड़े रहने देते हैं। इसके बाद इन दानों को जाली में ऊपर डाल देते हैं, ताकि अतिरिक्त पानी निकल जाए। प्रति 10 कि.ग्रा. उबले हुए दानों में 30 ग्राम कैल्शियम कार्बोनेट और 120 ग्राम जिप्सम डालकर आपस में अच्छी प्रकार से मिलाकर ग्लूकोज की खाली बोतलों में या खुले मुँह वाली बोतलों में भर देते हैं। इन सभी बोतलों को भापसह पात्र (ऑटोक्लेव) में डालकर 20–22 पौंड प्रति वर्ग इंच के दबाव पर डेढ़ से दो घंटे के लिए निश्कीटित (स्टरलाइज) करने के बाद जब भापसह पात्र के अन्दर की भाप निकल जाए, उसके लगभग 30 मिनट बाद भापसह पात्र का ढक्कन खोलकर सभी बोतलों को निकाल कर इन बोतलों को भली–भाँति हिला देते हैं, ताकि बोतलों के अन्दर पड़े दाने अलग–अलग हो जाए। इन बोतलों को अन्तः क्रामित (इनोकुलेशन) कमरे या कक्ष में ठण्डा होने के लिए रात भर रख देते हैं। दूसरे दिन इन बोतलों में शुद्ध संवर्धन डालते हैं। परखनली में भरे हुए संवर्धन को निश्कीटित

इनोकूलेशन नीडल की सहायता से कई हिस्से कर लेते हैं। स्पिरिट लैम्प की लौ के ऊपर दानों से भरी हुई बोतल की मुँह पर लगी हुई डाट को खोलकर थोड़ी तिरछी कर देते हैं, ताकि अन्दर की तरफ से बोतल की सतह पर थोड़ा सा स्थान निकल आए और इस स्थान पर शुद्ध संवर्धन को निश्कीटित इनोकूलेशन नीडल की सहायता से डाला जा सके। प्रत्येक बोतल में शुद्ध संवर्धन के दो टुकड़े विपरीत स्थान पर अन्दर की तरफ से बोतल के बीचों–बीच रखतें हैं। इन सभी बोतलों को 24 से 25 डिग्री सेल्सियस तापमान पर रखते हैं। प्रत्येक शुद्ध संवर्धन के टुकड़े के चारों तरफ फफूँद उगनी प्रारम्भ होने लगती है तथा तीन–चार सप्ताह में दानों के चारों तरफ कवकजाल फैल जाता है, जिसको मास्टर स्पान कहते हैं।

व्यावसायिक स्पान (बीज)

ऊपर वर्णित विधि द्वारा बनाए गये एक बोतल के मास्टर स्पान से 30–40 बीज की बोतलें या बैग बनाए जा सकते हैं। बीज बनाने के लिए ज्वार या गेहूँ के दानों को उसी प्रकार से पानी में उबालकर तथा कैल्शियम कार्बोनेट और जिप्सम मिलाकर बोतलों या विशेष प्रकार के मिश्रण पदार्थों से बनाये गए पॉलीप्रोपाइलीन के थैलों में भर कर निश्कीटित करते हैं, जैसा कि मास्टर स्पान बनाने के बारे में उल्लेख किया गया है। निश्कीटित करने के बाद इन बोतलों या थैलों को निकाल कर रात भर के लिए अंतः क्रामित कमरे या कक्ष में ठण्डा होने के लिए रख देते हैं। बोतलों की गर्दन को स्पिरिट लैम्प की लौ के ऊपर भली–भाँति गर्म कर लेते हैं। इसके बाद लौ के ऊपर रूई की डाट को निकाल कर बोतल के अन्दर पड़े हुए दानों को निश्कीटित की हुई शीशे या जंग रोधी पतली छड़ से खुम्बी के कवकजाल की वजह से आपस में जुड़े हुए दानों को अलग–अलग कर लेते हैं। बोतलों या थैलों में मास्टर स्पान के कुछ दाने डाल देते हैं तथा प्रत्येक बोतल या थैले को हिला देते हैं, ताकि मास्टर स्पान के दाने बोतल या थैलों के अन्दर सभी जगह बिखर जाएं। इन सभी बोतलों या लिफाफों को 24–25 डिग्री सेल्सियस तापमान पर रख देते हैं। प्रत्येक मास्टर स्पान के दानों के चारों तरफ से खुम्बी का कवकजाल उगना आरम्भ होता है। तथा लगभग तीन सप्ताह में बोतल या थैलों में भरे हुए दानों के चारों तरफ फफूँदी की पर्त चढ़ जाती है और सभी दाने आपस में चिपक जाते हैं।

मशरूम का बीज आजकल आधा लीटर दूध की बोतलों या पॉलीप्रोपाइलीन के थैलों में बनाया जाता है। पहले यह बीज बोतलों में ही बनाया जाता था, लेकिन परिवहन के समय बोतलों के टूटने की वजह से मशरूम उत्पादकों को काफी हानि पहुँचती थी, अब यह बीज पॉलीप्रोपाइलीन के थैलों में तैयार किया जाता है। इससे परिवहन में अब कोई खास समस्या नहीं आती।

स्पान (मशरूम बीज) की विशेषताएं

मशरूम के स्पान को देखकर कोई भी मशरूम उत्पादक यह अनुमान नहीं लगा सकता कि खरीदा गया स्पान कैसा है, उसमें अच्छे स्पान की सारी विशेषताओं के बारे में मशरूम उगने के बाद ही जाना जा सकता है। इसलिए मशरूम उत्पादकों को स्पान खरीदते समय कुछ ऐसी बातों का ध्यान रखना अति आवश्यक है जिनके आधार पर वे जान सकें कि बीज ठीक है या नहीं। अच्छे बीज की पहचान हेतु कुछ ध्यान देने योग्य बातें निम्नलिखित है :

1. मशरूम का स्पान ज्वार, बाजरा या गेहूँ के दानों पर बनाया गया हो, क्योंकि इन दानों से बना स्पान अन्य दानों पर बने स्पान की तुलना में अच्छा माना गया है।
2. प्रत्येक दाने के ऊपर मशरूम का कवकजाल पूरी तरह से फैला होना चाहिए। यदि कुछ दानों पर कवक जाल नहीं फैला है तो खाद में बीजाई के बाद उन पर हानिकारक कवक उगने लगती है या कुछ समय बाद उनसे रोग फैल जाता है।
3. स्पान की बोतल या थैलों में दानों के ऊपर मशरूम का कवकजाल बारीक रेशमी धागे की तरह होना चाहिए। दानों पर मशरूम के कवक जाल की बढ़वार कभी भी रूई के फाहे की तरह नहीं होनी चाहिए। यदि प्रयोग किये जाने वाले स्पान में रूई की तरह फफूँदी की वृद्धि हो तो यह आवरण मृदा के ऊपर फफूँदी की मोटी पर्त (स्ट्रोमा) बना लेता है जिसकी वजह से पानी नीचे नहीं पहुँच पाता है

तथा नीचे से उत्पन्न गैस (कार्बन डाइऑक्साइड) का उचित निकास नहीं हो पाता है, जिससे उपज कम अथवा बिल्कुल नहीं मिलती है।

4. मशरूम के ताजे स्पान का रंग सफेद होता है। यदि बीज का रंग मटमैला या भूरा हो तो यह समझना चाहिए कि स्पान पुराना है। यदि स्पान अधिक पुराना होगा तो पैदावार भी कम होगी।
5. स्पान की बोतलों या थैलों के अन्दर किसी प्रकार का लिबलिबा तरल पदार्थ नहीं होना चाहिए। इस प्रकार के स्पान जीवाणुओं से ग्रस्त होते हैं।
6. बोतलों या थैलों में बीज के ऊपर किसी प्रकार का कोई हरा या काला धब्बा नहीं होना चाहिए क्योंकि ऐसे बीज कई प्रकार के हानिकारक प्रतिस्पर्धी फफूँदियों से ग्रसित होते हैं।

स्पान परिवहन में सावधानियाँ

मशरूम स्पान अधिक तापमान पर धीरे–धीरे नष्ट होने लगता है तथा 35–40° से. तापमान पर 48 घंटे में मर जाता है फलस्वरूप बीज में सड़ने की बदबू भी आने लगती है। अतः स्पान को एक स्थान से दूसरे स्थान पर परिवहन करने के दौरान निम्न सावधानी आवश्यक है :

1. स्पान को परिवहन हेतु गत्ते की डिब्बों में पर्याप्त जगह देते हुए पैक करना चाहिए।
2. यदि दिन का तापमान ज्यादा है तो परिवहन रात्रि में करना चाहिए।
3. बीज को परिवहन के दौरान धूप से बचाना चाहिए।
4. हो सके तो थर्मोकोल सीट के बने डिब्बों में स्पान थैलों के मध्य बर्फ के टुकड़े रखकर पैकिंग करना चाहिए।
5. घर लाने के बाद स्पान के थैलों को अलग–अलग करके ठण्डी जगह या फ्रिज में रखना चाहिए।

स्पान का भण्डारण

मशरूम का ताजा बना हुआ स्पान कम्पोस्ट में शीघ्र फैलता है तथा पैदावार भी अधिक मिलती है, फिर भी कभी–कभी स्पान का भण्डारण करना जरूरी हो जाता है। इसलिए आवश्यक है कि स्पान को रेफ्रिजरेटर में ही भण्डारित करें। ऐसा करने से स्पान 15–20 दिन तक खराब नहीं होता है।

स्पानिंग (बीजाई)

मशरूम की खेती में प्रयोग होने वाले बीज को खाद (कम्पोस्ट) में मिलाने की प्रक्रिया को बीजाई या स्पानिंग कहते हैं। स्पानिंग करने के लिए निम्नलिखित विधियां प्रचलित हैं :

1. **सतही बीजाई** : कम्पोस्ट को पोटिंग या थैले में भरने के बाद ऊपरी सतह पर बीज छिड़क कर उसे 5 से.मी. की गहराई तक हाथ से मिला देते हैं, तथा उसके ऊपर कम्पोस्ट की एक पतली परत और डालकर ढक देते हैं।
2. **परतदार बीजाई** : इस विधि में पेटी या पॉलिथीन के थैलों में कम्पोस्ट को हल्का दबाकर एक तिहाई भर देते हैं तथा सतह पर बीज की एक तिहाई मात्रा फैला देते हैं। बीजाई की हुई सतह पर फिर कम्पोस्ट भरते हैं। जब दो तिहाई भाग भर जाये तो इस बीज की दूसरी परत फैला दी जाती है। इस सतह पर खाद की बची हुई एक तिहाई मात्रा डालकर इसकी सतह पर स्पान बिखेर देते हैं और उसे खाद में 3–4 से.मी. की गहराई तक मिलाकर हथेली से दबाकर समतल कर देते हैं।
3. **चिन्हित बीजाई** : इस विधि में खाद को पेटियों या थैलों में पूरी तरह से भरने के बाद खाद की सतह पर लगभग 1 इंच के अन्तर पर लगभग 1 इंच गहरे छेद उंगलियों या छड़ी की सहायता से बनाये जाते हैं। इन छेदों में बीज डालकर ऊपर से खाद की एक पतली परत डाल दी जाती है।
4. **संपूर्ण बीजाई या मिश्रित बीजाई** : इस विधि में खाद की पूरी मात्रा में मशरूम के बीज की पूरी मात्रा को अच्छी तरह मिलाया जाता है और बीज मिलाने के बाद खाद को पेटियों या थैलों में भर दिया जाता है।

मशरूम स्पान बनाने हेतु ऐसे स्थान की आवश्यकता होती हैं जहां किसी भी तरह का संक्रमण न आ सके। स्पान बनाने हेतु कुशल अनुभवी तकनीकी सहायक की आवश्यता होती है एवं अच्छी पैदावार प्राप्त करने के लिए अच्छे व स्वस्थ स्पान का प्रयोग करना चाहिए।

सम्पर्क सूत्र : 9837419450 ☑

समन्वित मत्स्य पालन

डा. आशुतोष मिश्रा एवं डा. विपुल गुप्ता

मत्स्य उत्पादन में भोजन की व्यवस्था पर ही कुल लागत का लगभग 50–60 प्रतिशत भाग व्यय होता है। यदि इस एक कारक पर हो रहे व्यय को घटाया जा सके तो मत्स्य उत्पादन में लगे कृषकों की आय उतनी ही बढ़ जायेगी। समन्वित मत्स्य पालन के अन्तर्गत मछली के साथ–साथ गाय, भैंस, सूकर, मुर्गी, रेशम के कीट, बत्तख, धान, सब्जी, केला, पपीता इत्यादि का संवर्धन किया जाता है जिनके अपशिष्ट पदार्थो का कुछ भाग मछलियाँ भोजन के रूप में ग्रहण करती हैं तथा शेष जल में उनके प्राकृतिक भोजन की वृद्धि में जैविक खाद की तरह काम करता है तथा दूसरी ओर तालाब के तलीय पंक, जल, उसके बंधों और मछली पालन से उत्पन्न व्यर्थ पदार्थो का उपयोग कृषि एवं मवेशी पालन में किया जाता है। ऐसी व्यवस्था से उत्पादन खर्च में काफी कमी आ जाती है। साथ ही जन्तु प्रोटीन का अधिक से अधिक उत्पादन मिलता है। हमारे तथा अन्य देशों में कई तरह के समन्वित मत्स्य पालन प्रचलित हैं जिनमें दो सामग्री, तीन सामग्री तथा चार सामग्री का समावेश रहता है। इनमें से निम्न काफी लोकप्रिय हैं।

1. मत्स्य–सह–पशु/पक्षी पालन
2. मत्स्य–सह–कृषि/बागवानी
3. मत्स्य–सह–कृषि–सह–पशुपालन

मत्स्य–सह–पशु पक्षी पालन में मत्स्य पालन के साथ साथ पशुपालन, बत्तख एवं मुर्गीपालन किया जाता है। मत्स्य–सह–कृषि के अन्तर्गत धान सह मत्स्य पालन या बागवानी–सह–मत्स्य पालन आता है। इसके अलावा मत्स्य–सह–कृषि–सह–पशुपालन में तीनों की खेती का एक साथ एकीकरण किया जाता है जो एक सफल तकनीक है।

इन सभी प्रकार की एकीकृत मत्स्य पालन तकनीकों में वर्ष के अन्त में तालाब कों सुखा दिया जाता है। तली पर जमें कीचड़ एवं कार्बनिक पदार्थो को निकाल कर बंधों या पास के खेतों मे डलवा दिया जाता है जो मिट्टी की उर्वरा शक्ति को बढ़ाता है। इसके पश्चात् मृदा एवं जल की अम्लीयता को सुधारने, कीटाणु एवं कीड़े मकोड़ों के डिम्भक, मोलस्का तथा उनके अंडे इत्यादि को नष्ट करने के लिए चूने का प्रयोग किया जाता है। इसके लगभग 10–15 दिन के बाद पानी भरकर मत्स्य बीज संचय किया जाता हैं। चूँकि इस प्रकार की तकनीकी में पशुपक्षियों के अपशिष्ट पदार्थ तालाब में प्रवाहित होते रहते हैं, अतः कार्बनिक पदार्थ बढ़ने के कारण पी एच को संतुलित बनाये रखने के लिए प्रत्येक तीन महीने के बाद 200 से 250 कि.ग्रा./है. चूने का प्रयोग करना चाहिए। भारत में प्रचलित समन्वित मत्स्य पालन प्रणालियों का विस्तृत वर्णन निम्नवत् है।

मछली–सह–पशुधन

इस प्रकार का समाकलन सीमान्त या छोटे किसानों के लिए बड़ा उपयोगी है। इस समन्वित तन्त्र में मछली पालन की कीमत में 50 प्रतिशत तक की कटौती होती है। यह पद्धति प्राचीन काल से ही प्रचलित है, जिसमें पशुओं के बाडे से गोबर इकट्ठा कर मछली के तालाबों में सीधा प्रयोग किया जाता है तथा एक हैक्टर के जलक्षेत्र में कृत्रिम भोजन पर बिना खर्च के ही एक वर्ष में लगभग 3000–3500 कि.ग्रा. मछली का उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। गोशाला (पशुओं के बाड़े) को यदि तालाब के बन्ध पर बनाया जाये तो पशुओं का अपशिष्ट पदार्थ सीधे तालाब में पहुँचता हैं जिससे मछली के प्राकृतिक आहार की पैदावार निरन्तर होती रहती है। एक हैक्टर जल क्षेत्र के लिए 3–5 बड़े जानवर जैसे गाय, भैस इत्यादि पर्याप्त खाद उपलब्ध करते हैं। इतने जानवरों से प्रतिदिन लगभग 15–20 कि.ग्रा. जैविक खाद प्राप्त होती है। दूसरे जानवरों की

अपेक्षा गाय का गोबर सबसे अधिक (लगभग 13600 कि.ग्रा. गोबर तथा 100 कि.ग्रा. मूत्र/वर्ष/जानवर) होता है। इसे तालाब में खुद भी फैलाया जा सकता है जिससे मजदूरी तथा ऊर्जा बचती है एवं वातावरण शुद्ध तथा बेहतर होता है। गाय के गोबर को प्रयोग करने से पूर्व इसे इसके मूत्र के साथ अच्छी तरह से मिला कर पतला करके तालाब में छिड़क दिया जाता है। मछली के लिए गाय के गोबर का परिवर्तन गुणांक शुष्क भार में 1.35 तथा नम भार में 20.0 प्रति कि.ग्रा. मछली का वजन के लगभग है। तालाब में बायोगैस स्लरी 15000 से 30000 ली./है./वर्ष की दर से डाली जाती है। इसकी जैव रसायन आक्सीजन माँग बहुत कम होती है, इसलिए, यह कच्चे गोबर की अपेक्षा अधिक सुरक्षित है। बायोगैस स्लरी के उपयोग से वर्ष के अन्त में एक हैक्टर जल क्षेत्र से लगभग 3000–5000 कि.ग्रा. मछली प्राप्त होती है। इस व्यवसाय में लगभग 5000 ली. दूध/वर्ष का उत्पादन भी होता है।

मत्स्य सह सूकर पालन

मत्स्य–सह–सूकर पालन काफी लाभप्रद समन्वित मत्स्य पालन तन्त्र है। हमारे देश में इसका प्रचलन सीमित स्थानों में ही है। यह तकनीक आर्थिक दृष्टि से बहुत ही लाभकारी है। सूकर की विष्ठा में नाइट्रोजन, फॉस्फोरस तथा पोटाश प्रचूर मात्रा में होते हैं जो तालाब के लिए उत्कृष्ट खाद का काम करते हैं। सूकर एक सर्वभक्षी पशु है जिसकी आँत की लम्बाई उसके शरीर से 14 गुनी अधिक होती है, जिससे खाये हुए भोज्य पदार्थ आसानी से पच जाते हैं। हाँलाकि सूकर अपनी जरूरत से ज्यादा खाना खाते हैं जिससे भोजन का कुछ भाग अधपचा रह जाता है जो कि मछलियों के प्राकृतिक आहार बनाने या सीधे आहार के रूप में उपयोग होता है। सूकर का अपशिष्ट पानी वाले तालाब में जल्दी सड़ता है क्योंकि इसमें कार्बन और नाइट्रोजन का अनुपात 14:1 के लगभग है। एक औसत वजन की (40–50 कि.ग्रा.) सूकर से लगभग 8–9 कि.ग्रा. वर्ज्य पदार्थ प्रतिदिन प्राप्त होता है।

मत्स्य–सूकर समन्वय के लिए उन्नत नस्ल के सूकरों का चुनाव करना चाहिए। देशी की तुलना में सूकर की विदेशी नस्ले ज्यादा लाभ देने वाली हैं जैसे टैमवर्थ, यार्कसायर, लैंडरेस, हैम्पसायर इत्यादि। ये प्रजातियाँ एक बार में 10–15 बच्चे तक दे देती हैं। ये सूकर 6–7 महीने में परिपक्व हो जाते हैं। विदेशी प्रजातियों के बच्चे रोगरोधी भी होते हैं।

इस तकनीक में सूकर की आवास व्यवस्था पर ध्यान रखना आवश्यक है। इसका घर साफ–सुथरा तथा हवादार होना चाहिए। इन्हें समुचित जगह न मिलने पर बढ़ोत्तरी अच्छी नहीं होती है तथा विभिन्न प्रकार की बीमारियों से ग्रसित होते हैं। इसके लिए सूकर के बाड़े को तालाब की तरफ खुलते हुये बनाना चाहिए। इससे बाड़े की सफाई कराना आसान रहता है तथा सूकर का मल मूत्र सीधे तालाब में चला जाता है।

विभिन्न देशों में एक हैक्टर जल क्षेत्र के लिए सूकरों की संख्या का निर्धारण प्रयोग की जाने वाली तकनीक के आधार पर किया जाता है। भारत में इनकी संख्या 30–40/ है., रखी जाती है जबकि चीन तथा ताइवान में इनकी संख्या क्रमशः 45–90/है. तथा 150–300/है. रखी जाती है। मत्स्य–सह–सूकर पालन में कामन कार्प की संख्या अधिक रखनी चाहिए, क्योंकि सूकरों के अपशिष्ट को कामन कार्प बड़े चाव से खाती है तथा इसकी बढ़वार इस तंत्र में सबसे अधिक होती है। वैज्ञानिक प्रयोगों, द्वारा यह ज्ञात हुआ है कि 50 कि.ग्रा. सूकर की खाद के प्रयोग से लगभग 1.5 कि.ग्रा. मछली तैयार होती है। आजकल सूकर के खाद को पहले एक टैंक में कुछ दिन रखकर, केवल ऊपरी भाग का प्रयोग तालाबों में किया जा रहा है जबकि खाद के निचले भाग को खेतों में कृषि फसलों के लिए किया जाता है। कभी–कभी ठीक प्रबन्धन न होने के कारण

सूकरों में कुछ रोग फैल जाते हैं जैसे पिगलेट एनीमिया, दस्त की बीमारी, चर्म रोग, स्वाइन ज्वर, खुरहा रोग इत्यादि। सूकर के कुछ सामान्य रोगों के लक्षण तथा उपचार का विवरण सारणी 1 में दिया गया है।

सरणी 1 : सूकर के सामान्य रोग तथा उपचार

रोग का नाम	रोग कारक	लक्षण	उपचार
पिगलेट एनीमिया	अल्पता रोग	रक्त में हीमोग्लोबिन की कमी	इन्फेरान का इन्जेक्शन (1 मिली/पिगलेट की दर से)
दस्त की बीमारी	जीवाणु एवं विषाणु	बार बार दस्त का लगना	पिपराजीन या मील वर्म दवाओं का प्रयोग
चर्म रोग	परजीवियों के द्वारा	शरीर में खुजली होना तथा त्वचा की परत का निकलना, बाल झड़ना	कीटनाशक दवाओं का प्रयोग
स्वाइन ज्वर	विषाणु	उल्टी सांस लेने में कठिनाई, शरीर का रंग लाल, आंखों में कीचड़, बाल झड़ना तथा कब्ज	स्वाइन ज्वर का टीका लगाना
खुरहा रोग	विषाणु	तीव्र बुखार, होंठ, थूथन, जीभ स्तन एवं खुर पर छाले निकलना	मुंह के छाले के लिए बोरोग्लिसरिन लगाना, खुर एवं स्तन के छाले को पोटाश से धोकर जेनसियन वायलेट का घोल लगाना।

यदि प्रबन्धन कार्य संतोषजनक रहे तो मत्स्य–सह–सूकर पालन तंत्र में सामान्य मत्स्य पालन की तुलना में अधिक आय प्राप्त होती है। 6 महीने में सूकर लगभग 45–50 कि.ग्रा. का हो जाता है जिसे बेचकर दूसरे समूह का पालन शुरू किया जाता है। वर्ष के अन्त में मत्स्य–सह–सूकर पालन से लगभग 6000 कि.ग्रा. मछली तथा लगभग 4500 कि.ग्रा. सूकर का मांस प्राप्त होता है।

मछली–सह–रेशम पालन

मछली–सह–रेशम पालन चीन में काफी लोकप्रिय है। इस समन्वय तन्त्र में तालाब के बन्धों पर शहतूत के पौधे लगाकर उसके पत्तों पर रेशम के कीड़ों का पालन किया जाता है। इसके लिए तालाब की मिट्टी का उपयोग शहतूत के पौधों की वृद्धि के लिए किया जाता है। एक हैक्टर तालाब के बाँध पर लगाये गये शहतूत के पौधे से 15000–35000 कि.ग्रा. पत्ते प्राप्त होते हैं जिससे वर्ष भर में 8 समूह के रेशम के कीड़ों का पालन किया जा सकता है। साधारणतः 100 कि.ग्रा. शहतूत के पत्ते से 8 कि.ग्रा. ककून प्राप्त होते है। इस प्रकार एक हैक्टर क्षेत्र से 1200–2800 कि.ग्रा. रेशम कुकून प्राप्त होगें। प्रत्येक 100 कि.ग्रा. कुकून से 7 कि.ग्रा. रेशम प्राप्त होता है। अतः प्रति हैक्टर क्षेत्र से लगभग 84–216 कि.ग्रा. रेशम का उत्पादन होगा। इस तन्त्र में प्रत्येक 8 कि.ग्रा. कुकून के अनुपात में 30–50 कि.ग्रा. कीड़ों का अपशिष्ट, बचे हुए शहतूत के पत्ते इत्यादि प्राप्त होते हैं, जिसका मछली द्वारा उपयोग किया जाता है और इनके प्रत्येक 8 कि.ग्रा. अवशेष से 1 कि.ग्रा. मछली प्राप्त होती है। इस तन्त्र में एक हैक्टर जल क्षेत्र से लगभग 3–4 टन/वर्ष मत्स्य उत्पादन प्राप्त होता है।

मत्स्य–सह–बत्तख पालन

मत्स्य–सह–बत्तख पालन भी एक लोकप्रिय पालन तन्त्र है। इस व्यवस्था में मछली तथा बत्तख दोनों के आहार की लागत घट जाती है। तालाब बत्तख के लिए साफ सुथरे चारागाह की तरह काम करते हैं। दूसरी तरफ ये तालाब से मेंढक, टैडपोल, कीड़े–मकोड़े, और अन्य अनावश्यक जीव जन्तुओं को, जो मछली के लिए हानिकर होते हैं, उसे खाते हैं। अतः तालाब से बत्तख के लिए समुचित मात्रा में

प्राकृतिक भोजन उपलब्ध हो जाता है जिससे इनके आहार पर होने वाला खर्च लगभग 10–15 प्रतिशत तक कम हो जाता है। बत्तख के अपशिष्ट में नत्रजन (1 प्रतिशत), फॉस्फोरस (1.4 प्रतिशत) तथा पोटैशियम (0.62 प्रतिशत) की मात्रा अन्य की तुलना मे अधिक होती है। बत्तख का अपशिष्ट मछली के लिए एक अच्छा भोजन तथा तालाब के लिए एक अच्छी खाद है। इसकी खाद में 57 प्रतिशत जल तथा 26 प्रतिशत कार्बनिक पदार्थ होता है। एक बत्तख लगभग 36 दिन में 7 कि.ग्रा. ताजी खाद उपलब्ध कराती है जिसका 4–6 प्रतिशत मछली का मांस बनने में उपयोग होता है। मछली सह बत्तख पालन मलेशिया, चीन, ताइवान, हंगरी इत्यादि देशों में काफी लोकप्रिय है।

मछली–सह–बत्तख पालन में तालाब की सफाई स्वतः होती रहती है। इसके अलावा बत्तख भोजन की तलाश में चोंच से तली की मिट्टी को उधकते हैं जिससे मिट्टी में उपलब्ध पोषक तत्व जल में निर्मुक्त होते रहते हैं तथा मछली के प्राकृतिक भोजन को बढ़ाते हैं। बत्तखों के दिनभर तालाब में तैरने से घुलित ऑक्सीजन की मात्रा भी बढ़ जाती है। बत्तख के तैरते रहने से इसके अपशिष्ट पदार्थ एक जगह इकट्ठे नहीं होते हैं। प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध हो चुका है कि जमीन की अपेक्षा पानी में विचरण से बत्तख की उत्तरजीविता अधिक होती है तथा वे रोग मुक्त रहते हैं। बत्तख के अण्डे मुर्गी की तुलना में 15 से 20 ग्रा. बड़े होते हैं तथा बत्तख मुर्गी से 40–50 अंडे/वर्ष अधिक देती है।

वैसे तो बत्तख की कई देशी तथा विदेशी प्रजातियाँ हैं जैसे देशी प्रजातियाँ–इण्डियन रनर, बीर्यर्डेड, नागेश्वरी तथा सिल्हेटमेट; विदेशी प्रजातियाँ खाकी कैम्प वेल, मस्कोय, विगोवा सुपर एम, ह्वाइट पेकिन तथा WF आरपिंगटन, लेकिन इण्डियन रनर तथा खाकी कैम्पबेल समन्वित मत्स्य पालन के लिए अनुकूलनतम् हैं। इण्डियन रनर 250 अण्डे/वर्ष तथा खाकी कैम्पबेल 300 अण्डे/वर्ष देती है।

इस तकनीकी द्वारा एक हैक्टर के जल क्षेत्र से वर्षोपरांत लगभग 4000 कि.ग्रा. मछली परिपूरक आहार एवं खाद पर बिना खर्च के ही प्राप्त की जा सकती है। इसके अलावा लगभग 18000 अंडे तथा 500 कि.ग्रा. बत्तख का मांस भी उपलब्ध होता है। वैसे एक हैक्टर जल क्षेत्र के लिए 300–400 बत्तख पाले जाते हैं लेकिन अच्छे प्रबन्धन होने पर यह संख्या बढ़ायी जा सकती है। सामान्यतः दिन के समय बत्तख तालाब में तैरते रहते हैं लेकिन रात के समय या मौसम खराब होने पर उन्हें रखने के लिए एक आवास की जरूरत होती है। परोक्ष रूप से बत्तख के अपशिष्ट पदार्थो के तालाब में प्रवेश हेतु तालाब के बन्धों तथा तालाब के बीच की जगह पर बाँस से झोपड़ीनुमा पक्षी गृह बनाना चाहिए। प्रत्येक बत्तख को 0.3 से 0.5 वर्ग मीटर का स्थान उपलब्ध कराया जाता है। वैसे पानी की सतह पर तैरने वाले बत्तख घर भी बनाये जा सकते हैं जिनसे बत्तख के अपशिष्ट एवं बिखरे भोजन सीधे ही तालाब में गिरते रहते हैं जो कि मछलियों के आहार एवं खाद का काम करता रहता है।

मछली–सह–बत्तख पालन में हमेशा अंडे देने वाली बत्तख रखने की संस्तुति की जाती है जिससे लगातार खाद उपलब्ध होती रहे और अण्डों की बिक्री भी होती रहे। चूँकि निषेचित अण्डों की आवश्यकता नहीं है, अतः इस तंत्र में केवल मादा बत्तख ही रखना चाहिए। बत्तख 20–22 सप्ताह (लगभग 5 माह बाद) की उम्र के बाद अंडा देना शुरू कर देती है तथा दूसरे या तीसरे वर्ष तक अण्डे देती रहती है। यदि निषेचित अण्डे प्राप्त करना हो तो नर तथा मादा को बराबर संख्या में रखना चाहिए। बत्तख एक भूखड़ पक्षी है जो विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थो को खा लेता है। बत्तख को प्रतिदिन 100–150 ग्रा. भोजन की आवश्यकता होती है (सारणी 2)।

सारणी 2 : बत्तख के आहार का संगठन		
अवयव	अवयव की प्रतिशत मात्रा	
	शिशुओं के लिए	अंडे देने वाली बत्तखों के लिए
ज्वार या बाजरा	30.00	30.00
धान की भूसी या गेहूँ का चोकर	20.00	25.00
खली	27.50	22.50
मछली का चूर्ण	20.00	20.00
विटामिन बी$_2$ एवं डी$_3$	0.025	0.025
खनिज मिश्रण	2.5	2.5

ध्यान रखने की बात है कि बत्तखों को तालाब पर तभी लाया जाये जब मत्स्य बीज अंगुलिका आकार की हो जाये। मत्स्य–सह–बत्तख पालन में मछलियों की संख्या लगभग 10000 प्रति हैक्टर रखनी चाहिए। उचित प्रबन्धन न होने के कारण कभी–कभी बत्तखों में रोग भी फैलने लगते हैं तथा अन्त में उनकी मृत्यु हो जाती है। बत्तख में होने वाले प्रमुख रोगों के कारकों, लक्षणों तथा उनके उपचार के बारे में संक्षिप्त जानकारी सारणी 3 में दी गयी है।

बत्तख के अंडे एवं मांस को बेचकर हो जाती है तथा मत्स्य उत्पादन बिना आहार एवं खाद पर होने वाले खर्च के हो जाता है।

मत्स्य सह मुर्गी पालन

गाँवो में छोटे स्तर पर मुर्गी पालन काफी लोक प्रिय है। अक्सर यह देखा गया है कि मुर्गी पालक अपनी मुर्गियों को इधर उधर घूमने के लिए स्वतन्त्र छोड़ देते हैं जिससे अन्य लोगों को नुकसान उठाना पड़ता है। इस समस्या से बचने तथा विशेष लाभ प्राप्त करने के लिए मुर्गी का मछली के साथ समन्वय कर देना चाहिए। समन्वित मत्स्य सह मुर्गी पालन से अधिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है। इस तन्त्र में भी मछली पालन में इस ब्यवस्था में मत्स्य पालन में जैविक खाद, रासायनिक खाद एवं परिपूरक आहार पर होने वाला खर्च बच जाता है तथा मुर्गी के अण्डे के रूप में अतिरिक्त आय प्राप्त होती है।

सारणी 3 : बत्तखों के सामान्य रोग एवं उपचार			
रोग का नाम	कारक	लक्षण	उपचार
1. प्लेग	विषाणु	पंखों का गिरना, भूख कम लगना, प्यास अधिक लगना, आँखों का फूलना तथा गीला रहना, मल मूत्र का पतला एवं हरा होना, अंडे कम देना इत्यादि	2 सप्ताह, 10 सप्ताह और 24 सप्ताह की उम्र में रक्षात्मक सुई लगवायें।
2. कालरा	जीवाणु	भूख एवं प्यास का कम होना, शरीर का तापमान बढ़ना, डायरिया होना, मूत्र का पतला एवं हरा होना इत्यादि।	सल्फोनामाइड्स और एन्टीबायोटिक को खिलाना चाहिए। 2–3 माह की उम्र में रक्षात्मक टीके लगवायें।
3. पैराटाइफाइड	जीवाणु (सालमोनेला)	पंखों का गिरना, डायरिया होना, प्यास बढ़ना, बजन का घटना इत्यादि।	फ्यूराजोलीडोन का प्रयोग करें।
4. वाटीलिज्म	जीवाणु (बाटलिनम्) (क्लारटेरिडियम्)	विषैला पदार्थ खाने से बत्तख का सुस्त, कमजोर तथा अनियंत्रित होना, सिर का गिराना, पंख गिरना सांस लेने में परेशानी होना इत्यादि।	साफ और ताजा पानी अधिक मात्रा में देना। इस बिमारी से बचाव के लिए सफाई जरूरी है।
5. वायरस हिपेटाइटिस	विषाणु	बत्तख का सुस्त एवं पंखों का रूखा होना, खाना बंद करना, सिर का गिराना।	रक्षात्मक टीका 0.5 मिली/बत्तख की दर से देना चाहिए।
6. इन्फ्लुएन्जा	विषाणु	श्वसन छिद्र से पानी का निकलना, तेज आवाज का निकलना तथा मृत्यु।	अच्छा प्रबन्धन

मत्स्य–सह–बत्तख पालन में मछली के साथ–साथ बत्तखों के अण्डे एवं मांस की भी प्राप्ति होती है। बत्तख पालन में लगे खर्च की भरपाई

साधारणतः अण्डे तथा मांस के लिए मुर्गी पालन किया जाता है। अंडे तथा मांस दोनों के लिए मुर्गी पालन का समन्वयन मछली पालन से अच्छी

तरह से होता है जिससे खाद एवं परिपूरक आहार के खर्चे में कमी आती है। मुर्गी के अपशिष्ट में लगभग 1.6 प्रतिशत नत्रजन, 1.5–2.0 प्रतिशत फॉस्फोरस तथा 0.8–0.9 प्रतिशत पोटेशियम होते हैं जो किसी भी अपशिष्ट से ज्यादा हैं। एक हैक्टर जल क्षेत्र के लिए 500–600 मुर्गियाँ पर्याप्त होती हैं, इस व्यवसाय से वर्ष के अन्त में एक हैक्टर जल क्षेत्र से लगभग 5000 कि.ग्रा. मछली, 70000 से अधिक अण्डे तथा 1250 कि.ग्रा. मुर्गी का मांस प्राप्त हो जाता है।

मत्स्य–सह–मुर्गी समन्वय दो विधियों द्वारा करते हैं। प्रथम विधि में मुर्गी के आवास को तालाब के ऊपर बनाया जाता है जिससे उनके अपशिष्ट सीधे तालाब में चले जाते हैं। दूसरी विधि में मुर्गी को तालाब के बन्ध पर बने आवास में रखा जाता है तथा मुर्गी के अपशिष्ट को वहाँ से उठाकर किसी टब या बर्तन में पानी में घोलकर तालाब में पम्प द्वारा डाला जाता है। प्रत्येक मुर्गी के लिए 0.3–0.4 वर्ग मी. जगह की आवश्यकता होती है। एक आवास में 250 से अधिक मुर्गियाँ नहीं रखनी चाहिए। इनके अपशिष्ट को घासफूस के साथ लीटर बनाकर भी प्रयोग किया जाता है।

मत्स्य–सह–मुर्गी पालन में मछली तथा मुर्गी की प्रजातियों के चुनाव पर भी ध्यान देना चाहिए। मछली की प्रजातियाँ तो वही रहें जो मिश्रित मत्स्य पालन हेतु प्रयोग की जाती हैं। मुर्गी पालन के लिए बड़े तथा अधिक अण्डे देने वाली मुर्गी तथा तेजी से बढ़ने वाले ब्रायलर की प्रजातियाँ चुननी चाहिए। अधिक अंडे देने वाली प्रजातियों में रोड आइलैण्ड, लेग हार्न, स्टार क्रास शेवर, कलिंगाब्राउन इत्यादि तथा ब्रायलर प्रजातियों में शेवर स्टैब्रो, हाइब्रो, हेबार्ड, वेनकाब इत्यादि प्रमुख हैं। मुर्गी पालन में संतुलित आहार एक मुख्य मुद्दा है। मुर्गियों की खुराक में लगभग सभी पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। साधारण मुर्गियों के आहार में 75–80 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट,17–25 प्रतिशत प्रोटीन, 3–5 % वसा तथा खनिज तत्वों (कैल्सियम और फॉस्फोरस) की मात्रा रहती है। इन्हें हमेशा स्वच्छ जल ही पीने हेतु देना चाहिए। अण्डे देने वाली मुर्गियों हेतु संतुलित आहार का विवरण सारणी 4 में दिया गया है।

अण्डा देने वाली मुर्गियों के लिए संतुलित आहार (मात्रा प्रतिशत में)

घटक	चूजे के लिए (0–8 सप्ताह की आयु तक)	बढ़ते हुए चूजे के लिए (8–20 सप्ताह की आयु तक)	अण्डे देने वाली मुर्गी के लिए
मकई, गेहूँ के टुकड़े	40.5	45.0	40.0
चोकर	10.0	16.0	10.0
चावल का कन्ना	12.0	15.0	12.0
बादाम की खली	26.0	16.0	24.0
मछली का चूर्ण	9.0	5.0	5.0
चूना पत्थर	–	–	7.0
खनिज मिश्रण	2.0	2.5	1.5
नमक	0.5	0.5	0.5

मुर्गियों को खाना फिंडिंग हापर में रखकर ही खिलाना चाहिए ताकि खाना बिखरे नहीं। मुर्गियों को निश्चित समयान्तराल पर दिन में दो बार आहार देना चाहिए। मुर्गियों को हरी घास या साग के टुकड़े भी थोड़ी मात्रा में दिये जा सकते हैं। एक मुर्गी औसतन प्रति दिन 100–120 ग्रा./आहार खा लेती है। मुर्गियों के पास हमेशा पीने के लिए पर्याप्त मात्रा में जल होना चाहिए। इनकी धूल में खेलने की आदत के कारण एक मिट्टी के बर्तन में धूल भर कर रखना चाहिए। इनके आवास का तापमान 20–22^0 सेन्टीग्रेड होना चाहिए, अतः शीतकाल में आवास में रात को बल्ब जरूर लगाना चाहिए। मछलियों के संचय हेतु कतला, रोहू, नैन, ग्रास कार्प, सिल्वर कार्प, कामन कार्प को : 20: 20: 15: 10: 20: 15 के अनुपात में प्रति हैक्टर लगभग 10000 मत्स्य बीज डालें। मछलियों में रोगों के बचाव के लिए समय समय पर चूने का प्रयोग करना अति आवश्यक है। मुर्गियों की उचित देखभाल, संतुलित भोजन, हवादार एवं स्वच्छ आवास तथा अच्छी प्रजातियों का चुनाव रोग फैलने की सम्भावनाओं को कम कर देता है। बीमारी फैलने पर मुर्गियों को बचा पाना बड़ा मुश्किल होता है। मुर्गी के बीमार पड़ते ही उसे दूसरी स्वस्थ

मुर्गियों से अलग कर देना चाहिए। मुर्गी की देखभाल करने वाले आदमी को स्वच्छ कपड़े पहनने चाहिए। ध्यान रहे मुर्गी के आवास में धूप की व्यवस्था जरूर रहे।

मुर्गियाँ साधारणतः 5 वें महीने के बाद अण्डा देना शुरू करती हैं। अण्डे देने वाली अच्छी प्रजातियाँ 280–300 अण्डे/वर्ष दे देती हैं। यदि अण्डों से चूजे प्राप्त करने हों तो निषेचित अण्डा पैदा करने हेतु 10 मादा मुर्गियों पर 1 नर मुर्गी रहे। मत्स्य सह मुर्गी पालन एक बहुत ही सरल एवं आर्थिक रूप से लाभप्रद व्यवसाय है।

मत्स्य–सह–धान पालन

जहाँ भूमि की जलधारण क्षमता अधिक हो तथा वर्षा का पानी 5–6 महीने थमता हो, उन जलाक्रान्त क्षेत्रों में धान के खेतों में मछली पालन करना कृषि योग्य भूमि की उपयोगिता है। इन खेतों में मछली को बढ़ाने के कई फायदे हैं तथा यह व्यवसाय ग्रामीण समुदाय की आर्थिक उन्नति में विशेष रूप से सहायक है। यह तन्त्र सबसे कम खर्चे में उचित मात्रा में जन्तु प्रोटीन उत्पादित करता है। धान के खेतों में मछली उत्पादन काफी होता है जो कि इकाई क्षेत्र में समुद्र, झील तथा अन्य वृहद क्षेत्रों में मत्स्य उत्पादन से कहीं अधिक है। इन खेतों में मछली सड़ी गली धान की पत्तियाँ, अन्य खरपतवार, मोलस्क, मच्छर तथा कीड़े–मकोड़ों को खाती है जिससे धान उत्पादन की दर बढ़ जाती है।

धान के खेतों में जलीय खरपतवारों का नियन्त्रण करना एक बड़ी समस्या है। शाकाहारी तथा शैवालभक्षी मछलियाँ जैसे तिलापिया प्रजातियाँ, पुन्टियस जावानिकस, ट्राईकोगैस्टर पेक्टोरैलिस इत्यादि इस समस्या के समाधान के लिए बेहतर सिद्ध हुई हैं। इसी प्रकार कीड़े मकोड़े खाने वाली मछलियाँ मच्छरों की वृद्धि को नियंत्रित करती हैं जिससे मलेरिया तथा अन्य महामारियों से बचा जा सकता है। धान की फसल को स्नैल तथा केकड़े काफी नुकसान पहुँचाते हैं। अतः उनके नियन्त्रण के लिए मोलस्का भक्षी मछलियाँ जैसे पन्गेसियस, हैप्लोक्रोमिस मिलैन्डी का संचय करना चाहिए। मत्स्य–सह–धान पालन में धान के खेत को गहरा करना जो कि मछलियों के लिए जरूरी है, चूहों की समस्या से छुटकारा दिलाता है।

मत्स्य सह धान पालन विधि में धान की लम्बी किस्मों या गहरे जल वाली किस्मों को लगाना चाहिए जैसे जलमग्न (उत्तर प्रदेश), जलधि (पश्चिम बंगाल), जयसुरिया (हरियाणा) इत्यादि। धान के खेतों में मछली पालन मुख्यतः तीन प्रकार से किया जाता है। प्रथम प्रकार जो कि सबसे आसान है, खेतों में धान काटकर उस खेत में पानी भरकर मछली पालन करते हैं। द्वितीय प्रकार में मछली और धान को साथ–साथ बढ़ाते हैं तथा धान कटने के समय मछली को भी निकाल लेते हैं। तृतीय तथा सबसे जटिल प्रकार में लम्बे समय तक मछली पालन करते हैं। धान कटने के बाद मछलियाँ पहले से ही बने हुए गहरे भाग में चली जाती हैं जहाँ पानी हमेशा बना रहता है। इस भाग में फिर से मत्स्य बीज संचय कर देते हैं। इस व्यवस्था में मछली अल्पावधि वाली व्यवस्थाओं से बहुत अधिक उत्पादित होती है।

धान–सह–मत्स्य पालन में धान मुख्य फसल होती है इसलिए मत्स्य पालन तकनीकी को परिवर्तित किया जा सकता है। कभी इस व्यवस्था के तालाब के बन्ध को मछली के रोकने के लिए ऊँचा करना पड़ सकता है परन्तु ध्यान रहे कि धान की फसल को कोई क्षति न हो। धान की फसल में परजीवीनाशकों का प्रयोग उचित नहीं है क्योंकि इनसे मछली को काफी हानि पहुँचेगी। साथ ही मछली के उपभोक्ताओं को भी बुरे परिणाम भुगतने पड़ सकते हैं।

धान–सह–मत्स्य पालन की विभिन्न तकनीकें, क्षेत्र, मौसम, मत्स्य प्रजातियों, धान की प्रजातियाँ, धान उत्पादन की विभिन्न विधियाँ इत्यादि पर निर्भर करती है। कुछ प्रयोगों में धान के खेत में मछलियों का संचय नहीं किया जाता है बल्कि

जंगली मछलियों का ही पालन किया जाता है और पकड़ा जाता है। कुछ प्रयोगों में बढ़ने वाली प्रजातियों का धान के खेत में संचय किया जाता है।

धान के खेत में जहाँ मछली पालन करना है, उस क्षेत्र को तालाब की तरह प्रबन्धित करना चाहिए, तथा पानी का स्तर थोड़ा कम ही रखना चाहिए नहीं तो धान की फसल को नुकसान हो सकता है। यदि इस क्षेत्र में लगातार पानी आता रहे और निकलता रहे तो बहुत ही अच्छा है। इस क्षेत्र में धान की लम्बी प्रजातियों का ही चुनाव करना चाहिए, जैसे जलमग्न, जलधि, जय सुरिया इत्यादि। इस विधि में वही मछलियाँ अच्छी वृद्धि प्राप्त करेंगी जो कम जल स्तर में रह सके, अधिक तापमान तथा कम घुलित आक्सीजन में भी जीवित रह सकें, उनकी वृद्धि तेज हो, मैले जल में रह सकें इत्यादि। इन मछलियों में कुछ अति महत्वपूर्ण जैसे चन्ना, तिलापिया, कवई, मागुर, सिन्धी इत्यादि हैं।

इस विधि में मई के महीने में खेत को धान बोने के लिए तैयार करते हैं तथा मछलियों के लिए थोड़ी गहरी ट्रेन्च बना लेते हैं। वर्षा के दौरान जल ट्रेन्च तथा ऊपरी सतह पर आ जाता है जिसमें धान की रोपाई कर देनी चाहिए। जुलाई माह में 1500–2000 तक मछली के बच्चे प्रति हैक्टर की दर से संचित कर लेते हैं। मछलियों की अच्छी वृद्धि के लिए कृत्रिम आहार भी उपलब्ध कराना जरूरी है। अक्टूबर तक धान की फसल (खरीफ वाली) तैयार हो जाती है। उस समय फसल की कटाई थोड़ा ऊपर से कर लेते हैं, जिससे निचला भाग जल में सड़कर मृदा एवं जल की उर्वरता को बढ़ाता रहें तथा जल में प्राकृतिक भोजन बनते रहें। नवम्बर के बाद खेत में पानी कम होने लगता है तब जाल चलवाकर बड़ी बड़ी मछलियों को निकाल कर बेच दिया जाता है। बाकी मछलियाँ गहरे भाग में चली जाती हैं जहाँ पर पर्याप्त जल उपस्थित रहता है। नवम्बर महीने में ही धान की रबी की फसल बो दी जाती है जो कि फरवरी तक तैयार हो जाती है। धान की फसल की कटाई के बाद खाई की मछलियों को भी बेच दिया जाता है तथा खेत को सुखा दिया जाता है। इस प्रकार वर्ष में धान की दो फसलों के साथ साथ मछली की एक फसल 1000–1500 कि.ग्रा./है. प्राप्त की जा सकती है जो कि एक अतिरिक्त उत्पादन है।

मत्स्य–सह–कृषि–सह–पशुपालन

अब समन्वित मत्स्य पालन का प्रचलन काफी क्षेत्र में हो गया है। इस तकनीकी को असंख्य कृषक अपना रहे हैं तथा अत्यधिक लाभ प्राप्त कर रहे हैं। इसी तकनीकी पर आधारित पंतनगर विश्वविद्यालय ने कृषि, पशुपालन तथा मत्स्य पालन पर एक सजीव मॉडल तैयार किया है। यह मॉडल छोटे किसानों के लिए अपने पूर्ण एवं उत्कृष्ट तकनीकों का नमूना है।

कृषि व्यावसायीकरण के इस मॉडल में कृषक की भूमि को तीन बराबर भागों में बाँटा गया है जिसमें से एक भाग मत्स्य पालन के लिए, दूसरा पशुपालन तथा तीसरा कृषि के लिए रखा गया है। तालाब के बन्ध पर केले, पपीते, गोभी, टमाटर, बैंगन, इत्यादि के पेड़ भी लगाये गये हैं जो कृषक को अतिरिक्त आय देते हैं। एक एकड़ जल क्षेत्र से लगभग 2500 कि.ग्रा. मछली उत्पादित होती है तथा लगभग रू0 200000 की आय सम्भव है। वर्ष के अन्त में मछली पकड़ने के बाद तालाब को सुखा दिया जाता है तथा तली पर जमे कार्बनिक पदार्थो को निकालकर फल–सब्जियों की क्यारियों में प्रयोग किया जाता है जो मिट्टी की उर्वरा शक्ति को बढ़ाता है। तालाब का जल भी कृषि फसलों के लिए खाद की तरह काम करता है।

उपर्युक्त वर्णित सभी समन्वित मत्स्य पालन तकनीकें व्यावसायिक रूप से लाभदायक हैं। इस विधा में एक पालन तन्त्र दूसरे तन्त्र पर कई कार्यो हेतु निर्भर रहता है जिससे उस कार्य में होने वाला खर्च पूर्णरूपेण बच जाता है। वातावरण में खनिजीकरण की दृष्टि से भी यह पद्धति अति उत्तम है। पर्वतीय क्षेत्रों में भी यह तकनीकी विकसित की जा रही है जिससे वहाँ के कृषकों को अधिक लाभ प्राप्त हो सके।

सम्पर्क सूत्र : 9410120651 ☑

समेकित नाशीजीव प्रबन्धन (आई.पी.एम.) के अन्तर्गत न्यूनतम साझा कार्यक्रम

डा. रूपाली शर्मा एवं डा. भूपेश चन्द्र कबड़वाल

उत्तराखण्ड में कृषकों की जोत छोटी, बिखरी हुई तथा भूमि की उर्वरा शक्ति कम है। यहाँ अधिकांशतः वर्षा आधारित खेती की जाती है इसलिए सीमित भूमि से अधिक आय प्राप्त करने हेतु कृषकों द्वारा सघन खेती की जाती है। वर्तमान में कृषक खेती में संकर प्रजातियों के बीज का प्रयोग कर रहे हैं, जिनमें प्रतिरोधक क्षमता कम होने के कारण बीमारियों व कीटों की समस्याएं अधिक आती हैं। इस कारण अधिक उत्पादन लेने के लिए कृषक अत्यधिक रसायनों का प्रयोग करते हैं। सीमित भूमि होने के कारण वे फसल–चक्र भी नहीं अपना पाते तथा विगत 15–20 वर्षो से लगातार उन्ही खेतों पर एक ही जाति की फसलों का उत्पादन करते आ रहे हैं। फलतः रासायनिक खाद और दवाओं पर उनकी निर्भरता निरन्तर बढ़ती जा रही है।

अधिक आय प्राप्त करने के लिए संकर बीजों, कीट व बीमारियों की समस्याओं के लिए रासायनिक दवा व उर्वरकों के अत्यधिक प्रयोग व सघन कृषि से जहाँ एक ओर जैव विविधता का ह्रास हुआ है वहीं अत्यधिक रसायनों के प्रयोग से रोग जनकों में रसायनों के प्रति प्रतिरोधक क्षमता उत्पन्न होती जा रही है। यही कारण है कि अत्यधिक रासायनिक दवाओं के प्रयोग के बावजूद कीट व्याधियों की समस्या निरन्तर बढ़ती जा रही है। एक ओर जहाँ कृषकों की उत्पादन लागत बढ़ रही है वहीं दूसरी ओर कृषकों का उत्पादन लगातार कम होता जा रहा है जिससे अब कृषकों के लिए खेती घाटे का व्यवसाय हो गया है। फसलों में अधिकांश नुकसान बीज एवं मृदाजनक रोगों एवं कीटों द्वारा होता है। बेमौसमी सब्जियाँ नगदी फसल होने के कारण उत्तराखण्ड के अधिकांश पर्वतीय क्षेत्रों में उगाई जाती है, बीज एवं मृदाजनक समस्यायें लगभग एक समान ही है। इसलिए आवश्यकता है एक ऐसी तकनीक की जो कि सरल, सर्वत्र प्रभावी एवं कम खर्चीली हो, जिसका पर्यावरण एवं जैव विविधता पर प्रतिकूल प्रभाव न पड़े तथा कृषकों को कीट व्याधियों की समस्या से छुटकारा भी मिल सके।

कृषकों की इन समस्याओं को ध्यान में रखते हुए गोविन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्यौगिक विश्वविद्यालय, पंतनगर के पादप रोग विज्ञान विभाग द्वारा एक लागत विहीन, अत्यधिक प्रभावशाली, पर्यावरण की दृष्टि से अनुकूल एवं सर्वत्र प्रभावी प्रणाली न्यूनतम साझा कार्यक्रम (Common Minimum Programme) का विकास किया गया है। यह पद्धति समेकित नाशीजीव प्रबन्धन का अंग है। किसान अपनी फसल को कीट व बीमारियों से बचाने के लिए वर्षों से निरन्तर जूझ रहे हैं। वास्तव में उनकी कृषि प्रक्रियायें फसलों को कीट बीमारियों के लिए अधिक अनुकूल बना रही है। छोटी खेती में लाभांश की मात्रा कम होती है तथा थोड़ा भी नुकसान सहने की क्षमता नहीं होती है। चूँकि खेती में बढ़ती उत्पादकता का कीट एवं बीमारियों के बढ़ते प्रकोप के साथ सीधा सम्बन्ध है इसलिए छोटे किसानों के लिए यह आवश्यक है कि प्रति वर्ष एक प्रभावी समेकित नाशीजीव प्रबन्धन कार्यक्रम अपनायें। न्यूनतम साझा कार्यक्रम के चार प्रमुख अवयव है :

1. मृदा सौरीकरण
2. वर्मी कम्पोस्ट का उत्पादन एवं अधिक से अधिक प्रयोग
3. जैव अभिकर्ता द्वारा बीज शोधन, मृदा शोधन, पौधशाला शोधन एवं छिड़काव
4. वर्मी कम्पोस्ट की गुणवत्ता में वृद्धि

1. मृदा सौरीकरणः अधिकांश सब्जियों की पौध, पौधशाला में बीज बोकर तैयार की जाती है जिसके

उपरान्त उन्हें खेतों में रोपित किया जाता है। पौधशाला में अधिकांशतः विभिन्न कवकीय व जीवाणुवीय रोगजनक, कीटों व खरपतवार की बहुतायत रहती है जिससे बीज सड़न, जड़ व तना सड़न के कारण पौधशाला में ही पौधों की संख्या कम हो जाती है। जो पौध बचती है वह अस्वस्थ एवं संक्रमित होती है जिससे रोगों का प्रसार खेतों तक हो जाता है। मृदा सौरीकरण पौधशाला में रोग जनकों, कीटों व खरपतवार के प्रभाव को कम करने के लिए एक प्रभावशाली एवं लागत विहीन तकनीक है। इस प्रक्रिया में पौधशाला बीज बुवाई से 5–8 सप्ताह पूर्व तैयार की जाती है तथा इसे पानी से पूरी तरह नम कर दिया जाता है। तत्पश्चात् पौधशाला को पारदर्शी पॉलीथीन की चादर (50–100 माइक्रोन मोटाई वाली) से ढक देते हैं तथा चारों ओर से पालीथीन की चादर को इस प्रकार दबा देते हैं कि उसमें वायु का संचार न हो सके। इस पॉलीथीन की चादर को बीज बुवाई से 3–4 दिन पूर्व ही हटाते हैं।

पॉलीथीन की चादर ''हरित ग्रह'' प्रभाव पैदा करती है जिससे सौर ऊर्जा पारदर्शी पॉलीथीन की चादर के अन्दर तो आ जाती है लेकिन बाहर नहीं जा सकती। इससे पौधशाला में मिट्टी का तापमान बढ़ जाता है जो रोगजनकों एवं कीटों के लिए घातक हो जाता है। मृदा सौरीकरण के प्रभावशाली परिणाम प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि सौरीकरण 5–8 सप्ताह तक किया जाए, पारदर्शी पॉलीथीन का ही प्रयोग किया जाए, पॉलीथीन बिछाने से पूर्व पौधशाला की सिंचाई व मृदा में कार्बनिक पदार्थ मिला हो तथा पॉलीथीन का आवरण ठीक प्रकार लगाया गया हो।

2. वर्मी कम्पोस्ट उत्पादन एवं प्रयोगः उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में परम्परागत तरीके से तैयार की जाने वाली खाद या कच्चे गोबर का कृषकों द्वारा बहुतायत प्रयोग किया जाता है। अक्सर कृषक खेतों में गोबर के ढेर लगा देते हैं जिसमें वर्षा का पानी गिरने से पाषक तत्व वर्षा के पानी के साथ घुलकर बह जाते हैं तथा गोबर भली प्रकार सड़ भी नहीं पाता। इस प्रकार बनाई गई खाद में पोषक तत्वों की कमी होती है एवं अधसड़ी खाद से खेतों में कीट और बीमारियाँ अधिक फैलती है। इसके विपरीत वर्मी कम्पोस्ट अधिक पोषक तत्व वाली व कम समय में तैयार होने वाली खाद है। इसे तैयार करने के लिए गोबर, सूखे व हरे पत्ते, घास–फूस, धान का पुआल, खेतों के अवशेष इत्यादि को प्रयोग में लाते हैं जिसे खाकर केंचुएं मल (Cast) के रूप में खाद तैयार कर देते है जिसे वर्मी कम्पोस्ट कहते हैं। यह खाद सब्जियों, फल वृक्षों, फसलों के लिए पूर्णरूप से प्राकृतिक, सम्पूर्ण व सन्तुलित आहार प्रदान करती है। वर्मी कम्पोस्ट का प्रयोग कर एक ओर जहाँ उत्पादन लागत को कम किया जा सकता है वहीं इसके प्रयोग करने से पौधों में प्रतिरोधक क्षमता का विकास होता है एवं भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ने के साथ–साथ मृदा की जल धारण क्षमता भी बढ़ जाती है। चूँकि खाया गया कार्बनिक पदार्थ केंचुओं के आहार नाल से होकर निकलता है जहाँ उसमें एन्जाईमिक क्रियाऐं भी होती है। इसलिए यह खाद फसलों के लिए अत्यन्त लाभदायक सिद्ध होती है। वर्मी कम्पोस्ट तैयार करने के लिए खेतों के अवशेष, खरपतवार व गोबर को एकत्रित कर 6 फीट लम्बा 2.5 फीट चौड़े व 1.5 फीट ऊँचे गड्ढे में डाल देते हैं। यह गड्ढा कच्चा या पक्का हो सकता है। गड्ढे का आकार उपलब्ध स्थान एवं सुविधानुसार घटाया बढ़ाया जा सकता है। तत्पश्चात् उक्त गड्ढे में उचित प्रजाति के केंचुऐं डाल देते हैं। ये केचुएं प्रजनन कर अपनी संख्या में वृद्धि करते हैं एवं गड्ढे में डाले गये पदार्थ को खाकर मिट्टी के रूप में मल का त्याग करते हैं जिसे वर्मी कम्पोस्ट कहा जाता है। केंचुएं खरपतवार नियंत्रण, मृदा की रासायनिक संघटन व भौतिक संरचना में परिर्वतन एवं लाभकारी सूक्ष्म जीवों का उद्दीपन भी करते हैं। केंचुएं लगभग तीन माह के भीतर खाद तैयार कर देते हैं। ''आइसीनिया फोटिडा'' प्रजाति के केंचुएं अच्छी एवं शीघ्र खाद बनाते हैं। वर्मी कम्पोस्ट उत्पादन के लिए कुछ सावधानियाँ रखी जानी अत्यन्त आवश्यक हैं।

1. गड्ढे को सूर्य के प्रकाश से बचाना चाहिए। इसलिए उसे छायादार स्थान में बनाना चाहिए अथवा गड्ढे के ऊपर घास का छप्पर बनाना चाहिए।
2. बैड में नमी व हवा का आवागमन सुचारू रूप से होता रहना चाहिए।
3. ताजा या अधिक पुराना गोबर वर्मी कम्पोस्ट बनाने हेतु प्रयोग नहीं करना चाहिए।
4. गड्ढे के ऊपर ढकने के लिए पॉलीथीन का प्रयोग नहीं करना चाहिए।
5. गड्ढे की मेढक, छिपकली, चिड़ियों, दीमक व चिटियों से सुरक्षा करनी चाहिए।
6. नमी बनाये रखने के लिए सप्ताह में एक बार गड्ढे के कार्बनिक पदार्थ पर पानी छिड़कना चाहिए।
7. गड्ढे में पानी नहीं भरने देना चाहिए।

3. जैव अभिकर्ता का अधिक से अधिक प्रयोगः किसी जीव द्वारा उत्पन्न की गयी परिस्थितियों एवं प्रक्रियाओं के कारण दूसरे जीव (रोग जनक) का आंशिक या पूर्ण रूप से विनाश किया जाता है। रोग जनकों का विनाश करने वाले जीवों को जैव अभिकर्ता कहते हैं। चूँकि रासायनिक दवाओं के लगातार प्रयोग से रोग जनकों में प्रतिरोधक क्षमता उत्पन्न हो जाती है जिस कारण रोगों को रासायनिक दवाओं से नियंत्रित कर पाना कठिन हो जाता है। इसके लिए जैव अभिकर्ता द्वारा रोगों का नियंत्रण एक उपयुक्त विकल्प है जो जैविक कृषि के अनुरूप भी है। क्योंकि यह पूर्णरूप से जैविक प्रक्रिया है इसलिए जैव नियंत्रण से फसलों की सुरक्षा के साथ–साथ मिट्टी की गुणवत्ता एवं पर्यावरण को प्रदूषित होने से भी बचाया जा सकता है। पिछले दो दशकों में बहुत से जैव अभिकर्ता व्यावसायिक स्तर पर बाजार में उपलब्ध है। जिसमें रोग नियंत्रण के लिए ट्राईकोडर्मा एवं स्यूडोमोनास जैव अभिकर्ता अधिक प्रचलित है। पादप रोग विज्ञान विभाग, जैव नियंत्रण प्रयोगशाला में जैव अभिकर्ता 'ट्राईकोडर्मा हरजियानम' व 'स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस' का व्यापक स्तर पर उत्पादन किया जा रहा है। जैव अभिकर्ता का प्रयोग कई तरीके से किया जाता है जैसेः–

(अ) बीज उपचारः बड़े बीजों जैसे मटर, सोयाबीन, गेहूँ व बीन के लिए 6–8 ग्राम/कि.ग्रा. बीज तथा छोटे बीजो जैसे–गोभी, मिर्च, टमाटर, बैंगन इत्यादि के लिए 4–6 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से बीजों को उपचारित किया जाता है। यदि बीज पहले से रासायनिक दवाओं द्वारा उपचारित हो तो उन्हें पानी से धोकर तब जैव अभिकर्ता द्वारा उपचारित करना चाहिए। बीजोपचार के लिए बीजो के ऊपर थोड़ा सा पानी छिड़कर संस्तुत दर के आधार पर जैव अभिकर्ता पाउडर ठीक से मिला देते हैं। इसके बाद बीज को थोड़ी देर छाया में रख देते हैं जिससे जैव अभिकर्ता की पर्त बीज के ऊपर लग जाए। तत्पश्चात् बीज की बुवाई कर देते हैं।

(ब) कन्द–प्रकन्द उपचारः अदरक, अरबी, आलू आदि के उपचार के लिए 8–10 ग्राम जैव अभिकर्ता प्रति लीटर पानी में घोलकर उसमें कन्दों को डुबोकर निकाल देते हैं और उन्हें छाया में सुखाने के बाद बुवाई कर देते हैं।

(स) पौध उपचारः रोपाई से पहले पौध की जड़ को जैव नियंत्रक के घोल से उपचारित करते हैं इसके लिए पौध को पौधशाला से उखाड़कर उसकी जड़ को पानी से अच्छी तरह साफ करने के बाद 8–10 ग्राम/लीटर जैव अभिकर्ता का पानी में घोल बनाकर उसमें आधा घंटे तक जड़ डुबाने के पश्चात् पौधों की रोपाई करते हैं। पौध उपचार मुख्यतः सब्जियों जैसे–गोभी, मिर्च, बैंगन, टमाटर आदि के पौधों की करते हैं।

(द) खाद उपचारः सड़ी हुई खाद को खेत में डालने से पहले जैव अभिकर्ता से उपचारित किया जाता है। इसके लिए 250 ग्राम जैव अभिकर्ता को एक कुन्तल सड़ी हुई खाद में भली–भाँति मिलाकर प्रयोग करना चाहिए। खाद बनाते समय गड्ढों में भी जैव अभिकर्ता को नियमित रूप से मिलाया जा सकता है।

(य) छिड़कावः बीज एवं मृदा जनित रोगों के रोकथाम के अतिरिक्त जैव अभिकर्ता द्वारा हवा से फैलने वाली

बीमारियों को भी रोका जा सकता है। इसके लिए 8–10 ग्राम/लीटर जैव अभिकर्ता को पानी में मिलाकर समय–समय पर फसल में छिड़काव किया जाना चाहिए।

(र) सिंचाईः जैव अभिकर्ता का 8–10 ग्राम/लीटर घोल बनाकर सब्जियों की पौधशाला की समय–समय पर सिंचाई करनी चाहिए जिससे पौधे स्वस्थ रहेंगे एवं उनकी बढ़वार अच्छी रहेगी।

जैव अभिकर्ता के प्रयोग से जहाँ एक ओर उत्पादन लागत कम की जा सकती है वहीं मानव स्वास्थ्य एवं पर्यावरण पर इसका दुष्प्रभाव नहीं पड़ता। रोग कारक जीवों में जैव अभिकर्ता के प्रति प्रतिरोधक क्षमता विकसित करने की सम्भावना भी नहीं रहती है तथा जैव अभिकर्ता का बीज के अंकुरण एवं पौधे की वृद्धि पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। जैव अभिकर्ता के प्रयोग में कुछ सावधानियाँ वरती जानी अत्यन्त आवश्यक हैं जैसे–

1. जैव अभिकर्ता को निर्धारित समय सीमा के अन्दर ही प्रयोग में लाना चाहिए। मुख्यतः जैव अभिकर्ता उत्पादन के दिन से 6 महीने के अन्दर प्रयोग में लाये जा सकते हैं।
2. जैव अभिकर्ता के प्रयोग के समय मृदा में पर्याप्त मात्रा में नमी एवं कार्बनिक पदार्थ होना चाहिए। रासायनिक दवाओं के साथ जैव अभिकर्ता का प्रयोग कदापि नहीं करना चाहिए।
3. जैव अभिकर्ता का भण्डारण 25^0 सेन्टीग्रेड से कम तापमान पर ही करना चाहिए।

4. वर्मी कम्पोस्ट की गुणवत्ता में वृद्धिः केंचुओं द्वारा तैयार वर्मी कम्पोस्ट को गड्ढे से निकालने के पश्चात् उसमें 250 ग्राम/कुन्तल की दर से जैव अभिकर्ता को मिला दिया जाता है। जिससे एक ओर जहाँ वर्मी कम्पोस्ट की उर्वरा शक्ति में वृद्धि होती है वहीं जैव अभिकर्ता को कार्बनिक पदार्थ मिल जाने के कारण खाद में इसमें तेजी से फैल जाता है। इस प्रकार कम जैव अभिकर्ता का प्रयोग कर इसे अधिक क्षेत्रफल में प्रयोग किया जा सकता है

जैविक कृषि के अर्न्तगत पारिस्थितिकी पर आधारित रोग नियंत्रण प्रणाली का अपनाया जाना उपयुक्त है। जैविक प्रणाली ऐसी हो जो मृदा में रहने वाले जीवाणुओं की विविधता एवं बढ़वार को प्रोत्साहित कर सके ताकि जीवाणु पौधों के लिए लाभप्रद तथा रोग फेलाने वाले कारकों के लिए हानिकारक सिद्ध हो सकें। जैव नियंत्रण प्रक्रिया के अर्न्तगत एक जीव अथवा जीवाणु दूसरे हानिकारक जीव या जीवाणु को नष्ट अथवा नियंत्रित करता है। इसके लिए जैव अभिकर्ताओं की जनसंख्या को पौधों की जड़ों के आस–पास अधिक मात्रा में बनाये रखना आवश्यक होता है। जैव अभिकर्ताओं की जनसंख्या में वृद्धि अच्छी खाद अथवा कम्पोस्ट, जैसे वर्मी कम्पोस्ट, के प्रयोग से की जा सकती है। वर्मी कम्पोस्ट एक प्राकृतिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा केंचुएं तथा लाभकारी जीवाणु जैव अवशेषों व अन्य पदार्थों को पोषक तत्वों से युक्त बेहतरीन खाद के रूप में परिवर्तित कर देते हैं। इस प्रकार केंचुऐं मृदा की संरचना सुधारने में अत्यन्त लाभकारी हैं। साथ ही केंचुऐं लाभकारी, मृदा जनित जीवाणुओं को बढ़ावा देते हैं, रोग फैलाने वाले फफूँदों एवं जीवाणुओं का ह्रास करते हैं तथा व्यर्थ अवशेषों को लाभकारी जैविक उर्वरक, जैविक रोग एवं कीटनाशक, बिटामिन, एन्जाईम तथा पौधों की बढ़वार के लिए आवश्यक पोषक तत्व बनाते हैं। वर्मी खाद के प्रयोग से कुरमुला कीट का भी नियंत्रण पाया गया है क्योंकि यह कीट अधसड़े गोबर के प्रयोग से अधिक फैलता है। मृदा सौरीकरण एक लागत विहीन प्रक्रिया है जिसके द्वारा मृदा जनित रोगों एवं खरपतवार की रोकथाम सम्भव है। साथ ही यह प्रक्रिया स्वस्थ्य एवं सशक्त पौधे कम समय में तैयार करने में प्रभावी सिद्ध हुई है। वर्मी खाद यद्यपि अत्यन्त पोषक होती है, जैव अभिकर्ता से उपचारित खाद की गुणवत्ता और अधिक बढ़ जाती है। जिससे मृदा पारिस्थितिकी (Soil Ecology) कम समय में सुधारी जा सकती है।

उपरोक्त ''न्यूनतम साझा कार्यक्रम'' के द्वारा अधिकतर मृदा एवं बीज जनित बीमारियों को नियंत्रित किया जा सकता है। उद्देश्य है स्वस्थ पौध तैयार करना, जिसके लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि मृदा की जैव विविधता को निरन्तर बनाये रखा जाय, लाभदायक सूक्ष्म जीवों का संरक्षण एवं उनके संवर्धन के लिए मृदा में अधिक से अधिक कार्बनिक पदार्थ उपलब्ध कराया जाये। इन सारे उद्देश्यों की पूर्ति न्यूनतम साझा कार्यक्रम को अपना कर पूरी की जा सकती है। इसे अपनाने से कृषकों की उत्पादन लागत कम होगी, कीट बीमारियों का प्रकोप कम होगा, कृषकों का लागत लाभ अनुपात बढ़ेगा एवं कृषक न्यूनतम लागत में गुणवत्ता युक्त उत्पाद पैदा कर सकेगा। कृषकों द्वारा अर्जित लाभ इस बात पर निर्भर करता है कि रसायनों के अंधाधुन्ध प्रयोग से उनके खेतों की मृदा की पारिस्थितिकी (Soil Ecology) किस स्तर तक प्रभावित हुई है। यद्यपि ''न्यूनतम साझा कार्यक्रम'' के लगातार अपनाये जाने से शत्प्रतिशत सफल परिणाम मिलने की सम्भावना बनी रहती है कुछ कृषक इस बात का दावा करते हैं कि वे बिना रसायनों के प्रयोग से तथा न्यूनतम साझा कार्यक्रम के अपनाये जाने से लगातार अच्छी पैदावार लेने में सक्षम है। अन्य यह मानने लगे है कि न्यूनतम साझा कार्यक्रम के लगातार अपनाये जाने से वे रसायनों के प्रयोग में भारी कमी ला सके हैं। न्यूनतम साझा कार्यक्रम एक अत्यन्त कम लागत वाली प्रणाली है जो एक ओर स्थाई एवं प्रतिवर्ष नुकसान देने वाली मृदा जनित व्याधियों की रोकथाम में सक्षम साबित हुई है वहीं यह प्रणाली प्रदेश में प्रचलित जैविक खेती के अनुरूप भी है।

जैव नियंत्रण प्रयोगशाला, पादप रोग विज्ञान विभाग कृषि महाविद्यालय में उपलब्ध उत्पाद एवं सेवाएं

I. किसानों के लिए उत्पाद

1. **जैव अभिकर्ता 1** : (ट्राइकोडर्मा हरजियानम) पौधों की बीमारियों के नियंत्रण हेतु
2. **जैव अभिकर्ता 2** : (स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस) पौधों की बीमारियों के नियंत्रण हेतु
3. **जैव अभिकर्ता 3** : (ट्राइकोडर्मा हरजियानम + स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस) पौधों की बीमारियों के नियंत्रण हेतु
4. **जैव अभिकर्ता 4** : (स्यूडोमोनास 2+3) पौधों की बीमारियों के नियंत्रण हेतु

II. उद्योगों के लिए उत्पाद : प्रभावशाली जैव अभिकर्ता के स्ट्रेन

i. ट्राइकोडर्मा हरजियानम
ii. स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस
iii. ट्राइकोडर्मा हरिजियानम एवं स्यूडोमोनास के समांग स्ट्रेनों का मिश्रण

III. किसानों के लिए तकनीक

i. जैव अभिकर्ता मूल्य सम्बर्धित कम्पोस्ट उत्पादन तकनीक
ii. जैव अभिकर्ता के प्रभावशाली प्रयोग विधि

IV. उद्योगों के लिए तकनीक

i. सूक्ष्मजीवी जैव नियंत्रकों की उत्पादन तकनीक
ii. पाउडर आधारित जैव अभिकर्ता के उत्पादन की तकनीक
iii. जैव अभिकर्ताओं के गुणवत्ता नियंत्रण तकनीक

V. निम्न फसलों के आई0पी0एम0 मोड्यूल्स

धान, टमाटर, आलू, चना, मटर, मसूर, बन्दगोभी, फूलगोभी, सोयाबीन, फ्रेन्चबीन, राजमा, अदरक, शिमला मिर्च

सम्पर्क सूत्र : 7830355250 ☑

जैविक कृषि में पादप रोग प्रबन्धन

डा. आर.पी. सिंह, डा. रश्मि तिवारी,
डा. रूचि त्रिपाठी एवं आशीष सिंह बिष्ट

रोग प्रबन्धन खेती का एक अनिवार्य घटक है। फसलों में लगाने वाले रोग, रोग की तीव्रता और फसल की अवस्था के अनुसार फसल के संभावित उत्पादन को कम कर देते हैं। फसल उत्पादन की विभिन्न अवस्थाओं में रोग प्रबंधन की आवश्यकता होती है जो फसल, रोगकारक के प्रकार व स्त्रोत, खेती के मौसम, संक्रमण के चरण, पौधे के प्रभावित भाग, एक फसल चक्र में रोगजनक की पीढ़ियों की संख्या और कई अन्य कारकों के आधार पर भिन्न होता है। इसलिए रोग प्रबन्धन के विकल्प और विशिष्ट संस्तुतियाँ तदनुसार भिन्न होती हैं। वनस्पतियों, जीवों, मनुष्यों और पर्यावरण पर संपूर्ण रूप से पादप संरक्षण रसायनों के दुष्प्रभाव प्रमुख चिंताएं हैं। कृषि रसायनों के अविवेकपूर्ण उपयोग के बारे में बढ़ती जागरूकता के कारण पर्यावरण प्रदूषण पर बढ़ती चिंताओं के मद्देनजर जैविक खेती को वैश्विक स्तर पर प्राथमिकता के रूप में मान्यता प्राप्त होने लगी है। हर गुजरते दिन के साथ सुरक्षित और स्वस्थ भोजन की मांग बढ़ रही है। भारत जैसे आबादी वाले देश में भोजन की बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए कीटों एवं रोगों के प्रबन्धन हेतु कृषि में रासायनिक आदानों का उपयोग अपरिहार्य है परंतु कृषि उत्पादों में कीटनाशकों के अवशेषों की मौजूदगी से स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं एवं पर्यावरण प्रदूषण जैसे अप्रत्यक्ष दुष्परिणाम सामने आए हैं। निरंतर कम होती कृषि जोत में प्रति इकाई गुणवत्ता युक्त उत्पादन बढ़ाने हेतु कम लागत वाली टिकाऊ, पर्यावरण एवं मानव के स्वास्थ्य के अनुकूल, प्रभावशाली फसल सुरक्षा प्रणाली को अपनाने की आवश्यकता बढ़ती जा रही है। भूमि को स्वस्थ एवं खेती को टिकाऊ बनाने के लिए परंपरागत जैविक खेती की आवश्यकता पुनः महसूस की जाने लगी है। रसायनों द्वारा मानव स्वास्थ्य एवं वातावरण पर पड़ने वाले प्रतिकूल प्रभावों के फलस्वरुप जैविक खेती का क्षेत्रफल धीरे–धीरे बढ़ रहा है। उपभोक्ताओं के जैविक उत्पादों की बढ़ती मांग के कारण जैविक खेती आज एक प्रमुख कृषि व्यवसाय बन गया है।

जैविक खेती में उत्पादन स्तर बनाए रखने के लिए जहां यह आवश्यक है कि मिट्टी की उर्वरता बनाई रखी जाए, वही कीट एवं रोगों से होने वाली वहीं क्षति को भी न्यूनतम स्तर पर लाना आवश्यक है। जैविक खेती में प्रचलित कीटनाशकों का प्रयोग प्रतिबंधित होने तथा रोग प्रबंधन के वैकल्पिक तरीकों की पर्याप्त जानकारी के अभाव में रोगों का नियंत्रण एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। अधिकांश प्रबंधन विधियों में रोग व बीमारियों की घटना का रोकने, जैव विविधता को बनाए रखने एवं मिट्टी के स्वास्थ्य सुधार पर अधिक बल दिया जाता है। जैविक फसल प्रणाली में रोग प्रबन्धन रोग के कारणों के समाधान पर केन्द्रित रहता है। जैविक खेती के अंतर्गत जहाँ कुछ रसायनों के प्रयोग की अनुमति है, वहीं जैविक होने के बावजूद कुछ चीजों का प्रयोग प्रतिबंधित है। अतः यह जरूरी है कि जैविक खेती से जुड़े कृषक इस संबंध में पूरी जानकारी रखें। इसी को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत लेख में जैविक खेती के अंतर्गत रोग प्रबंधन की संक्षिप्त जानकारी दी जा रही है।

जैविक खेती में रोग प्रबन्धन की रणनीतियाँ

1. रोगजनकों का बहिष्कार

रोग कारकों के विकास एवं प्रसार में नियंत्रण करके रोग की घटना को कम किया जा सकता है। रोगमुक्त बीजों व पौध सामग्री के उपयोग से बीज जनित बीमारियों को रोका जा सकता है तथा रोग वाहकों का प्रबंधन किया जा सकता है। इसी प्रकार मृदा सौरीकरण या अवायवीय मृदा कीटाणुशोधन के माध्यम से मृदा जनित रोग कारकों का प्रभावी विनाश किया जा सकता है।

2. जैविक संसाधनों का प्रयोग

मिट्टी में उन्नत जैविक गतिविधियाँ खरपतवारों, कीटों और बीमारियों को कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। मिट्टी को उर्वरित रखने के लिए कवर फसलों, हरी खाद, पशुखाद के उपयोग से मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार करने से न केवल मिट्टी से उत्पन्न रोगजनकों को रोकने में मदद मिलती है बल्कि जैविक गतिविधि भी बढ़ती है और लम्बे समय तक मिट्टी के स्वास्थ्य को बनाए रखा जा सकता है। खाद और जैविक संसाधनों के उपयोग से मिट्टी की सूक्ष्मजीव विविधता में वृद्धि होती है और रोग का ह्रास होता है। मृदा जनित रोग कारकों एवं सूत्रकृमियों के प्रबंधन हेतु जैविक/कार्बनिक पदार्थों जैसे खली (मूंगफली की खली, अरंडी की खली, नीम की खली), भूसा, लकड़ी का बुरादा आदि के प्रयोग से किया जा सकता है। इस विधि द्वारा मृदा में कार्बनिक पदार्थों की वृद्धि होने के साथ–साथ पौधों में प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है तथा रोगजनकों की संख्या कम हो जाती है। सड़ी हुई गोबर की खाद/कंपोस्ट/वर्मी कंपोस्ट के प्रयोग से पूर्व, जैव नियंत्रक (ट्राइकोडर्मा या स्युडोमोनास प्रजाति) एक कि.ग्रा./कुन्तल जैविक खाद की दर से 10 से 15 दिन पूर्व मिलाने से खाद की गुणवत्ता में वृद्धि हो जाती है। वृक्षार्युवेद आधारित जैव उत्पादों जैसे कुनापजल, बीजामृत, जीवामृत आदि का प्रयोग रोग व्याधियों के नियन्त्रण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। हरी खाद का प्रयोग करना लाभकारी होता है।

3. रोग रोधी प्रजातियों का चुनाव

फसलों की प्रतिरोधी किस्में कीटनाशकों का एक महत्वपूर्ण विकल्प है। किसी फसल में रोगजनक के विरूद्ध प्रतिरोध के लिए पौधे की आनुवंशिक संरचना में विविधता और परिवर्तनशीलता का उपयोग करना हानिकारक रसायनों के उपयोग के बिना रोग प्रबन्धन के लिए सबसे अच्छी रणनीति है। अधिकांश फसलों में ऐसी प्रजातियों का विकास किया गया है जिनमें कीट एवं व्याधियों का प्रकोप कम होता है। कृषकों को चाहिए कि ऐसी प्रजातियों का चयन करें जिसमें रोग रोधी क्षमता अधिक हो।

4. शस्य क्रियाओं में फेरबदल द्वारा रोग प्रबंधन

आमतौर पर किसानों द्वारा अपनाई जा रही कृषि क्रियाओं में हल्का सा बदलाव लाकर फसलों में होने वाली क्षति को कम किया जा सकता है। प्रयास होना चाहिए कि फसल की संवेदनशील अवस्था रोगों के फैलने हेतु अनुकूल वातावरण तथा रोगजनकों की उपस्थिति का मेल एक साथ न हो। रोगों द्वारा होने वाली क्षति को निम्नलिखित शस्य क्रियाओं द्वारा कम किया जा सकता है:

- फसल चक्र अपनाएं।
- गर्मियों में खेत की मिट्टी पलटने वाले हल से गहरी जुताई करें।
- खेत एवं उसके आसपास खरपतवार न होने दें।
- स्वस्थ एवं प्रमाणित बीजों का प्रयोग करें।
- गरम पानी/जैव नियंत्रक द्वारा बीज/जड़ उपचार करने के बाद ही बुवाई/रोपाई करें।
- खड़ी फसल में विषाणु द्वारा रोग ग्रस्त पौधों को निकाल कर जला दें या मिट्टी में दबा दें।
- रोग ग्रस्त फसल अवशेषों को एकत्र कर खेत से हटा कर नष्ट कर दें।

5. वनस्पति कीटनाशकों का प्रयोग

कई प्रकार की वनस्पतियों में ऐसे तत्व पाए जाते हैं जिनके प्रयोग द्वारा रोगों का नियंत्रण किया जा सकता है। नीम की पत्तियों या बीज के सत्त का 5 प्रतिशत की दर से छिड़काव करने पर कई प्रकार के रोग वाहकों का नियंत्रण किया जा सकता है। नीम तेल पर आधारित एजेडिरेक्टिन (0.03 प्रतिशत) कीटनाशक का व्यवसायिक स्तर पर उत्पादन किया जा रहा है। इसका 2–5 मि.ली. लीटर/लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करने से विभिन्न कीटों से बचाव किया जा सकता है। इनके अतिरिक्त अन्य वनस्पतियाँ भी कीट एवं रोग नियंत्रण हेतु प्रयोग में लाई जा सकती हैं।

वनस्पति	उपयोग दर	रोग
नीम	पत्ती अर्क, केक (5 प्रतिशत)	टमाटर की अगेती अंगमारी और सूखा रोग, अरहर का उकठा रोग, कद्दू वर्गीय सब्जियों में फल सड़न, धान का झोंका रोग, भूरा धब्बा, अदरक का गट्ठी सड़न रोग, विषाणु जनित रोग
एलोवेरा	पत्ती अर्क (10 प्रतिशत)	प्याज के रोग
लहसुन	पत्ती अर्क, कंद अर्क (10 प्रतिशत)	नींबू वर्गीय फलों का कैंकर रोग, गेहूं का किट् रोग
प्याज	कंद अर्क (10 प्रतिशत)	प्याज को पर्पल ब्लाच और स्टेमफाइलम ब्लाइट रोग
बेल	पत्ती अर्क (8 प्रतिशत)	अरहर का उकठा रोग
बोगनविलिया	पत्ती अर्क (10 प्रतिशत)	मोटे अनाजों के विषाणु जनित रोग
धतूरा	पत्ती अर्क (5 प्रतिशत)	अदरक का गट्ठी सड़न रोग
यूकेलिप्टस	पत्ती अर्क (5 प्रतिशत, बीजोपचार)	बैंगन का उकठा रोग
हल्दी	बीजोपचार 1 ग्राम/कि.ग्रा. की दर से	धान के बीज जनित रोग
पंचफुली (लैंटाना)	पत्ती अर्क (10 प्रतिशत)	नींबू वर्गीय फलों का कैंकर रोग

6. जैव नियंत्रकों के प्रयोग द्वारा रोग प्रबंधन

पौधों में होने वाली विभिन्न बीमारियों के नियंत्रण में ट्राइकोडर्मा प्रजाति की फफूंद तथा स्युडोमोनास फ्लोरेसेंस एवं बेसिलस सब्टिलीस नामक जीवाणुओं का प्रयोग किया जा सकता है। यह जैव नियंत्रक विभिन्न प्रकार के रोग कारकों जैसे फ्यूजेरियम, राइजोक्टोनिया, पीथियम, फाइटोफ्थोरा, मेक्रोफोमिना, स्केलेरोटोनिया तथा स्कलेरोशियम आदि के नियंत्रण में बहुत ही कारगर सिद्ध हुए हैं।

प्रयोग विधि

बीज उपचारः चना, अरहर, मटर, सोयाबीन, मसूर, टमाटर, मिर्च, बैगन, गोभी, तंबाकू आदि के बीज एवं ग्लेडियोलस के कार्म का उपचार 10 ग्राम पाउडर प्रति कि.ग्रा. बीज/कार्म से करते हैं। बीज एवं कार्म के उपचार के लिए सबसे पहले जैव नियंत्रक के पाउडर का पानी में घोल बना लेते हैं, फिर बीज/कार्म को इस घोल में डाल देते हैं जिससे पूरे बीज/कार्म पर जैव नियंत्रक की अच्छी तरह से एक परत चढ़ जाए।

बीज की बायोप्राईमिंग, बायो एजेंट के 10 ग्राम मात्रा का 50 मिली पानी में घोल बनाकर इसमें 1 कि.ग्रा. बीज डालकर अच्छी तरह से मिलाकर ढेर बना लें। इसे गीले बोरे से ढककर 24–48 घंटे के लिए रख दें। इसके बाद बीज के अंकुरित होने से पहले बुवाई करें।

पौध उपचारः सब्जियों जैसे गोभी, मिर्च, टमाटर, बैगन इत्यादि के लिए पौध की रोपाई से पहले उसकी जड़ को जैव नियंत्रक के घोल (10 ग्राम/ली. पानी) में 30 मिनट तक डुबाकर उपचारित करते हैं।

मृदा उपचारः इसके लिए 1 कि.ग्रा. जैव नियंत्रक को 100 कि.ग्रा. सड़ी हुई गोबर/वर्मी कंपोस्ट की खाद में मिलाकर 1 एकड़ खेत में डाल देते हैं।

छिड़कावः दस ग्राम जैव नियंत्रक को 1 लीटर पानी के हिसाब से घोल बनाकर खड़ी फसल में छिड़काव करते हैं।

कंपोस्ट द्वाराः एक कुन्तल कंपोस्ट में एक कि.ग्रा. स्युडोमोनास या ट्राइकोडर्मा या इसका मिश्रित उत्पाद थोड़ा नम कर (30–40 प्रतिशत नमी) एक ढेर बना कर 3 सप्ताह के लिए छायादार जगह में छोड़ दें। नमी बनाए रखने के लिए बीच–बीच में पानी का छिड़काव करें।

वर्मी कंपोस्ट द्वाराः वर्मी कंपोस्ट के ढेर या गड्ढे के कार्बनिक मिश्रण में 1 कि.ग्रा. स्यूडोमोनास मिलाएं।

इससे कैचुओं की संख्या में बढ़ोतरी होती है तथा वर्मी कंपोस्ट की गुणवत्ता भी बढ़ती है।

7. जैविक खेती में प्रयुक्त किए जा सकने वाले रसायन

रसायन होने के बावजूद निम्नलिखित रसायनों का प्रयोग जैविक खेती के अंतर्गत कुछ प्रतिबंधों के साथ किया जा सकता है। जैसे तांबा (फिक्स्ड कॉपर), कॉपर हाइड्रोऑक्साइड, कॉपर ऑक्सीक्लोराइड, तूतिया (कॉपर सल्फेट), चूना, हाइड्रोजन पराक्साइड, चूना–गंधक (लाइम सल्फर), ट्री/हॉर्टिकल्चरल आयल, पोटेशियम बाईकार्बोनेट, तात्विक सल्फर। सल्फर और तांबा जैविक खेती में सबसे अधिक उपयोग की जाने वाली नियंत्रण सामग्री हैं। पौधों में विभिन्न प्रकार की बीमारियों के लिए धातु सल्फर का उपयोग किया जा सकता है। तांबे के उत्पादों का उपयोग इस तरह से किया जाना चाहिए कि मिट्टी में तांबे का संचय कम से कम हो। तांबे के जिन उत्पादों की अनुमति है उनमें कॉपर सल्फेट, कॉपर हाइड्रॉक्साइड, कॉपरऑक्साइड और कॉपर ऑक्सीक्लोराइड शामिल हैं। बोर्डो मिश्रण (हाइड्रेटेड चूने के साथ कॉपर सल्फेट), पोटेशियम फॉस्फाइट और पोटेशियम सिलिकेट चूना–सल्फर का उपयोग कार्बनिक खाद के रूप में किया जा सकता है। बोर्डो मिश्रण कॉपर सल्फेट, कैल्शियम हाइड्रॉक्साइड (बुझा हुआ चूना) और पानी का मिश्रण है जिसका उपयोग सेब, नाशपाती जैसे फलों पर जीवाणुनाशक और कवकनाशी दोनों के रूप में किया जा सकता है। बोर्डो मिश्रण एंजाइम फंक्शन को बाधित करके रोग जनक के विकास को रोकता है। यह एक निवारक उपाय के रूप में काम करता है और संक्रमण से पहले इसका उपयोग करना आवश्यक है। सल्फर केवल कवकनाशी है, लेकिन बोर्डो मिश्रण जीवाणुनाशक भी है, जिसका अर्थ है कि यह कवक (जैसे पाउडर युक्त फफूंदी, डाउनी फफूंदी और विभिन्न एन्थ्रेक्नोज रोग जनकों) और बैक्टीरिया (जैसे जीवाणु पत्ती के धब्बे) दोनों के कारण होने वाली बीमारी के लिए प्रभावी हो सकता है। पोटेशियम बाइकार्बोनेट (बेकिंग सोडा) एक संपर्क कवकनाशी है जो उपयोग के कुछ ही मिनटों के भीतर पौधों की सतहों पर जीवाणुओं तथा रोगजनक फफूंद को मार देता है। यह क्रिया के कई तरीकों से हासिल किया जाता है, जिसमें पत्ती की सतह का पीएच बदलना, कवक बीजाणु का निर्जलीकरण और पोटेशियम असंतुलन पैदा करना शामिल है। कार्रवाई के कई तरीकों के परिणामस्वरूप प्रतिरोधी रोगजनक उपभेदों के विकसित होने का जोखिम कम होता है। रोग नियंत्रण के लिए संकीर्ण–श्रेणी के तेलों की संस्तुति भी दी जाती है। अनुमत तेल पौधों और मछली स्त्रोतों से प्राप्त किया जा सकता है। पौधों का तेल मुख्य रूप से बीजों (जैसे, सोयाबीन, बिनौला, तिल और कैनोला) से प्राप्त होता है, जबकि मछली का तेल मछली प्रसंस्करण उद्योग का उप–उत्पाद है। स्वीकृत उत्पादों में कोई भी निषिद्ध निष्क्रिय घटक शामिल नहीं हो सकता है।

8. जैविक खेती में प्रतिबंधित जैव पदार्थ

जैविक होने के बावजूद कुछ पदार्थों का प्रयोग जैविक खेती में प्रबंधित है जिनका विवरण निम्नवत हैः

- जले हुए गोबर की राख
- आर्सेनिक
- कैल्शियम क्लोराइड
- शीशा लवण (लेड साल्ट)
- पोटेशियम क्लोराइड (प्राकृतिक स्त्रोत से प्राप्त को छोड़कर)
- सोडियम फ्लुएलुमिनेट
- सोडियम नाइट्रेट (फसल के कुल नाइट्रोजन आवश्यकता के 20 प्रतिशत से अधिक न हो)
- तंबाकू धूल (निकोटिन सल्फेट)

सम्पर्क सूत्र : 7500941100

☑

केन्द्रीय कीटनाशी बोर्ड द्वारा अनुमोदित खरपतवारनाशी (हर्बिसाइड), कीटनाशी (इन्सेक्टिसाइड) एवं फफूँदनाशी (फन्जिसाइड) रसायनों का उपयोग

डा. ए.के. पाण्डेय, प्राध्यापक, कीट विज्ञान विभाग, पंतनगर
डा. बिजेन्द्र कुमार, प्राध्यापक, पादप रोग विज्ञान विभाग, पंतनगर

समन्वित नाशीजीव प्रबंधन में विभिन्न कीटनाशी, फफूँदनाशी तथा खरपतवारनाशी रसायनों के चुनाव, प्रयोग विधि एवं प्रयोग के समय आदि की अहम भूमिका होती है। फसलोत्पादन में शायद ही ऐसी कोई हाानिकारक नाशीजीवों से सम्बन्धित अत्यन्त गंभीर समस्या हो, जिसका समाधान बिना इनके प्रयोग के सम्भव हो। जीवनाशी रसायनों के विषय में समुचित जानकारी के बिना प्रायोग करने पर अन्य जीवधारियों, वातावरण तथा मानवों पर भी बुरा प्रभाव पड़ने के साथ–साथ किसानों को भी आर्थिक क्षति होने की सम्भावना बनी रहती है। ऐसे में, किसी भी नाशीजीव रसायन के प्रयोग करते समय निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिएः

- जीवनाशी रसायनों का प्रयोग तभी करें, जब आवश्यक हो। अनावश्यक प्रयोग करने से खेतों में पाये जाने वाले मित्र कीट मर जाते हैं, जिसके कारण फसलों के अन्य कीटों का प्रकोप बढ़ने के साथ–साथ फसलोत्पादन की लागत भी बढ़ जाती है।
- जीवनाशी रसायनों का प्रयोग आवश्यक्तानुसार ही करें, कभी भी इन रसायनों का प्रयोग समयबद्ध तरीके से न करें।
- जीवनाशी रसायनों का प्रयोग करते वक्त उन्हीं जीवनाशी रसायनों का प्रयोग करें, जिनका प्रयोग करने पर खण्डन होने में कम अवधि लगती हो, अन्यथा इसका हानिकारक प्रभाव पड़ने की सम्भावना बनी रहती है।
- जीवनाशी रसायनों का प्रयोग करने से पहले डिब्बे तथा साथ में रखी पर्ची पर लिखित निर्देश पढ़ कर उसका पालन करें। कीटनाशी रसायन खरीदते वक्त डिब्बे पर लिखे एक्सपायरी डेट का ध्यान रखें।
- जीवनाशी रसायनों का प्रयोग उसी दर पर करना चाहिए जिस पर उनकी संस्तुति होती है। ज्यादा रसायन प्रयोग करने से वे पौधों पर हानिकारक प्रभाव डालने के साथ–साथ, ये पौधे से गिरकर मिट्टी में मिल जाते हैं और फिर जल स्त्रोतों तक पहुँचकर वातावरण को प्रदूषित करते हैं।
- जीवनाशी रसायनों का प्रयोग करते समय उचित उपकरणों का ही चुनाव करना चाहिए, क्योंकि गलत उपकरणों के प्रयोग से अधिकांश रसायन बेकार चला जाता है तथा नाशीजीव रसायनों का सही उपयोग नहीं हो पाता तथा प्रति हैक्टर लागत भी अधिक हो जाती है। खरपतवारनाशी रसायनों का प्रयोग करते समय फ्लैटफैन या इम्पैक्ट नॉजिल का प्रयोग करें।
- जब तेज हवा चल रही हो तो ऐसे में जीवनाशी रसायन का कभी भी प्रयोग नहीं करना चाहिए क्योंकि ऐसी अवस्था में इन रसायनों के अंश हवा में उड़कर हवा, जल और चारागाहों को प्रदूषित कर सकते हैं तथा नाशीजीव रसायनों का अपेक्षित परिणाम नहीं मिलेगा।

- नाशीजीव के छिड़काव के समय जब बर्षा होने की सम्भावना अधिक हो, तो जीवनाशी रसायनों का प्रयोग नहीं करना चाहिए।
- रसायनों का प्रयोग करते समय सुरक्षा के सभी उपायों का पालन करना चाहिए। कभी भी रसायनों को हाथ से स्पर्श नहीं करना चाहिए। इसके लिए रबर या प्लास्टिक के दस्तानें इस्तेमाल करने चाहिए।
- कीटनाशी रसायनों का प्रयोग करते समय बीड़ी, सिगरेट, मदिरा या अन्य भोज्य पदार्थों का सेवन नहीं करना चाहिए अन्यथा जीवन सम्बधी दुर्घटना होने की सम्भावना बढ़ जाती है।
- रसायनों का घोल कभी भी जल स्त्रोतों के पास नहीं बनाना चाहिए क्योंकि उससे जल प्रदूषित होने की सम्भावना होती है। रसायनों के घोल को मिलाने के लिए कभी भी सीधे तौर पर हाथ का प्रयोग नहीं करना चाहिए। इसके लिये किसी भी छड़ी का प्रयोग कर घोल को मिलाना चाहिए। बोतलों के ढ़क्कन को खोलने के लिए कभी भी मुँह का प्रयोग नहीं करना चाहिए तथा रसायनों के माप के समय सावधानी बरतनी चाहिए, ताकि रसायन शरीर के किसी अंग पर न गिरें।
- फसल पर छिड़काव के बाद कभी भी बचे हुए रसायन के घोल को जल स्त्रोत के पास नहीं गिराना चाहिए क्योंकि इससे प्रदूषित होने की सम्भावना होती है।
- जीवनाशी रसायनों के डिब्बों का प्रयोग कभी भी खाद्य पदार्थों के संग्रहण के लिए नहीं करना चाहिए, क्योंकि कुछ न कुछ रसायन उसमें बचे रहते हैं। इसके साथ ही डिब्बे में जहरीला प्रभाव लम्बे समय तक बना रहता है।
- जीवनाशी रसायनों के डिब्बों को अच्छी प्रकार तोड़कर नष्ट करना चाहिए, ताकि उसका कोई उपयोग न कर सके।
- कुछ रसायनों के डिब्बों को जलाते समय घातक धुआँ निकलता है, जिससे वातावरण प्रदूषित होने के साथ साथ इसका दुष्प्रभाव पड़ सकता है। अतः इससे बचने के लिए केवल उन्हीं डिब्बों को जलाना चाहिए, जिससे इसकी सम्भावना नहीं होती है।
- सुरक्षा एवं सुरक्षित उपयोग के विभिन्न उपाय, नाशीजीव की प्रयोग विधि एवं सावधानियों के विषय में डिब्बों पर निर्देश छपे होते हैं। रसायन का प्रयोग करने से पहले डिब्बों पर लिखे हुए निर्देशों को अच्छी तरह पढकर उन निर्देशों का पालन करना चाहिए।
- किसी भी फसल पर किसी जीवनाशी रसायन के प्रयोग के बाद उस फसल या उसके किसी भी भाग को खाने के लिए तुरन्त प्रयोग नहीं करना चाहिए। प्रत्येक जीवनाशी रसायन के लिए प्रत्येक खाद्य फसलों पर एक निश्चित् प्रतीक्षा अवधि (वेटिंग पीरियड) होती है जिसके उपरान्त ही पौधे के किसी भाग का प्रयोग खाने के लिए किया जा सकता है। ऐसा न करने पर अखण्डित रसायन खाद्य पदार्थ के साथ मनुष्य के शरीर में पहुँच घातक प्रभाव पैदा करता है।
- कीटनाशी रसायनों के प्रयोग के समय होने वाली किसी भी दुर्घटना के उपचार हेतु रोगी को अविलम्ब चिकित्सक के पास ले जाना चाहिए। चिकित्सक के पास जाते समय कीटनाशी रसायन के डब्बों को भी साथ में ले जाना चाहिए ताकि रसायन के अनुसार समुचित इलाज हो सके।
- खरपतवारनाशी रसायन फसलों के ऊपर भी अत्यन्त हानिकारक प्रभाव डाल सकते हैं, इसलिए

किसी फसल विशेष में किसी खरपतवार विशेष के लिए उसी खरपतवारनाशी का प्रयोग करना चाहिए, जिसकी संस्तुति केन्द्रीय कीटनाशी रसायन बोर्ड द्वारा की गयी है।

- खरपतवारनाशी रसायनों के छिड़काव करने के पहले यह पता कर लें कि इसका प्रयोग घास निकलने के पहले करना है या बाद में करना है। यदि बाद में करना है तो कितने दिनों बाद या फसल की कितनी पत्ती की अवस्था में करनी चाहिए।
- खरपतवारनाशी रसायनों का छिड़काव करते समय सालिडकोन नॉजिल या कट नाजिल या फ्लैटफैन नॉजिल का प्रयोग करें। कीटनाशी रसायनों के छिड़काव में प्रयुक्त होने वाले नॉजिल से खरपतवारनाशी का छिड़काव नहीं करना चाहिए।
- खरपतवारनाशी रसायनों का छिड़काव करते समय खेत में पर्याप्त नमी होनी चाहिए।
- खरपतवारनाशी रसायन के प्रयोग हेतु घोल बनाते समय प्रपत्र पर लिखित रसायन तथा पानी की मात्रा का प्रयोग करना चाहिए अन्यथा सान्द्र घोल का प्रयोग करने से फसल बुरी तरह प्रभावित हो सकती है।
- फसलों पर केवल उन्हीं जीवनाशी रसायनों का प्रयोग करना चाहिए जिसकी संस्तुति वैज्ञानिकों द्वारा की जाती है। प्रयोग करने के पहले सम्बन्धित कीटनाशी रसायन के बारे में पूरी जानकारी उसके साथ उपलब्ध प्रपत्र या डिब्बे से प्राप्त कर लेनी चाहिए।
- हानिकारक कीटों के लिए कीटनाशी, बीमारियों के लिए फफूँदनाशी तथा खरपतवारों के लिए खरपतवारनाशी रसायनों का प्रयोग करें तथा इनका क्रय करते समय जाँच लें कि रसायन सही है या नहीं।
- कीटनाशी रसायनों का क्रय करते समय ऐसे उत्पादों को प्राथमिकता देनी चाहिए, जिसके डिब्बे पर हरे एवं नीले रंग का तिकोना छपा हो क्योंकि ये पीले व लाल रंग वाले रसायनों की तुलना में अधिक प्रभावशाली तथा सुरक्षित होते हैं।
- वैज्ञानिकों, प्रसार, सहायकों, कृषि विभाग के अधिकारियों से भी यह अपेक्षा की गई है कि विभिन्न गोष्ठियों तथा कृषकों से सम्बन्धित किसी कार्यक्रम में उन्हीं रसायनों की संस्तुति करें जो केन्द्रीय कीटनाशी बोर्ड द्वारा अनुमोदित है।
- भारत सरकार के कृषि मंत्रालय के अनुदेशों के अनुसार फसलों को विभिन्न प्रकार के कीट, बीमारी या खरपतवार से बचाने के लिए केवल उसी रसायनों का प्रयोग करना चाहिए जिसकी संस्तुति केन्द्रीय कीटनाशी बोर्ड द्वारा दी गई हो। इस प्रकार के रसायनों की सूची अगले पृष्ठों में फसलवार संकलित की गई है। अन्य रसायनों का प्रयोग सर्वथा वर्जित है।

केन्द्रीय कीटनाशी बोर्ड द्वारा अनुमोदित खरपतवारनाशी (हर्बिसाइड), कीटनाशी (इन्सेक्टिसाइड) एवं फफूँदनाशी (फन्जिसाइड) रसायनों की संक्षिप्त सूची

फसल/हानिकारक जीव/जीवनाशी रसायन	मात्रा (ग्राम) सक्रिय तत्व/ हैक्टर	मात्रा (ग्राम/ मिली) रसायन /हैक्टर	प्रतिक्षा अवधि (दिन)
धान (Rice or Paddy) (न्यूनतम 500 लीटर पानी प्रति हैक्टर)			
हानिकारक रोग एवं खरपतवारनाशी रसायन (हर्बिसाइड)			
• जंगली पुदीना (Goat weed : *Ageratum conyzoides*) एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ी पत्ती, शाक			
पैराक्वैट डाइक्लोराइड 24 एसएल (बुवाई/रोपाई पूर्व खेत में खड़े खरपतवारों के लिए)	300–800	1250–3500	–
• शिखर मत्स्याक्षी (Alligator weed: *Alternanthera philoxeroides Alternanthera* spp.) बहुवर्षीय, जलीय शाक			
फ्लूसेटोसल्फ्यूरोन 10 डब्लूजी	25	250	90
एमसीपीए एमाइन साल्ट 40 डब्लूएससी	800–2000	2000–5000	–
बिसपायरीबैक सोडियम 10 एससी (सीधी बुवाई, बुवाई के 10–15 दिन बाद)	20–25	200–250	78
पेनोक्सुलम 0.97 + ब्यूटाक्लोर 38.8 एसई	820	2000	60
• गुद्रीसाग (Dwarf copperleaf : *Alternanthera sessillis*) बहुवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ी पत्ती, शाक			
प्रिटिलाक्लोर 30.0 + पाइराजोसल्फ्यूरोन इथाइल 0.75 डब्लूजी (सीधी बुवाई)	15+600	2000	113
बेनसल्फ्यूरोन मिथाइल 60 डीएफ (अंकुरण पूर्व धान की रोपाई के 3 दिन बाद)	60	100	88
बेनसल्फ्यूरोन मिथाइल 60 डीएफ (अंकुरण पष्चात् धान की रोपाई के 20 दिन बाद)	60	100	71
पेन्डिमेथालिन 30 ईसी (रोपित एवं सीधी बुवाई)	1000–1500	3300–5000	–
पेन्डिमेथालिन 5 जीआर (रोपित एवं सीधी बुवाई)	1000–1500	20000–30000	–
पेनोक्सुलम 0.97 + ब्यूटाक्लोर 38.8 एसई	820	2000	60
पेनोक्सुलम 1.02 + साइहैलोफॉप ब्यूटाइल 5.1 ओडी (सीधी बुवाई)	120–135	2000–2250	60
• बनमिर्च, जंगली मेंहदी (Acrid weed: *Ammania baccifera*) एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ी पत्ती, शाक			
इथोक्सीसल्फ्यूरोन 15 डब्लूडीजी	12.5–15.0	83.3–100	110
फ्लोरपाइरौक्सीफेन–बैनजिल 2.7 ईसी	25–31.25	1000–1250	73
फ्लूसेटोसल्फ्यूरोन 10 डब्लूजी	25	250	90
एमसीपीए एमाइन साल्ट 40 डब्लूएससी	800–2000	2000–5000	–
मेटसल्फ्यूरोन मिथाइल 20 डब्लूजी	4	20	71
अजिमसल्फ्यूरोन 50 डीएफ	35	70	59
अजिमसल्फ्यूरोन 50 डीएफ (सीधी बुवाई)	35	70	59
बेनसल्फ्यूरोन मिथाइल 60 डीएफ (अंकुरण पूर्व धान की रोपाई के 3 दिन बाद)	60	100	88
बेनसल्फ्यूरोन मिथाइल 60 डीएफ (अंकुरण पष्चात् धान की रोपाई के 20 दिन बाद)	60	100	71
• White Water Fire: *Bergia capensis:* एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ी पत्ती, शाक			
अजिमसल्फ्यूरोन 50 डीएफ	35	70	59
अजिमसल्फ्यूरोन 50 डीएफ (सीधी बुवाई)	35	70	59
• पैरा घास, भैंस घास (Para grass: *Brachiaria mutica*) बहुवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास			
प्रोपेनिल 80 डीएफ	2000–3000	2500–3750	84
पैराक्वैट डाइक्लोराइड 24 एसएल (बुवाई/रोपाई पूर्व खेत में खड़े खरपतवारों के लिए)	300–800	1250–3500	–
• केसुलिया (Pink node flower: *Caesulia axillaris*) एकवर्षीय, दोबीजपत्री, सकरी पत्ती, शाक			
मेटसल्फ्यूरोन मिथाइल 20 डब्लूजी	4	20	71
पेनोक्सुलम 2.67 ओडी	22500–25000	93700–140200	60
पेनोक्सुलम 1.02 + साइहैलोफॉप ब्यूटाइल 5.1 ओडी	120–135	2000–2250	60
• केना (Long Leaved Dayflower : *Commelina benghalensis*) बहुवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती शाक *Commelina* spp.			
ब्यूटाक्लोर 5 जीआर	1250–1870	25000–37500	90–105

क्लोरीम्यूरोन इथाइल 25 डब्लूपी + सर्फेक्टेंट (रोपाई के 5–10 दिन बाद)	6	24	60
मेटसल्फ्यूरोन मिथाइल 20 डब्लूजी	4	20	71
सिनमिथाइलिन 10 ईसी	75–100	750–1000	110
प्रोपेनिल 80 डीएफ	2000–3000	2500–3750	84
• एशियाई डेफ्लावर (Asiatic Dayflower : *Commelina communis*) एकवर्षीय,			
फ्लोरपाइरौक्सीफेन–बैनजिल 1.31 + पेनोक्सुलम 2.1 ओडी	15.63+25	1250	83
• स्प्रेडिंग डेफ्लावर (Spreading Dayflower : *Commelina diffusa*) एकवर्षीय,			
फ्लूसेटोसल्फ्यूरोन 10 डब्लूजी	25	250	90
• बथुआ (Bathua, Pigweed : *Chenopodium album*) एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक			
क्लोरीम्यूरोन इथाइल 25 डब्लूपी + सर्फेक्टेंट (रोपाई के 5–10 दिन बाद)	6	24	60
• दूब (Bermuda Grass : *Cynodon dactylon*) बहुवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास			
2,4–डी ईथाईल ईस्टर 4.5 जीआर	–	25000	–
बेनसल्फ्यूरोन मिथाइल 0.6 + प्रिटिलाक्लोर 6 जीआर	60+600	10000	88
बेनसल्फ्यूरोन मिथाइल 4.8 + प्रिटिलाक्लोर 48 ओडी	60+600	1250	102
• बागानुल्ला, काना (Creeping Cradle Plant: *Cyanotis axillaris*) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, शाक			
फ्लूसेटोसल्फ्यूरोन 10 डब्लूजी	25	250	90
• बागानुल्ला, काना (Creeping Cradle Plant: *Cyanotis cucullata*) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, शाक			
2,4–डी ईथाईल ईस्टर 4.5 जीआर	–	25000	–
• जल मोथा (Umbrella plant : *Cyperus difformis*) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, सेज			
• गल मोथा (Rice flat sedge : *Cyperus iria*) एकवर्षीय, बहुवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, सेज			
• छोटी/बड़ी सांई (Jungle Rice: *Echinochloa colonum*, *E. crusgali*) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती,घास			
• भ्रिंगंराज (False Daisy*: Eclipta alba*) एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक			
अनिलोफॉस 30 ईसी	300–450	1000–1500	30
ब्यूटाक्लोर 50 ईसी	1250–2000	2500–4000	90–120
प्रिटिलाक्लोर 6 + पाइराजोसल्फ्यूरोन इथाइल 0.15 जीआर	600	10000	83
फ्लूसेटोसल्फ्यूरोन 10 डब्लूजी	25	250	90
ओक्जाडायरगिल 80 डब्लूपी	100	125	97
ओक्जाडायजोन 25 ईसी	500	2000	–
ओक्सीफ्लूओरफेन 0.35 जीआर (रोपित व सीधी बुवाई)	100–150	30000–40000	–
अजिमसल्फ्यूरोन 50 डीएफ	35	70	59
अजिमसल्फ्यूरोन 50 डीएफ (सीधी बुवाई)	35	70	59
ब्यूटाक्लोर 5 जीआर	1250–1870	25000–37500	90–105
ब्यूटाक्लोर 50 ईडब्लू	1250–1500	2500–3000	–
2,4–डी ईथाईल ईस्टर 4.5 जीआर	–	25000	–
प्रिटिलाक्लोर 50 ईसी	500–750	1000–1500	75–90
बेनसल्फ्यूरोन मिथाइल 0.6 + प्रिटिलाक्लोर 6 जीआर	60+600	10000	88
क्लोमेजोन 20 + 2,4–डी ईथाईल ईस्टर 30 ईसी	250–375	1250	100–110
फ्लोरपाइरौक्सीफेन–बैनजिल 1.31 + पेनोक्सुलम 2.1 ओडी	15.63+25	1250	83
फ्लोरपाइरौक्सीफेन–बैनजिल 2.13 + साइहैलोफॉप ब्यूटाइल 10.64 ईसी (सीधी बुवाई)	150–180	1250–1500	92
पाइरिफटैलिड 31.0 + बेनसल्फ्यूरोन मिथाइल 15.7 एससी	175 (116+58.9)	375	99
• मोथा (Umbrella plant : *Cyperus rotundus*) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, सेज			
एमसीपीए एमाइन साल्ट 40 डब्लूएससी	800–2000	2000–5000	–
मेटसल्फ्यूरोन मिथाइल 20 डब्लूपी	4	20	60
बेन्टाजोन 480 एसएल (खरपतवारों की 2–3 पत्तियों की अवस्था में)	960	2000	71
कारफेन्ट्राजोन इथाइल 40 डीएफ	25	62.50	102

क्लोरीम्यूरोन इथाइल 25 डब्लूपी + सर्फेक्टेंट (रोपाई के 5–10 दिन बाद)	6	24	60
2,4–डी ईथाईल ईस्टर 4.5 जीआर	–	25000	–
प्रोपेनिल 80 डीएफ	2000–3000	2500–3750	84
पाइराजोसल्फ्यूरोन इथाइल 70 डब्लूडीजी	21	30	43
बेनसल्फ्यूरोन मिथाइल 0.6 + प्रिटिलाक्लोर 6 जीआर	60+600	10000	88
बिसपायरीबैक सोडियम 20 + पाइराजोसल्फ्यूरोन इथाइल 15 डब्लूडीजी	20+15	100	130
फ्लोरपाइरौक्सीफेन–बैनजिल 2.13 + साइहैलोफॉप ब्यूटाइल 10.64 ईसी	150	1250	67
पेनोक्सुलम 1.02 + साइहैलोफॉप ब्यूटाइल 5.1 ओडी (रोपित व सीधी बुवाई)	120–135	2000–2250	60
पाइरिफटैलिड 31.0 + बेनसल्फ्यूरोन मिथाइल 15.7 एससी	175 (116+58.9)	375	99
ट्राइफामोन 20 + इथेक्सीसल्फ्यूरोन मिथाइल 10 डब्लूजी (रोपित व सीधी बुवाई)	44+22.5	225	83
• मकड़ा (Four-finger grass : *Dactyloctenium aegypticum*) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास			
मेटामिफोफ 10 ईसी (सीधी बुवाई)	100	1000	87
• (Rushlike Dopatrium: *Dopatrium junceum*) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास			
मेटसल्फ्यूरोन मिथाइल 20 डब्लूजी	4	20	71
• कुन्द्रा (False Amaranth, Latmahuria : *Digera arvensis*) एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक			
कारफेन्ट्राजोन इथाइल 40 डीएफ	25	62.50	102
ट्राइफामोन 20 + इथेक्सीसल्फ्यूरोन मिथाइल 10 डब्लूजी (सीधी बुवाई)	44+22.5	225	83
• कुन्द्रा (Bamboo grass: *Digitaria* spp.) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास			
मैटसल्फ्युरान मिथाइल 20 डब्लूपी	6	30	346
मेटामिफोफ 10 ईसी (सीधी बुवाई)	100	1000	87
फ्लूसेटोसल्फ्यूरोन 10 डब्लूजी	25	250	90
ब्यूटाक्लोर 5 जीआर	1250–1870	25000–37500	90–105
प्रिटिलाक्लोर 37 ईडब्लू	600–750	1500–1875	90
प्रोपेनिल 80 डीएफ	2000–3000	2500–3750	84
• मान अलू, बारा सरपोत (Viper grass: *Dinebra retroflexa*) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास			
फ्लूसेटोसल्फ्यूरोन 10 डब्लूजी	25	250	90
• बनमडुआ, कोदई (Indian goosegrass : *Eleusine indica*) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास			
ब्यूटाक्लोर 50 ईसी	1250–2000	2500–4000	90–120
ब्यूटाक्लोर 5 जीआर	1250–1870	25000–37500	90–105
पेनोक्सुलम 1.02 + साइहैलोफॉप ब्यूटाइल 5.1 ओडी (सीधी बुवाई)	120–135	2000–2250	60
प्रिटिलाक्लोर 30.0 + पाइराजोसल्फ्यूरोन इथाइल 0.75 डब्लूजी (सीधी बुवाई)	15+600	2000	113
• भ्रिंगंराज (False Daisy*: Eclipta prostrate*) एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक			
फ्लूसेटोसल्फ्यूरोन 10 डब्लूजी	25	250	90
• हरकुच, हरूच, मत्स्याक्षी (Buffalo spinach*: Enhydra fluctuans*) बहुवर्षीय, दोबीजपत्री, सकरी पत्ती, शाक			
बेनसल्फ्यूरोन मिथाइल 0.6 + प्रिटिलाक्लोर 6 जीआर	60+600	10000	88
• झिरूवा (Fimbry : *Fimbristylis* spp.) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, सेज			
अनिलोफॉस 30 ईसी	300–450	1000–1500	30
अनिलोफॉस 18 ईसी	300–450	1660–2500	–
ब्यूटाक्लोर 50 ईसी	1250–2000	2500–4000	90–120
ओरथोसल्फाम्यूरोन 50 डब्लूजी	60–75	150	65
प्रिटिलाक्लोर 6 + पाइराजोसल्फ्यूरोन इथाइल 0.15 जीआर	600	10000	83
प्रिटिलाक्लोर 30.0 + पाइराजोसल्फ्यूरोन इथाइल 0.75 डब्लूजी (सीधी बुवाई)	15+600	2000	113
इथोक्सीसल्फ्यूरोन 15 डब्लूडीजी	12.5–15.0	83.3–100	110
फ्लूसेटोसल्फ्यूरोन 10 डब्लूजी	25	250	90
मेटसल्फ्यूरोन मिथाइल 20 डब्लूपी	4	20	60

ओक्सीफ्लूओरफेन 0.35 जीआर (रोपित व सीधी बुवाई)	100–150	30000–40000	–
• **(Kangkong, Water Convolvulus, Water Glorybind, Water Spinach: *Impmoea reptans*) बहुवर्षीय, सकरी पत्ती, शाक**			
एमसीपीए एमाइन साल्ट 40 डब्लूएससी	800–2000	2000–5000	–
• **मरोंडा, मुर्ची (Muraina grass, Wrinkle grass : *Ischaemum rugosum*) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास**			
अनिलोफॉस 30 ईसी	300–450	1000–1500	30
अनिलोफॉस 18 ईसी	300–450	1660–2500	–
बिसपायरीबैक सोडियम 10 एससी (रोपित धान में रोपाई के 10–14 दिन बाद)	20–25	200–250	78
• **दलदली चमेली (Water primrose: *Ludwigia adscendens*) एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक**			
मेटसल्फ्यूरोन मिथाइल 20 डब्लूजी	4	20	71
बेन्टाजोन 480 एसएल (खरपतवारों की 2–3 पत्तियों की अवस्था में)	960	2000	71
पाइरिफटैलिड 31.0 + बेनसल्फ्यूरोन मिथाइल 15.7 एससी	175 (116+58.9)	375	99
• **बनलौंग (False primrose: *Ludwigia parviflora*) एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक**			
ब्यूटाक्लोर 50 ईसी	1250–2000	2500–4000	90–120
ओरथोसल्फाम्यूरोन 50 डब्लूजी	60–75	150	65
ओक्जाडायरगिल 1 + प्रिटिलाक्लोर 6 जीआर	100+600	10000	85
प्रिटिलाक्लोर 6 + पाइराजोसल्फ्यूरोन इथाइल 0.15 जीआर	600	10000	83
फ्लूसेटोसल्फ्यूरोन 10 डब्लूजी	25	250	90
एमसीपीए एमाइन साल्ट 40 डब्लूएससी	800–2000	2000–5000	–
मेटसल्फ्यूरोन मिथाइल 20 डब्लूपी	4	20	60
मेटसल्फ्यूरोन मिथाइल 20 डब्लूजी	4	20	71
• **भू ओकरा, जल बूटी, जल पिप्पली (Frog fruit, wild long pepper: *Lippia nodiflora*) बहुबर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक**			
एमसीपीए एमाइन साल्ट 40 डब्लूएससी	800–2000	2000–5000	–
• **चौपतिया (Four Leaf Clover: *Marsilea quadrifoliata*) एकवर्षीय,दोबीजपत्री,चौड़ीपत्ती,शाक**			
अनिलोफॉस 30 ईसी	300–450	1000–1500	30
ओक्जाडायरगिल 1 + प्रिटिलाक्लोर 6 जीआर	100+600	10000	85
इथोक्सीसल्फ्यूरोन 15 डब्लूडीजी	12.5–15.0	83.3–100	110
फ्लूसेटोसल्फ्यूरोन 10 डब्लूजी	25	250	90
एमसीपीए एमाइन साल्ट 40 डब्लूएससी	800–2000	2000–5000	–
मेटसल्फ्यूरोन मिथाइल 20 डब्लूपी	4	20	60
मेटसल्फ्यूरोन मिथाइल 20 डब्लूजी	4	20	71
• **नन्का, इन्दिवर (Oval Leaf Pondweed: Monochoria vaginalis) एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, जलिय**			
प्रिटिलाक्लोर 6 + पाइराजोसल्फ्यूरोन इथाइल 0.15 जीआर	600	10000	83
फ्लूसेटोसल्फ्यूरोन 10 डब्लूजी	25	250	90
मेटसल्फ्यूरोन मिथाइल 20 डब्लूजी	4	20	71
बेनसल्फ्यूरोन मिथाइल 60 डीएफ (अंकुरण पूर्व धान की रोपाई के 3 दिन बाद)	60	100	88
बेनसल्फ्यूरोन मिथाइल 60 डीएफ (अंकुरण पश्चात् धान की रोपाई के 20 दिन बाद)	60	100	71
बिसपायरीबैक सोडियम 10 एससी (सीधी बुवाई, बुवाई के 10–15 दिन बाद)	20–25	200–250	78
ब्यूटाक्लोर 50 ईडब्लू	1250–1500	2500–3000	–
सिनमिथाइलिन 10 ईसी	75–100	750–1000	110
2,4–डी ईथाईल ईस्टर 4.5 जीआर	–	25000	–
• **इंडियन टूथकप (*Rotala* spp.)**			
ओरथोसल्फाम्यूरोन 50 डब्लूजी	60–75	150	65
• **मिर्चबूटी (Gooseweed *: Sphenoclea zeylanica*) एकवर्षीय,दोबीजपत्री,चौड़ीपत्ती,शाक**			
ब्यूटाक्लोर 50 ईसी	1250–2000	2500–4000	90–120
फ्लूसेटोसल्फ्यूरोन 10 डब्लूजी	25	250	90

मेटसल्फ्यूरोन मिथाइल 20 डब्लूजी	4	20	71
अजिमसल्फ्यूरोन 50 डीएफ	35	70	59
अजिमसल्फ्यूरोन 50 डीएफ (सीधी बुवाई)	35	70	59
बेनसल्फ्यूरोन मिथाइल 60 डीएफ (अंकुरण पूर्व धान की रोपाई के 3 दिन बाद)	60	100	88
बेनसल्फ्यूरोन मिथाइल 60 डीएफ (अंकुरण पश्चात् धान की रोपाई के 20 दिन बाद)	60	100	71
• मुचमुच (Deergrass: *Scirpus* spp.) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, सेज			
ओरथोसल्फाम्यूरोन 50 डब्लूजी	60–75	150	65
इथोक्सीसल्फ्यूरोन 15 डब्लूडीजी	12.5–15.0	83.3–100	110
बेनसल्फ्यूरोन मिथाइल 60 डीएफ (अंकुरण पूर्व धान की रोपाई के 3 दिन बाद)	60	100	88
बेनसल्फ्यूरोन मिथाइल 60 डीएफ (अंकुरण पश्चात् धान की रोपाई के 20 दिन बाद)	60	100	71
हानिकारक रोग एवं फफूँदनाशी रसायन (फन्जिसाइड)			
• खैरा रोग (जस्ते की कमी के कारण) (Khaira : Due to Zinc deficiency)			
जिंक सल्फेट (खेत तैयार करते समय मिट्टी मे डाले)	25000	–	–
• पर्णच्छद विगलन (Sheath Rot : *Sarocladium oryzae*)			
हैक्जाकोनाजोल 0.5 जीआर	50	10000	38
हैक्जाकोनाजोल 75 डब्लूजी	50	66.7	30
थायोफनेटमिथाइल 41.7 एससी	500	1000	37
फ्लूबैन्डामाइड 3.5 + हेक्जाकोनाजोल 0.5 डब्लूजी	35+50	1000	30
• पर्णच्छद अंगमारी (Sheath Blight : *Rhizoctonia solani*)			
कार्बेन्डाजिम 50 डब्लूपी (बीज षोधन/कि0ग्रा0)	1	2	–
डाइफेनोकोनाजोल 25 ईसी	20	75	14
फ्लूसिलाजोल 40 ई.सी.	120	300	24
हैक्जाकोनाजोल 0.5 जीआर	50	10000	38
हैक्जाकोनाजोल 5 ईसी	50	1000	40
हैक्जाकोनाजोल 5 एससी	50	1000	40
हैक्जाकोनाजोल 75 डब्लूजी	50	66.7	30
आइप्रोडियोन 50 डब्लूपी	1125	2250	35
• झोंका या प्रध्वंस रोग (Rice Blast : Magnaporthe grisea)			
ओरियोफन्जीन 46.15 एसपी	–	0.005 प्रतिशत	30
कार्प्रोपामिड 27.8 एससी	0.03 प्रतिशत	0.1 प्रतिशत	–
एडिफेनफास 50 ईसी	250–300	500–600	21
हेक्साकोनाजोल 5 एससी	50	1000	40
आइसोप्रोथायोलेन 40 ईसी	300	750	60
कासूगामाइसिन 3 एसएल	30–50	1000–1500	30
किटाजिन 17 जीआर	500	3000	15
किटाजिन 48 ईसी	500	1000	15
क्रेसोक्जिम–मिथाईल 44.3 एससी	250	500	30
मैंकोजेब 75 डब्लूपी	1125–1500	1500–2000	–
मेटिराम 70 डब्लूजी	1050–1400	1500–2000	51
• जीवाणु झुलसा या जीवाणुज पर्ण अंगमारी (Bacterial Leaf Blight :*Xanthomonas oryzae* pv. *oryzae*)			
कॉपर हाइड्रोक्साइड 53.8 डीएफ	525	1500	10
कॉपर सल्फेट पैंटाहाइड्रेट 6 एससी	60	1000	21
• भूरा पर्ण चित्ती रोग (Brown Leaf Spot :*Cochiobolus miyabianus*)			
ओरियोफन्जीन 46.15 एसपी	–	0.005 प्रतिशत	30
कार्बेन्डाजिम 5 जीआर	620	1250	–

एडिफेनफास 50 ईसी	250–300	500–600	21
मेटिराम 70 डब्लूजी	1050–1400	1500–2000	51
प्रोपिनेब 70 डब्लूपी	1050–1400	1500–2000	–
अजोक्सीस्ट्रोबिन 16.7 + ट्राइसाइक्लाजोल 33.30 एससी	83.5+166.5	500	24
• आभासी कंड (False Smut : *Ustilaginoidea virens*)			
कॉपर हाइड्रोक्साइड 53.8 डीएफ	525	1500	10
कॉपर हाइड्राक्साइड 77डब्लूपी	1000	2000	–
फ्लूपायरम 17.7 + टेबुकोनाजोल 17.7 एससी	110+110	550	22
पिकोक्सीस्ट्रोबिन 7.05 + प्रापिकोनाजोल 11.7 एससी	200	1000	24
• गंदी बाली (Dirty panicle or Glume discoloration:*Curvularia lunata* etc.)			
थायोफनेटमिथाइल 41.7 एससी	500	1000	37
हैक्जाकोनाजोल 4 + जिनेब 68 डब्लूपी	720–900	1000–1250	34
प्राक्लोराज 34.8 + प्रापिकोनाजोल 7.8 ईसी	400+90	1000	15
ट्राइसाइक्लाजोल 18.0 + टेबुकोनाजोल 14.4 एससी	360 (200+160)	1000	44
फ्लूपायरम 17.7 + टेबुकोनाजोल 17.7 एससी	110+110	550	22
पिकोक्सीस्ट्रोबिन 7.05 + प्रापिकोनाजोल 11.7 एससी	200	1000	24
प्रोपिकोनाजोल 13.9 + डाइफेनोकोनाजोल 13.9 ईसी	10 से 15	35 से 50	46
टेबुकोनाजोल 50 + ट्राइफ्लोक्सीस्ट्रोबिन 25 डब्लूजी	100+50	200	21
टेबुकोनाजोल 15 + जिनेब 57 डब्लूडीजी	187.5+712.5	1250	21
ट्राइसाइक्लाजोल 20.4 + अजोक्सीस्ट्रोबिन 6.8 एससी	300 (225+75)	1000	10
हानिकारक कीट एवं कीटनाशी रसायन (इन्सेक्टिसाइड)			
• पीला तना वेधक (Yellow Stem Borer : *Scirpophaga incertulas*)			
एसिफेट 75 एसपी	500 – 750	666 – 100	15
कार्बोफ्युरॉन 3 सीजी	750	25000	
कार्टप हाइड्रोक्लोराइड 4 जी	750.0	18750	
कार्टप हाइड्रोक्लोराइड 50 एसपी	500	1000	
कार्टप हाइड्रोक्लोराइड 75 एसजी	318.75 – 375	425 – 500	35–89
क्लोरेन्ट्रानिलिप्रोल 18.5 एसजी	30	150	47
क्लोरेन्ट्रानिलिप्रोल 0.4 जीआर	40	10000	53
क्लोरपायरीफॉस 1.5 डीपी	375	25000	7
क्रोमाफेनोजाइड 80 डब्लूपी	75.100	94.125	32
डेल्टामेथ्रिन 1.8 ईसी	10 – 12.50	625 – 780	7
इथोफेनोप्रोक्स 10 ईसी	50 – 75	500 – 750	15
• धान पत्ती मरोडक (Rice Leaf Folder : *Cnaphalocrosis medinalis*)			
क्लोरपाइरिफॉस 20 ईसी	375.400	750.800	15
कार्बोसल्फॉन 06 जी	1000	16700	37
कार्बोसल्फॉन 25 ईसी	200.–250	800–1000	14
क्लोरपाइरिफॉस 10 जी	1000	10000	30
क्लोरपाइरिफॉस 20 ईसी	375	1875	कृ
डेल्टामेथ्रिन 11 ईसी	15	150	13
इमामेक्टिन बेन्जोएट 1.9 इसी	8.08	425	48
फेनप्रोपेथ्रिन 30 ईसी	100	333	30
• पत्ती का हरा फूदका (Green leaf hopper : *Nephotettix* spp-)			
एसिफेट 75 एसपी	500 – 750	666 – 100	15
एसिफेट 97 डीएफ	727.50	750	21

बुप्रोफेजिन 25 ईसी	200	800	20
कार्बोफ्युरॉन 3 सीजी	750	25000	
क्लोरपाइरिफॉस 1.5 डीपी	375	25000	7
इथोफेनप्राक्स 10 इसी	50 – 75	500 – 750	15
फेनोबुकार्ब 50 ईसी	250 – 750	500 – 1500	30
फिप्रोनिल 5 एसी	50 – 75	1000 – 1500	32
• भूरा फुदका (Brown Plant Hopper :*Nilaparvata lugens*)			
एसिफेट 95 एसजी	562.50	592	30
एसीटाम्प्रिड 20 एसपी	10 – 20	50 – 100	7
बुप्रोफेजिन 25 एससी	200	800	20
बेंजिपाइरिमोक्जान 10 ईसी	75–100	750–1000	31
बुप्रोफेजिन 70डीएफ	175	250	24
कार्बोफ्युरॉन 3 सीजी	750	25000	
क्लोरपाइरिफॉस 1.5 डीपी	375	25000	7
क्लोथियानिडिन 0.5 जीआर	10 – 12	20 – 24	12
डाइनाइटोफ्युरॉन 20एसजी	30 – 40	150 – 200	21
फिप्रोनिल 5एससी	50 – 75	1000 –1500	32
• सफेद पीठ वाला फुदका (White Backed Plant Hopper : *Sogatella furcifera*)			
बुप्रोफेजिन 25 एससी	200	800	20
फिप्रोनिल 5 एससी	50 – 75	1000 –1500	32
फिप्रोनिल 0.3जीआर	50 – 75	16670 –25000	32
फ्लोनिकेमिड 50 डब्लूजी	75	150	36
इमिडाक्लोप्रिड 17.1 एसएल	60	300	39
डाइनाइट्रोफ्युरान 5. इथियॉन 50 ईसी	50 500	1000	33
डाइनाइट्रोफ्युरान 15 + पाइमेट्रोजिन 40 डब्लुजी 45 डब्लू जी	200	333	24
सल्फाक्साफ्लोर 21.8 एससी	90	375	14
कार्बोसल्फॉन 25 ईसी	200–250	800.1000	14
इमिडाक्लोप्रिड 17.5 एसएल	20–25	100–125	40
मोनोक्रोटोफॉस 36 एसएल	500	1250	–
थायमेथाक्जाम 25 डब्लूजी	25	100	14
• थ्रिप्स (Thrips)			
इमिडाक्लोप्रिड 48 एफएस	0.15	0.25	
लेम्डा–साइहैलोथ्रिन 2.5 ईसी	12.50	500	15
लेम्डा–साइहैलोथ्रिन 5 ईसी	12.5	250	15
थायमेथाक्जाम 70 डब्लूएस(बुआई के समय सीड डेसर)	105	150	
थायमेथाक्जाम 25 डब्लूजी	25	100	14
• पत्ती का हरा फूदका (Green leaf hopper : *Nephotettix* spp-)			
क्लोरपाइरिफॉस 20 ईसी	250	1250	15
क्वीनालफॉस 25 जेल	250	1000	
इमामेक्टिन बेन्जोएट 1.9 इसी	8.08	425	48
लेम्डा–साइहैलोथ्रिन 5 ईसी	12.5	250	15
मैलाथियॉन 5 डीपी	1250	25000	.
मैलाथियॉन 50 ईसी	575	1150	–
क्वीनालफॉस 25 इसी	500	2000	40.
इमिडाक्लोप्रिड 18.5+ लेम्डा–साइहैलोथ्रिन 4 एसएल	18 12	300	10

• **होर्लमेगट (Whorl Maggot : *Hydrellia philippina*)**			
क्लोरपाइरिफॉस 20 ईसी	250	1250	15
इथोफेनोप्राक्स 10ईसी	50 – 75	500 – 750	15
फिप्रोनिल 5एससी	50 – 75	1000 –1500	
फिप्रोनिल 0.3 जीआर	50 – 75	16670 –25000	32
आइसोप्रोथियोलन 28+ फिप्रोनिल 5 ईसी	280+50	1000	58
क्लोरपाइरिफॉस 20 ईसी	250	1250	.
डेल्टामेथ्रिन 11 ईसी	15	150	13
• **गाल मिज (Gall midge : *Pachydiplosis oryzae*)**			
क्लोरपाइरिफॉस 1.5 डीपी	375	25000	7
कार्बोफ्युरॉन 3सीजी	750	25000	
इथोफेनोप्राक्स 10ईसी	50 – 75	500 – 750	15
फिप्रोनिल 0.30 जीआर	50 – 75	16670 –25000	32
लेम्डा–साइहैलोथ्रिन 2.50 ईसी	12.50	500	15
कार्बोसल्फॉन 06 जी	1000	16700	37
कार्बोसल्फॉन 25 ईसी	200–250	800–1000	14
क्लोरपाइरिफॉस 20 ईसी	250	1250	.
लेम्डा–साइहैलोथ्रिन 5 ईसी	12.5	250	15
क्वीनालफॉस 5 जी	250	5000	.
थियामेथाक्जाम 25 डब्लूजी	25	100	14
• **गन्धी कीट (Rice Bug :*Leptocorysa acuta*)**			
डाइनाइट्रोफ्युरान 15 + पाइमेटोजिन 45 डब्लू जी	200	333	24
इमिडाक्लोप्रिड 18.5 + लेम्डा–साइहैलोथ्रिन 4 एसएल	18 12	300	10
• **धान का टिड्डा (Paddy Grasshopper)**			
क्लोरपाइरिफॉस 1.5 डीपी	375	25000	7
• **तना मक्खी (Stem Fly)**			
इन्डोक्साकार्ब 15.8 ईसी	30	200	14
• **हरा अर्धकुन्डलक (Green Semilooper : *Plusia orichalcea*)**			
इन्डोक्साकार्ब 15.8 ईसी	30	200	14
• **केस वर्म (Case worm)**			
फेन्थोएट 50 ईसी	500	1000	–
• **नेमाटोड**			
कार्बोफ्युरॉन 3 सीजी	1500	50000	
गेहूँ (Wheat) एवं जौ (Barley) (न्यूनतम 500 लीटर पानी प्रति हैक्टर)			
हानिकारक खरपतवार एवं खरपतवारनाशी रसायन (हर्बिसाइड)			
• **जंगली चौलाई (Green Amaranth:Amaranthus viridis, A. spinosus) एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ी पत्ती,शाक**			
2,4 डी सोडियम साल्ट टेक्निकल (2,4 डी एसिड 80 पूर्व में 80 डब्लूपी के रूप में पंजीकृत)	500–840	625–1000	90
• **बथुआ (Bathua, Pigweed : Chenopodium album) एकवर्षीय,दोबीजपत्री,चौड़ीपत्ती,शाक**			
कारफेन्ट्राजोन इथाइल 40 डीएफ (बुवाई के 25–35 दिन बाद)	20	50	80
2,4 डी डाईमिथाइल एमिन साल्ट 58 एसएल	500–750	860–1290	–
2,4 डी सोडियम साल्ट टेक्निकल (2,4 डी एसिड 80 पूर्व में 80 डब्लूपी के रूप में पंजीकृत)	500–840	625–1000	90
फ्लूमिओक्साजिन 50 एससी	125	250	137
एमसीपीए एमाइन साल्ट 40 डब्लूएससी	1000	2500	–
मिथाबेन्जथियाजूरॉन 70 डब्लूपी (अंकुरण पष्चात – बुवाई के 30 दिन बाद)	1050–1750	2000–2500	100
मिथाबेन्जथियाजूरॉन 70 डब्लूपी (अंकुरण षीघ्र पष्चात – बुवाई के 16–18 दिन बाद)	700–870	1000–1250	100

मैटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 20 डब्लूपी	4	20	80
मैटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 20 डब्लूजी	4	20	76
सल्फोसल्फ्यूरॉन 75 डब्लूजी	25	33.3	110
ट्रिआसल्फ्यूरॉन 20 डब्लूजी	20	100	81
कारफेन्ट्राजोन इथाइल 20 + सल्फोसल्फ्यूरॉन 25 डब्लूजी	20+25	100	110
• सफेद सेंजी, सफेद बन मेंथी (White Sweet Clover: Melilotus alba) एक–दोवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक			
कारफेन्ट्राजोन इथाइल 40 डीएफ (बुवाई के 25–35 दिन बाद)	20	50	80
2,4 डी डाईमिथाइल एमिन साल्ट 58 एसएल	500–750	860–1290	–
मैटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 20 डब्लूजी	4	20	76
सल्फोसल्फ्यूरॉन 75 डब्लूजी	25	33.3	110
ट्रिआसल्फ्यूरॉन 20 डब्लूजी	20	100	81
कारफेन्ट्राजोन इथाइल 20 + सल्फोसल्फ्यूरॉन 25 डब्लूजी	20+25	100	110
मैटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 10 + कारफेन्ट्राजोन इथाइल 40 डीएफ	25	50	100
• पीली सेंजी (Yellow sweetclover: Melilotus indica) एक–दोवर्षीय,दोबीजपत्री,चौड़ीपत्ती,शाक			
कारफेन्ट्राजोन इथाइल 40 डीएफ (बुवाई के 25–35 दिन बाद)	20	50	80
एमसीपीए एमाइन साल्ट 40 डब्लूएससी	1000	2500	–
मैटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 20 डब्लूपी	4	20	80
मैटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 20 डब्लूजी	4	20	76
मेट्रीब्यूजिन 42 + क्लोडिनोफॉप प्रोपारगिल 12 डब्लूजी	210+60	500	92
मैटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 10 + कारफेन्ट्राजोन इथाइल 40 डीएफ	25	50	100
• सेंजी (Clover: Melilotus spp.) एक–दोवर्षीय,दोबीजपत्री,चौड़ीपत्ती,शाक			
क्लोडिनोफॉप प्रोपारगिल 15 + मैटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 1 डब्लूपी	60+4	400	100
क्लोडिनोफॉप प्रोपारगिल 9 + मैट्रीब्यूजिन 20 डब्लूपी	54+120	600	120
फेनोक्साप्राप पी ईथाइल 7.77 + मैट्रीब्यूजिन 13.6 ईसी	100+175	1250	110
मैटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 3 + आइडोसल्फ्यूरॉन मिथाइल सोडियम 0.6 डब्लूजी	12+2.4	400	96
• मियाना या चन्दौसी (Bur Clover: Medicago denticulata) बहुवर्षीय, दोबीजपत्री,चौड़ीपत्ती,शाक			
कारफेन्ट्राजोन इथाइल 40 डीएफ (बुवाई के 25–35 दिन बाद)	20	50	80
फ्लूमिओक्साजिन 50 एससी	125	250	137
एमसीपीए एमाइन साल्ट 40 डब्लूएससी	1000	2500	–
मैटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 20 डब्लूजी	4	20	76
ट्रिआसल्फ्यूरॉन 20 डब्लूजी	20	100	81
क्लोडिनोफॉप प्रोपारगिल 9 + मैट्रीब्यूजिन 20 डब्लूपी	54+120	600	120
मेट्रीब्यूजिन 42 + क्लोडिनोफॉप प्रोपारगिल 12 डब्लूजी	210+60	500	92
मैटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 10 + कारफेन्ट्राजोन इथाइल 40 डीएफ	25	50	100
सल्फोसल्फ्यूरॉन 75 + मैटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 5 डब्लूजी	30+2	40	110
• ब्लैक मेडिक, नोनसच या हॉप क्लोवर (Black medic, Hop Clover: Medicago lupulina) एकवर्षीय या अल्पआयु बहुवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक			
एमसीपीए एमाइन साल्ट 40 डब्लूएससी	1000	2500	–
• चटरी मटरी, बन मटर, जंगली मटर (Grass Pea : Lathyrus aphaca) **एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक**			
कारफेन्ट्राजोन इथाइल 40 डीएफ (बुवाई के 25–35 दिन बाद)	20	50	80
एमसीपीए एमाइन साल्ट 40 डब्लूएससी	1000	2500	–
मैटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 20 डब्लूपी	4	20	80
क्लोडिनोफॉप प्रोपारगिल 15 + मैटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 1 डब्लूपी	60+4	400	100
फेनोक्साप्राप पी ईथाइल 7.77 + मैट्रीब्यूजिन 13.6 ईसी	100+175	1250	110
मैटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 3 + आइडोसल्फ्यूरॉन मिथाइल सोडियम 0.6 डब्लूजी	12+2.4	400	96
मैटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 10 + कारफेन्ट्राजोन इथाइल 40 डीएफ	25	50	100

• **नूरी (Annual beard grass: Polypogom monspliensis) एकवर्षीय,एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास**			
मिथाबेन्जथियाजूरॉन 70 डब्लूपी (अंकुरण पष्चात – बुवाई के 30 दिन बाद)	1050–1750	2000–2500	100
• **कृष्णनील (Red chickweed : Anagalis arvensis) एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ी पत्ती, शाक**			
कारफेन्ट्राजोन इथाइल 40 डीएफ (बुवाई के 25–35 दिन बाद)	20	50	80
2,4 डी सोडियम साल्ट टेक्निकल (2,4 डी एसिड 80 पूर्व में 80 डब्लूपी के रूप में पंजीकृत)	500–840	625–1000	90
मिथाबेन्जथियाजूरॉन 70 डब्लूपी (अंकुरण पष्चात – बुवाई के 30 दिन बाद)	1050–1750	2000–2500	100
मैटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 20 डब्लूपी	4	20	80
मैटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 20 डब्लूजी	4	20	76
ट्रिआसल्फ्यूरॉन 20 डब्लूजी	20	100	81
क्लोडिनोफॉप प्रोपारगिल 15 + मैटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 1 डब्लूपी	60+4	400	100
मैटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 3 + आइडोसल्फ्यूरॉन मिथाइल सोडियम 0.6 डब्लूजी	12+2.4	400	96
• **अकरी (Common vetch: Vicia sativa) एकवर्षीय,दोबीजपत्री,चौड़ीपत्ती,शाक**			
कारफेन्ट्राजोन इथाइल 40 डीएफ (बुवाई के 25–35 दिन बाद)	20	50	80
2,4 डी सोडियम साल्ट टेक्निकल (2,4 डी एसिड 80 पूर्व में 80 डब्लूपी के रूप में पंजीकृत)	500–840	625–1000	90
मैटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 20 डब्लूपी	4	20	80
मैटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 20 डब्लूजी	4	20	76
क्लोडिनोफॉप प्रोपारगिल 15 + मैटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 1 डब्लूपी	60+4	400	100
क्लोडिनोफॉप प्रोपारगिल 9 + मैट्रीब्यूजिन 20 डब्लूपी	54+120	600	120
मैटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 10 + कारफेन्ट्राजोन इथाइल 40 डीएफ	25	50	100
• **कटीली (Creeping Thistle : Cirsium arvense) बहुवर्षीय,दोबीजपत्री,चौड़ीपत्ती,शाक**			
कारफेन्ट्राजोन इथाइल 40 डीएफ (बुवाई के 25–35 दिन बाद)	20	50	80
2,4 डी डाईमिथाइल एमिन साल्ट 58 एसएल	500–750	860–1290	–
मैटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 20 डब्लूपी	4	20	80
• **जंगली पालक, बन पालक (Toothed Dock: Rumex spp.) एक–बहुवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती,शाक**			
कारफेन्ट्राजोन इथाइल 40 डीएफ (बुवाई के 25–35 दिन बाद)	20	50	80
मैटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 20 डब्लूजी	4	20	76
ट्रिआसल्फ्यूरॉन 20 डब्लूजी	20	100	81
कारफेन्ट्राजोन इथाइल 20 + सल्फोसल्फ्यूरॉन 25 डब्लूजी	20+25	100	110
क्लोडिनोफॉप प्रोपारगिल 15 + मैटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 1 डब्लूपी	60+4	400	100
क्लोडिनोफॉप प्रोपारगिल 9 + मैट्रीब्यूजिन 20 डब्लूपी	54+120	600	120
फेनोक्साप्राप पी ईथाइल 7.77 + मैट्रीब्यूजिन 13.6 ईसी	100+175	1250	110
हैलोक्सीफेन मिथाइल 20.8 + फ्लोरासुलम 20 डब्लूजी (पोलीग्लाइकॉल सरफैक्टम के साथ)	12.76	31.23	71
मैटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 3 + आइडोसल्फ्यूरॉन मिथाइल सोडियम 0.6 डब्लूजी	12+2.4	400	96
• **जंगली भिण्डी,सोनचाला** (Common mallow, Cheeseweed: Malwa sp.) **एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती,शाक**			
कारफेन्ट्राजोन इथाइल 40 डीएफ (बुवाई के 25–35 दिन बाद)	20	50	80
मैटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 10 + कारफेन्ट्राजोन इथाइल 40 डीएफ	25	50	100
• **गुल्ली डंडा, गेहूँसा** (Dwarf Canary Grass: Phalaris minor) **एकवर्षीय,एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास**			
क्लोडिनोफॉप प्रोपारगिल 15 डब्लूपी	60	400	110
क्लोडिनोफॉप प्रोपारगिल 15 डीपी	60	400	70
फेनोक्साप्राप पी ईथाइल 10 ईसी	100–120	1000–1200	110
फ्लूमिओक्साजिन 50 एससी	125	250	137
आइसोप्रोटयूरॉन 50 डब्लूपी	1000	2000	–
आइसोप्रोटयूरॉन 75 डब्लूपी	1000	2000	–
मिथाबेन्जथियाजूरॉन 70 डब्लूपी (अंकुरण पूर्व– बुवाई के 2 दिन बाद)	1050–1400	1500–2000	100
मिथाबेन्जथियाजूरॉन 70 डब्लूपी (अंकुरण षीघ्र पष्चात – बुवाई के 16–18 दिन बाद)	700–870	1000–1250	100

पिनोक्जाडेन 5.1 ईसी (बुवाई के 30–35 दिन बाद)	40–50	800–900	90
पाइरोक्सासल्फोन 85 डब्लूजी	127.5	150	131
सल्फोसल्फ्यूरॉन 75 डब्लूजी	25	33.3	110
• **गजरी, बनसोया (Fumaria parviflora) एकवर्षीय,दोबीजपत्री,चौड़ीपत्ती,शाक**			
2,4 डी डाईमिथाइल एमिन साल्ट 58 एसएल	500–750	860–1290	–
ट्रिआसल्फ्यूरॉन 20 डब्लूजी	20	100	81
क्लोडिनोफॉप प्रोपारगिल 15 + मैटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 1 डब्लूपी	60+4	400	100
मैटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 3 + आइडोसल्फ्यूरॉन मिथाइल सोडियम 0.6 डब्लूजी	12+2.4	400	96
• **वनप्याजी** (Onion-Weed : Asphodelus tenuifolius) **एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, शाक**			
2,4 डी डाईमिथाइल एमिन साल्ट 58 एसएल	500–750	860–1290	–
2,4 डी इथाइल एस्टर 38 ईसी (2,4 डी एसिड 34 प्रतिशत)	450–750	1320–2200	–
एमसीपीए एमाइन साल्ट 40 डब्लूएससी	1000	2500	–
• **सत्यानाशी** (Mexican Prickly Poppy : Argemone mexicana) **एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ी पत्ती, शाक**			
2,4 डी सोडियम साल्ट टेक्निकल (2,4 डी एसिड 80 पूर्व में 80 डब्लूपी के रूप में पंजीकृत)	500–840	625–1000	90
एमसीपीए एमाइन साल्ट 40 डब्लूएससी	1000	2500	–
• **झिरूवा** (Fimbry : Fimbristylis miliacea) **एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, सेज**			
2,4 डी सोडियम साल्ट टेक्निकल (2,4 डी एसिड 80 पूर्व में 80 डब्लूपी के रूप में पंजीकृत)	500–840	625–1000	90
• **गजरी, बनसोया** (Fumaria parviflora) **एकवर्षीय,दोबीजपत्री,चौड़ीपत्ती,शाक**			
2,4 डी इथाइल एस्टर 38 ईसी (2,4 डी एसिड 34 प्रतिषत)	450–750	1320–2200	–
एमसीपीए एमाइन साल्ट 40 डब्लूएससी	1000	2500	–
• **जंगली जई (Common Wild Oat : Avena fatua) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास**			
2,4 डी इथाइल एस्टर 20 डब्लूपी	900	5000	–
फ्लूमिओक्साजिन 50 एससी	125	250	137
आइसोप्रोटयूरॉन 50 डब्लूपी	1000	2000	–
आइसोप्रोटयूरॉन 75 डब्लूपी	1000	2000	–
मिथाबेन्जथियाजूरॉन 70 डब्लूपी (अंकुरण पूर्व– बुवाई के 2 दिन बाद)	1050–1400	1500–2000	100
मिथाबेन्जथियाजूरॉन 70 डब्लूपी (अंकुरण षीघ्र पष्चात – बुवाई के 16–18 दिन बाद)	700–870	1000–1250	100
ट्रिआलैट 50 ईसी	1250	2500	150
• **जंगली जई (Winter wild oat : Avena ludoviciana) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास**			
मिथाबेन्जथियाजूरॉन 70 डब्लूपी (अंकुरण पूर्व– बुवाई के 2 दिन बाद)	1050–1400	1500–2000	100
मिथाबेन्जथियाजूरॉन 70 डब्लूपी (अंकुरण षीघ्र पष्चात – बुवाई के 16–18 दिन बाद)	700–870	1000–1250	100
पिनोक्जाडेन 5.1 ईसी (बुवाई के 30–35 दिन बाद)	40–50	800–900	90
कारफेन्ट्राजोन इथाइल 20 + सल्फोसल्फ्यूरॉन 25 डब्लूजी	20+25	100	110
फेनोक्साप्राप पी ईथाइल 7.77 + मैट्रीब्यूजिन 13.6 ईसी	100+175	1250	110
पेन्डिमेथालिन 35 + मेट्रीब्यूजिन 3.5 एसई	875+87.5–1050+105	2500–3000	123
• **जंगली जई** (Wild oat : Avena spp) **एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास**			
मेट्रीब्यूजिन 42 + क्लोडिनोफॉप प्रोपारगिल 12 डब्लूजी	210+60	500	92
• **पोआघास (Annual Bluegrass: Poa annua) एकवर्षीय,एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास**			
आइसोप्रोटयूरॉन 50 डब्लूपी	1000	2000	–
आइसोप्रोटयूरॉन 75 डब्लूपी	1000	2000	–
मिथाबेन्जथियाजूरॉन 70 डब्लूपी (अंकुरण पूर्व– बुवाई के 2 दिन बाद)	1050–1400	1500–2000	100
• **मान अलू, बारा सरपोत (Viper grass: Dinebra retroflexa) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास**			
क्लोडिनोफॉप प्रोपारगिल 15 + मैटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 1 डब्लूपी	60+4	400	100
• **मकोय (Black nightshade: Solanum nigrum)**			
मैटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 10 + कारफेन्ट्राजोन इथाइल 40 डीएफ	25	50	100

फसलों के हानिकारक कीट, बीमारियाँ एवं खरपतवार

धान तना वेधक (वयस्क)	धान तना वेधक (सूँड़ी)	धान तना वेधक (क्षति)
धान पत्ती मरोड़क (वयस्क)	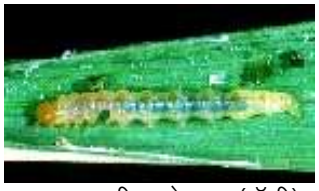 धान पत्ती मरोड़क (सूँड़ी)	धान पत्ती मरोड़क (क्षति)
धान हिस्पा (वयस्क)	धान हिस्पा (ग्रब)	धान हिस्पा (क्षति)
भूरा फुदका (वयस्क)	भूरा फुदका (निम्फ)	भूरा फुदका (क्षति)
सफेद पीठवाला फुदका(वयस्क)	सफेद पीठवाला फुदका (निम्फ)	हापरबर्न(फुदका क्षति)
गन्धी बग (वयस्क)	गन्धी बग (निम्फ)	गन्धी बग (क्षति)

CRYSTAL
Inspiring Growth

Crystal Crop helps farmers make a

PROFITABLE
FARM!

#JourneyofInspiringGrowth

Crystal Crop Protection works closely with farming community and supports them in improving farm profitability and sustainability by advancing R&D in crop protection, seeds and farm mechanization services. Crystal has a vast range of 100+ products across categories enabling farmers to choose best for their farms.

Great Place To Work. Certified OCT 2025 – OCT 2026 INDIA

Let's Connect in

Crystal Crop Protection Limited
Corporate Address: B-95, Wazirpur Industrial Area, Wazirpur, Delhi - 110052, India
Tel:+91-11-49007100 | Fax: +91-11-49007200 | info@crystalcrop.com
www.crystalcropprotection.com

TAKII SEEDS KYOTO, JAPAN.

Our Mission

Our business is the creation and stable supply of high quality, excellent seed varieties and farm supplies for a wide range of customers in the world. In doing so, we commit ourselves to our continuous contribution to food safety and security, sound health and living, conservation of natural environment and the creation of genuine riches and cultures throughout the world. Seeds are not only the source of our innovation, but also the source of our inspiration. We will continue to develop seed, food and agriculture related business models by which each of the stakeholders in the value chain will benefit from our innovative products.

Crop Wise Sowing Window

S.No	Crop	Variety	Maturity DAS/DAT	Sowing time Plain Area (Suggested)	Sowing time Hills area (Suggested)
1	Cauliflower	Snow Muffin	65	20th June to 15th August	
	Cauliflower	Snow Mountain	60-65	August to September	March to July
	Cauliflower	Snow Crown	72-75	15th August to 15th October	July to September
	Cauliflower	Snow Grace	72-75	15th August to 15th October	July to September
	Cauliflower	Snow Mystique	75-80	15th September to October	August to October
2	Cabbage	Mighty	60-65	August to 15th January	March to September
	Cabbage	T-772	65-70	August to 15th January	March to September
	Cabbage	Fast Cash	50-55	July to September	
	Cabbage	T-621	55-60	July-September	March to September
3	Cucumber	Guru	35-40	December to April	April to June
	Cucumber	KCU-04	35-40	December to April	April to June
	Cucumber	KCU 005	32-35	February to March	April to July
	Cucumber	Happy Dance	32-35	February to March	April to July
	Cucumber	Kyoto-136 (Poly house)	35-40	All cucumber sowing season	March to July
4	Broccoli	Centauro	70-75		March to July
5	Chinese Cabbage	Apollo	65-70	August to November	April to July
6	Red Cabbage	Ruby Ball	70-75	August to November	March to July
7	Lettuce	New Red fire	45-50	August to November	March to July
	Lettuce	Green wave	45-50	August to November	March to July
	Lettuce	Green Jacket	45-50	August to November	March to July
	Lettuce	Cisco	45-50	August to November	March to July
	Lettuce	Legacy	45-50	August to November	March to July
8	Carrot	Fire Wedge	110-120	October to January	October to November
	Carrot	Mayumi	110-120	15th October to November	
9	Sweet corn	Kyoto-70	70-75	August to October and Feb-March	
10	Onion	T-821	110-120	October to November	October to November
	Onion	Fresh Red	110-115	October to November	October to November
	Onion	Superex (Yellow)	105-110	November	
11	Beet root	Kyoto Red	55-60	15th August to March	April-July
12	Radish	Mino Early Long White	45-50	August to October	
	Radish	Musashi	45-50	August to October	April to September
	Radish	Hero 627	45-50	July to August	April to May
	Radish	Spring Cross	50-55	December to January	October to December
13	Tomato	Veer 2000 (Acidic type)	65-70	July to September	
	Tomato	Akari (Round shape)	65-70	July to September	March to May
14	Watermelon	Viraat	70-75	November to March	
	Watermelon	Gabru 48	70-75	November to March	
15	Okra	Uphar	40-45	February to June	April to June

Takii Seeds India Private Limited
Plot. No. 2-R, Obadenahalli KIADB Industrial Area Phase -3
Doddaballapur Taluk, Bangalore Rural District, Bangalore - 561203

किसान सहायता केन्द्र
99029 80222

* The crops and varieties information given in the book are intended to represent the kind only and based on our research farm and multilocation trials which may very as per external factors.

SAVANNAH SEEDS PVT. LTD.
Savannah
अब खेती बनी आसान
पेश है FULL PAGE
Rice Cropping Solution
धान की खेती का नया तरीका
Sava 127
Imazethapyr 10% SL
Sava 134
• खरपतवारों का प्रभावी नियंत्रण
• मजदूरों की समस्या से छुटकारा
• पानी की बचत
सीधी बीजाई का सम्पूर्ण समाधान
पाएं RiceReach एपलीकेशन से
QR कोड स्कैन करें या Google Play Store पर
RiceReach टाइप कर एप्लीकेशन डाउनलोड करें
Visit us: www.savannahseeds.com
email: savannah@savannahseeds.com
अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें : 18005729750
FOLLOW US:

• **दूब** (Bermuda Grass : Cynodon dactylon) **बहुवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास**			
हानिकारक रोग एवं फफूँदनाशी रसायन (फन्जिसाइड)			
• **करनाल बन्ट (Karnal Bunt : Tilletia indica = Neovossia indica)**			
बिटरटेनॉल 25 डब्लूपी	560	2240	—
प्रोपिकोनाजोल 25 ईसी	125	500	30
थिरम 75 डब्लूएस (बीज शोधन / कि0ग्रा0)	1.88—22.5	2.5—3.0	7—10
कार्बोक्सिन 75 डब्लूपी	1.5—1.875	2—2.5	—
ट्राइएडिमेफोन 25 डब्लूपी	12.5	500	25
• **पहाड़ी बन्ट या दुर्गन्धयुक्त कन्डुवा (Hill Bunt : Tilletia foetida and Tilletia caries)**			
कार्बोक्सिन 75 डब्लूपी	1.5—1.875	2—2.5	—
ट्राइएडिमेफोन 25 डब्लूपी	12.5	500	25
• **ध्वज कंड (Flag Smut : Urocystis agropyri or U. tritici)**			
कार्बोक्सिन 75 डब्लूपी (बीज शोधन / कि0ग्रा0)	1.5—1.875	2—2.5	—
टेबुकोनाजोल 2 डीएस (बीज षोधन / कि0ग्रा0)	0.02	1.00	—
टेबुकोनाजोल 5.4 एफएस (बीज षोधन / कि0ग्रा0)	0.018	0.3	—
थिरम 75 डब्लूएस (बीज षोधन / कि0ग्रा0)	1.88—22.5	2.5—3.0	7—10
• **अनावश्त कन्डुवा (Loose smut : Ustilago segetum f.sp. tritici)**			
कार्बेन्डाजिम 50 डब्लूपी (बीज शोधन / कि0ग्रा0)	1.0	2.0	—
डाइफेनोकोनाजोल 3 डब्लूएस (बीज शोधन)	6	200	—
टेबुकोनाजोल 5.36 एफएस (बीज शोधन / कि0ग्रा0)	0.02	0.333	—
टेबुकोनाजोल 5.4 एफएस (बीज शोधन / कि0ग्रा0)	0.018	0.3	—
कार्बोक्सिन 17.5 + थिरम 17.5 एफएफ (बीज शोधन / कि0ग्रा0)	0.875—1.05	2.5—3.0	—
कार्बोक्सिन 37.5 + थिरम 37.5 एफएफ (बीज शोधन / कि0ग्रा0)	2.25	3.0	—
ट्रिटिकोनाजोल 80 + पायराक्लोस्ट्रोबिन 40 एफएस	0.12	1.0	—
• **भूरी गेरूई या भूरा रतुआ (Brown Rust = Leaf Rust: Puccinia recondita)**			
प्रोपिकोनाजोल 25 ईसी	125	500	30
ट्राइएडिमेफोन 25 डब्लूपी	250	1.0	25
• **काली गेरूई या काला रतुआ (Black Rust=Stem Rust:Puccinia graminis tritici)**			
मैंकोजेब 75 डब्लूपी	1125—1500	1500—2000	—
ट्राइएडिमेफोन 25 डब्लूपी	250	1.0	25
• **पीली गेरूई या रतुआ (Yellow Rust=Stripe Rust: Puccinia striiformis=Puccinia glumarum)**			
प्रोपिकोनाजोल 25 ईसी	125	500	30
टेबुकोनाजोल 25 डब्लूजी	1875	750	41
टेबुकोनाजोल 38.39 एससी	258	600	5
ट्राइएडिमेफोन 25 डब्लूपी	250	1.0	25
अजोक्सीस्ट्रोबिन 7.1 + प्रोपिकोनाजोल 11.9 एसई	56.25+93.75	750	45
अजोक्सीस्ट्रोबिन 11 + टेबुकोनाजोल 18.3 एससी	82.5+137.25	750	—
पिकोक्सीस्ट्रोबिन 7.05 + प्रापिकोनाजोल 11.7 एससी	200	1000	24
पायराक्लोस्ट्रोबिन 133 + इपोक्सीकोनाजोल 50 एसई	137.25	750	47
टेबुकोनाजोल 50 + ट्राइफ्लोक्सीस्ट्रोबिन 25 डब्लूजी	150+75	300	40
• **पर्ण अंगमारी या झुलसा रोग (Leaf blight: Alternaria triticina)**			
क्रेसोक्जिम—मिथाईल 44.3 एससी	250	500	25
मैंकोजेब 75 डब्लूपी	1125—1500	1500—2000	—
जिनेब 75 डब्लूपी	1125—1500	1500—2000	—
• **चूर्णिल आसिता (Powdery Mildew, Erysiphe graminis f. sp. tritici)**			

सल्फर 80 डब्लूडी	2000	2500	24
टेबुकोनाजोल 38.39 एससी	258	600	5
ट्राइएडिमेफोन 25 डब्लूपी	65–135	260–520	25
अजोक्सीस्ट्रोबिन 18.2 + साइपरोकोनाजोल 7.3 एससी	0.26	1000	50
अजोक्सीस्ट्रोबिन 18.2 + डाइफेनोकोनाजोल 11.4 एससी	150	500	35
अजोक्सीस्ट्रोबिन 7.1 + प्रोपिकोनाजोल 11.9 एसई	56.25+93.75	750	45
टेबुकोनाजोल 50 + ट्राइफ्लोक्सीस्ट्रोबिन 25 डब्लूजी	150+75	300	40
• गेहूँ का सेहू रोग इयरकाकिल (Earcockle disease = Gall nematode : Anguina tritici)			
कारबोफ्यूरान 3 सीजी	3000	100000	–
• मोल्या (Molya or Cereal Root Eel-worm=Cyst Nematode : Heterodera avenae)			
कारबोफ्यूरान 3 सीजी	2000	66000	–
• जौं का सिस्टनिमेटोड (Barley Cyst Nematode:Heterodera avenae)			
कारबोफ्यूरान 3 सीजी	1000	33300	–
हानिकारक कीट एवं कीटनाशी रसायन (इन्सेक्टिसाइड)			
• गुलाबी तना छेदक/सैनिक कीट (Army Worm, Mythimna separata) केवल पंजाब राज्य के लिये			
क्लोरपायरीफॉस 20 ईसी	–	2.5 ली/हे	
क्लोरेन्ट्रानिलिप्रोल 18.5 एससी	–	125मिली/हे	
• निमेटोड (nematode)			
इयर कोकिल निमेटोड	3000	10000	
सिरियल सिस्ट निमेटोड	2000	66600	
• बाली की सूँड़ी (Earhead caterpillar)			
क्वीनालफॉस 25 इसी	400	1600	–
• प्ररोह मक्खी (Shoot Fly: Athergona oryzae, A. tritici)			
साइपरमेथ्रिन 10ईसी	50	550.0	14
• माइट (Mite)			
क्वीनालफॉस 25 इसी	400	1600	–
• गेहूँ का माहू (Wheat Aphid, Macrosiphum (Sitobion) avenae or Macrosiphum miscanthi)			
इमिडाक्लोप्रिड 48एफएस	0.21	0.35	–
क्वीनालफॉस 25 इसी	250	1000	–
थायमेथाक्जाम 25 डब्लूजी	12.5	25	21
• दीमक (Termites, Microtermes obesi and Odontotermes obesus)			
फिप्रोनिल 0.3जीआर	0.06	20किग्रा	91
इमिडाक्लोप्रिड 48एफएस	0.21	0.35	
• जौ का माहू (Barley Aphid, Macrosiphum sp.)			
कार्बोफ्युरॉन 3 सीजी	1000	33300	
• जौ का जैसिड (Barley Jassid: Empoasca devastans)			
कार्बोफ्युरॉन 3 सीजी	1250	41600	
• सिस्ट निमेटोड (Cyst Nematode)			
कार्बेफ्रॉन 3सीजी	1000	33300	
• निमेटोड (Nematode)			
सिरियल सिस्ट निमेटोड	1000	33300	
मक्का (Maize) (600-700 लीटर पानी प्रति हैक्टर)			
हानिकारक खरपतवार एवं खरपतवारनाशी रसायन (हर्बिसाइड)			
• गुद्रीसाग (Dwarf copperleaf : Alternanthera sessillis) बहुवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ी पत्ती, शाक			
टोपरामिजोन 336 एससी	25.2–33.6	75–100	83

टोपरामिजोन 10 + एट्राजिन 300 एससी	775	2500	90
• **जंगली चौलाई (Green Amaranth: Amaranthus viridis, Amaranthus spinosus) एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ी पत्ती, शाक**			
एट्राजिन 50 डब्लूपी	500–1000	1000–2000	–
2,4 डी डाइमिथाइल एमिन साल्ट 58 एसएल	500	860	50–60
2,4 डी इथाइल एस्टर 38 ईसी	900	2650	50–60
डाइयुरॉन 80 डब्लूपी	800	500.30	–
पैराक्वाट डाइक्लोराइड 24 एसएल (बुवाई के पहले)	200–500	800–2000	90–120
टोपरामिजोन 336 एससी	25.2–33.6	75–100	83
टोपरामिजोन 10 + एट्राजिन 300 एससी	775	2500	90
• **जंगली सरसों (Red hogweed,Punarnava:Boerhaavia diffusa) एक–बहुवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक**			
2,4 डी डाइमिथाइल एमिन साल्ट 58 एसएल	500	860	50–60
2,4 डी इथाइल एस्टर 38 ईसी	900	2650	50–60
• **बसवट (Para grass, Signal grass (Brachiaria sp.) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास**			
एट्राजिन 50 डब्लूपी	500–1000	1000–2000	–
टेमबोट्रिओन 34.4 एससी	120	286	55
• **बथुआ (Bathua, Pigweed : Chenopodium album) एकवर्षीय,दोबीजपत्री,चौड़ीपत्ती,शाक**			
एलाक्लोर 10 जीआर	1500–2500	15000–25000	
डाइयुरॉन 80 डब्लूपी	800	500.30	–
• **हुलहुल (Asian spider flower : Cleome viscose) एकवर्षीय,दोबीजपत्री,चौड़ीपत्ती,शाक**			
एट्राजिन 50 डब्लूपी	500–1000	1000–2000	–
• **केना** (Long Leaved Dayflower : Commelina benghalensis) **बहुवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक**			
पैराक्वाट डाइक्लोराइड 24 एसएल (बुवाई के पहले)	200–500	800–2000	90–120
पैराक्वाट डाइक्लोराइड 24 एसएल (बुवाई के बाद 2–3 पत्तियों वाली अवस्था में)	200–500	800–2000	90–120
• **गल मोथा (Rice flat sedge : Cyperus spp.) एकवर्षीय, बहुवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, सेज**			
2,4 डी डाइमिथाइल एमिन साल्ट 58 एसएल	500	860	50–60
2,4 डी इथाइल एस्टर 38 ईसी	900	2650	50–60
2,4 डी इथाइल एस्टर 20 डब्लूपी	900	5000	–
हैलोसल्फ्यूरॉन मिथाइल 75 डब्लूजी	67.5	90	45
पैराक्वाट डाइक्लोराइड 24 एसएल (बुवाई के पहले)	200–500	800–2000	90–120
मैजोट्रिओन 2.27 + एट्राजिन 22.7 एससी	875	3500	42
• **गल मोथा (Rice flat sedge : Cyperus iria) एकवर्षीय, बहुवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, सेज**			
डाइयुरॉन 80 डब्लूपी	800	500.30	–
पैराक्वाट डाइक्लोराइड 24 एसएल (बुवाई के बाद 2–3 पत्तियों वाली अवस्था में)	200–500	800–2000	90–120
• **मोथा (Umbrella plant : Cyperus rotundus) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, सेज**			
पैराक्वाट डाइक्लोराइड 24 एसएल (बुवाई के बाद 2–3 पत्तियों वाली अवस्था में)	200–500	800–2000	90–120
हैलोसल्फ्यूरॉन मिथाइल 5 + एट्राजिन 48 डब्लूजी	56.25+540	1125	37
• **मकड़ा (Four-finger grass : Dactyloctenium aegypticum) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास**			
टोपरामिजोन 336 एससी	25.2–33.6	75–100	83
मैजोट्रिओन 2.27 + एट्राजिन 22.7 एससी	875	3500	42
• **कुन्द्रा (False Amaranth, Latmahuria : Digera arvensis) एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक**			
एट्राजिन 50 डब्लूपी	500–1000	1000–2000	–
टोपरामिजोन 336 एससी	25.2–33.6	75–100	83
• **कुन्द्रा (Bamboo grass: Digitaria spp.) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास**			
एलाक्लोर 10 जीआर	1500–2500	15000–25000	
एट्राजिन 50 डब्लूपी	500–1000	1000–2000	–

डाइयुरॉन 80 डब्लूपी	800	500.30	–
टोपरामिजोन 336 एससी	25.2–33.6	75–100	83
टोपरामिजोन 10 + एट्राजिन 300 एससी	775	2500	90
• कुन्द्रा (Crab Finger grass: Digitaria sanguinalis) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास			
हैलोसल्फ्यूरॉन मिथाइल 5 + एट्राजिन 48 डब्लूजी	56.25+540	1125	37
मैजोट्रिओन 2.27 + एट्राजिन 22.7 एससी	875	3500	42
• छोटी सांई (Jungle Rice : Echinochloa spp.) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास			
एट्राजिन 50 डब्लूपी	500–1000	1000–2000	–
डाइयुरॉन 80 डब्लूपी	800	500.30	–
पैराक्वाट डाइक्लोराइड 24 एसएल (बुवाई के पहले)	200–500	800–2000	90–120
पैराक्वाट डाइक्लोराइड 24 एसएल (बुवाई के बाद 2–3 पत्तियों वाली अवस्था में)	200–500	800–2000	90–120
पाइरोक्सासल्फोन 85 डब्लूजी	127.5	150	103
टेमबोट्रिओन 34.4 एससी	120	286	55
टोपरामिजोन 336 एससी	25.2–33.6	75–100	83
हैलोसल्फ्यूरॉन मिथाइल 5 + एट्राजिन 48 डब्लूजी	56.25+540	1125	37
मैजोट्रिओन 2.27 + एट्राजिन 22.7 एससी	875	3500	42
• बनमडुआ, कोदई (Indian goosegrass : Eleusine indica) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास			
एट्राजिन 50 डब्लूपी	500–1000	1000–2000	–
डाइयुरॉन 80 डब्लूपी	800	500.30	–
पाइरोक्सासल्फोन 85 डब्लूजी	127.5	150	103
टोपरामिजोन 336 एससी	25.2–33.6	75–100	83
हैलोसल्फ्यूरॉन मिथाइल 5 + एट्राजिन 48 डब्लूजी	56.25+540	1125	37
• बड़ी दुधी (Asthma weed : Euphorbia hirta) एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक			
2,4 डी डाइमिथाइल एमिन साल्ट 58 एसएल	500	860	50–60
2,4 डी इथाइल एस्टर 38 ईसी	900	2650	50–60
2,4 डी इथाइल एस्टर 20 डब्लूपी	900	5000	–
• सफेद सेंजी, सफेद बन मेंथी (White Sweet Clover: Melilotus alba) एक–दोवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक			
टोपरामिजोन 10 + एट्राजिन 300 एससी	775	2500	90
• भूई आंवला, हजारदाना (Stone breaker: Phyllanthus niruri) एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक			
डाइयुरॉन 80 डब्लूपी	800	500.30	–
पाइरोक्सासल्फोन 85 डब्लूजी	127.5	150	103
• पंखुड़ी (Stone grass, Knotweed: Polygonum spp.) एकवर्षीय,दोबीजपत्री,चौड़ीपत्ती,शाक			
एट्राजिन 50 डब्लूपी	500–1000	1000–2000	–
• लूनिया (Purslane: Portulaca oleracea) एकवर्षीय,दोबीजपत्री,चौड़ीपत्ती,शाक			
2,4 डी डाइमिथाइल एमिन साल्ट 58 एसएल	500	860	50–60
2,4 डी इथाइल एस्टर 38 ईसी	900	2650	50–60
• पत्थरचटटा, विसखापरा (Giant pigweed :Trianthema monogyna) एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक			
एट्राजिन 50 डब्लूपी	500–1000	1000–2000	–
2,4 डी डाइमिथाइल एमिन साल्ट 58 एसएल	500	860	50–60
2,4 डी इथाइल एस्टर 38 ईसी	900	2650	50–60
2,4 डी इथाइल एस्टर 20 डब्लूपी	900	5000	–
पैराक्वाट डाइक्लोराइड 24 एसएल (बुवाई के पहले)	200–500	800–2000	90–120
पैराक्वाट डाइक्लोराइड 24 एसएल (बुवाई के बाद 2–3 पत्तियों वाली अवस्था में)	200–500	800–2000	90–120
हैलोसल्फ्यूरॉन मिथाइल 5 + एट्राजिन 48 डब्लूजी	56.25+540	1125	37
• पत्थरचटटा, विसखापरा (Giant pigweed : Trianthema portulacastrum) एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक			

टेमबोट्रिओन 34.4 एससी	120	286	55
• पत्थरचटटा, विसखापरा (Giant pigweed : Trianthema spp.) एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक			
मैजोट्रिओन 2.27 + एट्राजिन 22.7 एससी	875	3500	42
• गोखरू (Goathead :Tribulus terristeris) बहुवर्षीय, दोबीजपत्री,चौड़ीपत्ती,शाक			
2,4 डी डाइमिथाइल एमिन साल्ट 58 एसएल	500	860	50–60
2,4 डी इथाइल एस्टर 38 ईसी	900	2650	50–60
• छोटा गोखरू (Common Cocklebur : Xanthium strumerium) एकवर्षीय,दोबीजपत्री,चौड़ीपत्ती,शाक			
एट्राजिन 50 डब्लूपी	500–1000	1000–2000	–
हानिकारक रोग एवं फफूँदनाशी रसायन (फन्जिसाइड)			
• पर्ण अंगमारी या झुलसा (Leaf Blight of Maize: Stenocarpella maydis, Glomerella graminicola, Exserohilum turcicum)			
क्रेसोक्जिम–मिथाईल 44.3 एससी	250	500	25
मैंकोजेब 75 डब्लूपी	1125–1500	1500–2000	–
जिनेब 75 डब्लूपी	1125–1500	1500–2000	–
पायराक्लोस्ट्रोबिन 20 डब्लूजी	100	500	40
अजोक्सीस्ट्रोबिन 18.2 + साइपरोकोनाजोल 7.3 एससी	0.26	1000	52
अजोक्सीस्ट्रोबिन 18.2 + डाइफेनोकोनाजोल 11.4 एससी	150	500	26
कार्बेन्डाजिम 12 + मैंकोजेब 63 डब्लूपी	120+630	1000	37
पायराक्लोस्ट्रोबिन 133 + इपोक्सीकोनाजोल 50 एसई	137.25	750	48
• पौध अंगमारी या झुलसा (Seedling Blight of Maize:Diplodia maydis)			
थिरम 40 एफएस (बीज शोधन / कि0ग्रा0)	0.96	2.4	–
थिरम 75 डब्लूएस (बीज शोधन / कि0ग्रा0)	1.88–2.25	2.5–3.0	7–10
कार्बेन्डाजिम 25 + मैंकोजेब 50 डब्लूएस (बीज शोधन / कि0ग्रा0)	0.75+1.5	3.0	–
• तुलासिता रोग (Downy Mildew : Peronosclerospora maydis)			
मैंकोजेब 75 डब्लूपी	1125–1500	1500–2000	–
मेटालेक्जिल 35 डब्लूएस (बीज शोधन / कि0ग्रा0)	2.4	7.0	3.5 –4.0 माह
मेटालेक्जिल –एम 31.8 ईसी (बीज शोधन / कि0ग्रा0)	0.76	2.4	3.5 –4.0 माह
अजोक्सीस्ट्रोबिन 18.2 + साइपरोकोनाजोल 7.3 एससी	0.26	1000	52
कार्बेन्डाजिम 12 + मैंकोजेब 63 डब्लूपी	120+630	1000	37
• किट्ट या रतुआ रोग (Rust : Puccinia sorghi)			
क्रेसोक्जिम–मिथाईल 44.3 एससी	250	500	25
अजोक्सीस्ट्रोबिन 18.2 + साइपरोकोनाजोल 7.3 एससी	0.26	1000	52
हानिकारक कीट एवं कीटनाशी रसायन (इन्सेक्टिसाइड)			
• मक्का तना वेधक (Maize Stem Borer : Chilo partellus)			
कार्बोफ्युरॉन 3 सीजी	1000	33300	–
क्लोरेन्ट्रानिलिप्रोल 50एफएस	40	64	सीड डेसर
डाइमेथोएट 30 ईसी	200	660	–
आइसोसायक्लोंसिरम 18.1 एससी	60	300	48
टेट्रानिलिप्रोल 40.34 एफएस	2.4–206	5.0–7.5	–
थियामेथोक्जाम 12.6. लेम्बडासाहेलोथ्रिन 9.50 जेडसी	27.5	125	42
• प्ररोह मक्खी (Shoot Fly : Atherigona soccata)			
कार्बोफ्युरॉन 3 सीजी	1000	33300	–
डाइमेथोएट 30 ईसी	350	1155	–
इमिडाक्लोप्रिड 48 एफएस	0.6	1.0	–
मोनोक्रोटोफॉस 36 एसएल	250	625	–
आक्सीडिमेटॉन मिथाईल 25 ईसी	250	1000	–

थियामेथाक्जाम 70 डब्लूएस	245	350	सीड डेसकर
थियामेथोक्जाम 12.6 + लेम्बडासाहेलोथ्रिन 9.50 जेड सी	27.5	125	42
• मक्के का थ्रिप्स (Maize Thrips: Frankliniella williamsi)			
कार्बोफ्युरॉन 3 सीजी	1000	33300	–
• मक्के का मॉहु (Maize aphid:)			
थायमेथाक्जाम 70 डब्लूएस	245	350	सीड डेसकर
थियामेथोक्जाम 12.6 + लेम्बडासाहेलोथ्रिन 9.50 जेडसी	27.5	125	42
• तम्बाकू की सूँडी (Tobacco Caterpillar : Spodoptera litura)			
क्लोरेन्ट्रानिलिप्रोल 50एफएस		75	120
• सीड डेसर			
आइसोसायक्लोंसिरम 18.1 एससी	60	300	48
अरहर (Red Gram, Pigeonpea) (न्यूनतम 600 लीटर पानी प्रति हैक्टर)			
हानिकारक खरपतवार एवं खरपतवारनाशी रसायन (हर्बिसाइड)			
• जंगली चौलाई (Green Amaranth:Amaranthus viridis, A. spinosus) **एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ी पत्ती,शाक**			
इमैजथापर 35 + इमैजामोक्स 35 डब्लूजी	70+2 लीटर	100+2 लीटर	125
पेन्डिमैथालिन 30 ईसी	700–1000	2500–3330	133
• गल मोथा (Rice flat sedge : Cyperus spp.) **एकवर्षीय, बहुवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, सेज**			
पेन्डिमैथालिन 30 ईसी	700–1000	2500–3330	133
• कुन्द्रा (False Amaranth, Latmahuria : Digera arvensis) एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक			
पेन्डिमैथालिन 30 ईसी	700–1000	2500–3330	133
• कुन्द्रा (Crab Finger grass: Digitaria sanguinalis) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास			
इमैजथापर 10 एसएल + सर्फेक्टैंट	75+2 लीटर	750+2 लीटर	125
पेन्डिमैथालिन 30 ईसी	700–1000	2500–3330	133
• मान अलू, बारा सरपोत (Viper grass: Dinebra retroflexa) **एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास**			
इमैजथापर 10 एसएल + सर्फेक्टैंट	75+2 लीटर	750+2 लीटर	125
• कुस घास (Stink Grass: Eragrostis sp.) **एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास**			
पेन्डिमैथालिन 30 ईसी	700–1000	2500–3330	133
• बड़ी दुधी (Asthma weed : Euphorbia spp.) एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक			
इमैजथापर 35 + इमैजामोक्स 35 डब्लूजी	70+2 लीटर	100+2 लीटर	125
पेन्डिमैथालिन 30 ईसी	700–1000	2500–3330	133
• पत्थरचटटा, विसखापरा (Giant pigweed : Trianthema sp.) एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक			
पेन्डिमैथालिन 30 ईसी	700–1000	2500–3330	133
हानिकारक रोग एवं फफूँदनाशी रसायन (फन्जिसाइड)			
• अरहर का उकठा रोग (Seed rot, Root rot, Stem rot, Wilt of Pigeon Pea : Fusarium oxysporum f.sp. ciceris, Gibberella indica)			
कार्बोक्सिन 37.5 + थाईरम 37.5 डब्लूएस (बीज शोधन/कि0ग्रा0)	3.0	4.0	–
• बीज तना या जड़सड़न (Seed Rot, Root Rot, Stem Rot: Rhizoctonia bataticola Macrophomina phaseolina)			
कार्बोक्सिन 37.5 + थाईरम 37.5 डब्लूएस (बीज शोधन/कि0ग्रा0)	3.0	4.0	–
हानिकारक कीट एवं कीटनाशी रसायन (इन्सेक्टिसाइड)			
• फली बेधक (Pod Borer : Helicoverpa armigera)			
बेनफ्युराकार्ब 40 ईसी	1000	2500	20
क्लोरेन्ट्रानिलिप्रोल 0.5018.5 एससी	25	125	11
डेल्टामेथ्रिन 2.80 एससी	12.50	500.0	10
इमामेक्टिन बेन्जोएट 5एसजी	11	220	14
इथियॉन 50ईसी	500–750	1000–1500	21
फ्लुबेन्डियामाइड 39.35 एसी	48	100	10

फ्लक्सामेटामाईड 10 ईसी	40	400	5
आइसोसायक्लोसिरम 9.2 डीसी	50–60	500–600	58
लूफेन्युरॉन 5.4 ईसी	30	600	65
मोनोक्रोटोफॉस 36 एसएल	500	1250	–
क्वीनालफॉस 25 इसी	350	1400	30
स्पाइनोसेड 45 एससी	56–73	125–162	47
थायोडिकार्ब 75 डब्लूपी	470–750	625–1000	30
क्लोरेन्ट्रानिलिप्रोल 9.30 + लेम्डा–साइहैलोथ्रिन 4.60 जेडसी	30	200	18
• धब्बेदार फली वेधक (Spotted Pod Borer: Maruca (testulalis) vitrata)			
फ्लुबेन्डियामाइड 10ईसी	40	400	5
फ्लुबेन्डियामाइड 20 डब्लू जी	50	250	30
आइसोसायक्लोसिरम 9.2 डीसी	50–60	500–600	58
ब्रेफ्लेनिलिड 300 ग्राम प्रति ली एससी	12.6–18.6	42–62	25
• पिच्छकी शलभ (Plume Moth : Exelastis atomosa)			
मोनोक्रोटोफॉस 36 एसएल	250	625	–
• अरहर की फली मक्खी (Red Gram Pod fly : Melagromyza obtusa)			
डेल्टामेथ्रिन 2.80 एससी	12.50	500.0	10
लूफेन्युरॉन 5.4 ईसी	30	600	65
मोनोक्रोटोफॉस 36 एसएल	250	625	–
क्वीनालफॉस 25 इसी	350	1400	30
उर्द (Green gram) (न्यूनतम 500 लीटर पानी प्रति हैक्टर)			
हानिकारक खरपतवार एवं खरपतवारनाशी रसायन (हर्बिसाइड)			
• जंगली चौलाई (Green Amaranth:Amaranthus viridis) **एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ी पत्ती,शाक**			
इमैजथापर 10 एसएल + सर्फेक्टैंट	75+2 लीटर	750+2 लीटर	46
• पैरा घास, रनिंग घास (Running grass: Brachiaria reptans) **बहुवर्षीय**			
क्लोडिनाफॉप–प्रोपेरजाइल 12.5 ईसी	125	1000	75
• दूब (Bermuda Grass : Cynodon dactylon) बहुवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास			
क्लोडिनाफॉप–प्रोपेरजाइल 12.5 ईसी	125	1000	75
• मकड़ा (Four-finger grass : Dactyloctenium aegypticum) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास			
क्लोडिनाफॉप–प्रोपेरजाइल 12.5 ईसी	125	1000	75
• कुन्द्रा (Crab Finger grass: Digitaria sanguinalis) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास			
क्लोडिनाफॉप–प्रोपेरजाइल 12.5 ईसी	125	1000	75
• छोटी सांई (Jungle Rice : Echinochloa colonum) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास			
क्लोडिनाफॉप–प्रोपेरजाइल 12.5 ईसी	125	1000	75
• बनमडुआ, कोदई (Indian goosegrass : Eleusine indica) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास			
क्लोडिनाफॉप–प्रोपेरजाइल 12.5 ईसी	125	1000	75
• बड़ी दुधी (Asthma weed : Euphorbia hirta) एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक			
इमैजथापर 10 एसएल + सर्फेक्टैंट	75+2 लीटर	750+2 लीटर	46
• पत्थरचटटा, विसखापरा (Giant pigweed : Trianthema portulacastrum) एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक			
इमैजथापर 10 एसएल + सर्फेक्टैंट	75+2 लीटर	750+2 लीटर	46
मूँग (Black gram) (न्युनतम 500 लीटर पानी प्रति हैक्टर)			
हानिकारक खरपतवार एवं खरपतवारनाशी रसायन (हर्बिसाइड)			
• जंगली चौलाई (Green Amaranth:Amaranthus viridis, A. spinosus) एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ी पत्ती,शाक			
इमैजथापर 10 एसएल + सर्फेक्टैंट	75+2 लीटर	750+2 लीटर	56
• पैरा घास, भैंस घास (Para grass: Brachiaria mutica) बहुवर्षीय,			

इमैजथापर 10 एसएल + सर्फेक्टैंट	75+2 लीटर	750+2 लीटर	56
• केना (Long Leaved Dayflower : Commelina benghalensis) बहुवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती शाक			
इमैजथापर 10 एसएल + सर्फेक्टैंट	75+2 लीटर	750+2 लीटर	56
प्रोपेक्वीजाफोप 2.5 + इमैजथापर 3.75 एमई	50+75	2000	56
• दूब (Bermuda Grass : Cynodon dactylon) बहुवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास			
प्रोपेक्वीजाफोप 2.5 + इमैजथापर 3.75 एमई	50+75	2000	56
• मकड़ा (Four-finger grass : Dactyloctenium aegypticum) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास			
फेनोक्साप्राप पी ईथाइल 9.3 ईसी (बुवाई के 15–20 दिन बाद)	56.25–67.5	625–750	43
प्रोपेक्वीजाफोप 10 ईसी	75–100	750–1000	21
क्वीजालोफोप–पी–इथाइल 5 ईसी	37.5–50	750–1000	52
प्रोपेक्वीजाफोप 2.5 + इमैजथापर 3.75 एमई	50+75	2000	56
• मान अलू, बारा सरपोत (Viper grass: Dinebra retroflexa) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास			
क्वीजालोफोप–पी–इथाइल 5 ईसी	37.5–50	750–1000	52
• कुन्द्रा (Bamboo grass: Digitaria spp.) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास			
फेनोक्साप्राप पी ईथाइल 9.3 ईसी (बुवाई के 15–20 दिन बाद)	56.25–67.5	625–750	43
प्रोपेक्वीजाफोप 10 ईसी	75–100	750–1000	21
क्वीजालोफोप–पी–इथाइल 5 ईसी	37.5–50	750–1000	52
प्रोपेक्वीजाफोप 2.5 + इमैजथापर 3.75 एमई	50+75	2000	56
• छोटी सांई (Jungle Rice : Echinochloa colonum) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास			
फेनोक्साप्राप पी ईथाइल 9.3 ईसी (बुवाई के 15–20 दिन बाद)	56.25–67.5	625–750	43
प्रोपेक्वीजाफोप 10 ईसी	75–100	750–1000	21
• बड़ी सांई (Barnyard Grass: Echinochloa crusgali) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास			
फेनोक्साप्राप पी ईथाइल 9.3 ईसी (बुवाई के 15–20 दिन बाद)	56.25–67.5	625–750	43
प्रोपेक्वीजाफोप 10 ईसी	75–100	750–1000	21
क्वीजालोफोप–पी–इथाइल 5 ईसी	37.5–50	750–1000	52
• बनमडुआ, कोदई (Indian goosegrass : Eleusine indica) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास			
प्रोपेक्वीजाफोप 10 ईसी	75–100	750–1000	21
क्वीजालोफोप–पी–इथाइल 5 ईसी	37.5–50	750–1000	52
• कुस घास (Stink Grass: Eragrostis sp.) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास			
क्वीजालोफोप–पी–इथाइल 5 ईसी	37.5–50	750–1000	52
• बड़ी दुधी (Asthma weed : Euphorbia hirta) एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक			
इमैजथापर 10 एसएल + सर्फेक्टैंट	75+2 लीटर	750+2 लीटर	56
प्रोपेक्वीजाफोप 2.5 + इमैजथापर 3.75 एमई	50+75	2000	56
• नारू (Paspalidium sp)			
क्वीजालोफोप–पी–इथाइल 5 ईसी	37.5–50	750–1000	52
उर्द एवं मूँग (Green gram and Black gram) की हानिकारक रोग एवं फफूँदनाशी रसायन (फन्जिसाइड)			
• बुकनी रोग या चूर्णिल आसिता (Powdery Mildew: Erysiphe polygoni)			
कार्बेन्डाजिम 50 डब्लूपी	250	500	–
पेनकोनाजोल 10 ईसी	25	250	30
अजोक्सीस्ट्रोबिन 18.2 + डाइफेनोकोनाजोल 11.4 एससी	148(91+57)	500	23
कैप्टान 70 + हैक्जाकोनाजोल 5 डब्लूपी	562.5	750	20
• पर्ण चित्ती, श्यामव्रण (Leaf Spots: Cercospora canescens, Anthracnose: Colletotrichum lindemuthianum)			
कार्बेन्डाजिम 50 डब्लूपी	125–250	250–500	–
टेबुकोनाजोल 25.9 ईसी	187.5	750	17
अजोक्सीस्ट्रोबिन 18.2 + डाइफेनोकोनाजोल 11.4 एससी	148(91+57)	500	23

मेटिराम 55 + पाइराक्लोस्ट्रोबिन 5 डब्लूजी	900–1050	1500–1750	32
सल्फर 80 डब्लूपी	2500	3130	–
सल्फर 85 डीपी	12750–17000	15000–20000	–
• रतुआ रोग (Rust: Uromyces phaseoli)			
कैप्टान 70 + हैक्जाकोनाजोल 5 डब्लूपी	562.5	750	20
• जड़ या जड़संधि सड़न रोग (Root rot, Collar rot: Rhizoctonia solani)			
कार्बेन्डाजिम 25 + मैंकोजेब 50 डब्लूएस (बीज शोधन / कि0ग्रा0)	0.75–1.5	3.0	–
सल्फर 85 डीपी	12750–17000	15000–20000	–
• जालीदार झुलसा (Web blight: Rhizoctonia solani)			
कार्बेन्डाजिम 50 डब्लूपी	125–250	250–500	–
उर्द एवं मूँग (Green gram and Black gram) के हानिकारक कीट एवं कीटनाशी रसायन (इन्सेक्टिसाइड)			
• फली वेधक/फल वेधक (Pod Borer/Fruit Borer)			
फ्लुबेन्डियामाइड 39.35 एससी	48	100	11
लुफेन्युरॉन 5.40 ईसी	30	600	10
मोनोक्रोटोफॉस 36 एसएल	250	625	–
थायोडिकार्व 75 डब्लूपी	468 – 562	625 – 750	17
क्लोरेन्ट्रानिलिप्रोल 18.5 एससी	20	100	20
• तम्बाकू की सूँडी (Tobacco Caterpillar : Spodoptera litura)			
फ्लुबेन्डियामाइड 20 डब्लूजी	60	300	23
• फली वेधक (Pod Borer: Maruca (testulalis) vitrata)			
फ्लुबेन्डियामाइड 20 डब्लूजी	60	300	23
थायोडिकार्व 75 डब्लूपी	468 – 562	625 – 750	17
• बिहार रोमिल इल्ली (Bihar Hairy Caterpillar: Spilosoma oblique)			
क्वीनालफॉस 25 इसी	375	1500	–
सरसों (Mustard) (न्यूनतम 500 लीटर पानी प्रति हैक्टर)			
हानिकारक खरपतवार एवं खरपतवारनाशी रसायन (हर्बिसाइड)			
• जंगली चौलाई (Green Amaranth:Amaranthus sp.) एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ी पत्ती,शाक			
पेन्डिमैथालिन 38.7 सीएस	338.625	875	111
• बथुआ (Bathua, Pigweed : *Chenopodium album*) एकवर्षीय,दोबीजपत्री,चौड़ीपत्ती,शाक			
ओक्जाडायरगिल 6 ईसी	90	1500	35
पेन्डिमैथालिन 38.7 सीएस	338.625	875	111
• कुन्द्रा (False Amaranth, Latmahuria : *Digera arvensis*) एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक			
पेन्डिमैथालिन 38.7 सीएस	338.625	875	111
• सेंजी, (Clover: *Melilotus* sp.) एक–दोवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक			
ओक्जाडायरगिल 6 ईसी	90	1500	35
हानिकारक रोग एवं फफूँदनाषी रसायन (फन्जिसाइड)			
• झुलसा (Alternaria Blight or Leaf Spot: *Alternaria brassicae*)			
आइप्रोडियोन 50 डब्लूपी	1125–1500	2250–3000	50
• सफेद गेरूई (White Rust : *Albugo candida*)			
मेटालेक्जिल–एम 31.8 ईएस (बीज शोधन / कि0ग्रा0)	1.11	3.5	–
मेटालेक्जिल 35 डब्लूएस (बीज शोधन / कि0ग्रा0)	2.0	6.0	3.5 से 4.0 माह
मेटालेक्जिल एम 4 + मैंकोजेब 64 डब्लूपी	1700	2500	60
• तुलासिता रोग (Downy Mildew : *Peronospora parasitica*)			
मेटालेक्जिल–एम 31.8 ईएस (बीज शोधन / कि0ग्रा0)	1.11	3.5	–
मेटालेक्जिल एम 4 + मैंकोजेब 64 डब्लूपी	1700	2500	60

हानिकारक कीट एवं कीटनाशी रसायन (इन्सेक्टिसाइड)			
• सरसों का मॉहू (Mustard Aphid : *Lipaphis erysimi*)			
क्लोरपाइरिफॉस 20 ईसी	100	500	–
आक्सीडिमेटॉन मिथाईल 25ईसी	250	1000	–
डाइमेथोएट 30 ईसी	200	660	–
थियामेथाक्जाम 25 डब्लूजी	12.5–25	50–100	21
• सरसों आरा मक्खी (Mustard Saw Fly : *Athalia lugens proxima*)			
डाइमेथोएट 30 ईसी	200	660	–
क्वीनालफॉस 25 इसी	300	1200	–
इमिडाक्लोप्रिड 70 डब्लू जी	490	700	–
• सफेद मक्खी (whitefly)			
कार्बोफ्युरॉन 3 सीजी	1000	33300	–
• चित्रित बग (Painted Bug : *Bagrada cruciferarum*)			
इमिडाक्लोप्रिड 70 डब्लू जी	490	700	–
• सरसों का पर्ण सुरंगक (Mustard Leaf Miner)			
कार्बोफ्युरॉन 3 सीजी	1000	33300	–
डाइमेथोएट 30 ईसी	200	660	–
गन्ना (Sugarcane) (500–1000 लीटर पानी प्रति हैक्टर)			
हानिकारक खरपतवार एवं खरपतवारनाशी रसायन (हर्बिसाइड)			
• जंगली पुदीना (Goat weed : *Ageratum conyzoides*) एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ी पत्ती, शाक			
एमेट्राइन 80 डब्लूजी	2000	2500	311
• गुद्रीसाग (Dwarf copperleaf : *Alternanthera sessillis*) बहुवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ी पत्ती, शाक			
टोपरामेजोन 10 + एट्राजिन 300 एससी	930	3000	268
• जंगली चौलाई (Green Amaranth: *Amaranthus* spp.) एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ी पत्ती, शाक			
डाइयुरान 80 डब्लूपी	1600–3200	2000–4000	–
सल्फैन्ट्राजोन 39.6 एससी	720	1500	306
• जंगली चौलाई (Green Amaranth: *Amaranthus spinosus, A. viridis*) एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ी पत्ती, शाक			
2,4 डी सोडियम साल्ट टैक्निकल (2,4 डी एसिड 80 पूर्व में 80 डब्लूपी के नाम से पंजीकृत)	2000–2600	2500–3250	300
2,4 डी इथाइल एस्टर 38 ईसी	1200–1800	3530–5290	300–330
मैटसल्फ्युरान मिथाइल 20 डब्लूपी	6	30	346
मैटसल्फ्युरान मिथाइल 20 डब्लूजी	6	30	346
एमेट्रिन 73.1 + ट्राइफ्लोक्सीसल्फ्यूरॉन सोडियम 1.8 डब्लूजी	937.5–1125	1250–1500	221
क्लोमाजोन 22.5 + मैट्रीब्यूजिन 21 डब्लूपी	563+525	2500	307
सल्फैन्ट्राजोन 28 + क्लोमाजोन 30 डब्लूपी	700+750	2500	302
टोपरामेजोन 10 + एट्राजिन 300 एससी	930	3000	268
• बसवट (Para grass, Signal grass (*Brachiaria repens*) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास			
क्लोमाजोन 50 ईसी	750–1000	1500–2000	296
• बसवट (Para grass, Signal grass (*Brachiaria* spp.) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास			
सल्फैन्ट्राजोन 39.6 एससी	720	1500	306
2,4 डी सोडियम साल्ट 44 + मैट्रीब्यूजिन 35 + पाइरैजोसल्फ्यूरोन 1 डब्लूडीजी	1320+1050+30	3000	249
क्लोमाजोन 22.5 + मैट्रीब्यूजिन 21 डब्लूपी	563+525	2500	307
सल्फैन्ट्राजोन 28 + क्लोमाजोन 30 डब्लूपी	700+750	2500	302
• जंगली सरसों (Red hogweed,Punarnava:*Boerhaavia diffusa*) एक–बहुवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक			
एट्राजिन 50 डब्लूपी	500–2000	1000–4000	–
2,4 डी सोडियम साल्ट टैक्निकल (2,4 डी एसिड 80 पूर्व में 80 डब्लूपी के नाम से पंजीकृत)	2000–2600	2500–3250	300

• **बथुआ (Bathua, Pigweed : *Chenopodium album*) एकवर्षीय,दोबीजपत्री,चौड़ीपत्ती,शाक**			
2,4 डी सोडियम साल्ट टैक्निकल (2,4 डी एसिड 80 पूर्व में 80 डब्लूपी के नाम से पंजीकृत)	2000–2600	2500–3250	300
मैट्रीब्यूजिन 70 डब्लूजी	1400–2000	2000–3000	309
2,4 डी सोडियम साल्ट 44 + मैट्रीब्यूजिन 35 + पाइरैजोसल्फ्यूरोन 1 डब्लूडीजी	1320+1050+30	3000	249
• **हुलहुल (Asian spider flower : *Cleome viscose*) एकवर्षीय,दोबीजपत्री,चौड़ीपत्ती,शाक**			
मैटसल्फ्युरान मिथाइल 20 डब्लूपी	6	30	346
मैटसल्फ्युरान मिथाइल 20 डब्लूजी	6	30	346
• **सफेद मुर्ग (*Celosia argentina*) एकवर्षीय,दोबीजपत्री,चौड़ीपत्ती,शाक**			
2,4 डी सोडियम साल्ट टैक्निकल (2,4 डी एसिड 80 पूर्व में 80 डब्लूपी के नाम से पंजीकृत)	2000–2600	2500–3250	300
• **केना (Long Leaved Dayflower : *Commelina benghalensis)* बहुवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक**			
2,4 डी डाईमिथाईल एमिन साल्ट 58 एसएल	3500	6300	–
2,4 डी इथाइल एस्टर 38 ईसी	1200–1800	3530–5290	300–330
मैटसल्फ्युरान मिथाइल 20 डब्लूपी	6	30	346
मैटसल्फ्युरान मिथाइल 20 डब्लूजी	6	30	346
• **हिरनखुरी (Field Bindweed : *Convulvulus arvensis*) बहुवर्षीय,दोबीजपत्री,चौड़ीपत्ती,शाक**			
2,4 डी डाईमिथाईल एमिन साल्ट 58 एसएल	3500	6300	–
2,4 डी सोडियम साल्ट टैक्निकल (2,4 डी एसिड 80 पूर्व में 80 डब्लूपी के नाम से पंजीकृत)	2000–2600	2500–3250	300
2,4 डी इथाइल एस्टर 38 ईसी	1200–1800	3530–5290	300–330
• **हिरनखुरी (Field Bindweed : *Convulvulus* spp.) बहुवर्षीय,दोबीजपत्री,चौड़ीपत्ती,शाक**			
डाइयुरान 80 डब्लूपी	1600–3200	2000–4000	–
• **दूब (Bermuda Grass : *Cynodon dactylon*) बहुवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास**			
एमेट्राइन 80 डब्लूजी	2000	2500	311
मैट्रीब्यूजिन 70 डब्लूजी	1400–2000	2000–3000	309
एमेट्रिन 73.1 + ट्राइफ्लोक्सीसल्फ्यूरॉन सोडियम 1.8 डब्लूजी	937.5–1125	1250–1500	221
क्लोमाजोन 22.5 + मैट्रीब्यूजिन 21 डब्लूपी	563+525	2500	307
सल्फैन्ट्राजोन 28 + क्लोमाजोन 30 डब्लूपी	700+750	2500	302
टोपरामेजोन 10 + एट्राजिन 300 एससी	930	3000	268
• **दूब (Bermuda Grass : *Cynodon* spp.) बहुवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास**			
सल्फैन्ट्राजोन 39.6 एससी	720	1500	306
• **बागानुल्ला, काना (*Cyanotis* spp.) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, शाक**			
डाइयुरान 80 डब्लूपी	1600–3200	2000–4000	–
• **गल मोथा (Rice flat sedge : *Cyperus iria*) एकवर्षीय, बहुवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, सेज**			
2,4 डी डाइमिथाईल एमिन साल्ट 58 एसएल	3500	6300	–
2,4 डी इथाइल एस्टर 38 ईसी	1200–1800	3530–5290	300–330
डाइयुरान 80 डब्लूपी	1600–3200	2000–4000	–
• **जल मोथा (Umbrella plant : *Cyperus difformis, C. esculentus*) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, सेज**			
मैटसल्फ्युरान मिथाइल 20 डब्लूपी	6	30	346
हैक्जाजिनोन 13.2 + डाइयुरान 46.8 डब्लूपी	1200(264+936)	2000	282–306
• **मोथा (Umbrella plant : *Cyperus rotundus*) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, सेज**			
डाइयुरान 80 डब्लूपी	1600–3200	2000–4000	–
मैट्रीब्यूजिन 70 डब्लूजी	1400–2000	2000–3000	309
एमेट्रिन 73.1 + ट्राइफ्लोक्सीसल्फ्यूरॉन सोडियम 1.8 डब्लूजी	937.5–1125	1250–1500	221
हैलोसल्फ्यूरोन मिथाइल 12 + मैट्रीब्यूजिन 55 डब्लूजी	54+247.5	450	294
हैक्जाजिनोन 13.2 + डाइयुरान 46.8 डब्लूपी	1200(264+936)	2000	282–306
मेजोट्रिओन 2.27 + एट्राजिन 22.7 एससी	875	3500	190

सल्फैन्ट्राजोन 28 + क्लोमाजोन 30 डब्लूपी	700+750	2500	302
• मोथा (Umbrella plant : *Cyperus* spp.) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, सेज			
सल्फैन्ट्राजोन 39.6 एससी	720	1500	306
2,4 डी सोडियम साल्ट 44 + मैट्रीब्यूजिन 35 + पाइरैजोसल्फ्यूरोन 1 डब्लूडीजी	1320+1050+30	3000	249
• मकड़ा (Four-finger grass : *Dactyloctenium aegypticum*) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास			
एमेट्राइन 80 डब्लूजी	2000	2500	311
क्लोमाजोन 50 ईसी	750–1000	1500–2000	296
2,4 डी डाईमिथाईल एमिन साल्ट 58 एसएल	3500	6300	–
सल्फैन्ट्राजोन 39.6 एससी	720	1500	306
2,4 डी सोडियम साल्ट 44 + मैट्रीब्यूजिन 35 + पाइरैजोसल्फ्यूरोन 1 डब्लूडीजी	1320+1050+30	3000	249
क्लोमाजोन 22.5 + मैट्रीब्यूजिन 21 डब्लूपी	563+525	2500	307
हैलोसल्फ्यूरोन मिथाइल 12 + मैट्रीब्यूजिन 55 डब्लूजी	54+247.5	450	294
मेजोट्रिओन 2.27 + एट्राजिन 22.7 एससी	875	3500	190
सल्फैन्ट्राजोन 28 + क्लोमाजोन 30 डब्लूपी	700+750	2500	302
• कुन्द्रा (False Amaranth, Latmahuria : *Digera arvensis*) एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक			
2,4 डी डाईमिथाईल एमिन साल्ट 58 एसएल	3500	6300	–
2,4 डी सोडियम साल्ट टेक्निकल (2,4 डी एसिड 80 पूर्व में 80 डबलूपी के नाम से पंजीकृत)	2000–2600	2500–3250	300
2,4 डी इथाइल एस्टर 38 ईसी	1200–1800	3530–5290	300–330
सल्फैन्ट्राजोन 28 + क्लोमाजोन 30 डब्लूपी	700+750	2500	302
• कुन्द्रा (False Amaranth, Latmahuria : *Digera* spp.) एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक			
सल्फैन्ट्राजोन 39.6 एससी	720	1500	306
• कुन्द्रा (Crab Finger grass: *Digitaria sanguinalis*) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास			
एमेट्राइन 80 डबलूजी	2000	2500	311
एमेट्रिन 73.1 + ट्राइफ्लोक्सीसल्फ्यूरॉन सोडियम 1.8 डब्लूजी	937.5–1125	1250–1500	221
हैलोसल्फ्यूरोन मिथाइल 12 + मैट्रीब्यूजिन 55 डब्लूजी	54+247.5	450	294
मेजोट्रिओन 2.27 + एट्राजिन 22.7 एससी	875	3500	190
• कुन्द्रा (Bamboo grass: *Digitaria* spp.) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास			
एट्राजिन 50 डबलूपी	500–2000	1000–4000	–
2,4 डी डाईमिथाईल एमिन साल्ट 58 एसएल	3500	6300	–
डाइयुरान 80 डबलूपी	1600–3200	2000–4000	–
सल्फैन्ट्राजोन 39.6 एससी	720	1500	306
क्लोमाजोन 22.5 + मैट्रीब्यूजिन 21 डब्लूपी	563+525	2500	307
• छोटी सांई (Jungle Rice : *Echinochloa colonum*) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास			
क्लोमाजोन 50 ईसी	750–1000	1500–2000	296
एमेट्रिन 73.1 + ट्राइफ्लोक्सीसल्फ्यूरॉन सोडियम 1.8 डब्लूजी	937.5–1125	1250–1500	221
हैक्जाजिनोन 13.2 + डाइयुरान 46.8 डब्लूपी	1200(264+936)	2000	282–306
मेजोट्रिओन 2.27 + एट्राजिन 22.7 एससी	875	3500	190
• बड़ी सांई (Barnyard Grass: *Echinochloa crusgali*) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास			
डाइयुरान 80 डब्लूपी	1600–3200	2000–4000	–
मैट्रीब्यूजिन 70 डब्लूजी	1400–2000	2000–3000	309
• बड़ी सांई (Barnyard Grass: *Echinochloa* spp.) एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास			
सल्फैन्ट्राजोन 39.6 एससी	720	1500	306
2,4 डी सोडियम साल्ट 44 + मैट्रीब्यूजिन 35 + पाइरैजोसल्फ्यूरोन 1 डब्लूडीजी	1320+1050+30	3000	249
क्लोमाजोन 22.5 + मैट्रीब्यूजिन 21 डब्लूपी	563+525	2500	307
सल्फैन्ट्राजोन 28 + क्लोमाजोन 30 डब्लूपी	700+750	2500	302

• भ्रिंगराज **(False Daisy: *Eclipta alba*)** एकवर्षीय,दोबीजपत्री,चौड़ीपत्ती,शाक			
2,4 डी सोडियम साल्ट 44 + मैट्रीब्यूजिन 35 + पाइरैजोसल्फ्यूरोन 1 डब्लूडीजी	1320+1050+30	3000	249
• बनमडुआ, कोदई **(Indian goosegrass : *Eleusine indica*)** एकवर्षीय, एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास			
2,4 डी सोडियम साल्ट 44 + मैट्रीब्यूजिन 35 + पाइरैजोसल्फ्यूरोन 1 डब्लूडीजी	1320+1050+30	3000	249
हैलोसल्फ्यूरोन मिथाइल 12 + मैट्रीब्यूजिन 55 डब्लूजी	54+247.5	450	294
• बड़ी दुधी **(Asthma weed : *Euphorbia hirta*)** एकवर्षीय,दोबीजपत्री,चौड़ीपत्ती,शाक			
मैटसल्फ्युरान मिथाइल 20 डब्लूजी	6	30	346
हैक्जाजिनोन 13.2 + डाइयुरान 46.8 डब्लूपी	1200(264+936)	2000	282–306
• दुधी **(Asthma weed : *Euphorbia* spp.)** एकवर्षीय,दोबीजपत्री,चौड़ीपत्ती,शाक			
एट्राजिन 50 डब्लूपी	500–2000	1000–4000	–
मैटसल्फ्युरान मिथाइल 20 डब्लूपी	6	30	346
सल्फैन्ट्राजोन 39.6 एससी	720	1500	306
• गाजर घास **(Carrot Grass: *Parthenium hysterophorus*)** एक–बहुवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक			
एमेट्राइन 80 डब्लूजी	2000	2500	311
मैट्रीब्यूजिन 70 डब्लूजी	1400–2000	2000–3000	309
मैटसल्फ्युरान मिथाइल 20 डब्लूपी	6	30	346
2,4 डी सोडियम साल्ट 44 + मैट्रीब्यूजिन 35 + पाइरैजोसल्फ्यूरोन 1 डब्लूडीजी	1320+1050+30	3000	249
हैक्जाजिनोन 13.2 + डाइयुरान 46.8 डब्लूपी	1200(264+936)	2000	282–306
• भूई आंवला, हजारदाना **(Stone breaker: *Phyllanthus niruri*)** एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक			
मैटसल्फ्युरान मिथाइल 20 डब्लूजी	6	30	346
क्लोमाजोन 22.5 + मैट्रीब्यूजिन 21 डब्लूपी	563+525	2500	307
• भूई आंवला, हजारदाना **(Stone breaker: *Phyllanthus* spp.)** एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक			
सल्फैन्ट्राजोन 39.6 एससी	720	1500	306
• लूनिया **(Purslane: *Portulaca oleracea*)** एकवर्षीय,दोबीजपत्री,चौड़ीपत्ती,शाक			
एट्राजिन 50 डब्लूपी	500–2000	1000–4000	–
2,4 डी डाईमिथाईल एमिन साल्ट 58 एसएल	3500	6300	–
2,4 डी इथाइल एस्टर 38 ईसी	1200–1800	3530–5290	300–330
डाइयुरान 80 डब्लूपी	1600–3200	2000–4000	–
मैटसल्फ्युरान मिथाइल 20 डब्लूपी	6	30	346
मैटसल्फ्युरान मिथाइल 20 डब्लूजी	6	30	346
2,4 डी सोडियम साल्ट 44 + मैट्रीब्यूजिन 35 + पाइरैजोसल्फ्यूरोन 1 डब्लूडीजी	1320+1050+30	3000	249
टोपरामेजोन 10 + एट्राजिन 300 एससी	930	3000	268
• बंद्रा **(Yellow Foxtail: *Setaria* spp.)** एकवर्षीय,एकबीजपत्री, सकरी पत्ती, घास			
हैक्जाजिनोन 13.2 + डाइयुरान 46.8 डब्लूपी	1200(264+936)	2000	282–306
• मकोय **(Silverleaf nightshade : *Solanum* sp.)** बहुवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक			
मैटसल्फ्युरान मिथाइल 20 डब्लूपी	6	30	346
• पत्थरचटटा, विसखापरा **(Giant pigweed :*Trianthema monogyna*)** एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक			
एमेट्राइन 80 डब्लूजी	2000	2500	311
हैक्जाजिनोन 13.2 + डाइयुरान 46.8 डब्लूपी	1200(264+936)	2000	282–306
मेजोट्रिओन 2.27 + एट्राजिन 22.7 एससी	875	3500	190
• पत्थरचटटा, विसखापरा **(Giant pigweed : *Trianthema portulacastrum*)** एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक			
क्लोमाजोन 50 ईसी	750–1000	1500–2000	296
• पत्थरचटटा, विसखापरा **(Giant pigweed : *Trianthema* sp.)** एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती, शाक			
मैटसल्फ्युरान मिथाइल 20 डब्लूपी	6	30	346
सल्फैन्ट्राजोन 39.6 एससी	720	1500	306

एमेट्रिन 73.1 + ट्राइफ्लोक्सीसल्फ्यूरॉन सोडियम 1.8 डब्लूजी	937.5–1125	1250–1500	221
• गोखरू (Goathead *:Tribulus terristeris*) बहुवर्षीय, दोबीजपत्री,चौड़ीपत्ती,शाक			
एट्राजिन 50 डब्लूपी	500–2000	1000–4000	–
• छोटा गोखरू (Common Cocklebur : *Xanthium* spp.) एकवर्षीय, दोबीजपत्री, चौड़ीपत्ती,शाक			
2,4 डी सोडियम साल्ट टैक्निकल (2,4 डी एसिड 80 पूर्व में 80 डब्लूपी के नाम से पंजीकृत)	2000–2600	2500–3250	300
हानिकारक रोग एवं फफूँदनाशी रसायन (फन्जिसाइड)			
• लाल सड़न (Red rot: *Colletotrichum falcatum)*			
अजोक्सीस्ट्रोबिन 18.2 + डाइफेनोकोनाजोल 11.4 एससी	150	500	265
• चाबुक कंड (Whip Smut: *Ustilago scitaminea)*			
अजोक्सीस्ट्रोबिन 18.2 + डाइफेनोकोनाजोल 11.4 एससी	150	500	265
• रतुआ रोग (Rust: *Puccinia melanocephala)*			
अजोक्सीस्ट्रोबिन 18.2 + डाइफेनोकोनाजोल 11.4 एससी	150	500	265
गन्ना (Sugarcane) (500-1000 लीटर पानी प्रति हैक्टर)			
हानिकारक कीट एवं कीटनाशी रसायन (इन्सेक्टिसाइड)			
• गन्ना अगोला वेधक (Sugarcane Top Borer : *Scirpophaga nivella*)			
कार्बोफ्युरॉन 3 सीजी	2000	66600	–
क्लोरेन्ट्रानिलिप्रोल 18.5 एससी	75	375	208
क्लोरेन्ट्रानिलिप्रोल 0.4 जीआर	75	18.75	147
क्लोरपाइरिफॉस 20 ईसी	250–300	1250–1500	–
• अगेती प्ररोह वेधक (Early Shoot Borer : *Chilo infuscatellus*)			
क्लोरेन्ट्रानिलिप्रोल 18.5 एससी	75	375	208
क्लोरेन्ट्रानिलिप्रोल 0.4 जीआर	75	18.75	147
क्लोरपाइरिफॉस 20 ईसी	250–300	1250–1500	–
फिप्रोनिल 5 एससी	75–100	1500–2000	270
फ्लुबेन्डियामाइड 20 डब्लूजी	75	375	204
मिथाक्सीफेनोजाइड 21 एससी	120–150	500–625	161
मोनोक्रोटोफॉस 36 एसएल	600–800	1500–2250	–
बाईफेन्थ्रिन 8 + क्लोथियानिडिन 10 एससी	80 + 100	800 –1000	83
• गन्ना जड़ वेधक (Sugarcane Root Borer : *Emmalocera depressella*)			
फिप्रोनिल 5 एससी	75–100	1500–2000	270
फिप्रोनिल 0.3 जीआर	75–100	16670–25000	32
• पायरीला (Pyrilla = Sugarcane Leaf Hopper : *Pyrilla perpusilla*)			
क्लोरपाइरिफॉस 20 ईसी	300	1500	–
मोनोक्रोटोफॉस 36 एसएल	200	500	–
• गन्ना काला बग (Sugarcane Black Bug : *Cavelerius excavatus*)			
क्लोरपाइरिफॉस 20 ईसी	150	750	–
• सफेद गिडार (White Grub)			
थियामेथोक्जाम 0.9 + लेम्बडासाहेलोथ्रिन 0.20 जीआर	135 + 30	15	296
• गन्ने का मिली बग (Sugarcane Mealy Bug: *Saccharicoccus sacchari)*			
मोनोक्रोटोफॉस 36 एसएल	600	1500	–
• स्केल कीट (Scale insect)			
मोनोक्रोटोफॉस 36 एसएल	600	1500	–
• दीमक (Termite : *Microtermes obesi* and *Odontotermes obesus*)			
क्लोरेन्ट्रानिलिप्रोल 18.5 एससी	100–125	500–625	208
फिप्रोनिल 0.6 जीआर	75	12.5	229

इमिडाक्लोप्रिड 70 डब्लू एस		75–105	100–150	–
इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एसएल		70	350	45
थियामेथाक्जाम 75एसजी		120	160	230
बाईफेन्थ्रिन 8 + क्लोथियानिडिन 10 एससी		80 + 100	800–1000	83
थियामेथोक्जाम 0.9 + लेम्बडासाहेलोथ्रिन 0.20 जीआर		135 + 30	15	296
आम (Mango) (1000 लीटर पानी प्रति हैक्टर; 10 लीटर पानी प्रति पेड़)				
हानिकारक रोग एवं फफूँदनाशी रसायन (फन्जिसाइड)				
• चूर्णिल आसिता (Powdery Mildew: Oidium mangiferae)				
अजोक्सीस्ट्रोबिन 23 एससी		0.025%	0.1%	5
कार्बेंडाजिम 46.27 एससी		0.046%	0.1%	30
डिनोकैप 48 ईसी		2.4	5.0	–
हैक्जाकोनाजोल 5 ईसी		0.005%	0.1%	30
हैक्जाकोनाजोल 5 एससी		0.01%	0.2%	27
मैप्टाइल डिनोकैप 35.7 ईसी		2.16–2.4	6.172–6.586	7
मेट्राफेनोन 500 एससी		–	2.0	35
पैनकोनाजोल 10 ईसी		0.5	5.0	30
सल्फर 40 एससी		15–20	37.5–50.0	–
कार्बेन्डाजिम 12 + मैन्कोजेब 63 डब्लूपी		0.11%	0.15%	7
• श्यामव्रण (Anthracnose : Colletotrichum gloeosporioids)				
अजोक्सीस्ट्रोबिन 23 एससी		0.025%	0.1%	5
कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 50 डब्लूजी		0.12%	0.24%	10
कार्बेन्डाजिम 12 + मैन्कोजेब 63 डब्लूपी		0.11%	0.15%	7
हानिकारक कीट एवं कीटनाशी रसायन (इन्सेक्टिसाइड)				
• आम का फुदका (Mango Hopper : Idioscopus clypealis =Amritodus atkinsoni)				
डेल्टामेथ्रिन 2.80 ईसी	0.03 – 0.05 प्रतिशत	0.33–0.5 मिली/ली पानी	01	
डाइमेथोएट 30 ईसी	0.05 प्रतिशत	2475– 3300		
इमिडाक्लोप्रिड 17.5एसएल	0.40.–0.80 ग्रा/पेड.	2.4 मिली /पेड़	45 (10 ली प्रति पेड़)	
लेम्डा–साइहैलोथ्रिन 5 ईसी	0.0025–0.005 प्रतिशत	0.5–1.0 मिली/ली	7	
मैलाथियॉन 50 ईसी	0.075 प्रतिशत	2250–3000	.	
मोनोक्रोटोफॉस 36 एसएल	0.040 प्रतिशत	1500 – 2000	20 ली/पेड़	
आक्सीडिमेटॉन मिथाईल 25ईसी	0.025 प्रतिशत	1500–2000	.	
• आम प्ररोह गॉल (Mango Shoot Gall Maker: Apsylla cistellata)				
मोनोक्रोटोफॉस 36 एसएल	0.040 प्रतिशत	1500 –2000	20ली/पेड़	
• आम मिली बग (Mango Mealy Bug : Drosicha mangiferae)				
डाइमेथोएट 30 ईसी	0.05 प्रतिशत	2475– 3300		
मैलाथियॉन 50 ईसी	0.075 प्रतिशत	2250–3000	.	
मोनोक्रोटोफॉस 36 एसएल	0.040 प्रतिशत	1500 –2000	20ली/पेड़	
• तना वेधक (Shoot borer)				
मोनोक्रोटोफॉस 36 एसएल	0.040 प्रतिशत	1500 – 2000	20ली/पेड़	
• आम फल मक्खी (Mango Fruit Fly : Dacus dorsalis)				
थ्रिप्स (Thrips)				
टोलफेनपायरेड 15 ईसी	150.0	1000	7	
• आम कलिका माइट (Mango Bud Mite : Aceria mangiferae)				
मोनोक्रोटोफॉस 36 एसएल	0.040प्रतिषत	1500– 2000	10 ली/पेड़	
			सम्पर्क सूत्र : 9927194497	

किसानोपयोगी कृषि यंत्र

डा. टी.पी. सिंह

कृषि की अधिकतर क्रियाएं मौसम पर आधारित होती हैं, जिन्हें समय पर पूर्ण किया जाना अति आवश्यक है। वर्तमान में मानव शक्ति की कमी के कारण ये क्रियाएं समय पर पूर्ण किये जाने के लिए कृषि मशीनीकरण पर निर्भर हो गई हैं। कृषि यंत्रों के उपयोग से समय की बचत तथा मानव शक्ति की कम आवश्यकता होती है।

पर्वतीय क्षेत्रों में सीढ़ीदार खेत होने के कारण खेतों की चौड़ाई कम तथा लम्बाई अधिक होती है, साथ ही खेतों का आकार एक जैसा न होने से इसमें ट्रैक्टर चालित कृषि यंत्रों का उपयोग सम्भव नहीं होता है। अतः पर्वतीय क्षेत्रों में कृषि की क्रियाएं अधिकतर बैल चालित यंत्रों से की जाती है। जबकि इसके विपरीत मैदानी क्षेत्रों में कृषि कार्य हेतु ट्रैक्टर चालित यंत्र अधिक प्रचलित हैं। इनमें से कुछ महत्वपूर्ण कृषि यंत्रों का वर्णन निम्नवत् किया जा रहा हैः

1. बैल चालित कृषि यंत्र

(अ) पंत-पौड़ी नसूड़ाः

पर्वतीय क्षेत्रों में यह यंत्र खेत को तैयार करने के लिए जुताई हेतु उपयोग किया जाता है। परम्परागत हल पूर्णतयाः लकड़ी का बना होता है परन्तु लकड़ी की बचत करने के उद्देश्य से इस हल में ढांचे को छोड़कर शेष भाग को लोहे का बनाया गया है। इसके बीच में एक खाँचा बनाया जाता है, जिसमें जुताई करने वाला बाना लगा रहता है, जिसे आगे पीछे खिसकाकर जुताई को गहरा अथवा उथला किया जा सकता है। यह नसूड़ा लकड़ी के माध्यम से फ्रेम में लगा रहता है। जहाँ एक ओर परम्परागत नसूड़ा एक–दो साल में खराब हो जाता है, वहीं दूसरी ओर विकसित नसूड़ा 3–4 साल तक चलता है।

(ब) पौड़ी दनालाः

यह यंत्र पर्वतीय क्षेत्रों में खेतों में निराई–गुड़ाई करने के काम आता है। परम्परागत दनाला पूर्णतयाः लकड़ी का बना होता है, वहीं दूसरी ओर यह दनाला पूर्णतयाः लोहे का बनाया गया है। इसमें विशेषता यह है कि इसमें लोहे की खूटियाँ लगायी गयी है ताकि आवश्यकता होने पर उन्हें गर्म कर पुनः पैना किया जा सकता है। यह यंत्र खेत में खड़ी फसलों जैसे मंडुआ, झंगोरा, धान इत्यादि की निराई–गुड़ाई के लिए अत्यधिक उपयोगी है।

(स) पंत दमालाः

इस यंत्र को पड़लर भी कहा जाता है। यह सिंचित क्षेत्रों में धान के खेत में कदेड़ (कीचड़) बनाने के लिए उपयोग किया जाता है, जिससे मिट्टी के छोटे–छोटे कण जमीन के पानी के रिसने के मार्ग को बन्द कर देते हैं तथा पानी अधिक समय तक खेत में रूका रह सकता है। इस यंत्र को धान की रोपाई के पहले चलाया जाता है। स्थानीय दमाला में लकड़ी की खूटियाँ होने के कारण खेत में चलते हुए प्रायः टूट जाती है जबकि विकसित दमाला में लकड़ी की खूटियों के स्थान पर लोहे की खूटियाँ लगाई गई हैं जो लम्बे समय तक टिकाऊ होती हैं।

(द) पंत पर्वतीय हलः

यह पूर्णतया लोहे का बनाया गया है। यह उन स्थानों पर प्रयोग किया जाता है जहाँ मिट्टी में लगभग 1.5 फुट गइराई तक पत्थर न हों, जिससे जुताई में बाधा नहीं आती है। यह पर्वतीय क्षेत्रों में गहरी जुताई करने के काम आता है। इसमें लगे लोहे के हैण्डिल पर दबाव देकर जुताई को कम अथवा अधिक गहरा किया जा सकता है।

(ध) पंत पर्वतीय जुआं:

यह 'तुन' की लकड़ी से निर्मित लगभग 3 कि.ग्रा. वजन का होता है, जिससे पशुओं के गर्दन पर अधिक बोझ नहीं पड़ता है। पशुओं के गर्दन के सम्पर्क में आने वाले भाग को गोलाई में बनाकर चिकना किया गया है। इसे स्थानीय बीम (हरीश) में जोड़कर कृषि कार्यों हेतु यंत्रों का उपयोग किया जाता है। स्थानीय जुओं की अपेक्षा हल्का होने से बैलों से देर तक काम लिया जा सकता है तथा उनके गर्दन पर घाव भी नहीं होता है।

2. हस्त चलित/मानव चलित कृषि यंत्र :

(क) हैन्ड व्हील होः

यह पंक्तियों में बोई गई फसलों में निराई–गुड़ाई के काम आता है। यह पूर्ण रूप से लोहे से निर्मित है। इस यंत्र में लोहे के हैण्डिल के एक सिरे से दो लोहे के पहिये जुड़े रहते हैं तथा इन लोहे के पहियों के बीच, पीछे की ओर, फ्रेम से विभिन्न आकार एवं प्रकार के ब्लेड आवश्यकतानुसार लगाये जाते हैं जो फसल के अनुसार निराई–गुड़ाई हेतु बदले जा सकते हैं।

(ख) कुटलाः

यह फसलों में गुड़ाई करने के साथ–साथ छोटी क्यारियों को बुवाई के लिए तैयार करने के भी काम आता है। इससे बैठकर तथा खड़े होकर, लम्बा लकड़ी का हैण्डिल लगाकर, गुड़ाई की जा सकती है। स्थानीय कुटला में गुड़ाई करने वाले भाग को लकड़ी के हैण्डिल में खाँचा बनाकर लगाया जाता है, परन्तु विकसित कुटले में गुड़ाई करने वाले भाग को लकड़ी के हैण्डिल में लोहे का नट लगाकर बनाया जाता है। विकसित कुटले को लकड़ी के हैण्डिल के स्थान पर पूर्णतयाः लोहे का बनाकर गुड़ाई करने वाले भाग को वैल्डिंग कर जोड़ा जाता है तथा हैण्डिल पर रबड़ का कवर भी चढ़ाया जाता है। रबड़ का कवर होने से जाड़ों के दिनों में हैण्डिल ठंडा होने पर भी कार्य करने में कोई परेशानी नहीं होती है, साथ ही गर्मी के दिनों में हाथ में पसीना आने पर भी हाथ हैण्डिल पर फिसलता नहीं है।

(ग) हैण्ड फार्कः

यह मुख्यतः जमीन पर बैठकर छोटी–छोटी क्यारियों में निराई–गुड़ाई के काम आता है। इसमें लकड़ी के हैण्डिल में तीन अथवा पांच लोहे के 'एल' आकार के हुक लगे रहते हैं, जो क्यारियों में से पत्थर तथा खरपतवार निकालने के काम आता है। हैण्ड फार्क से पत्तियां एकत्रित करने में भी आसानी होती है। इससे कार्य करने में अधिक बल की आवश्यकता नहीं पड़ती।

(घ) पैडी थ्रेसर कम विनोइंग फैनः

इस यंत्र से धान की मड़ाई तथा ओसाई की जाती है। इस यंत्र में एक लूप टाईप थ्रैसिंग ड्रम पर लोहे की खूटियाँ लगी रहती हैं तथा इस ड्रम को चलाने के लिए एक तरफ हैण्डिल तथा हैण्डिल की दूसरी ओर ओसाई करने हेतु पंखा लगा रहता है। हैण्डिल के घुमाने से ड्रम तथा पंखा दोनों एक साथ घूमते हैं। धान की मड़ाई करते समय सुरक्षा की दृष्टि से ओसाई पंखें को हटाकर पहले मड़ाई की क्रिया पूरी करनी चाहिए, उसके पश्चात् ओसाई पंखे को पुनः लगाकर दाने को साफ करने का कार्य करना चाहिए। धान की मड़ाई के समय दाने छिटककर दूर न चले जायें, इसको रोकने के लिए ड्रम के ऊपर एक कवर लगाया जाता है जो कपड़े अथवा बोरी के टाट से बना होता है। इस यंत्र को दो श्रमिक आसानी से एक स्थान से दूसरे स्थान पर आवश्यकतानुसार ले जा सकते हैं।

3. पावर टिलरः

पावर टिलर उन कृषकों लिए बहुत उपयोगी है, जिनकी जोत कम है तथा उनके लिए ट्रैक्टर क्रय कर कार्य करना लाभप्रद नहीं है। पावर टिलर में एक रोटावेटर की तरह का टिलर होता है, जिसे

चलाने के लिए शक्ति पावर टिलर पर लगे इंजन से बैल्ट–पुली तथा गियरों के माध्यम से मिलती है। इसी के द्वारा टिलर के पहियों को भी चलने की शक्ति मिलती है। ट्रैक्टर तथा टिलर में मुख्य अन्तर यह होता है कि पावर टिलर में दो पहिये होते हैं तथा चालक इसके पीछे चलकर इसके हैण्डिल में लगे क्लच से इसे नियंत्रित करता है। यह ट्रैक्टर की अपेक्षा बहुत ही कम स्थान पर घूम सकता है। इसका प्रयोग जुताई के अलावा अन्य कृषि कार्यों हेतु शक्ति स्त्रोत के रूप में भी किया जाता है। यह पर्वतीय क्षेत्रों में सीढ़ीनुमा खेतों में आसानी से कार्य कर सकता है। सिंचित क्षेत्रों में धान के खेत में कदेड़ (कीचड़/पडलिंग) करने में यह बहुत उपयोगी है।

4. ट्रैक्टर चालित यंत्रः

इस प्रकार के यंत्र मुख्यतः मैदानी भागों में उपयोग किये जाते हैं। इनका प्रयोग उन स्थानों पर किया जाता है जहाँ पर खेतों का आकार बड़ा होता है जिसमें ट्रैक्टर से आसानी से कार्य किया जा सके। वर्ष में दो से अधिक फसल लेने के लिए इनका उपयोग अधिक लाभप्रद होता है।

(क) ट्रैक्टर चालित रोटावेटरः

यह एक जुताई का अत्यन्त ही आधुनिक कृषि यंत्र है, जिससे खेत की तैयारी एक या अधिकतम दो बार चलाने से पूरी हो जाती है। यह विभिन्न साईजों में उपलब्ध है जिसे ट्रैक्टर के हार्सपावर के हिसाब से चलाया जा सकता है। पारम्परिक विधि की तुलना में खेत की तैयारी में इस यंत्र के प्रयोग से समय तथा डीजल की बचत होती है। इस यंत्र को चलाने के लिए 40–45 अश्वशक्ति वाले ट्रैक्टर की आवश्यकता होती है। यह यंत्र एक दिन में लगभग 1.50 से 2.0 हैक्टर खेत बुवाई योग्य तैयार कर सकता है। इस यंत्र का प्रयोग किसान फसल के अवशेष को मिट्टी में मिलाने के लिए भी कर सकता है।

(ख) लेजर लेवेलर

यह एक अत्यन्त ही आधुनिक कृषि यंत्र है जिसका प्रयोग खेत को समतल करने के लिए किया जाता है। समतल खेत होने से पानी का फैलाव एकसार होता है तथा पानी 35–45 प्रतिशत तक कम लगता है। लेजर लेवेलर खेत को समतल करने का कार्य अन्य कृषि यंत्रों की तुलना में अच्छी तरह कर पाता है। यह यंत्र ट्रैक्टर से जुड़ा होता है तथा इसमें एक लेजर ट्रान्समीटर, कन्ट्रोल बक्सा, लेजर आई, हाइड्रोलिक सिलिन्डर इत्यादि एक साथ कार्य करने वाले इसी तरह के अन्य भाग लगे रहते हैं। इसमें एक लेजर रिसिवर भी होता है जो कि लेजर ट्रान्समीटर द्वारा छोड़ी गयी प्रकाश की किरणों को पकड़ता है। लेजर रिसिवर लेजर ट्रान्समिटर द्वारा छोड़ी गयी प्रकाश की किरणों के हिसाब से ट्रैक्टर में लगी हुई स्क्रैपर ब्लेड के मिट्टी काटने एवं उसे गड्डें के स्थान पर छोड़ने के लिए आवश्यक निर्देश कन्ट्रोल बाक्स को देता है। इस प्रकार यह यंत्र खेत में ऊँचे स्थान से मिट्टी काट कर गढ्ढें वाले स्थानों को भरता जाता है जिससे अन्ततः खेत समतल हो जाता है।

(ग) सुपर सीडर

यह एक बुवाई का आधुनिक कृषि यंत्र है जिसका प्रयोग कम्बाईन से धान की फसल काटने के उपरान्त सीधे गेहूँ की बुवाई करने के लिए किया जाता है। इस यंत्र के प्रयोग से धान की पराली को जलाने की आवश्यकता नहीं होती है। सुपर सीडर ट्रैक्टर के पी0टी0ओ0 से चलने वाला कृषि यंत्र है जिसमें रोटावेटर की तरह का जुताई करने वाला तथा साथ में ही बुवाई करने की इकाई लगी होती है। जुताई करने वाली इकाई खेत की तैयारी करते समय धान के अवशेषों को छोटे–छोटे टुकड़ो में काटकर मिट्टी में मिला देती है तथा साथ ही बुवाई करने वाली इकाई गेहूँ की बुवाई कर देता है। यह

दोनों ही कार्य इस मशीन से एक साथ किए जाते है। इस मशीन का वजन लगभग 900 कि.ग्रा. है तथा इसे चलाने के लिए 55–65 हार्सपावर के ट्रैक्टर की आवश्यकता होती है। यह मशीन एक घंटे में लगभग 1.5–2.0 एकड़ क्षेत्रफल में बुवाई कर सकती है और प्रति हैक्टर लगभग 35–40 लिटर डीजल की खपत करती है।

(घ) पैडी ट्रान्सप्लान्टर

इस मशीन से धान की रोपाई एक बार में आठ पंक्तियों में की जाती है। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 23 से.मी. होती है। इस मशीन में धान की चटाईदार नर्सरी का प्रयोग करते है जिसमें एक चटाई के फ्रेम का आकार 22 × 50 से.मी. होता है। यह यंत्र डीजल इंजन द्वारा स्वचालित है। इस मशीन के प्रयोग के समय चालक के अलावा कुल एक श्रमिक की और आवश्यकता होती है। रोपाई यंत्र को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने के लिये रबर वाले पहिये का प्राविधान है। खेत में कार्य करते समय मशीन के आगे लोहे का पहिया लगा दिया जाता है। इस यंत्र का उपयोग मैदानी तथा पर्वतीय क्षेत्र के घाटी वाले स्थानों में किया जा सकता है। इस मशीन की कार्यक्षमता 1.0–1.2 हैक्टर प्रतिदिन होती है।

(ड़) रीपर-बाइन्डर

यह एक ऐसी मशीन है जो फसल को काटने के साथ–साथ पूलें भी बांधती है। इन छोटे–छोटे पूलों को बाद में इक्ट्ठा कर खेत से थ्रेसिंग के लिये ले जाया जाता है। रीपर–बाइन्डर से कटाई करने पर फसल को इकट्ठा करने तथा पूलें बांधने में लगने वाला श्रम एवं समय दोनों की बचत होती है। इस मशीन से गेहूँ, धान, जौं इत्यादि की कटाई की जा सकती है। यह मशीन एक बार में 4 फीट की चौड़ाई में फसल को जमीन से 5 से 7 से.मी. ऊँचाई से काटती है। इससे फसल का पुवाल जानवरों को खिलाने हेतु मिल जाता है।

(च) कम्बाइन हारवेस्टर

यह एक अत्यंत आधुनिक कटाई यंत्र है जिसका प्रयोग मुख्यतः धान एवं गेहूँ की फसल के लिए किया जाता है। यह मशीन एक बार में ही फसल को काट कर ओसाई कर देती है जिससे अनाज शीघ्र प्राप्त किया जा सकता है। इस मशीन के प्रयोग से मुख्य लाभ यह होता है कि इससे कम समय में अधिक क्षेत्रफल की कटाई संभव है। इस मशीन का प्रयोग किराये पर लेकर किया जा सकता है। कम्बाइन आकार के अनुसार कई प्रकार की उपलब्ध हैं तथा थोड़े से बदलाव करके एक ही कम्बाइन से धान एवं गेहूँ दोनों की कटाई की जाती है। जिन प्रदेशों में एक वर्ष में धान की कई फसल ली जाती है तथा साथ ही जमीन में अधिक नमी होती है ऐसी स्थानों पर धान की फसल की कटाई के लिए विशेष प्रकार की कम्बाइन बाजार में 'क्रॉप टाइगर' के नाम से उपलब्ध है।

सम्पर्क सूत्र : 7500241498 ☑

मृदा परीक्षण एवं मृदा परीक्षण परिणामों के आधार पर उर्वरकों की गणना

डा. ए.के. पंत

हमारी माटी बेशकीमती प्राकृतिक सम्पदा है। हम अपनी खाद्य व अन्य असीमित आवश्यकताओं के लिए मिट्टी पर निर्भर रहते हैं। स्वस्थ मृदा विकार रहित, पोषक सुलभ तथा वांछित गुणों युक्त होती है। मृदा स्वास्थ्य ज्ञान की सीमित जानकारी व पोषक आवश्यकतानुरूप खादों व उर्वरकों का खेती में उचित प्रयोग न हो सकने तथा मृदा सुलभ पोषकों के अवांछनीय दोहन की उचित भरपाई न होने के कारण मृदा उत्पादकता पर बुरा प्रभाव पड़ता है। मृदा अम्लीयता, लवणीयता, क्षारीयता, जीवांश मात्रा, पोषक तत्व सुलभता, जीवाणुओं की संख्या, जल धारण क्षमता व विषैले पदार्थों की मात्रा तथा उर्वरा शक्ति मिट्टी के स्वास्थ्य स्तर को इंगित करते हैं। मिट्टी में किसी पोषक तत्व की कमी या अधिकता फसल कुपोषण का कारण होती है। जहाँ पर उर्वरकों का उचित प्रयोग नहीं हो पाता वहाँ कम उत्पादन के साथ–साथ निम्न गुणवत्ता वाली उपज प्राप्त होती है। ऐसे में मृदा जाँच की अति आवश्यकता होती है। जिससे प्राप्त निष्कर्ष के आधार पर की गई उर्वरक गणना के अनुरूप उर्वरक प्रयोग से उर्वरता स्तर में समुचित सुधार लाया जा सकता है।

मृदा परीक्षण : परिचय

किसान भाईयों वैज्ञानिक खेती के अन्तर्गत मृदा परीक्षण एवं परीक्षण के आधार पर संस्तुत पोषक तत्वों का उचित उर्वरक स्त्रोत से गणना कर सही मात्रा, समय, विधि व अनुपात से प्रयोग करने पर खेती की लाभकारिता को लम्बे समय तक टिकाऊ बनाये रखा जा सकता है। मृदा उर्वरता के रख–रखाव का खेती में विशेष महत्व है क्योंकि कई वर्षों तक खेती करने के अनुभव के उपरान्त भी कृषक अपने भूमि की उर्वरता का मूल्यांकन सही तरीके से नहीं कर पाता है। इसके लिए मृदा परीक्षण प्रयास उपयोगी साबित होता है। कृषि विविधीकरण के अन्तर्गत खेती, सह–फसली खेती, कृषिवानिकी, वृक्षारोपण, मत्स्य पालन और पुष्पों की खेती में मृदा परीक्षण के आधार पर उर्वरकों का एकीकृत पोषक तत्व प्रबन्धन के अन्तर्गत उपयोग कर सामयिक कृषि कार्यों में सिंचाई, निराई–गुड़ाई व अन्य कार्य करते हुए खेती की समगतिशीलता को बनाये रखा जा सकता है। उपज व तकनीकी के बीच की रिक्तता उत्पादन बढ़ाने की मुख्य समस्या है यद्यपि फसल उत्पादन को प्रभावित करने वाले कारक अनेक होते हैं। इन सब की जानकारी का होना सफल खेती की पहचान होती है। फसल व प्रजाति का चुनाव कर, उपलब्ध भूमि, अन्य संसाधन व संस्तुत पोषकों का मृदा परीक्षण से प्राप्त परिणामों के आधार पर निर्धारित, खाद एवं उर्वरकों के एकीकृत प्रयोग से उन्नत उपज प्राप्त किये जा सकने की पर्याप्त सम्भावनाऐं होती हैं।

पौधों की वृद्धि एवं विकास में सत्रह पोषक तत्वों की अनिवार्यता पायी गयी है। उर्वरकों द्वारा दिये जाने वाले नत्रजन, फॉस्फोरस, पोटाश व जिंक आदि के अलावा अन्य पोषकों की फसलों के लिए आपूर्ति मिट्टी से ही होती है। बिना मृदा परीक्षण किये उर्वरकों के प्रयोग से भूमि में पोषक असंतुलन की स्थिति उत्पन्न हो जाती है, जिससे न केवल मिट्टी का स्वास्थ्य बल्कि खर्च किये गये धन का अपव्यय होता है जिसे रोकने की आवश्यकता है साथ ही बिना मृदा जाँच के रासायनिक उर्वरकों के लगातार असंतुलित प्रयोग तथा देशी एवं जैविक खादों के सीमित प्रयोग व भूमि से फसल अवशेषों का पुनः चक्रण न करने के स्थान पर जलाकर नष्ट कर दिये जाने से भूमि की उर्वरता प्रभावित होती है। अलग–अलग किस्म की मिट्टी में आवश्यक पोषक तत्व भी अलग–अलग मात्रा में पाये जाते हैं और बिना मृदा जाँच संस्तुत उर्वरकों का प्रयोग करने पर

पर्याप्त उपज प्राप्त नहीं होती। ऐसी दशा में कृषकों को अपनी मिट्टी की समय–समय पर जाँच कराकर उपलब्ध पोषकों की गणना कर उचित उर्वरक स्त्रोत से पोषक तत्वों का प्रयोग करना चाहिए। इस प्रकार फसल उत्पादन में भूमि से प्राप्त उपज के रूप में उद्ग्रहित पोषक क्षति की प्रतिपूर्ति मृदा परीक्षण के आधार पर पोषकों की गणना कर उत्पादन व उत्तम मृदा उर्वरता स्तर अथवा मृदा स्वास्थ को दीर्घकाल तक बनाये रखा जा सकता है।

कृषि पद्धति की लाभकारिता लगातार कम व फसलोत्पादन की लागत में निरन्तर वृद्धि से वर्तमान कृषि की लाभकारिता कम होती जा रही है तथा उत्पादन में ठहराव की स्थिति बनी हुई है। कृषकों द्वारा वैज्ञानिक सुझावों की अनदेखी और भूमि को पर्याप्त आराम न दिये जाने के कारण उर्वरता क्षीण होती जा रही है। अधिक उत्पादन लेने की होड़ में मृदा की उर्वरा शक्ति पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। भूमि में जीवांश स्तर व उपलब्ध मुख्य व सूक्ष्म पोषक तत्वों के असंतुलन के कारण उच्च उत्पादन देने वाली फसल प्रजातियों से आशातीत उपज प्राप्त नहीं हो पा रही है। आज किसान देखा–देखी खेती में बिना मिट्टी जाँच कराये संस्तुत उर्वरक प्रयोग के सापेक्ष उर्वरकों का अंधाधुंध प्रयोग कर रहे हैं, इसे रोका जाना चाहिए, क्योंकि इसमें लागत बढ़ने के कारण कम लाभ व मिट्टी में नुकसान की ज्यादा संभावना बनी हुई है। कारक उत्पादकता के प्रभावित होने से नत्रजनधारी उर्वरकों की उपयोग दक्षता मात्र 30 प्रतिशत तथा फॉस्फोरस व पोटाश उर्वरकों की 50–60 प्रतिशत के आस–पास है। इसे सुधारे जाने की आवश्यकता है।

मृदा परीक्षण परिणामों के आधार पर परिकल्पित पोषकों की मात्रा का उपयुक्त उर्वरक स्त्रोत से अन्य देशी खादों, जैव उर्वरकों, फसल अवशेष के समावेश से फसल उत्पादन लागत कम कर उधिक आय प्राप्त की जा सकती है। आज कृषकों द्वारा अधिक उत्पादन प्राप्त करने के क्रम में उर्वरकों का असंतुलित व अनावश्यक प्रयोग किया जा रहा है तथा रसायनिक उर्वरकों पर अधिक निर्भरता की वजह से मिट्टी के स्वास्थ्य में नकारात्मक बदलाव दिखाई दे रहे हैं। जिससे इनके द्वारा अधिक उर्वरकों का प्रयोग करने पर भी आशातीत उपज प्राप्त नहीं हो पा रही है। अतः फसलों के समुचित पोषण व अधिक उपज लेने के लिए रासायनिक उर्वरकों के साथ देशी कार्बनिक खादों, पोल्ट्री खाद, गोबर की खाद, हरी खाद, फसल अवशेष, कम्पोस्ट, वर्मी कम्पोस्ट, प्रैसमड तथा जैव उर्वरकों का प्रयोग किया जाये जिससे मृदा स्वास्थ उचित बना रहे और वांछित उपज भी प्राप्त हो सके। मृदा परीक्षण के आधार पर उर्वरक प्रयोग से मृदा स्वास्थ्य व उर्वरता में सुधार लाकर उत्पादन में यथोचित बढ़ोत्तरी की जा सकती है। इस प्रकार महंगे उर्वरकों के प्रयोग दक्षता में सुधार के साथ–साथ उन पर निर्भरता को भी कम किया जा सकता है। मृदा उर्वरता के प्रभावित होने का शीधा प्रभाव फसल उपज पर पड़ता है। मृदा परीक्षण से मृदा स्वास्थ्य व उर्वरता सम्बन्धित समस्या का समाधान पाया जा सकता है और पोषक तत्व सुलभता की जानकारी प्राप्त हो जाती है। जीवांश स्तर जो उत्पादकता का सूचक व पोषकों का स्त्रोत होता है, के रख–रखाव में आसानी हो जाती है।

मृदा परीक्षणः उर्वरता का मूल्यांकन

मृदा उर्वरता के मूल्यांकन में मृदा परीक्षण सुगम, उपयोगी तथा प्रचलित विधि है। इससे फसल पोषण प्रबंधन में आवश्यक सहायता मिलती है। इसका उद्देश्य मृदा उर्वरता का पता कर उर्वरकों की समुचित गणना से आवश्यक व संतुलित मात्रा में पोषकों की संस्तुति करना, मृदा विकारों की जानकारी प्राप्त करना व सुधार उपाय बताना, अतिरिक्त उपज व लाभ का मूल्यांकन कर तद्नुसार योजनाओं की रूप–रेखा बनाना, मृदा उर्वरता मानचित्र बनाना व समय–समय पर उनका पुनः मूल्यांकन करना होता है।

मृदा परीक्षण प्रयोगशालाओं में मृदा उर्वरता मूल्यांकन हेतु प्रायः पी.एच. मान, विद्युत चालकता, जीवांश कार्बन, मुख्य व सूक्ष्म पोषक तत्वों की सुलभता व मृदा गठन आदि का निर्धारण कर, उर्वरता मूल्यांकन चार्ट से उर्वरता स्तर का निर्धारण व पोषक तत्वों की उचित उर्वरक स्त्रोतों से गणना व संस्तुति करना होता है।

मृदा परीक्षण : नमूना विधि

मृदा परीक्षण की सार्थकता, प्रथम चरण के रूप में सही नमूना लेने के समय व विधि पर निर्भर करता है। प्रायः पहली बोयी गयी फसल की कटाई के बाद तथा बोयी जाने वाली फसल की बुवाई से पहले मृदा नमूना लेने का उचित समय होता है। नमूना लेने की विधि में सम्पूर्ण खेत को रंग, आकार, ढ़लान, पैदावार स्तर के अनुसार कई हिस्सों में बाँटकर प्रत्येक भाग से अलग–अलग टेढे–मेढे चलते हुए 15–20 स्थानों से ऊपरी 15 से.मी. परत में नमूना लिया जाता है। साधारण नमी की दशा में नमूना फावड़ा, खुरपी अथवा ऑगर की सहायता से खेत में 'वी' ऑकार का (V) गड्ढा बनाकर अलग–अलग स्थान से इस प्रकार नमूना लिया जाता है कि वह नमूना पूरे क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करता हो। जलममग्न क्षेत्र से नमूना पोस्ट होल ऑगर से लिया जाये। इस प्रकार नमूना लेकर अलग–अलग गहराई के नमूनों को अलग–अलग साफ स्थान पर रखकर अच्छी तरह मिलाकर फिर ढेर लगाकर इसे चार भागों में बाटते हुए आमने सामने के दो भागों को फेककर शेष दो भागों को पुनः यही क्रिया दोहराते हुए, अन्त में मात्र 500 ग्राम मिट्टी साफ थैली में रखकर उस पर किसान का नाम, पता, नमूने की पहचान लगाकर इसे अन्य थैली में रखकर ऐसा ही विवरण का लेवल बाहर से लगाकर, इसे यथाशीघ्र प्रयोगशाला में भिजवाकर परीक्षण परिणाम व पोषक संस्तुति प्राप्त कर उसी के अनुसार उर्वराकें का प्रयोग करना चाहिए। यहाँ पर यदि नमूना सुखाना पड़े तो उसे छाया में सुखाया जा सकता है। परन्तु धूप में कदापि न सुखायें। ध्यान रखना चाहिए कि न तो नमूना संक्रमण क्षेत्र यथा मेंड़, पेड़ के पास, खाद के ढेर के पास व उर्वरक थैले में रखा जाय और न ही उस खेत से नमूना लिया जाय जिसमें हाल ही में खाद या उर्वरक डाला गया हो अन्यथा परिणाम त्रुटिपूर्ण प्राप्त होंगे।

मृदा पोषक तत्वों की उपलब्धता (कि.ग्रा./है.) एवं उर्वरता स्तर का निर्धारण

पोषक तत्व एवं उर्वरता स्तर			
मुख्य			सूक्ष्म(न्यूनतम निर्णायक मात्रा, मि.ग्रा./है.)
नत्रजन			
निम्न	मध्यम	उच्च	जस्ता
280 से कम	280–560	560 से अधिक	0.6–0.8
फॉस्फोरस			ताँम्बा
11 से कम	11–25	25 से अधिक	0.2
पोटाश			लोहा
120 से कम	120–280	280 से अधिक	4.5
जीवांश कार्बन (%)			मैग्नीज
0.50 से कम	0.50–0.75	0.75 से अधिक	1.0–2.0
सामान्य मान (1:2 अनुपात)			बोरान
	पी.एच. 6.5–7.5		0.5
विद्युत चालकता			मालिब्डेनम
	1.0 डेसी सी. प्रति मी.		0.1

मृदा परीक्षण परिणामों के आधार पर मुख्य फसलों में पोषक तत्वों की संस्तुति (कि.ग्रा./है.)

क्रमस	फसल	नत्रजन			फॉस्फोरस			पोटाश		
		निम्न	मध्यम	उच्च	निम्न	मध्यम	उच्च	निम्न	मध्यम	उच्च
रबी	गेहूँ	150	120	90	75	45	30	60	40	—
	तोरिया	75	45	30	30	10	—	—	—	—
	राई	100	60	40	50	30	20	60	40	—
	चना / मटर / मसूर	15	5	—	50	30	20	—	—	—
	आलू	240	160	120	80	50	40	120	70	40
	गन्ना	240	160	120	80	50	40	70	40	20
	बरसीम	50	30	20	10	30	20	20	—	—
खरीफ	धान	150	70	40	60	44	30	70	50	—
	मक्का	150	90	60	75	45	30	80	60	—
	ज्वार	50	30	20	30	10	—	40	20	—
	बाजरा	100	60	40	50	30	20	60	40	—
	सोयाबीन	30	10	5	100	60	40	60	40	—
	अरहर	20	10	—	50	30	20	—	—	—
	मूँग / उर्द	20	10	—	40	25	10	—	—	—
	तिल	40	20	10	20	15	10	15	—	—

सीमान्त कमी के अन्तर्गत सल्फर / जिप्सम की 100, आयरन सल्फेट की 25, मैंग्नीज सल्फेट की 10, कॉपर सल्फेट की 2, जिंक सल्फेट की 25 तथा बोरेक्स की 10 कि.ग्रा. हैक्टर प्रयोग करने की संस्तुति की जाती है।

मृदा परीक्षण : उर्वरकों की गणना

मृदा परीक्षण परिणाम के आधार पर मिट्टी की उर्वरता श्रेणी एवं पोषक संस्तुत मात्रा नोट कर लें। माना गेहूँ के लिए यह 150 कि.ग्रा. नत्रजन, 45 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 40 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर की दर से प्रयोग करना है तथा किसान के पास यूरिया, एस.एस.पी. तथा एम.ओ.पी. उपलब्ध है तो इसकी मात्रा का आंकलन निम्न प्रकार से किया जाय।

1. यूरिया की मात्रा = 100×150÷46 = 326 कि.ग्रा / है0
2. एस.एस.पी. की मात्रा = 100×45÷16 = 281 कि.ग्रा / है0
3. एम.ओ.पी. मात्रा = 100×40÷60 = 67 कि.ग्रा / है0

अतः गेहूँ बुवाई हेतु पोषक तत्व के रूप में 150 कि.ग्रा. नत्रजन, 45 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 40 कि.ग्रा. पोटाश की दर से प्रयोग करने हेतु यूरिया 326 कि.ग्रा, एस.एस.पी. 281 कि.ग्रा. तथा एम.ओ. पी. 67 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की आवश्यकता होगी जिसमें से नत्रजन को तीन बार में तथा फॉस्फोरस व पोटाश की पूर्ण मात्रा बुवाई के समय प्रयोग किया जाय।

उपरोक्त उर्वरकों के स्थान पर किसान के पास यूरिया, डी.ए.पी. तथा एम.ओ.पी. होने पर गणना निम्न प्रकार होगी :

1. डी.ए.पी. मात्रा = 100×45÷46 = 98 कि.ग्रा.
2. 98 कि.ग्रा. डी.ए.पी. में नत्रजन की मात्रा = 18×98÷100 = 18 कि.ग्रा.
3. यूरिया से दी जाने वाली नत्रजन की मात्रा = 150–18 = 132 कि.ग्रा. / है. अर्थात 100÷46×132 = 286 कि.ग्रा. यूरिया
4. एम.ओ.पी. की मात्रा = 100÷60×40 = 67 कि.ग्रा. / है.

उपरोक्त क्रिया को और आसान बनाने हेतु निम्न तालिका अमल में लायी जा सकती है :

उपलब्ध रासायनिक उर्वरक, पोषक तत्व व उनके गुणांक

उर्वरक	तत्व प्रतिशत						गुणांक					
	N	P	K	S	Z	B	N	P	K	S	Z	B
यूरिया	46	–	–	–	–	–	2.0	–	–	–	–	–
एस.एस.पी.	–	16	–	12	–	–	–	6.3	–	8.3	–	–
डी.ए.पी.	18	46	–	–	–	–	5.5	2.2	–	–	–	–
एम.ओ.पी.	–	–	60	–	–	–	–	–	1.7	–	–	–
एन.पी.के.	15	15	15	–	–	–	6.7	6.7	6.7	–	–	–
एन.पी.के.	12	32	16	–	–	–	8.3	3.1	6.3	–	–	–
एन.पी.	20	20	–	–	–	–	5.0	5.0	–	–	–	–
जिंक सल्फेट	–	–	–	10	21	–	–			10	4.7	–
बोरेक्स	–	–	–	–	–	10.5	–	–	–	–	–	9.5

मृदा परीक्षण उपयोगी सुझाव

- उर्वरकों का संतुलित प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करें।
- जीवांश या गोबर की खाद बुवाई के 25–30 दिन पूर्व खेत में डालकर मिला लें।
- नत्रजन उर्वरकों का प्रयोग 2–3 बार में फॉस्फोरस और पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई पर ही प्रयोग करें।
- दलहनी व तिलहनी फसलों में संस्तुत सल्फरयुक्त उर्वरकों की पूरी मात्रा बुवाई के समय कूड़ों में प्रयोग करें।
- खैरा रोग के बचाव हेतु जिंक सल्फेट का प्रयोग करें।
- मृदा परीक्षण के आधार पर उर्वरकों व कार्बनिक खादों की संस्तुत मात्रा का संतुलित रूप में प्रयोग करें।
- मिट्टी में प्रत्येक टन गोबर की खाद डालने पर 5 कि.ग्रा. नत्रजन एवं पोटाश तथा 25 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर पी. की मात्रा को संस्तुत दर से कम करके डालें।
- फसल बुवाई से पूर्व हरी खाद उपयोग में लाने की दशा में 30–40 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर नत्रजन उर्वरक कम मात्रा प्रयोग करें।
- जैव उर्वरक एजोटोबैक्टर/इजोस्पाइरिलिम का प्रयोग करने पर 20 कि.ग्रा./हैक्टर कम नत्रजन का प्रयोग करें।
- पी.एस.बी. के प्रयोग से विभिन्न फसलों में 15–20 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तत्व की बचत की जा सकती है।
- उचित फसल चक्र का चुनाव कर दलहनी फसल का भी समावेश होना चाहिए।
- खेती में समय पर बुवाई, पर्याप्त पौध संख्या, निराई–गुड़ाई, सिंचाई व उर्वरक प्रयोग तथा कीट रोग आदि का भी समय पर नियंत्रण करें।

सम्पर्क सूत्र : 9412419872☑

विभिन्न फसलों में मासिक कृषि कार्य

डा. आर.के. शर्मा, डा. अजय कुमार, डा. बी.डी. सिंह एवं डा. बी.एस. कार्की

जनवरी माह के कृषि कार्य

मैदानी क्षेत्र

तोरिया (लाही), एवं राई :

- विलम्ब से बोयी गयी तोरिया की फसल में जब 75 प्रतिशत फलियाँ सुनहरी रंग की हो जाये तो कटाई कर लें तथा उन्हें अच्छी प्रकार सुखाकर मड़ाई कर लें।
- राई/सरसों में फूल व फलियाँ बनते समय आवश्यकतानुसार सिंचाई करें। फसल में बालदार सूँड़ी व माहू कीट तथा झुलसा, सफेद गेरूई एवं तुलासिता रोग आने पर नियंत्रण हेतु संस्तुत रसायनों का प्रयोग करें।

चना, मटर एवं मसूर :

- इन फसलों में आवश्यकतानुसार निराई–गुड़ाई कर खरपतवार निकाल लें।
- चना अथवा मसूर में माहू कीट लगने पर रोकथाम हेतु संस्तुत कीटनाशी रसायनों का छिड़काव करें।

गेहूँ एवं जौ :

- फसल की क्रान्तिक अवस्था पर आवश्यकतानुसार सिंचाई करें।
- देर से बोयी गयी फसल में बुवाई के लगभग 25–30 दिन के अन्दर निराई–गुड़ाई कर खरपतवार निकाल लें। रसायनों के प्रयोग से खरपतवारों के नियंत्रण हेतु संस्तुत पोस्ट इमरजेन्स (घासों के अंकुरण के बाद प्रयोग) खरपतवारनाशी रसायनों का प्रयोग करें।
- गेहूँ की फसल में जिंक की कमी अथवा पीला रतुआ के लक्षण दिखाई देने पर नियंत्रण हेतु संस्तुत रसायनों का प्रयोग करें।

गन्ना :

- पेड़ी एवं शरदकालीन गन्ने की कटाई करें।
- शरदकालीन गन्ने में निकले जल कल्लों (वाटर–शूट्स) को काट दें।
- गन्ने की पताई में आग न लगाकर उन्हें खेत से निकालकर कम्पोस्ट बनाने में या पेड़ी की फसल में पलवार की रूप में प्रयोग करें।

बरसीम, रिजका एवं जई :

- इन फसलों की उचित समय पर कटाई करें एवं कटाई के पश्चात् फसल में सिंचाई अवश्य करें।
- जई की फसल में सिंचाई के पश्चात् 30 कि.ग्रा. नत्रजन प्रति हैक्टर प्रयोग करें।

पर्वतीय क्षेत्र

गेहूँ एवं जौ :

- फसलों की अच्छी उपज हेतु समय पर निराई कर खरपतवारों को निकाल लें। रासायनिक विधि से खरपतवार नियंत्रण हेतु संस्तुति अनुसार खरपतवारनाशी रसायनों का प्रयोग करें।
- असिंचित दशा में बोयी गयी फसल में वर्षा होने पर अथवा पर्याप्त नमी की दशा में 0.5 से 0.6 कि.ग्रा. तथा सिंचित गेहूँ में सिंचाई के पश्चात् 1.0 से 1.2 कि.ग्रा. प्रति नाली की दर से यूरिया का खड़ी फसल में बुरकाव (टॉप–ड्रेसिंग) करें।

मसूर एवं मटर :

- फसलों में निराई–गुड़ाई कर उगे खरपतवारों/घासों को निकाल लें।
- पौध विगलन रोग आने पर संस्तुति अनुसार फफूँदनाशी रसायन का छिड़काव करें।

तोरिया (लाही), पीली सरसों एवं राईः

- इन फसलों में कीट अथवा रोगों का प्रकोप होने पर संस्तुत रसायनों का प्रयोग करें।

फरवरी माह के कृषि कार्य

मैदानी क्षेत्र

गेहूँ एवं जौ :

- समय पर बोयी गयी फसल में पुष्पावस्था में आ गयी होगी इस समय सिंचाई अवश्य करें।
- विलम्ब से बोयी गयी फसल में खरपतवार नियंत्रण हेतु संस्तुत खरपतवारनाशी रसायनों का प्रयोग करें।
- फसल में झुलसा, करनाल बन्ट व गेरूई रोग एवं माहू कीट का प्रकोप होने पर संस्तुति के अनुसार रसायनों का प्रयोग करें।

राई :

- अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए फूल आने व दाना भरने की अवस्थाओं पर सिंचाई करें। सफेद गेरूई, झुलसा अथवा तुलासिता रोग आने पर संस्तुति के अनुसार फफूँदनाशी रसायनों का छिड़काव करें।

चना, मटर एवं मसूर :

- इन फसलों में फूल आने से पूर्व आवश्यकतानुसार सिंचाई करें। फूल आते समय सिंचाई नहीं करना चाहिए अन्यथा फूल झड़ने से हानि होती है।
- चने की फसल में फली छेदक कीट का प्रकोप होने पर संस्तुति के अनुसार कीटनाशी रसायन का प्रयोग करें।

गन्ना :

- बसन्तकालीन गन्ने की अच्छी फसल की बुवाई के लिए फरवरी का द्वितीय पखवाड़ा उपयुक्त है। बीज प्रमाणित पौधशाला अथवा स्वस्थ नौलख फसल से लें।
- अधिक उत्पादन हेतु संस्तुत उन्नत प्रजातियों को बोयें। बीज की मात्रा, बीजोपचार, बुवाई की विधि, उर्वरकों का संतुलित मात्रा में प्रयोग एवं खरपतवारनाशी रसायन का छिड़काव संस्तुति के अनुसार करें।
- पेड़ी से अच्छी उपज लेने हेतु नौलख फसल की कटाई मध्य फरवरी से प्रारम्भ करें। अन्य सस्य क्रियायें एवं उर्वरकों का प्रयोग वैज्ञानिक संस्तुति के अनुसार करें।
- शरदकालीन गन्ने की फसल में आवश्यकतानुसार सिंचाई एवं निराई–गुड़ाई करें।

बरसीम, रिजका एवं जई :

- इन फसलों की यथासमय कटाई करें एवं प्रत्येक कटाई के पश्चात् सिंचाई अवश्य करें।

चारे की मक्का :

- हरा चारा हेतु मक्के की बुवाई फरवरी द्वितीय पखवाड़ें में करें। पौष्टिक चारा प्राप्त करने हेतु लोबिया की अन्तः फसल/सह–फसली खेती के रूप में बुवाई कर सकते है।
- भरपूर चारा प्राप्त करने हेतु बीज का शोधन, बुवाई एवं उर्वरकों का प्रयोग संस्तुति के अनुसार करें।

पर्वतीय क्षेत्र

गेहूँ एवं जौ :

- सिंचित दशा में बोयी गयी गेहूँ की फसल में वर्षा न होने पर पुष्पन अवस्था पर सिंचाई करें।
- उपराऊँ/असिंचित फसल में 2 प्रतिशत यूरिया के घोल (18–20 लीटर प्रति नाली) का पर्णीय छिड़काव लाभदायक रहेगा।
- फसल में गेरूई एवं झुलसा रोग आने पर नियंत्रण हेतु संस्तुत फफूँदनाशी रसायनों का प्रयोग करें।

तोरिया, पीली सरसों एवं राई :

- तोरिया एवं पीली सरसों की फसल तैयार होने पर काट लें।
- राई में माहू कीट अथवा रोगों का प्रकोप होने पर संस्तुति के अनुसार नियंत्रण करें।

मसूर एवं मटर :

- फलियों में दाना बनते समय खेत में नमी की कमी होने पर पानी की उपलब्धतानुसार सिंचाई करें।
- मसूर में माहू कीट एवं मटर में फली छेदक व पत्ती सुरंगक कीट का प्रकोप होने पर नियंत्रण हेतु संस्तुत कीटनाशी रसायनों का छिड़काव करें।

मार्च माह के कृषि कार्य

मैदानी क्षेत्र

गेहूँ एवं जौः

- फसल में नमी का अभाव न होने दें, आवश्यकतानुसार सिंचाई करें। इस बात का विशेष ध्यान रखें कि पानी देते समय तेज हवा न चल रही हो। गुल्ली–डण्डा व जंगली जई आदि खरपतवारों को निकालकर (रोगिग) नष्ट कर दें।
- कंडुवा रोग से ग्रसित गेहूँ की बालियों को सावधानीपूर्वक लिफाफे से ढ़ककर निकाल लें तथा मिट्टी में दबाकर नष्ट कर दें। माहू के नियंत्रण हेतु संस्तुत कीटनाशी रसायन का प्रयोग करें।

राई :

- तैयार फसल की कटाई व मड़ाई कर लें तथा दानों को सुखाकर भण्डारित कर लें।

चना, मटर, मसूर, उर्द एवं मूंग :

- चना, मटर एवं मसूर की फसलों में फली बनते समय आवश्यकतानुसार सिंचाई करें।
- चना में फली छेदक कीट की रोकथाम हेतु संस्तुति अनुसार कीटनाशी रसायन का प्रयोग करें।
- उर्द की बुवाई माह के प्रथम पखवाड़े में तथा मूंग की बुवाई द्वितीय पखवाड़े में कर लें। अच्छी उपज प्राप्त करने हेतु प्रजातियों का चुनाव, बीज की मात्रा, बीज शोधन व विशिष्ट राइजोबियम कल्चर से उपचार, बुवाई की विधि एवं उर्वरकों का प्रयोग संस्तुति के अनुसार करें।
- उर्द एवं मूँग की फसलें बसन्तकालीन गन्ने की दो लाईनों के बीच अन्तः फसल के रूप में भी उगाई जा सकती हैं। इससे किसानों को ज्यादा लाभ होगा।

गन्ना :

- नौलख गन्ने की कटाई माह के अन्त तक कर लें। पेड़ी से अच्छा उत्पादन लेने हेतु संस्तुति अनुसार समय पर सस्य क्रियाओं का प्रबन्धन करें।
- फरवरी माह में बोयी गयी फसल में सिंचाई करें तथा 3–4 दिन बाद गुड़ाई कर खरपतवार भी निकाल लें।
- बसन्तकालीन गन्ने की बुवाई माह के मध्य तक पूरी कर लें। बुवाई से पूर्व संस्तुति अनुसार बीज का उपचार अवश्य करें।
- गन्ने की दो लाईनों के बीच में, अधिक आय हेतु अन्तःफसल के रूप में उर्द, मूंग अथवा लोबिया की एक लाईन की बुवाई की जा सकती है।
- शरदकालीन गन्ने में आवश्यकतानुसार सिंचाई करें तथा संस्तुति अनुसार यूरिया की टॉप–ड्रेसिंग करें।

बरसीम एवं रिजका :

- अधिकतम चारा प्राप्त करने हेतु प्रत्येक कटाई के पश्चात् फसल में सिंचाई करें। यदि बीज तैयार करना हो तो फसल की कटाई माह के द्वितीय पखवाड़े से रोक दें।

पर्वतीय क्षेत्र

गेहूँ एवं जौ :

- फसल की पुष्पन अवस्था पर सिंचाई उपलब्ध होने पर सिंचाई की करें।
- असिंचित फसल में पुष्पन अवस्था से पूर्व यूरिया के 2 प्रतिशत घोल (20 ग्राम यूरिया प्रति लीटर पानी) का पर्णीय छिड़काव करना लाभप्रद रहेगा।
- फसल में झुलसा अथवा गेरूई रोग आने पर संस्तुति के अनुसार रसायनों का प्रयोग करें।

तोरिया, पीली सरसों एवं राई :

- फसल पकने पर कटाई कर लें।
- मध्यम ऊँचाई वाले पर्वतीय क्षेत्रों में बोयी गयी राई की फसल में रोग अथवा कीट के नियंत्रण हेतु संस्तुति के अनुसार रसायनों का प्रयोग करें।

मटर एवं मसूर :

- फलियों में दाना बनते समय आवश्यकतानुसार सिंचाई करें।

- फली छेदक, पत्ती सुरंगक अथवा माहू कीट की रोकथाम हेतु संस्तुत कीटनाशी रसायनों का छिड़काव करें।

धान :

- माह के द्वितीय पखवाड़े में चेतकी धान (असिंचित) की बुवाई शुरू करें। अधिक उत्पादन हेतु प्रजाति का चयन, बीज की मात्रा, बीज शोधन, बुवाई की विधि एवं उर्वरकों का प्रयोग संस्तुति के अनुसार करें।

अप्रैल माह के कृषि कार्य

मैदानी क्षेत्र

गेहूँ एवं जौ :

- फसल पकने पर समय से कटाई करना सुनिश्चित करें ताकि अधिक सूखने पर कटाई के समय दाना झड़ने वाले नुकसान से बचा जा सके। फसल की गहाई कर दानों को अच्छी तरह सुखा लें तथा तत्पश्चात भण्डारित कर लें।

चना, मटर, मसूर, उर्द एवं मूंग :

- चना, मटर एवं मसूर की तैयार फसल की कटाई कर लें।
- विलम्ब से बोयी गयी चने की फसल में फली छेदक कीट का प्रकोप होने पर संस्तुति अनुसार कीटनाशी रसायन का छिड़काव करें।
- ग्रीष्मकालीन उर्द एवं मूंग की फसल में बुवाई के 25–30 दिन पर सिंचाई करें।
- शुद्ध एवं गन्ने के साथ अन्तःफसलीय उर्द एवं मूंग की फसल में पीला मौजेक, माहू अथवा थ्रिप्स कीट लगने पर संस्तुति के अनुसार रसायनों का प्रयोग करें।

राई :

- कटाई व मड़ाई यदि पूरी नहीं हुई हो तो तुरन्त कर लें। दानों को अच्छी तरह सुखाकर भण्डारित कर लें।

गन्ना :

- फसल में आवश्यकतानुसार सिंचाई करें तथा निराई–गुड़ाई कर खरपतवार निकाल लें।
- नौलख गन्ने में गन्ने का जमाव पूर्ण होने पर तथा पेड़ी में संस्तुति के आधार पर यूरिया की टॉप–ड्रेसिंग करें।
- इस माह गन्ने की बुवाई करनी हो तो कूँड़ से कूँड़ की दूरी 60 से.मी. रखें।

बरसीम एवं रिजका :

- इन फसलों में आवश्यकतानुसार सिंचाई करें तथा बीज हेतु छोड़ी गयी फसल में खरपतवार व अवांछित पौधों को निकाल लें।
- चारा हेतु फसल की समय पर कटाई करें।

चारे की मक्का :

- फरवरी के द्वितीय पखवाड़ें में बोयी गयी फसल में आवश्यकतानुसार सिंचाई करें। संस्तुति के अनुसार यूरिया की टॉप–ड्रेसिंग करें।

चारे की ज्वार एवं लोबिया :

- चारा हेतु ज्वार की बुवाई माह के मध्य एवं लोबिया की माह के अन्त तक करें।
- अच्छा चारा उत्पादन हेतु उन्नत प्रजातियों का चयन, बीज की मात्रा एवं उर्वरकों का प्रयोग संस्तुति के अनुसार करें।

पर्वतीय क्षेत्र

गेहूँ एवं जौ :

- घाटियों में बोयी गयी फसल में आवश्यकतानुसार सिंचाई करें। तैयार फसल की कटाई कर लें।
- मध्य एवं ऊँचाई वाले क्षेत्रों में असिंचित फसल में 2 प्रतिशत यूरिया का घोल बनाकर पर्णीय छिड़काव करें।

राई, चना, मटर एवं मसूर :

- परिपक्व फसल की सावधानीपूर्वक कटाई व मड़ाई कर उपज को भण्डारित कर लें।

धान :

- माह के प्रथम पखवाड़े तक चेतकी धान की बुवाई पूर्ण कर लें।
- पिछले माह बोयी गयी फसल में जमाव के 20–25 दिन बाद निराई–गुड़ाई कर खरपतवार निकाल लें।

मई माह के कृषि कार्य

मैदानी क्षेत्र

गेहूँ,

- परिपक्व फसल की अविलम्ब कटाई कर लें तथा तत्पश्चात् गहाई कर दानों का भण्डारण कर लें।

जौ, चना एवं मसूर :

- जिन फसलों की गहाई न की गयी हो जल्दी कर भण्डारित कर लें ताकि वर्षा आदि से नुकसान न हो।

ग्रीष्मकालीन उर्द एवं मूंग :

- फसल में आवश्यकतानुसार सिंचाई करें।
- परिपक्व फलियों की तुड़ाई कर लें तथा अच्छी तरह सुखाकर दाने निकाल लें।

बरसीम, रिजका, जई, लोबिया एवं चारे की मक्का व ज्वार :

- बरसीम, रिजका, जई एवं मक्का की यथासमय कटाई करें तथा ज्वार व लोबिया की फसलों में आवश्यकतानुसार सिंचाई करें।

गन्ना :

- नौलख एवं पेड़ी फसलों में आवश्यकतानुसार निराई–गुड़ाई व सिंचाई करें तथा संस्तुत मात्रा में नत्रजन की टॉप–ड्रेसिंग करें।
- फसल में काला बग एवं अन्य कीटों का प्रकोप होने पर संस्तुति अनुसार कीटनाशी रसायनों का प्रयोग करें।

धान :

- मध्यम एवं देर से पकने वाली प्रजातियों की नर्सरी माह के अन्तिम सप्ताह में डाल दें। फसल से अच्छा उत्पादन लेने हेतु अपने क्षेत्र अनुसार उन्नत प्रजातियों का चयन करें तथा स्वस्थ पौध तैयार करने हेतु संस्तुत सस्य क्रियायें अपनायें।

पर्वतीय क्षेत्र

गेहूँ, जौ, सरसों, चना, मटर एवं मसूर :

- इन फसलों की समय पर कटाई कर लें एवं सूखने पर गहाई कर उपज को अच्छी तरह भण्डारित कर लें।

झंगोरा (मादिरा/साँवा) :

- सामान्यतया कृषक इस फसल की परम्परागत किस्मों की बुवाई मार्च/अप्रैल माह में करते हैं। अधिक उत्पादन लेने हेतु उन्नतशील प्रजातियों का चयन करें, जिनकी बुवाई का उपयुक्त समय ऊँचाई वाले क्षेत्रों में माह का प्रथम पखवाड़ा तथा मध्यम व कम ऊँचाई वाले क्षेत्रों में माह का द्वितीय पखवाड़ा है।
- फसल से अच्छी उपज लेने हेतु उन्नत प्रजातियों के साथ–साथ बीज की मात्रा, बीज शोधन, बुवाई की विधि, उर्वरकों का प्रयोग एवं अन्य सस्य क्रियायें संस्तुति अनुसार करें।

मंडुवा, काकुन (कौंणी) व रामदाना (चुआ/चौलाई/मारसा) :

- ऊँचाई वाले क्षेत्रों में इन फसलों की बुवाई माह के द्वितीय पखवाड़े में कर लें। अच्छी पैदवार लेने हेतु उन्नत प्रजातियों का चयन, बीज की मात्रा, बीज शोधन, बीज की बुवाई एवं उर्वरकों का प्रयोग संस्तुति अनुसार करें।

धान :

- मध्यम ऊँचे क्षेत्रों में सिंचित दशा (तलाऊँ) में रोपाई हेतु धान की नर्सरी माह के प्रथम पखवाड़े एवं घाटियों व कम ऊँचे क्षेत्रों में माह के द्वितीय पखवाड़े में रखें।
- अच्छी उपज लेने हेतु उन्नत प्रजातियों का चयन, बीज की मात्रा, बीज शोधन एवं नर्सरी की तैयारी संस्तुति अनुसार करें।
- चेतकी धान में निराई–गुड़ाई कर खरपतवार निकाल लें।
- जेठी धान की सीधी बुवाई (उपराऊँ/ऊखड़) माह के अन्तिम सप्ताह में करें। अच्छा उत्पादन प्राप्त करने हेतु उन्नत प्रजातियों को बोयें। बुवाई पूर्व बीज शोधन एवं उर्वरकों का प्रयोग संस्तुति अनुसार करें।

सोयाबीन :

- मध्यम ऊँचाई वाले क्षेत्रों में फसल की बुवाई माह के अन्तिम सप्ताह में कर लें।
- फसल से भरपूर उपज लेने हेतु उन्नत प्रजातियों का चयन, बीज की मात्रा, बीज शोधन व विशिष्ट राइजोबियम कल्चर से उपचार तथा उर्वरकों व खरपतवारनाशी रसायन का प्रयोग संस्तुति अनुसार करें।

6. अरहर :

- कम समय में तैयार होने वाली उन्नत प्रजातियों की बुवाई माह के प्रथम पखवाड़े में करें। बीज की मात्रा, बीज शोधन व विशिष्ट राइजोबियम कल्चर से उपचार तथा उर्वरकों व खरपतवारनाशी रसायन का प्रयोग संस्तुति अनुसार करें।

मक्का :

- मध्यम एवं ऊँचे पर्वतीय क्षेत्रों में फसल की बुवाई माह के द्वितीय पखवाड़े में करें।
- भरपूर उत्पादन हेतु क्षेत्र विशेष को ध्यान में रखते हुए संस्तुत संकर अथवा संकुल प्रजातियों का चुनाव करें। पॉपकॉर्न हेतु वी.एल. अम्बर पॉपकॉर्न प्रजाति की बुवाई करें।
- बीज की मात्रा, बीज शोधन, बुवाई की विधि तथा उर्वरकों व खरपतवारनाशी रसायन का प्रयोग संस्तुति अनुसार करें।

राइसबीन (नौरंगी) :

- ऊँचे पर्वतीय क्षेत्रों में फसल की बुवाई माह के द्वितीय पखवाड़े में करें।
- अधिक उत्पादन हेतु प्रजातियों का चयन, बीज की मात्रा, बीज शोधन, बुवाई की विधि एवं उर्वरकों का प्रयोग संस्तुति के आधार पर करें।

जून माह के कृषि कार्य

मैदानी क्षेत्र

उर्द एवं मूंग :

- मूँग की पकी हुई फलियों की चुनाई कर लें या 60–80 प्रतिशत फलियों के पकने पर कटाई करें। उर्द की कटाई फसल पूर्ण रूप से परिपक्व होने पर करें।

गन्ना :

- शरदकालीन व बसन्तकालीन नौलख फसल एवं पेड़ी में आवश्यकतानुसार निराई–गुड़ाई एवं सिंचाई करें। संस्तुति के अनुसार नत्रजन का प्रयोग कर फसल में मिट्टी चढ़ा दें।
- पाइरिला, अगोला बेधक एवं तना बेधक कीट से बचाव हेतु संस्तुत कीटनाशी रसायनों का छिड़काव करें। कण्डुवा रोग ग्रसित अथवा सूखे पौधों को निकाल कर खेत से बाहर जला दें।

धान :

- मध्यम शीघ्र एवं शीघ्र पकने वाली प्रजातियों की नर्सरी माह के प्रथम पखवाड़े एवं सुगन्धित धान की दूसरे पखवाड़े में डालें।
- उचित सस्य क्रियायें अपनाकर स्वस्थ नर्सरी तैयार करें एवं पौध 21–25 दिन की होने पर रोपाई कर लें।
- खरपतवार नियंत्रण हेतु खरपतवारनाशी रसायन एवं संतुलित पोषण प्रबन्धन हेतु उर्वरकों का प्रयोग संस्तुति अनुसार करें।
- सिंचित दशा में धान की सीधी बुवाई उचित विधि अपनाकर माह के द्वितीय पखवाड़े में करें। खरपतवार नियंत्रण हेतु संस्तुत खरपतवारनाशी रसायन का प्रयोग करें।

अरहर :

- फसल की अगेती किस्मों की बुवाई माह के मध्य तक कर लें।
- भरपूर उत्पादन हेतु बीज की मात्रा, बीज शोधन व विशिष्ट राइजोबियम कल्चर से उपचार, बुवाई की विधि एवं उर्वरकों व खरपतवारनाशी रसायन का प्रयोग संस्तुति अनुसार करें।

मक्का :

- फसल की बुवाई माह के प्रथम पखवाड़े में कर लें।
- बुवाई हेतु उपयुक्त संकर/संकुल प्रजातियों का चयन, बीज की मात्रा, बीजोपचार, बुवाई की विधि, उर्वरकों व खरपतवारनाशी रसायन

का प्रयोग तथा अन्य सस्य क्रियायें संस्तुति के अनुसार करें।

सोयाबीन :

- भावर क्षेत्रों में फसल की बुवाई माह के अन्तिम सप्ताह में करें।
- भरपूर उत्पादन हेतु प्रजातियों का चयन, बीज की मात्रा, बीज शोधन व राइजोबियम कल्चर से उपचार, बुवाई की विधि एवं उर्वरकों व खरपतवारनाशी रसायन का प्रयोग संस्तुति अनुसार करें।

मूँगफली :

- फसल की बुवाई माह के दूसरे पखवाड़े में कर लें।
- प्रजातियों का चयन, बीज शोधन, राइजोबियम कल्चर से उपचार, बुवाई की विधि एवं उर्वरकों व खरपतवारनाशी रसायन का प्रयोग संस्तुति के अनुसार करें।

पर्वतीय क्षेत्र

मंडुवा, काकुन (कौणी) व रामदाना (चुआ/चौलाई/मारसा) :

- मध्यम एवं कम ऊँचाई वाले क्षेत्रों में इन फसलों की बुवाई माह के प्रथम पखवाड़े में करें। अधिक उत्पादन हेतु संस्तुत प्रजातियों का प्रयोग करें।
- पूर्व माह में बोयी गयी फसलों में विरलीकरण, निराई–गुड़ाई, खरपतवारनाशी रसायनों का प्रयोग एवं वर्षा के पश्चात् नत्रजन की टॉप–ड्रेसिंग संस्तुति अनुसार करें।

झंगोरा (मादिरा/सॉवा) :

- घाटियों एवं कम ऊँचाई वाले क्षेत्रों में फसल की बुवाई माह के प्रथम सप्ताह तक पूर्ण कर लें।
- खरपतवार नियंत्रण हेतु रसायन का प्रयोग, निराई–गुड़ाई एवं वर्षा के पश्चात् नत्रजन की टॉप–ड्रेसिंग संस्तुति अनुसार करें।

सोयाबीन :

- मध्यम एवं कम ऊँचाई वाले क्षेत्रों में फसल की बुवाई माह के प्रथम पखवाड़े में करें। बुवाई हेतु उन्नत प्रजातियों का चुनाव व अन्य सस्य क्रियायें संस्तुति अनुसार करें।

अरहर :

- पिछले माह बोयी गयी फसल में 20–25 दिन की अवस्था पर विरलीकरण करें तथा यथासमय निराई–गुड़ाई कर खरपतवारों को भी निकाल लें।

मक्का :

- निचले पर्वतीय क्षेत्रों में फसल की बुवाई माह के प्रथम पखवाड़े में करें। अच्छी उपज हेतु संकर/संकुल प्रजातियों का चुनाव, बीज की मात्रा, बीजोपचार, बुवाई, उर्वरक व खरपवतारनाशी रसायन का प्रयोग एवं अन्य सस्य क्रियायें संस्तुति अनुसार करें।

धान :

- जेठी धान की बुवाई प्रथम सप्ताह तक कर लें। प्रजाति का चुनाव, बीज की मात्रा, बीजोपचार, बुवाई, उर्वरकों का प्रयोग व अन्य सस्य क्रियायें संस्तुति अनुसार करें।
- सिंचित दशा (तलॉऊ) में रोपाई का कार्य मध्यम ऊँचे पर्वतीय क्षेत्रों में माह के प्रथम पखवाड़े एवं घाटी व कम ऊँचे पर्वतीय क्षेत्रों में माह के द्वितीय पखवाड़े में पूर्ण कर लें। भरपूर उपज प्राप्त करने हेतु उर्वरकों एवं खरपतवार नियंत्रण हेतु आवश्यक रसायन का प्रयोग संस्तुति अनुसार करें।

उर्द एवं मूँग :

- घाटी वाले क्षेत्रों में बुवाई माह के द्वितीय पखवाड़े में करें।
- अधिक उत्पादन हेतु उन्नत प्रजातियों का चयन, बीज की मात्रा, बीज शोधन व राइजोबियम कल्चर से उपचार एवं उर्वरकों व खरपतवारनाशी रसायन का प्रयोग संस्तुति अनुसार करें।

राइसबीन (नौरंगी), गहत (कुल्थी) एवं राजमाः

- राइसबीन की बुवाई माह के प्रथम पखवाड़े में करें। गहत एवं राजमा की बुवाई क्रमशः माह के प्रथम एवं द्वितीय पखवाड़े में करें।

- भरपूर उपज हेतु प्रजातियों का चुनाव, बीज की मात्रा, बीज शोधन, बुवाई एवं उर्वरकों का प्रयोग संस्तुति के अनुसार करें।

जुलाई माह के कृषि कार्य

मैदानी क्षेत्र

धान :

- फसल की रोपाई हर हाल इस माह में पूर्ण कर लें। उर्वरक व खरपतवारनाशी रसायनों का प्रयोग संस्तुति के अनुसार करें। धान की सीधी बुवाई माह के प्रथम सप्ताह तक कर लें।

गन्ना :

- जल भराव वाले खेतों में जल निकास की व्यवस्था करें। माह के प्रथम सप्ताह में जड़ों पर हल्की एवं अन्तिम सप्ताह में पर्याप्त मिट्टी चढ़ायें। फसल की बढ़वार अच्छी होने पर 5 फीट की ऊँचाई पर बंधाई कर लें।
- फसल में पाइरिला, चोटी बेधक अथवा तना बेधक कीट की रोकथाम हेतु संस्तुति अनुसार कीटनाशी रसायनों का प्रयोग करें।

मक्का :

- फसल में आवश्यकतानुसार यथासमय निराई–गुड़ाई एवं सिंचाई करें तथा फसल दो फुट लम्बी होने की अवस्था पर संस्तुति अनुसार यूरिया की टॉप–ड्रेसिंग करें। यदि किसी कारणवश मक्का की बुवाई पूर्व में न हो पायी हो तो शीघ्र कर लें।
- फसल की प्रारम्भिक अवस्था में तना छेदक एवं प्ररोह मक्खी (शूट फ्लाई) के नियंत्रण हेतु संस्तुत रसायनों का प्रयोग करें।

उर्द एवं मूँग :

- इन फसलों की बुवाई माह के द्वितीय पखवाड़े से प्रारम्भ कर सकते हैं।
- भरपूर उत्पादन हेतु प्रजातियों का चयन, बीज की मात्रा, बीज शोधन व विशिष्ट राइजोबियम कल्चर से उपचार, बुवाई की विधि एवं उर्वरकों व खरपतवारनाशी रसायन का प्रयोग संस्तुति अनुसार करें।

सोयाबीन :

- तराई एवं मैदानी क्षेत्रों में फसल की बुवाई प्रथम सप्ताह में करें।
- बुवाई हेतु प्रजातियों का चुनाव, बीज दर, बीज शोधन, उर्वरकों व खरपतवारनाशी रसायन का प्रयोग एवं अन्य सस्य क्रियायें संस्तुति अनुसार करें।

अरहर :

- देर से पकने वाली प्रजातियों की बुवाई माह के प्रथम पखवाड़े में पूर्ण कर लें।
- बुवाई हेतु प्रजातियों का चयन, बीज दर, बीज शोधन एवं विशिष्ट राइजोबियम कल्चर से उपचार, बुवाई की विधि तथा उर्वरकों व खरपतवारनाशी रसायन का प्रयोग संस्तुति अनुसार करें।
- जून में बोयी गयी फसल में यथासमय विरलीकरण करें एवं निराई–गुड़ाई कर खरपतवार निकाल लें।

मूँगफली :

- फसल की बुवाई माह के मध्य तक कर लें।
- पिछले माह बोयी गयी फसल में निराई–गुड़ाई कर खरपतवार निकाल लें एवं जिप्सम व बोरेक्स का प्रयोग संस्तुति अनुसार करें।

तिल :

- फसल की बुवाई माह के द्वितीय पखवाड़े में करें।
- अधिक उत्पादन हेतु प्रजातियों का चयन, बीज की मात्रा, बीज शोधन, बुवाई की विधि एवं उर्वरकों का प्रयोग संस्तुति अनुसार करें।

पर्वतीय क्षेत्र

मंडुवा, झंगोरा (मादिरा/साँवा), काकुन (कौणी) एवं रामदाना (चुआ/चौलाई/मारसा) :

- फसलों में आवश्यकतानुसार निराई कर खरपतवारों को निकाल लें।
- वर्षा होने पर या पर्याप्त नमी होने पर यूरिया

की टॉप–ड्रेसिंग कर सकते हैं।

- मंडुवा, काकुन एवं झंगोरा की फसल में झौंका रोग का प्रकोप होने पर संस्तुत फफूँदनाशी रसायन का छिड़काव करें।

सोयाबीन :

- मध्यम एवं कम ऊँचाई वाले क्षेत्रों में बोयी गयी फसल में विरलीकरण करें एवं निराई–गुड़ाई कर खरपतवार निकाल लें।

अरहर :

- फसल की देखभाल करते रहें तथा आवश्यकतानुसार निराई कर खरपतवार निकाल दें।

मक्का :

- पिछले माह बोयी गयी फसल में विरलीकरण करें एवं निराई–गुड़ाई कर खरपतवार निकाल दें।
- फसल में तना छेदक अथवा प्ररोह मक्खी (शूट फ्लाई) का प्रकोप होने पर संस्तुत कीटनाशी रसायनों का छिड़काव करें।
- वर्षा न हो तो सिंचाई उपलब्ध होने पर फसल में सिंचाई करें तथा फसल लगभग दो फुट की होने पर संस्तुति अनुसार नत्रजन की टॉप–ड्रेसिंग करें।

धान :

- घाटी वाली क्षेत्रों में माह के प्रथम सप्ताह तक रोपाई कर लें। उर्वरक व खरपतवारनाशी रसायन का प्रयोग एवं अन्य सस्य क्रियायें संस्तुति अनुसार करें।
- पिछले माह बोयी गयी जेठी धान की फसल में निराई–गुड़ाई कर खरपतवार निकाल लें। वर्षा के पश्चात् अथवा मिट्टी में उपयुक्त नमी होने पर चेतकी/जेठी धान की खड़ी फसल में संस्तुति अनुसार यूरिया खाद का प्रयोग करें।
- रोपित धान में खैरा एवं झौका रोग के लक्षण दिखाई देने पर संस्तुति अनुसार रसायन का प्रयोग करें।

उर्द एवं मूँग :

- इन फसलों की बुवाई प्रथम सप्ताह तक पूर्ण कर लें एवं अन्य सस्य क्रियायें संस्तुति अनुसार सम्पन्न करें।
- तना मक्खी का प्रकोप होने पर संस्तुत कीटनाशी रसायन का छिड़काव करें।

राइसबीन (नौरंगी), गहत (कुल्थी) एवं राजमाः

- पिछले माह बोयी गयी फसलों में आवश्यकतानुसार निराई–गुड़ाई कर खरपतवार निकाल लें।

अगस्त माह के कृषि कार्य

मैदानी क्षेत्र

धान :

- रोपित धान में निराई कर संस्तुति अनुसार खड़ी फसल में नत्रजन का प्रयोग करें।
- खरपतवारों के नियंत्रण हेतु संस्तुति अनुसार खरपतवारनाशी रसायन का छिड़काव करें।
- खैरा व जीवाणु झुलसा रोग तथा तना बेधक कीट का प्रकोप होने पर संस्तुति अनुसार नियंत्रण उपाय करें।

गन्ना :

- आवश्यकतानुसार फसल की दूसरी बँधाई भी कर लें, जो पहली बँधाई के 50 से.मी. ऊपर हो। दो पंक्तियों के तीन थालों की बँधाई एक साथ (कैंची बँधाई) करें।

मक्का :

- फसल में नर मंजरी निकलते समय संस्तुत नत्रजन की एक तिहाई मात्रा को खड़ी फसल में प्रयोग करें।
- पुष्पन से दाना बनने तक की अवस्था पर आवश्यकतानुसार सिंचाई करें।
- फसल की उचित निगरानी रखें। फफोला भृंग (ब्लिस्टर बीटिल) एवं तुलासिता व झुलसा रोग नियंत्रण हेतु संस्तुति अनुसार रसायनों का छिड़काव करें।

उर्द एवं मूँग :

- इन फसलों की बुवाई माह के मध्य तक अवश्य कर लें।
- पिछले माह में बोयी गयी फसल की निराई–गुड़ाई एवं घने पौधों का विरलीकरण आवश्यकतानुसार

समय पर करें।

- तना मक्खी के नियंत्रण हेतु संस्तुत कीटनाशी रसायन का प्रयोग करें।

सोयाबीन एवं अरहर :

- पिछले माह बोयी गयी फसलों में 20–25 दिन की अवस्था पर निराई–गुड़ाई कर खरपतवार निकाल लें तथा विरलीकरण कर पौधों की छटाई कर लें।

मूँगफली :

- फसल में आवश्यकतानुसार निराई–गुड़ाई एवं सिंचाई करें। पिछले माह बोयी गयी फसल में संस्तुति अनुसार जिप्सम एवं बोरेक्स का प्रयोग करें।
- दीमक कीट एवं टिक्का रोग से फसल की सुरक्षा हेतु संस्तुत रसायनों का छिड़काव करें।

तिल :

- फसल में यथासमय विरलीकरण व निराई–गुड़ाई करें तथा संस्तुति अनुसार नत्रजन की टॉप–ड्रेसिंग करें।

पर्वतीय क्षेत्र

मंडुवा, झंगोरा (मादिरा/साँवा), काकुन (कौणी) एवं रामदाना (चुआ/चौलाई/मारसा) :

- मंडुवा, झंगोरा एवं काकुन की फसल में तना छेदक तथा रामदाना की फसल में पर्णजालक कीट (लीफ वेबर) का प्रकोप होने पर संस्तुति अनुसार कीटनाशी रसायनों का छिड़काव करें।

सोयाबीन :

- फसल में आवश्यकतानुसार निराई कर खरपतवार निकाल लें।
- कमला कीट, तना छेदक मक्खी तथा चक्र भृंग (गर्डिल बीटिल) कीट का प्रकोप होने पर फसल में संस्तुत कीटनाशी रसायनों का छिड़काव करें।

अरहर :

- फसल में पत्ती लपेटक कीट के नियंत्रण हेतु संस्तुत कीटनाशी रसायन का छिड़काव करें।

मक्का :

- फसल में आवश्यकतानुसार सिंचाई करें तथा नर मंजरी निकलते समय संस्तुति अनुसार नत्रजन की टॉप–ड्रेसिंग करें।
- फफोला भृंग एवं झुलसा रोग के नियंत्रण हेतु संस्तुति अनुसार रसायनों का प्रयोग करें।

धान :

- सिंचित अथवा असिंचित फसल में तना छेदक कीट एवं झौका रोग तथा असिंचित धान में कुरमुला कीट के नियंत्रण हेतु संस्तुति अनुसार रसायनों का छिड़काव करें।
- सिंचित धान में बाली निकलने से पूर्व नत्रजन की टॉप–ड्रेसिंग एवं असिंचित धान (चेतकी/जेठी) में यूरिया के 2 प्रतिशत घोल का पर्णीय छिड़काव करें।

उर्द, मूँग, राइसबीन (नौरंगी), गहत (कुल्थी) एवं राजमा :

- फसलों की निगरानी करते रहें तथा पत्तियों पर पर्ण धब्बा रोग आने पर नियंत्रण हेतु संस्तुत फफूँदनाशी रसायन का छिड़काव करें।

सितम्बर माह के कृषि कार्य

मैदानी क्षेत्र

धान :

- फसल में बालियाँ बनने की प्रारम्भिक अवस्था पर नत्रजन की संस्तुत मात्रा की टॉप–ड्रेसिंग करें एवं आवश्यकतानुसार सिंचाई व जल निकास की व्यवस्था करें।
- फसल में तना बेधक व फुदका कीट (प्लान्ट हॉपर) एवं पर्ण चित्ती व जीवाणु झुलसा (बैक्टीरियल लीफ ब्लाइट) रोग का प्रकोप होने पर नियंत्रण हेतु संस्तुत रसायनों का छिड़काव करें।

गन्ना :

- फसल में आवश्यकतानुसार सिंचाई करें तथा आवश्यकता पड़ने पर दूसरी बँधाई कर लें।
- कंडुवा एवं लाल सड़न रोग से ग्रसित पौधों को निकालकर खेत से बाहर जला दें।

- शरदकालीन गन्ने की बुवाई माह के द्वितीय पखवाड़े से प्रारम्भ कर सकते हैं।
- अधिक उत्पादन हेतु प्रजातियों का चुनाव, बीज की मात्रा, बीज का उपचार, बुवाई की विधि एवं खरपतवारनाशी रसायन व उर्वरकों का प्रयोग संस्तुति अनुसार करें।
- शरदकालीन गन्ने में अन्तः फसल के रूप में आलू, लाही (तोरिया), राई, सब्जी मटर, मूली, पत्तागोभी, फूलगोभी, लहसुन, धनिया आदि की बुवाई कर सकते हैं।

मक्का :

- फसल में दाना बनने की अवस्था पर आवश्यकतानुसार सिंचाई करें तथा कीट अथवा रोग लगने पर संस्तुति अनुसार नियंत्रण करें।
- अगेती किस्में परिपक्व होने पर कटाई कर लें।

उर्द एवं मूँग :

- पिछले माह बोयी गयी फसल में यथासमय निराई–गुड़ाई करें एवं आवश्यकतानुसार हल्की सिंचाई दें।
- फसल में पीला मोजेक अथवा थ्रिप्स कीट से नुकसान होने पर संस्तुति अनुसार कीटनाशी रसायनों का प्रयोग करें।
- जल भराव की दशा में जल निकास की व्यवस्था अवश्य करें।

सोयाबीन :

- जल भराव की दशा में जल निकासी की व्यवस्था करें। वर्षा न हो तो फूल आने और फली बनते समय आवश्यकतानुसार हल्की सिंचाई करें।
- कमला कीट, तना छेदक, मक्खी अथवा गर्डिल बीटिल का नियंत्रण संस्तुति अनुसार करें।
- तराई एवं मैदानी क्षेत्रों में फसल पर पीला चित्तवर्ण रोग (पीला मोजेक) की समस्या होने पर संस्तुत रसायन का छिड़काव करें।

अरहर :

- इस माह में फसल में पत्ती लपेटक के साथ–साथ फली छेदक कीट एवं बंझा रोग से भी नुकसान की सम्भावना बनी रहती है। इनके नियंत्रण हेतु संस्तुति अनुसार रसायनों का छिड़काव करें।

मूँगफली :

- फसल का निरीक्षण करते रहें। दीमक, सफेद गिडार एवं टिक्का रोग का प्रकोप होने पर संस्तुति अनुसार रसायनों का छिड़काव करें।
- फसल में खूटियाँ बनने से लेकर फलियाँ बनने तक आवश्यकतानुसार सिंचाई करें।

तिल :

- फसल की निगरानी करते रहें। कोमल पत्तियों व फलियों को नुकसान पहुँचाने वाली सूड़ियों एवं फाइलोड़ी रोग के नियंत्रण हेतु संस्तुति अनुसार रसायनों का छिड़काव करें।

तोरिया (लाही) एवं राई :

- यह माह तोरिया की समय पर बुवाई एवं राई की अगेती बुवाई हेतु उत्तम है। तोरिया के बाद गेहूँ की फसल लेनी हो तो फसल की बुवाई 20–25 सितम्बर तक अवश्य कर लें।
- इन फसलों से अधिक उपज प्राप्त करने हेतु प्रजातियों का चयन, बीज की मात्रा, बीज शोधन, बुवाई की विधि एवं उर्वरकों व खरपतवारनाशी रसायन का प्रयोग संस्तुति अनुसार करें।
- तिलहनी फसलों हेतु गंधक की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए फसल में 25–30 कि.ग्रा. गंधक प्रति हैक्टर प्रयोग करें। फॉस्फोरस की पूर्ति हेतु सिंगल सुपर फॉस्फेट प्रयोग करने की दशा में अलग से गंधक देने की आवश्यकता नहीं पड़ती।

पर्वतीय क्षेत्र

मंडुवा, झंगोरा (मादिरा/साँवा), काकुन (कौणी) एवं रामदाना (चुआ/चौलाई/मारसा) :

- कम एवं मध्यम ऊँचाई वाले क्षेत्रों में फसल तैयार होने पर कटाई समय से कर लें।
- देर से पकने वाली प्रजातियों में कीट एवं रोगों से बचाव हेतु संस्तुत रसायनों का छिड़काव करें।

सोयाबीन :

- फसल की निगरानी करते रहें। कमला कीट, तना छेदक अथवा चक्र भृंग कीट के नियंत्रण हेतु संस्तुति अनुसार रसायनों का प्रयोग करें।

अरहर :

- फलियाँ बनते समय खेत में नमी की कमी महसूस होने पर यदि सिंचाई की सुविधा उपलब्ध है तो हल्की सिंचाई करें।
- पत्ती लपेटक एवं फली बेधक कीटों के नियंत्रण हेतु संस्तुत कीटनाशी रसायनों का छिड़काव करें।

मक्का :

- घाटी, कम एवं मध्यम ऊँचाई वाले क्षेत्रों में तैयार फसल की कटाई कर लें।
- ऊँचाई वाले क्षेत्रों में फसल में दाने बनने की अवस्था पर हल्की सिंचाई करें तथा रोग व कीट नियंत्रण हेतु संस्तुत रसायनों का प्रयोग करें।

धान :

- घाटियों व कम ऊँचाई वाले पर्वतीय क्षेत्रों में चेतकी/जेठी/रोपित धान की फसल तैयार होने पर कटाई कर लें।
- मध्यम ऊँचाई वाले क्षेत्रों में फसल में रोग व कीट आने पर आवश्यकतानुसार नियंत्रण करें।
- रोपित धान में दाना भरते समय नमी की कमी होने पर सिंचाई करें।

उर्द एवं मूँग

- फसल पकने पर कटाई कर लें।

गहत (कुल्थी) :

- कम समय में परिपक्व होने वाली प्रजातियाँ तैयार होने पर काट लें एवं देर से पकने वाली प्रजातियों में रोग अथवा कीट की समस्या आने पर संस्तुति के अनुसार रसायनों का छिड़काव करें।

राइसबीन (नौरंगी) एवं राजमा :

- फसल की निगरानी करते रहें तथा कीट व रोग आने पर संस्तुति के अनुसार रसायनों का छिड़काव करें।

तोरिया (लाही) एवं पीली सरसों (राड़ा):

- घाटियों एवं कम ऊँचाई वाले क्षेत्रों में रोपित धान तथा निचले व मध्यम ऊँचाई वाले असिंचित क्षेत्रों में मंडुवा, झंगोरा, काकुन, उर्द व मूंग की कटाई के पश्चात् माह के अन्त तक इन फसलों की बुवाई की जा सकती है।
- बुवाई हेतु उन्नत प्रजाति का चयन, बीज की मात्रा, बीज शोधन तथा उर्वरकों व खरपतवारनाशी रसायन का प्रयोग संस्तुति अनुसार करें।

अक्टूबर माह के कृषि कार्य

मैदानी क्षेत्र

धान :

- जो किस्में पक गयी हो उनकी कटाई कर लें।
- देर से पकने वाली किस्मों में दाना बनते समय आवश्यकतानुसार सिंचाई करें तथा रोग व कीट नियंत्रण हेतु संस्तुति अनुसार रसायनों का प्रयोग करें।

गन्ना :

- कंडुवा संक्रमित पौधों को निकालकर खेत से दूर जला दें।
- फसल में आवश्यकतानुसार हल्की सिंचाई करें, इससे गन्ने का वजन बढ़ेगा।
- शरदकालीन गन्ने की बुवाई 15 अक्टूबर तक अवश्य कर लें एवं अन्य सस्य क्रियायें संस्तुति अनुसार करें।
- पिछले माह बोयी गयी फसल में बुवाई के 25–30 दिन पर गुड़ाई कर खरपतवार निकाल लें।

मक्का :

- समय से बोयी गयी फसल की कटाई करें। जिन किस्मों के पौधे पकने पर कभी–कभी हरे नजर आते हैं तथा जब भुट्टों के ऊपर वाला छिलका पीला व भूरा हो जाये तो समझे फसल पक गयी है, कटाई कर लें।

उर्द एवं मूँग :

- फसल पकने पर तुरन्त कटाई कर लें।

सोयाबीन :

- फसल की फलियों तथा पत्तियों को खाने वाली सूड़ियों की रोकथाम के लिए संस्तुत कीटनाशी रसायन का प्रयोग करें। जो किस्में परिपक्व अवस्था में हो कटाई कर लें, तत्पश्चात् अच्छी तरह सूखने पर मड़ाई कर के दाना अलग कर लें।

अरहर :

- फलियों में दाना बनते समय हल्की सिंचाई करें तथा कीट एवं रोग नियंत्रण हेतु संस्तुति अनुसार रसायनों का प्रयोग करें।

मूँगफली :

- समय पर बोयी गयी फसल की खुदाई कर लें तथा खुदाई के बाद फलियों को खूब सुखाकर भण्डारित कर लें।

तिल :

- फसल माह के अन्त तक पक जाती है। परिपक्व फसल की समय पर कटाई कर लें तथा फलियों को पीटकर दाना अलग कर लें।

तोरिया (लाही), सरसों एवं राई :

- तोरिया की बुवाई माह के प्रथम सप्ताह तक अवश्य कर लें तथा सरसों एवं राई की बुवाई माह के प्रथम पखवाड़े तक करें।
- अच्छी उपज हेतु प्रजातियों का चयन, बीज की मात्रा, बीज शोधन, बुवाई की विधि, उर्वरकों का प्रयोग एवं अन्य सस्य क्रियायें संस्तुति अनुसार करें।
- तोरिया की फसल में बुवाई के 15 दिन बाद घने पौधों को निकाल कर पौधों की आपसी दूरी 10–15 से.मी. रखनी चाहिए।
- खरपतवारों को नष्ट करने के लिए इसी समय निराई–गुड़ाई कर देनी चाहिए।
- तोरिया में फूल निकलने पर अर्थात बुवाई के 25–30 दिन बाद एक सिंचाई अवश्य कर लें तथा सिंचाई के बाद संस्तुत मात्रा में नत्रजन की टॉप–ड्रेसिंग कर लें।

गेहूँ एवं जौ :

- असिंचित दशा में फसल की बुवाई माह के द्वितीय पखवाड़े में करें।
- भरपूर उत्पादन हेतु उन्नत प्रजातियों का चयन, बीज की मात्रा, बीज शोधन, बुवाई की विधि एवं उर्वरकों का प्रयोग संस्तुति अनुसार करें।

चना, मटर एवं मसूर :

- असिंचित दशा में फसल की बुवाई माह के द्वितीय पखवाड़े में करें।
- भरपूर उत्पादन हेतु उन्नत प्रजातियों का चयन, बीज की मात्रा, बीज शोधन व विशिष्ट राइजोबियम कल्चर से उपचार, बुवाई की विधि एवं उर्वरकों व खरपतवारनाशी रसायनों का प्रयोग संस्तुति अनुसार करें।

बरसीम एवं रिजका (लूसर्न) :

- इन फसलों की बुवाई माह के प्रथम पखवाड़े में करें।
- अधिक चारा उत्पादन हेतु प्रजातियों का चयन, बीज की मात्रा व विशिष्ट राइजोबियम कल्चर से उपचार, बुवाई की विधि, उर्वरकों का प्रयोग व अन्य सस्य क्रियायें संस्तुति अनुसार करें।

पर्वतीय क्षेत्र

मंडुवा, झंगोरा, काकुन एवं रामदाना :

- मध्यम एवं ऊँचाई वाले क्षेत्रों में तैयार फसल की कटाई कर लें।

सोयाबीन :

- फसल परिपक्व होने पर पत्तियाँ पीली होकर गिर जाती हैं। ऐसी अवस्था पर फसल की कटाई कर लें। फसल को 2–3 दिन तक सुखाने के बाद डंडों से पीटकर दाने अलग कर लें।

अरहर :

- घाटियों एवं कम ऊँचाई वाले क्षेत्रों में फसल तैयार होने पर कटाई कर लें तथा 2–3 दिन तक सुखाने के पश्चात् गहाई कर दाने अलग कर लें।

- मध्यम ऊँचाई वाले क्षेत्रों में फलियों में दाना बनने की अवस्था पर हल्की सिंचाई करें।

मक्का एवं राजमा :

- ऊँचाई वाले क्षेत्रों में तैयार फसल की कटाई कर लें।

धान :

- मध्यम ऊँचाई वाले क्षेत्रों में रोपित धान की परिपक्व फसल काट लें तथा 2–3 दिन सुखाने के पश्चात् गहाई कर दाना निकाल लें।

गहत (कुल्थी), राइसबीन (नौरंगी) एवं राजमा:

- तैयार फसल की यथासमय कटाई कर लें।

गेहूँ :

- असिंचित दशा में अधिक ऊँचाई (1700 मी. से ऊपर) वाले क्षेत्रों में बुवाई माह के प्रथम पखवाड़े में तथा कम व मध्यम ऊँचाई (1700 मी. से नीचे) वाले क्षेत्रों में द्वितीय पखवाड़े में करें।
- अच्छी उपज हेतु प्रजातियों का चयन, बीज की मात्रा, बीज शोधन, बुवाई की विधि एवं उर्वरकों का प्रयोग संस्तुति अनुसार करें।

जौ :

- फसल की बुवाई असिंचित दशा में ऊँचे क्षेत्रों में माह के प्रथम पक्ष में तथा कम व मध्यम ऊँचाई वाले क्षेत्रों में माह के द्वितीय पक्ष में करें।
- भरपूर उपज हेतु प्रजातियों का चयन, बीज की मात्रा, बीज शोधन, बुवाई की विधि एवं उर्वरकों का प्रयोग संस्तुति अनुसार करें।

तोरिया (लाही), पीली सरसों एवं राई–सरसों (राड़ा)

- तोरिया एवं पीली सरसों की बुवाई माह के प्रथम पखवाड़े में तथा राई की बुवाई असिंचित दशा में माह के प्रथम पखवाड़े व सिंचित दशा में द्वितीय पखवाड़े में करें।
- अच्छी पैदावार हेतु उन्नत प्रजातियों का चयन, बीज की मात्रा, बीज शोधन, बुवाई की विधि, उर्वरकों का प्रयोग एवं अन्य सस्य क्रियायें संस्तुति अनुसार करें।
- पिछले माह बोयी गयी फसल में पौधों की छटाई, निराई–गुड़ाई, सिंचाई, नत्रजन की टॉप–ड्रेसिंग एवं आवश्यकता पड़ने पर आरा मक्खी का नियंत्रण संस्तुति अनुसार करें।

चना, मटर एवं मसूर :

- चने की खेती कम ऊँचाई तथा मटर व मसूर की मध्यम ऊँचाई वाले पर्वतीय क्षेत्रों में सफलतापूर्वक ली जा सकती है। असिंचित दशा में चने की बुवाई माह के द्वितीय पखवाड़े में करें। मटर व मसूर की बुवाई मध्यम ऊँचाई वाले क्षेत्रों में असिंचित दशा में माह के प्रथम पखवाड़े तथा सिंचित दशा में द्वितीय पखवाड़े में एवं कम ऊँचाई वाले क्षेत्रों में असिंचित दशा में माह के द्वितीय पखवाड़े में करें।
- भरपूर उपज हेतु प्रजातियों का चयन, बीज की मात्रा, बीज शोधन व विशिष्ट राइजोबियम कल्चर से उपचार तथा उर्वरकों व खरपतवारनाशी रसायन का प्रयोग संस्तुति अनुसार करें।

नवम्बर माह के कृषि कार्य

मैदानी क्षेत्र

धान, उर्द, मूँग, सोयाबीन एवं तिल :

- देर से बोयी गयी फसलों की कटाई कर लें

मूँगफली :

- फसल पकने पर फलियों की खुदाई कर लें तथा अच्छी तरह सुखाकर भण्डारित कर लें।

अरहर :

- अगेती प्रजातियों में 75–80 प्रतिशत फलियाँ पकने पर फसल की कटाई कर लें तथा अच्छी तरह सुखाने के बाद गहाई कर दाने निकाल लें।
- पछेती प्रजातियों में रोग व कीड़ों के नियंत्रण हेतु संस्तुति अनुसार रसायनों का प्रयोग करें।

गन्ना :

- पेड़ी गन्ने के रस में ब्रिक्स की मात्रा 18 प्रतिशत होने पर फसल की कटाई कर लें।
- नौलख फसल में आवश्यकतानुसार सिंचाई करें।

- शरदकालीन गन्ने में बुवाई के 25–30 दिन पर निराई–गुड़ाई करें तथा खरपतवार की ज्यादा समस्या होने पर नियंत्रण हेतु संस्तुत रसायन का प्रयोग करें।

तोरिया (लाही), सरसों एवं राई :

- पिछले माह बोयी गयी सरसों/राई फसल से 15–20 दिन के अन्दर घने पौधों को निकाल कर उनकी आपस की दूरी 15 से.मी. कर देनी चाहिए।
- राई एवं देर से बोयी गयी तोरिया व सरसों की फसल में फूल आने से पूर्व हल्की सिंचाई करें तथा सिंचाई के पश्चात् संस्तुत मात्रा में नत्रजन की टॉप–ड्रेसिंग करें।
- समय पर बोयी गयी तोरिया व सरसों की फलियों में दाना भरते समय हल्की सिंचाई करें।
- माहू कीट एवं झुलसा, सफेद गेरूई अथवा तुलासिता रोग से फसल की सुरक्षा हेतु संस्तुति अनुसार रसायनों का प्रयोग करें।

गेहूँ :

- असिंचित दशा में फसल की बुवाई माह के प्रथम सप्ताह तथा सिंचित दशा में प्रथम पखवाड़े में करें।
- अधिक पैदावार हेतु प्रजातियों का चयन, बीज की मात्रा, बीज शोधन, बुवाई की विधि एवं उर्वरकों का प्रयोग संस्तुति अनुसार करें।

जौ :

- असिंचित दशा में फसल की बुवाई माह के प्रथम सप्ताह तथा सिंचित दशा में द्वितीय पखवाड़े में करें।
- बुवाई हेतु प्रजातियों का चयन, बीज की मात्रा, बीज शोधन, बुवाई की विधि एवं उर्वरकों का प्रयोग संस्तुति अनुसार करें।

चना, मटर एवं मसूर :

- पिछले माह असिंचित दशा में बोयी गयी फसल में 25–30 दिन की अवस्था पर निराई–गुड़ाई कर खरपतवारों को निकाल लें।
- सिंचित दशा में फसलों की बुवाई माह के प्रथम पखवाड़े में करें। प्रजातियों का चुनाव, बीज शोधन व फसल विशिष्ट राइजोबियम कल्चर से उपचार एवं उर्वरकों व खरपतवारनाशी रसायन का छिड़काव संस्तुति अनुसार करें।
- मटर की फसल में तना छेदक एवं पत्ती सुरंगक कीट के नियंत्रण हेतु संस्तुति अनुसार कीटनाशी रसायनों का छिड़काव करें।

बरसीम व रिजका :

- इन फसलों में आवश्यकतानुसार सिंचाई करें।

जई :

- फसल की बुवाई माह के प्रथम पखवाड़े में करें।
- भरपूर चारा उत्पादन हेतु उन्नत प्रजातियों का चयन, बीज की मात्रा, बुवाई की विधि एवं उर्वरकों का प्रयोग संस्तुति अनुसार करें।

पर्वतीय क्षेत्र

अरहर एवं राजमा :

- तैयार फसल की कटाई कर लें तथा अच्छी तरह सुखाने के पश्चात् गहाई कर दाने अलग कर लें।

गेहूँ :

- सिंचित दशा में मध्यम ऊँचाई वाले क्षेत्रों में फसल की बुवाई माह के प्रथम सप्ताह तथा घाटियों व कम ऊँचाई वाले क्षेत्रों में द्वितीय सप्ताह तक करें। विलम्ब से बुवाई माह के द्वितीय पक्ष में की जा सकती है।
- अच्छी पैदावार लेने हेतु प्रजातियों का चयन, बीज की मात्रा, बीज शोधन, बुवाई की विधि, उर्वरकों का प्रयोग एवं अन्य सस्य क्रियायें संस्तुति के अनुसार करें।
- पिछले माह असिंचित दशा में बोयी गयी फसल में निराई कर खरपतवार निकाल लें।

जौ :

- फसल की बुवाई प्रथम सप्ताह तक अवश्य कर लें। अन्य सस्य क्रियायें संस्तुति अनुसार करें।

तोरिया (लाही), पीली सरसों एवं राई (राड़ा):

- तोरिया एवं पीली सरसों की फसल एक माह की होने पर हल्की सिंचाई करें तथा संस्तुति के अनुसार नत्रजन की टॉप–ड्रेसिंग करें।
- सिंचित घाटियों एवं निचले पर्वतीय क्षेत्रों में राई की बुवाई नवम्बर प्रथम सप्ताह तक कर लें तथा बुवाई हेतु संस्तुत प्रजातियों का प्रयोग करें। अन्य सस्य क्रियायें एवं कीट व रोगों का नियंत्रण संस्तुति अनुसार करें।

चना, मटर एवं मसूर :

- इन फसलों की बुवाई माह के प्रथम सप्ताह तक अवश्य कर लें।
- बुवाई हेतु प्रजातियों का चयन, बीज की मात्रा, बीज शोधन व विशिष्ट राइजोबियम कल्चर से उपचार, बुवाई की विधि तथा उर्वरकों व खरपतवारनाशी रसायन का प्रयोग संस्तुति अनुसार करें।
- पिछले माह बोयी गयी फसल में यथासमय निराई कर खरपतवार निकाल लें।

दिसम्बर माह के कृषि कार्य

मैदानी क्षेत्र

अरहर :

- शीघ्र पकने वाली फसलों की कटाई कर लें।
- पछेती फसल की निगरानी करते रहे, फसल में सिंचाई तथा रोग अथवा कीट की समस्या होने पर संस्तुति अनुसार नियंत्रण उपाय करें।

गन्ना :

- पेड़ी फसल की कटाई तुरन्त करें ताकि उसके बाद गेहूँ की बुवाई की जा सके।
- शरदकालीन गन्ने में आवश्यकतानुसार सिंचाई करें तथा निराई–गुड़ाई कर खरपतवार निकाल लें।

तोरिया (लाही), सरसों एवं राई :

- देर से बोयी गयी तोरिया एवं सरसों तथा समय पर बोयी गयी राई की फसलों में दाना बनते समय हल्की सिंचाई करें। इन फसलों में कीट अथवा रोगों की समस्या होने पर संस्तुति अनुसार रसायनों का छिड़काव करें।
- सितम्बर में बोयी गयी तोरिया एवं सरसों की फसल में लगभग 75 प्रतिशत फलिया सुनहरे रंग की होने पर कटाई कर लें।

गेहूँ :

- फसल की देर से बुवाई 25 दिसम्बर तक कर लें अन्यथा उपज में काफी कमी आ जाती है।
- बुवाई हेतु उन्नत प्रजातियों का चयन, बीज की मात्रा, बीज शोधन, बुवाई की विधि, उर्वरकों का प्रयोग व अन्य सस्य क्रियायें संस्तुति अनुसार करें।
- असिंचित दशा में बोयी गयी फसल में निराई–गुड़ाई कर खरपतवार निकाल लें।

जौ :

- फसल की पछेती बुवाई माह के मध्य तक कर लें। अच्छी उपज हेतु प्रजातियों का चयन, बीज की मात्रा, बीज शोधन, बुवाई की विधि एवं उर्वरकों का प्रयोग संस्तुति अनुसार करें।
- पिछले माह सिंचित दशा में बोयी गयी फसल में 20–25 दिन पर सिंचाई करें तथा आवश्यकतानुसार निराई–गुड़ाई कर खरपतवार निकाल लें।

चना, मटर एवं मसूर :

- चना एवं मसूर की विलम्ब से बुवाई माह के मध्य तक कर लें। बीज की मात्रा, बीज शोधन व विशिष्ट राइजोबियम कल्चर से उपचार, बुवाई की विधि एवं उर्वरकों व खरपतवारनाशी रसायन का प्रयोग संस्तुति अनुसार करें।
- पिछले माह बोयी गयी फसलों में निराई–गुड़ाई कर खरपतवार निकाल लें। मटर की फसल में

तना मक्खी एवं पत्ती सुरंगक कीट से सुरक्षा हेतु संस्तुति अनुसार कीटनाशी रसायनों का छिड़काव करें।

जई, बरसीम एवं रिजका (लूसर्न) :

- जई की फसल में बुवाई के 20–25 दिन पर सिंचाई करें तथा संस्तुति अनुसार नत्रजन की टॉप–ड्रेसिंग करें।
- बरसीम एवं रिजका फसल की 50–55 दिन पर प्रथम कटाई करें। फसल की कटाई जमीन की सतह से 5–7 से.मी. की ऊँचाई पर करें तथा कटाई के बाद हल्की सिंचाई कर दें।

पर्वतीय क्षेत्र

गेहूँ :

- असिंचित दशा में बोयी गयी फसल में आवश्यकतानुसार निराई कर खरपतवार निकाल लें तथा सिंचित फसल में खरपतवार नियंत्रण हेतु संस्तुत खरपतवारनाशी रसायन का प्रयोग करें।

जौ :

- फसल में आवश्यकतानुसार निराई कर खरपतवार निकाल लें। सिंचित फसल में बुवाई के 20–25 दिन पर सिंचाई कर नत्रजन की संस्तुत मात्रा में टॉप–ड्रेसिंग करें।

तोरिया (लाही), पीली सरसों एवं राई (राड़ा) :

- फसल की समय–समय पर निगरानी करते रहें। कीट अथवा रोग की समस्या आने पर नियंत्रण हेतु संस्तुति अनुसार रसायनों का प्रयोग करें।
- घाटियों एवं निचले पर्वतीय क्षेत्रों में समय पर बोयी गयी फसल में दाना भरते समय हल्की सिंचाई करें।

चना, मटर एवं मसूर :

- फसल में आवश्यकतानुसार निराई–गुड़ाई कर खरपतवार निकाल लें।

सम्पर्क सूत्र : 7455967561 ☑

कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र, पंतनगर

पर कृषकों को उपलब्ध सुविधायें

उत्पादों की बिक्री

- फसल व सब्जी के बीज
- कृषि सम्बन्धी साहित्य की बिक्री
- किसान भारती एवं इण्डियन फार्मर्स डाइजेस्ट की सदस्यता
- जैविक खाद की बिक्री (मांग पर)

जाँच एवं निदान

- मृदा एवं जल की जाँच
- पौधों एवं पशुओं की बीमारी व रोगों की जाँच

हेल्प लाइन सेवा

प्रत्येक कार्यदिवस पर (प्रातः 9.30 से दोपहर 1.00 बजे तक) फोन नम्बर 05944–234810 व 05944–235580 (पंतनगर हेल्पलाइन सेवा) एवं भारत सरकार के किसान काल सेन्टर के निःशुल्क फोन नम्बर 18001801551 पर कृषकों के कृषि एवं कृषि से सम्बधित विभिन्न आयामों पशु पालन, मछली पालन, कुक्कुट पालन, केचुआं पालन, फल एवं सब्जी उत्पादन, मशरूम उत्पादन, कृषि यन्त्रों का रखरखाव एवं गृह विज्ञान (शिशु पोषण एवं देखरेख, फल सब्जी परिरक्षण) से सम्बन्धी प्रश्नों का सीधे वैज्ञानिकों द्वारा उत्तर दिया जाता है।

अधिक जानकारी हेतु सम्पर्क सूत्रः

प्रभारी अधिकारी, एटिक

गोविन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

पंतनगर - 263 145, जिला - ऊधम सिंह नगर फोन - 05944–234810, 235580; ई-मेल : aticgbpuat@gmail.com

पशुओं में स्वास्थ्य प्रबन्धन से सम्बन्धित किये जाने वाले माहवार कार्य

डा. जे.एल. सिंह, डा. शिव प्रसाद एवं डा. संजय चौधरी

पशुपालन सदियों से एक अत्यन्त लाभकारी व्यवसाय रहा है और कृषि कार्य, दुग्ध एवं ऊन, माँस उत्पादन का एक मात्र स्त्रोत है, जिस पर करोड़ों भारतवासियों की आजीविका निर्भर करती है। पशुपालकों को पशुओं से अच्छी आमदनी मिलना तभी सम्भव है जब पशुओं के स्वास्थ्य का निरन्तर ध्यान रखा जायेगा। भारतवर्ष के विभिन्न प्रान्तों में जलवायु एवं वातावरण का बड़े पैमाने पर सालभर बदलाव होता रहता है, जिसका पशुओं के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। जलवायु में परिवर्तन, बरसात, जाड़ा, गर्मी आदि मौसमों में बदलाव के कारण होता है। जैसा कि सर्वविदित है कि पशुओं या मनुष्यों की विभिन्न बीमारियों का होना तीन प्रमुख कारणों यथा–वातावरण, रोगाणु एवं मेजवान/होस्ट (पशु/मनुष्य) पर निर्भर करता है।

इन तीन प्रमुख कारणों के बीच आपसी तालमेल के कारण ही कोई बीमारी होती है। इनमें से किसी भी एक अवयव का यदि अच्छे ढंग से प्रबन्ध कर लिया जाये तो, बीमारी होने की आशंका कम हो जाती है। इन तीन अवयवों में से प्रथम दो अवयवों को नियंत्रित करना बहुत मुश्किल कार्य है, क्योंकि ये दोनों बड़े पैमाने पर व्याप्त हैं, लिहाजा पशु/होस्ट में कुछ क्रिया कलापों के द्वारा विशिष्ट रोगाणु रोधक क्षमता प्रदान की जा सकती है। इस प्रक्रिया का मुख्य उद्देश्य पशुओं को हर दृष्टि से स्वस्थ रखकर उसमें रोगाणुओं के प्रति अवरोधक क्षमता का विकास करना है। पशुओं में बीमारियों का प्रकोप विभिन्न कारणों जैसे–जलवायु, रोग वाहकों मक्खियों, मच्छरों, किलनीओं की व्यापकता, गंदगी, अव्यवस्थित खानपान तथा प्रदूषित वातावरण आदि पर निर्भर करता है। अतः पशुपालन से अधिकतम धनोपार्जन हेतु निम्नवत् माहवार कार्यक्रम अवश्य अपनाये जाने चाहिए ताकि पशुओं को स्वस्थ रखा जा सके।

जनवरी माह के कार्यक्रम

- पर्वतीय क्षेत्रों में जहाँ अत्यधिक सर्दी अथवा वर्फवारी होती है, वहाँ पर पशुशाला में कृत्रिम रोशनी तथा गर्मी का इंतजाम करना चाहिए।
- पशुओं को नमी वाले स्थान पर न रखें।
- पशुओं को पीने के लिए हल्का गर्म पानी दें।
- पशुओं को पर्याप्त मात्रा में आवश्यकतानुसार नमक दें।
- पशुओं को प्रचंड जाड़े से सुरक्षा प्रदान करने हेतु आवश्यक कदम उठायें, जैसे कि पशु आवास में बिछावन सामग्री का इस्तेमाल, पशु के शरीर पर बोरे या फटे कंबल के झाल को ओढ़ाना तथा पशुशाला का वैन्टिलेशन (हवा दर) कम करना।
- पशुओं के खाद्य पदार्थों में 10 प्रतिशत अधिक (शुष्क भार के आधार पर) राशन दें ताकि उन्हें अतिरिक्त ऊर्जा की पूर्ति हो सके।
- गाय–भैसों को परजीवी नाशक दवाईयाँ देने के 15 दिन के बाद विब्रियोसिस, आई.वी.आर., बी.वी.डी. पैराइन्फ्लुएन्जा का टीकाकरण करायें।
- पशुओं को प्रारम्भिक अवस्था के हरे चारे को न खिलायें, ताकि पशुओं में लेक्टेशन टिटेनी नामक बीमारी ना हो सके।
- भेड़, बकरियों के प्रसव प्रकोष्ठों को साफ–सुथरा एवं तैयार रखें।
- भेड़ बकरियों में क्लॉस्ट्रीडियम के प्रकोप की रोकथाम हेतु टीकाकरण करवायें।
- नवजात पशुवत्स को जन्म के 6–8 घंटे के भीतर ही खीस पिलायें तथा 24 घंटे तक प्रत्येक 6 घंटे के अन्तराल पर इसे दोहरायें।

फरवरी माह के कार्यक्रम

- नवजात पशुओं में अन्तः परजीवी नाशक दवाई दें।

- पशुओं में वाह्य परजीवी ढ़ील/जूँ, किलनियों और मक्खियों के प्रकोप को नियंत्रित करने की शुरूआत करें।
- प्रजनन हेतु इस्तेमाल होने वाली मादा भेड़ों तथा नर भेड़ों को अतिरिक्त सन्तुलित आहार दें।
- भेड़/बकरियों को चेचक नामक बीमारी से बचाव हेतु भेड़/बकरी पॉक्स नामक टीका लगवायें।
- गाय/भैसों को केवल अफराजनित खाद्य पदार्थ जैसे कि बरसीम, अगोला इत्यादि का सेवन न करायें। हरे चारे के साथ हमेशा शुष्क खाद्य पदार्थ मानक मात्रा में मिलाकर इस्तेमाल करें। भेड़–बकरियों के नवजात मेमनों का उपचारण एवं देखभाल अच्छी तरह करें।
- गाय/भैसों के बछड़ों एवं भेड़–बकरियों के मेमनों के कान में पहचान हेतु टैग/छल्ला पहनायें।
- गाय/भैसों के बछड़ों के सींग बड कलिकाओं को एक सप्ताह की उम्र पर ही नष्ट करवायें।
- हरे चारे की पर्याप्त उपलब्धता बनाये रखने के लिए ज्वार, मक्का, लोबिया आदि की बुवाई फरवरी के अन्तिम सप्ताह तक अवश्य करें।

मार्च माह के कार्यक्रम

- उपलब्ध हरे चारे से साइलेज तैयार करें।
- गाय/भैस की प्रौढ़ बछियों के बीच प्रजनन हेतु साँड़ को छोड़ें (1 साँड़, 20–25 बछियों हेतु पर्याप्त है)। उचित होगा कि प्रजनन हेतु अच्छी गुणवत्ता के साँड़ के वीर्य से कृत्रिम गर्भाधान करायें।
- संक्रामक अतिसार के होने की आशंका पर ओरल (मुंह से) ई. कोलाई नामक वैक्सीन जरूर दिलवायें।
- ऊन उत्पादन करने वाली भेड़ बकरियों की साफ–सफाई, ऊन की कटाई से पूर्व अच्छी प्रकार से करें, ताकि ऊन में कोई भी खझड़ा या गंदगी न होने पायें। ऊन की कटाई के उपरान्त त्वचा की व्याधियों जैसे कि खाज, खुजली, उकवत आदि के उपचार हेतु डिपींग करें।
- गाय/भैसों के बछड़े जिनकी उम्र 2 माह के आस–पास हो गयी हो, को कृमिनाशी दवा दें।
- व्यस्क पशु जिनको तीन माह पूर्व कृमिनाशी दवा दी गयी हो, को दोबारा यह दवा दें।
- चार–पाँच माह की उम्र की बछियों को संक्रामक गर्भपात नामक रोग का टीकाकरण करवायें।
- मच्छर एवं मक्खियों के द्वारा फैलने वाली बीमारियों की रोकथाम के लिए पशु को जालीदार आवास व्यवस्था के तहत रखें।

अप्रैल माह के कार्यक्रम

- तापमान बढ़ने पर पशुओं को पर्याप्त मात्रा में नमक तथा पानी दें।
- भेड़ बकरी के मेमनों को इन्टेरोटॉक्सिमिया तथा सीप पॉक्स की वैक्सिन लगाये।
- गाभिन पशुओं को आवश्यकतानुसार अतिरिक्त दाना दें।
- मड़ाई/दऊरी के दौरान बैलों के मुंह में खोचा लगाकर रखें, ताकि उक्त प्रक्रिया के दौरान पशु दाना न खा सकें अन्यथा उन्हें अम्लीय अथवा क्षारीय अपच नामक रोग से ग्रसित होने का खतरा रहता है।
- पशुओं को नया भूसा बिना पानी में भिगोयें हुए न खिलायें, अन्यथा साधारण अपच नामक रोग से ग्रसित होने का खतरा रहता है।
- फसल थ्रैसिंग (थ्रेसर द्वारा मड़ाई) प्रक्रिया से जानवरों को दूर रखें अन्यथा उन्हें एलर्जिक ब्रोंकाइटिस नामक बीमारी हो जाती है।
- आयु की दृष्टि से कमजोर/नपुंसक अथवा प्रजनन की दृष्टि से अनुपयुक्त पशुओं की छटाई /कलिंग अवश्य करवायें।
- वयस्क पशुओं में खुरपका एवं मुँहपका नामक बीमारी का टीकाकरण करवाने से 15 दिन पूर्व कृमिनाशक दवाई का इस्तेमाल अवश्य करें।
- बछड़ों, बछड़ियों, मेमनों आदि की बढ़वार का आंकलन करने हेतु उनका वजन निर्धारण समय–समय पर करते रहना चाहिए।

- जानवरों को कभी भी खराब अथवा दुर्गंधित पुआल नहीं खिलाना चाहिए, अन्यथा उन्हें डेगनाला नामक बीमारी होने का खतरा बना रहता है।
- पशुओं को गर्मी से बचाने हेतु स्वच्छ एवं ठंडा पानी प्रचुर मात्रा में दिन में बार–बार पिलाना चाहिए।

मई माह के कार्यक्रम

- पशुओं को अन्तः कृमिनाशक दवाई दें।
- पशुओं को चरने हेतु सुबह 6–7 बजे तथा अपराह्न में लगभग 3–4 बजे से 6–7 बजे तक छोड़ना चाहिए। दिन में 10–2 बजे के बीच उन्हें लू एवं गर्मी से दूर, पशु आवास में अथवा घने छायादार वृक्षों के नीचे रखना/बाँधना चाहिए।
- पशुओं को लू तथा ऊष्मा आघात से बचाने के लिए चरागाह में भी पानी की कमी नहीं रहनी चाहिए तथा मकानों में वातानुकूलन के लिए पंखा, कूलर इत्यादि का उचित प्रबन्ध होना चाहिए।
- उत्पादन पर गर्मी के दुष्प्रभाव को रोकने के लिए पशुओं को सुबह शाम नहलाना चाहिए अथवा उनके ऊपर फब्बारे द्वारा पानी का छिड़काव समय–समय पर करते रहना चाहिए। भैसों के लिए वेलोइंग टैंक या तालाब अत्यन्त आवश्यक है।
- जवान बछियों के बीच से साँड़ को हटा देना चाहिए।
- दो माह की उम्र के बछड़े/बछियों को पिपराजीन नामक कृमिनाशक दवाई जरूर पिलानी चाहिए।
- बछड़ों/पशुवत्सों को आई.वी.आर., बी.वी.डी. (बोवाईन विषाणु दस्त), पैराइन्फ्लुएन्जा आदि का टीका लगवाना चाहिए।
- दो से चार माह की उम्र के पशुओं को लंगड़ी बुखार का टीकाकरण करवाना चाहिए।
- दुधारू पशुओं को हरा चारा, लवण मिश्रण/रातिब, एंटी ऑक्सीडेंट आदि खाद्य पदार्थों एवं दवाओं को मानक मात्रा में इस्तेमाल करना जरूरी है।
- पशुओं के चारे एवं अन्य खाद्य पदार्थों पर अगर धूल अथवा कोई गंदगी हो तो उसे अच्छी तरह से साफ पानी से धोकर ही खिलाना चाहिए।
- गर्मी के मौसम में एम.पी.चरी, मक्का, कटिला, सूबबूल आदि हरे चारे को मुरझाई हुई अवस्था में नहीं खिलाना चाहिए, अन्यथा साइनाइड जहरवाद का खतरा हो सकता है।

जून माह के कार्यक्रम

- जून का माह गर्मी एवं बरसात का मिश्रण भरा होता है और तापमान एवं आर्द्रता दोनों बढ़े होते हैं जोकि रोगाणुओं को पनपने के लिए काफी अनुकूलित होता है। अतः ऐसे वातावरण में, पशुओं की बीमारी के लिए सुग्राहिता बढ़ जाती है। इसलिए इस तरह के मौसम में अनेक बीमारियां होती हैं। ऐसे समय में स्वास्थ्य प्रबन्धन हेतु निम्नलिखित उपाय करने चाहिए :
- पशुओं को टिटेनस, इन्टेरोटॉक्सिमिया तथा गलाघोंटू के टीके माह के शुरूआत में ही लगवायें।
- अधिक गर्मी के कारण पशु ज्यादा चारा नहीं खाता, अतः उसे इस महीने दाने की मात्रा बढ़ाकर दें तथा खनिज मिश्रण लगभग 50 ग्रा. प्रतिदिन देते रहने से प्रजनन प्रभावित नहीं होता है।
- बढ़ती हुई बछियों के उचित बढ़वार हेतु उन्हें प्रतिदिन लगभग 20–25 ग्रा. नमक अवश्य दें।
- गर्भित मादा भेड़ों, जो कि ब्याने की अन्तिम अवस्था में हों, को अतिरिक्त खान–पान की आपूर्ति तथा भेड़ों के ब्याने वाले प्रकोष्ठ की साफ–सफाई अच्छी प्रकार से करनी चाहिए।
- मक्खियों की समस्या से निपटने/निजात के लिए फ्लाई रिपलेंट/मक्खी भगाने/खदेड़ने वाली दवा का इस्तेमाल करें।
- नर बछड़ों का बधियाकरण कुशल पशुचिकित्सक द्वारा ही करायें।
- बिना आवश्यकता वाले नर पशुओं की छटनी जून माह तक अवश्य कर दें।
- गर्मी के प्रकोप को कम करने हेतु पशुओं को ओरल जलीयकरण/घोल का सेवन करायें।
- पशुओं के चरागाहों में मक्खी एवं मच्छरों से निजात

दिलाने हेतु आग जलायें।

- गोबर की खाद (वर्मी कम्पोस्ट) गड्ढ़ों से निकालकर खेत में डालें तथा गड्ढ़ों को रसायनों द्वारा उपचारित कर जीवाणु हनन करें।
- मानसून की पहली बारीश में पशुओं को न भीगने दें ताकि उन्हें त्वचा सम्बन्धी विकार न हो।
- पहली बरसात के बाद पशुओं को चरागाहों में चरने हेतु न छोड़ें, क्योंकि पहली बरसात के समय पानी की बूदों के जमीन पर गिरने से धूल एवं मिट्टी छिटक कर घास की पत्तियों पर पड़ जाती है जो पशुओं के पेट में जाने पर पेट दर्द अथवा अन्य संक्रमण का कारण बन जाता है।
- पशुओं की आवासीय व्यवस्था में विभिन्न कमियाँ यथा छत से पानी का टपकना, फर्श का टूटा होना, चरही/नाद के टूटने/फूटने की समस्या, विसर्जित पदार्थों के निकास की समस्या, नाली की टूट–फूट की मरम्मत आदि यथासमय करा लें।

जुलाई माह के कार्यक्रम

- जुलाई एवं अगस्त महीना गाय/भैसों के ब्याने का समय होता है। अतः प्रसव प्रकोष्ठ को साफ–सुथरा करके इस्तेमाल हेतु तैयार रखें।
- पशु के प्रसव के समय लगातार निगरानी रखनी चाहिए, ताकि कोई भी व्याधि उत्पन्न होने पर उसका तुरन्त समाधान हो सकें।
- प्रसव के तुरन्त बाद नवजात बच्चे की साफ–सफाई साफ–सुथरे तौलिये अथवा कपड़े से करनी चाहिए तथा पैदा होने के तुरन्त बाद उसकी नाभि को धागे से बाँधकर, किसी साफ/सुथरे ब्लेड अथवा चाकू से काटकर उस पर जेन्सन वायलेट पेन्ट अथवा टिंक्चर आयोडीन दिन में 2 बार, 3 दिनों तक लगाना चाहिए।
- प्रसव के 6–8 घंटे के बीच तथा इसके बाद प्रत्येक 6 घंटे के अन्तराल पर 24 घंटों तक बच्चे को पर्याप्त मात्रा में खीस जरूर पिलाना चाहिए। खीस बच्चे को ऊर्जा प्रदान करने के साथ–साथ रामबाण दवाई का कार्य करता है, जिससे नवजात शिशु का पहला मल पदार्थ निकलता है। खीस शरीर को रोगों से लड़ने की क्षमता प्रदान करता है।
- अधिक दुधारू पशुओं को ब्याने के 24 घंटे पहले कैल्शियम क्लोराइड नामक जेल दवा लगभग 200 मि.ली. मात्रा में देनी चाहिए। इसे ब्याने वाले दिन तथा ब्याने के एक दिन बाद भी दें, ताकि पशु को दुग्ध ज्वर नामक बीमारी न हो।
- पशु के ब्याने के बाद उसकी अच्छी तरह से साफ–सफाई करके, यूटरोटोन/हरीरा/ गाइनोटोन दवा की 200 मि.ली. मात्रा सुबह शाम तीन दिनों तक, गर्भाशय की सफाई हेतु देनी चाहिए।
- प्रसव के उपरान्त पशुओं को उत्पादन राशन आवश्यकतानुसार देना चाहिए।
- छोटे रोमन्थी पशुओं, जैसे भेड़, बकरी एवं नवजात गो वत्स को बरसात के दिनों में भीगने से बचाना चाहिए ताकि उनको सर्दी/जुकाम /न्यूमोनिया नामक बीमारी न हो।
- भारी बरसात जैसे मौसम में पशु को पशुशाला के अन्दर रखना चाहिए, ताकि पशु के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव न पड़े।
- बरसात के मौसम में पशुशाला की नियमित रूप से दिन में 2–3 बार सफाई करें ताकि वहाँ कोई भी रोगाणु/जीवाणु न पनप सके।

अगस्त माह के कार्यक्रम

- गाय/भैसों में प्रसव सम्बन्धित सावधाँनियाँ ध्यान में रखें तथा माँ एवं नवजात बच्चे की गहन देखभाल करें, ताकि किसी तरह की अनहोनी न हो। प्रसव व्याधि/डिस्टोकिया/कष्टमय प्रसव से ग्रसित मादा पशु का किसी चिकित्सक की देख रेख में प्रसव प्रक्रिया संपन्न करायें।
- इस माह में संक्रामक वत्स अतिसार की समस्या काफी होती है जो ज्यादातर पशुशाला में गंदगी के कारण होता है। अतः पशुशाला की दिन में 2–3 बार सफाई कर डिसइन्फेक्टेंट का इस्तेमाल करें।
- गाय/भैसों को ब्याने के लगभग दो हफ्ते बाद कृमिनाशक दवा जरूर दें, इसके साथ ही लीवर

टॉनिक, लवण मिश्रण तथा रूधिर वर्धक आदि दवा भी 15 दिनों तक देनी चाहिए।

- नवजात बछड़े/बछियों को एक माह की उम्र पर पिपराजीन नामक दवा की खुराक 1 मि.ली. प्रति कि.ग्रा. शारीरिक भार के अनुसार दें।
- जहरीले सर्प दंश विषाक्तता को रोकने हेतु पशुओं को सुरक्षित पशु आवासों में रखें, जहाँ पर कीड़े–मकोड़े एवं मेढक इत्यादि का आवागमन ना हो सके, क्योंकि साँप इन जीवों की तलाश में पशु आवासों में घुस जाते हैं तथा उनके शरीर का कोई भी भाग पशु के पैर से दबने पर साँप द्वारा काटे जाने का खतरा रहता है। पशुशाला के अन्दर तथा आसपास फिनाइल अथवा थिमेट नामक रसायन का इस्तेमाल करें, जिससे साँप अन्दर न आ सके।
- पशुशाला की प्रतिदिन नियमित 2–3 बार सफाई एवं धुलाई करें, ताकि दुधारू पशुओं को थनैला नामक बीमारी न हो सके।
- पशुशाला में इस्तेमाल होने वाली बिछावन सामग्री को प्रतिदिन अवश्य बदलें, अन्यथा उनसे भी कई बीमारियाँ फैलती हैं।
- जुलाई एवं अगस्त माह में पशुओं को पिलाये जाने वाले पानी एवं आहार के गुणवत्ता की समय–समय पर जाँच करवायें तथा पानी द्वारा फैलने वाली बीमारियों से बचाव हेतु जलाशय अथवा पानी की टंकी आदि में जीवाणुनाशक दवाओं जैसे लाल दवा 1:1000 के अनुपात में अथवा ब्लीचिंग पाउडर/क्लोरीन की गोलियों का इस्तेमाल करें।
- पशुओं के पैर की सड़न जैसी 'फूटरॉट' नामक बीमारी को रोकने हेतु पशुओं के खुरों/पैरों को 10 प्रतिशत फॉर्मेलीन अथवा 5 प्रतिशत नीले थोथे के घोल में सुबह शाम 2–3 मिनट तक डुबोएं। उक्त प्रक्रिया 3 दिनों तक करें।
- पशुओं को हमेशा ताजा कटा हुआ हरा चारा खिलाएं, ताकि उन्हें खाद्य विषाक्तता न हो।

सितम्बर माह के कार्यक्रम

- गाय/भैसों में दुग्ध उत्पादन 2–3 महीने बाद ही चरम पर पहुँचता है, लिहाजा ऐसे पशुओं को उत्पादन राशन की मानक मात्रा के अतिरिक्त खुराक देना जरूरी होता है, अन्यथा पशु के अन्दर ऊर्जा की कमी हो जाती है और तमाम उपापचयी/मेटाबॉलिक बीमारियाँ जैसे–किटोसिस, एबोमैजम का विस्थापित होना, लैक्टिक अम्लीयता, पी.पी. एच., हाइपो –कैल्शिमियां, दुग्धज्वर होने का डर रहता है। मध्यम शारीरिक भार अधिकतम शारीरिक भार वाले पशुओं को आवश्यक पोषक तत्वों की मानक मात्रा क्रमशः 50 और 100 ग्रा. प्रतिदिन देनी चाहिए। साथ ही साथ आयोडीन युक्त नमक की लगभग 50 ग्रा. मात्रा प्रतिदिन खाद्य प्रतिपूर्ति के रूप में देना चाहिए।
- नवजात बछड़ों तथा माँ का दूध छोड़ते समय गो वत्सों का शारीरिक वजन/भार का आंकलन करते रहना चाहिए ताकि, उम्र के हिसाब से शारीरिक भार में बढ़ोत्तरी का अनुमान लगाया जा सके।
- मादा बछियों का माँ से दूध छः महीने के बाद ही छुड़वाना चाहिए, ताकि उनका शारीरिक विकास अच्छी तरीके से हो सके।
- दुधारू गायों के उत्पादन का लेखा–जोखा नियमित रूप से रखें। भेड़–बकरियों में पी.पी.आर./बकरी प्लेग नामक बीमारी का टीका 8–12 हफ्ते की उम्र में मेमनों को अवश्य लगवायें।
- ग्रामीण क्षेत्र में भेड़ एवं बकरियों को टिटेनस टॉक्साइड के 2 टीके–पहला 4 माह पर व दूसरा 5 माह पर अवश्य लगवायें, जिससे नवजात मेमनों को टिटनेस नामक बीमारी न हो।
- गोवत्स के पैदा होने के 15 दिन के उपरान्त कैल्शियम, मैग्नीशियम, फॉस्फोरस, जिंक, आयरन आयोडीन, कॉपर तत्वों को लवण मिश्रण अथवा मिनरल ड्रॉप के रूप में सेवन करायें अन्यथा

उपरोक्त की कमी होने पर गोवत्स मिट्टी खाना शुरू कर देते हैं जिससे उन्हें गोल कृमि और कॉक्सीडिओसिस नामक बीमारी का संक्रमण हो जाता है।

- पोषक तत्वों के अतिरिक्त गोवत्सों को आवश्यक विटामिन की प्रतिपूरक मात्रा अवश्य दें अन्यथा विटामिन की कमी से होने वाले रोग जैसे रिकेट्स होने की आशंका हो जाती है।

अक्टूबर माह के कार्यक्रम

- दूध छुड़ाये हुए छः माह के बछियों को ब्रूसीलोसिस /संक्रामक गर्भपात, आई.वी.आर., बोवाईन वायरल डायरिया, पैराइन्फ्लुएन्जा, गलाघोटूँ आदि के संयुक्त टीके एक साथ लगवायें तथा ब्लैकलेग 7 वे नामक दूसरा संयुक्त टीका दूसरी बार 15–21 दिनों के अन्तराल पर लगवायें।
- बड़े समूह में बछड़ियों के पहचान हेतु सुविधानुसार ब्रांडिंग, टैटुइंग अथवा टैगिंग में से कोई भी एक प्रक्रिया अपनायें।
- ओसर/बछियों के सींगों का निरीक्षण करें यदि उसमें सींग थोड़ी बहुत भी दिखाई दे रही है तो उसे दुबारा नष्ट करें।
- बछियों के अयन स्थल का मुआयना करने पर अगर अतिरिक्त स्तन/थन दिखाई दें तो उसे शल्य क्रिया द्वारा अवश्य निकलवा दें अन्यथा वे दुधारू पशुओं की दोहन प्रक्रिया में बाधा डालते हैं।
- गाय/भैसों को प्रजनन से पूर्व विब्रियोसिस–एल–5, आई.वी.आर., बी.वी.डी., पैराइन्फ्लुएन्जा आदि के टीके संयुक्त रूप से अथवा अलग–अलग लगवायें।
- वाह्य परजीवियों जैसे जूँ/छिछड़ों, पिस्सू /किलनियों,/फ्लियां/माइट आदि का इलाज पशुचिकित्सक द्वारा करवायें।
- यदि किसी गाय/भैंस का बच्चा गिरने या गर्भपात जैसी समस्या हुई है तो उसके रक्त/सिरम, जेर अथवा मरे हुए बच्चे के नमूने का परीक्षण करायें ताकि बीमारी का निदान हो सके।
- दुधारू पशुओं को हमेशा हरे चारे की उपलब्धता का ध्यान रखें, ताकि उनमें विटामिन और आवश्यक तत्वों की कमी वाली बीमारियाँ न हो।
- ज्यादातर गाय/भैस इस माह में मदकाल में आते हैं, इसलिए पशुओं में मदकाल के लक्षणों का सुबह–शाम नियमित रूप से निरीक्षण करें, ताकि पशु का मदकाल बिना गर्भ धारण के न निकल जाये।

नवम्बर माह के कार्यक्रम

- अगर आपने पशुओं को फ्लाई टैग लगा रखा है तो उसे हटा दें ताकि उस पर धूल–मिट्टी, मक्खी, मच्छर आदि की बहुत ज्यादा मात्रा इकट्ठा न हो सके।
- जुलाई माह में पैदा हुए 4–6 माह के बछियों को संक्रामक गर्भपात का टीकाकरण नवम्बर माह तक अवश्य करा दें।
- किसी भी टीकाकरण के 2 हफ्ते पहले, पशु वत्सों को पिपराजीन नामक कृमिनाशक दवा प्राथमिकता के आधार पर दें क्योंकि यह दवाई गोल कृमिनाशक के रूप में काफी प्रभावी पायी गयी है।
- जाड़े के दिनों में रात में पशुशाला में इस्तेमाल होने वाले बिछावन सामग्री जैसे शुष्क मुलायम घास, पुआल, लकड़ी के छिलके/बुरादा आदि को इकत्रित कर के रख लेना चाहिए।
- पशु आवास में लगे खिड़की, दरवाजे, रोशनदान की टूट–फूट की मरम्मत समय–समय पर करते रहना चाहिए, ताकि जरूरत पड़ने पर उसे खोला या बन्द किया जा सके।
- संकर प्रजाति के बछियों की बढ़वार एवं प्रजनन हेतु अथवा आवश्यक शारीरिक वजन धारण करने हेतु अच्छे स्तर का खान–पान उपलब्ध कराना चाहिए, ताकि बछिये 12–18 महीनों में ही किशोरावस्था धारण कर मदकाल में आ जायें।
- भैसों का मदकाल अक्टूबर–नवम्बर तक होता है, इसलिए इन महीनों में मादा भैसों में मदकाल के लक्षणों का सुबह–शाम निरीक्षण करें, ताकि

गर्भाधान की प्रक्रिया समय से सम्पन्न करायी जा सके।

दिसम्बर माह के कार्यक्रम

- रात्रि में तापमान में गिरावट होने पर पशुओं को कवर्ड शेड में रखें।
- यदि टीकाकरण नहीं कराया गया हो तो शीघ्र ही टीकाकरण करवायें।
- पशुओं को नमक तथा मिनरल मिक्चर पर्याप्त मात्रा में दें।
- पशुशाला में पर्याप्त सफाई की व्यवस्था करें।
- आर्थिक दृष्टि से अनउपयोगी पशुओं की वर्ष में कम से कम दो बार छटनी/कलिंग करें। एक दिसम्बर माह में दूसरा मई–जून माह में, जिसमें लगभग 10 प्रतिशत अनउपयोगी पशुओं की छंटनी कर गोशाला अथवा किसी अन्य संस्था, जहाँ वृद्ध जानवरों को आश्रय देकर धर्मार्थ स्वरूप शरणार्थी के रूप में पाला–पोषा जाता है, में भेज दें।
- आवश्यकता से अधिक बछियों की भी कलिंग/छंटनी की जाती है। इस प्रक्रिया में आवश्यकता से 10–20 प्रतिशत ज्यादा बछियों को पशुशाला में रोकना चाहिए, जिनको बाद में गाभिन बछियों के रूप में अथवा कलिंग करके निकाला जा सकता है।
- दिसम्बर माह में धान की कटाई एवं मड़ाई का कार्य होता है। मड़ाई के समय पशु के मुँह में खोचाँ अथवा मफल का खोल पहनाना चाहिए ताकि वे धान का बीज ज्यादा मात्रा में न खा सकें तथा साथ ही धान के खेत में डाली जाने वाली जहरीली दवा के सम्पर्क में भी न आये।
- भेड़ बकरियों को सुबह 9–10 बजे के आस–पास जब ओंस की बूंदें सूख जायें तभी चरागाह या बंजर जमीन में चराने हेतु ले जायें। पाला पड़े खाद्य पदार्थों के खाने से पकड़ी/ इन्टेरोटॉक्सिमिया नामक बीमारी होने का खतरा रहता है। लगभग सायं 4 बजे तक उन्हें बाड़े/आवास में चरागाह से वापस ले आयें ताकि उनको ठंड का असर कम हो। जाड़े के इस महीने में भेड़ बकरियों को शीत ज्वर नामक बीमारी से बचाव हेतु बन्द आवासों में रखें अन्यथा खुले बाड़े के ऊपर ठंड से सुरक्षा हेतु छप्पर/थैचर की व्यवस्था कर उसके चारों तरफ टटरी लगाकर उस पर जूट के बोरों को लटका कर गरम रखें।
- शीत आघात/कोल्ड स्ट्रोक से बचाव हेतु गाय भैसों/भेड़–बकरियों के बाड़ों के आस–पास रात में अलाव जलाकर गर्मी प्रदान करें।
- जाड़े के दिनों में पशुओं को अतिरिक्त ऊर्जा प्रदान करने वाले खाद्य पदार्थों की 25 प्रतिशत मात्रा बढ़ाकर दें। बाँधकर पाले जाने वाले पशुओं को व्यायाम करवायें तथा सूर्य की रोशनी आने पर उन्हें पशुशाला के बाहर निकालकर धूप में बाँधें।
- पशुओं को दुर्गन्धित/खराब पुआल न खिलायें, ताकि इसकी वजह से पशुओं में फफूँद जनित विकार जैसे डेगनाला बीमारी या अफ्लाटॉक्सिकोसिस नामक बीमारी पैदा हो जाती है।
- पशुओं की त्वचा की देखभाल हेतु कंघी, खरहरा, स्नान तथा समय–समय पर बालों के आवरण का कंडीशनर/अथवा कैम्फर लिनीमेट (कपूर+सरसों का तेल) का इस्तेमाल करें।
- माँ से दूध छुड़ाने वाले गोवत्सों को संक्रामक गर्भपात आई.वी.आर., बी.वी.डी., पैराइन्फ्लुएन्जा लंगड़ी/ब्लैक लेग और गलाघोटू के टीके 4–6 माह की उम्र में अवश्य लगवायें।

सम्पर्क सूत्र : 9412162673

☑

अक्टूबर 2024

मंगलवार 1 .....
बुधवार 2 .....
गुरूवार 3 .....
शुक्रवार 4 .....
शनिवार 5 .....
रविवार 6 .....
सोमवार 7 .....
मंगलवार 8 .....
बुधवार 9 .....
गुरूवार 10 .....
शुक्रवार 11 .....
शनिवार 12 .....
रविवार 13 .....
सोमवार 14 .....
मंगलवार 15 .....
बुधवार 16 .....
गुरूवार 17 .....
शुक्रवार 18 .....
शनिवार 19 .....
रविवार 20 .....
सोमवार 21 .....
मंगलवार 22 .....
बुधवार 23 .....
गुरूवार 24 .....
शुक्रवार 25 .....
शनिवार 26 .....
रविवार 27 .....
सोमवार 28 .....
मंगलवार 29 .....
बुधवार 30 .....
गुरूवार 31 .....
नोटः

नवम्बर 2024

शुक्रवार 1 .....
शनिवार 2 .....
रविवार 3 .....
सोमवार 4 .....
मंगलवार 5 .....
बुधवार 6 .....
गुरूवार 7 .....
शुक्रवार 8 .....
शनिवार 9 .....
रविवार 10 .....
सोमवार 11 .....
मंगलवार 12 .....
बुधवार 13 .....
गुरूवार 14 .....
शुक्रवार 15 .....
शनिवार 16 .....
रविवार 17 .....
सोमवार 18 .....
मंगलवार 19 .....
बुधवार 20 .....
गुरूवार 21 .....
शुक्रवार 22 .....
शनिवार 23 .....
रविवार 24 .....
सोमवार 25 .....
मंगलवार 26 .....
बुधवार 27 .....
गुरूवार 28 .....
शुक्रवार 29 .....
शनिवार 30 .....
नोटः

दिसम्बर 2024

रविवार 1 .....
सोमवार 2 .....
मंगलवार 3 .....
बुधवार 4 .....
गुरूवार 5 .....
शुक्रवार 6 .....
शनिवार 7 .....
रविवार 8 .....
सोमवार 9 .....
मंगलवार 10 .....
बुधवार 11 .....
गुरूवार 12 .....
शुक्रवार 13 .....
शनिवार 14 .....
रविवार 15 .....
सोमवार 16 .....
मंगलवार 17 .....
बुधवार 18 .....
गुरूवार 19 .....
शुक्रवार 20 .....
शनिवार 21 .....
रविवार 22 .....
सोमवार 23 .....
मंगलवार 24 .....
बुधवार 25 .....
गुरूवार 26 .....
शुक्रवार 27 .....
शनिवार 28 .....
रविवार 29 .....
सोमवार 30 .....
मंगलवार 31 .....
नोटः

जनवरी 2025

बुधवार 1 .....
गुरूवार 2 .....
शुक्रवार 3 .....
शनिवार 4 .....
रविवार 5 .....
सोमवार 6 .....
मंगलवार 7 .....
बुधवार 8 .....
गुरूवार 9 .....
शुक्रवार 10 .....
शनिवार 11 .....
रविवार 12 .....
सोमवार 13 .....
मंगलवार 14 .....
बुधवार 15 .....
गुरूवार 16 .....
शुक्रवार 17 .....
शनिवार 18 .....
रविवार 19 .....
सोमवार 20 .....
मंगलवार 21 .....
बुधवार 22 .....
गुरूवार 23 .....
शुक्रवार 24 .....
शनिवार 25 .....
रविवार 26 .....
सोमवार 27 .....
मंगलवार 28 .....
बुधवार 29 .....
गुरूवार 30 .....
शुक्रवार 31 .....
नोटः

फरवरी 2025

शनिवार 1 .....
रविवार 2 .....
सोमवार 3 .....
मंगलवार 4 .....
बुधवार 5 .....
गुरूवार 6 .....
शुक्रवार 7 .....
शनिवार 8 .....
रविवार 9 .....
सोमवार 10 .....
मंगलवार 11 .....
बुधवार 12 .....
गुरूवार 13 .....
शुक्रवार 14 .....
शनिवार 15 .....
रविवार 16 .....
सोमवार 17 .....
मंगलवार 18 .....
बुधवार 19 .....
गुरूवार 20 .....
शुक्रवार 21 .....
शनिवार 22 .....
रविवार 23 .....
सोमवार 24 .....
मंगलवार 25 .....
बुधवार 26 .....
गुरूवार 27 .....
शुक्रवार 28 .....
नोटः

मार्च 2025

शनिवार 1 .....
रविवार 2 .....
सोमवार 3 .....
मंगलवार 4 .....
बुधवार 5 .....
गुरूवार 6 .....
शुक्रवार 7 .....
शनिवार 8 .....
रविवार 9 .....
सोमवार 10 .....
मंगलवार 11 .....
बुधवार 12 .....
गुरूवार 13 .....
शुक्रवार 14 .....
शनिवार 15 .....
रविवार 16 .....
सोमवार 17 .....
मंगलवार 18 .....
बुधवार 19 .....
गुरूवार 20 .....
शुक्रवार 21 .....
शनिवार 22 .....
रविवार 23 .....
सोमवार 24 .....
मंगलवार 25 .....
बुधवार 26 .....
गुरूवार 27 .....
शुक्रवार 28 .....
शनिवार 29 .....
रविवार 30 .....
सोमवार 31 .....
नोटः

अप्रैल 2025

मंगलवार	1	.....
बुधवार	2	.....
गुरूवार	3	.....
शुक्रवार	4	.....
शनिवार	5	.....
रविवार	6	.....
सोमवार	7	.....
मंगलवार	8	.....
बुधवार	9	.....
गुरूवार	10	.....
शुक्रवार	11	.....
शनिवार	12	.....
रविवार	13	.....
सोमवार	14	.....
मंगलवार	15	.....
बुधवार	16	.....
गुरूवार	17	.....
शुक्रवार	18	.....
शनिवार	19	.....
रविवार	20	.....
सोमवार	21	.....
मंगलवार	22	.....
बुधवार	23	.....
गुरूवार	24	.....
शुक्रवार	25	.....
शनिवार	26	.....
रविवार	27	.....
सोमवार	28	.....
मंगलवार	29	.....
बुधवार	30	.....

नोटः

मई 2025

गुरूवार	1	.....
शुक्रवार	2	.....
शनिवार	3	.....
रविवार	4	.....
सोमवार	5	.....
मंगलवार	6	.....
बुधवार	7	.....
गुरूवार	8	.....
शुक्रवार	9	.....
शनिवार	10	.....
रविवार	11	.....
सोमवार	12	.....
मंगलवार	13	.....
बुधवार	14	.....
गुरूवार	15	.....
शुक्रवार	16	.....
शनिवार	17	.....
रविवार	18	.....
सोमवार	19	.....
मंगलवार	20	.....
बुधवार	21	.....
गुरूवार	22	.....
शुक्रवार	23	.....
शनिवार	24	.....
रविवार	25	.....
सोमवार	26	.....
मंगलवार	27	.....
बुधवार	28	.....
गुरूवार	29	.....
शुक्रवार	30	.....
शनिवार	31	.....

नोटः

जून 2025

रविवार 1 .....
सोमवार 2 .....
मंगलवार 3 .....
बुधवार 4 .....
गुरूवार 5 .....
शुक्रवार 6 .....
शनिवार 7 .....
रविवार 8 .....
सोमवार 9 .....
मंगलवार 10 .....
बुधवार 11 .....
गुरूवार 12 .....
शुक्रवार 13 .....
शनिवार 14 .....
रविवार 15 .....
सोमवार 16 .....
मंगलवार 17 .....
बुधवार 18 .....
गुरूवार 19 .....
शुक्रवार 20 .....
शनिवार 21 .....
रविवार 22 .....
सोमवार 23 .....
मंगलवार 24 .....
बुधवार 25 .....
गुरूवार 26 .....
शुक्रवार 27 .....
शनिवार 28 .....
रविवार 29 .....
सोमवार 30 .....
नोटः

जुलाई 2025

मंगलवार 1 .....
बुधवार 2 .....
गुरूवार 3 .....
शुक्रवार 4 .....
शनिवार 5 .....
रविवार 6 .....
सोमवार 7 .....
मंगलवार 8 .....
बुधवार 9 .....
गुरूवार 10 .....
शुक्रवार 11 .....
शनिवार 12 .....
रविवार 13 .....
सोमवार 14 .....
मंगलवार 15 .....
बुधवार 16 .....
गुरूवार 17 .....
शुक्रवार 18 .....
शनिवार 19 .....
रविवार 20 .....
सोमवार 21 .....
मंगलवार 22 .....
बुधवार 23 .....
गुरूवार 24 .....
शुक्रवार 25 .....
शनिवार 26 .....
रविवार 27 .....
सोमवार 28 .....
मंगलवार 29 .....
बुधवार 30 .....
नोटः

कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक) पर उपलब्ध साहित्य

पंतनगर किसान डायरी 2025	कृषि एवं कृषि के प्रमुख आयाम पर जानकारी	₹ 170/– पंजीकृत डाक खर्च + पैकिंग चार्ज ₹ 60/– कुल ₹ 230/–
गन्ना उत्पादन तकनीकी	गन्ना उत्पादन से सम्बन्धित जानकारी	₹ 50/– पंजीकृत डाक खर्च + पैकिंग चार्ज ₹ 30/– कुल ₹ 80/–
व्यावहारिक मशरूम उत्पादन	मशरूम उत्पादन से सम्बन्धित जानकारी	₹ 40/– पंजीकृत डाक खर्च + पैकिंग चार्ज ₹ 30/– कुल ₹ 70/–
पशुओं की स्वास्थ्य रक्षा	घरेलू पशुओं के स्वास्थ्य रक्षा से सम्बन्धित जानकारी	₹ 40/– पंजीकृत डाक खर्च + पैकिंग चार्ज ₹ 30/– कुल ₹ 70/–
फल वृक्षों की जीर्णोद्धार तकनीक	फल वृक्षों की जीर्णोद्धार तकनीक से सम्बन्धित जानकारी	₹ 35/– पंजीकृत डाक खर्च + पैकिंग चार्ज ₹ 30/– कुल ₹ 65/–
महत्वपूर्ण औषधीय एवं सगंध पौधों का कृषिकरण	औषधीय व सगंध पौधों की खेती से सम्बन्धित जानकारी	₹ 30/– पंजीकृत डाक खर्च + पैकिंग चार्ज ₹ 30/– कुल ₹ 60/–
सब्जी एवं मसालों की खेती	सब्जी एवं मसालों की खेती से सम्बन्धित जानकारी	₹ 30/– पंजीकृत डाक खर्च + पैकिंग चार्ज ₹ 30/– कुल ₹ 60/–
मछली पालन	मछली उत्पादन से सम्बन्धित जानकारी	₹ 30/– पंजीकृत डाक खर्च + पैकिंग चार्ज ₹ 30/– कुल ₹ 60/–
पुष्प उत्पादन	पुष्प उत्पादन से सम्बन्धित जानकारी	₹ 30/– पंजीकृत डाक खर्च + पैकिंग चार्ज ₹ 30/– कुल ₹ 60/–
पौष्टिक एवं स्वास्थ्यवर्धक व्यंजन	विभिन्न व्यंजनों व फल–सब्जी परीक्षण आदि पर जानकारी	₹ 30/– पंजीकृत डाक खर्च + पैकिंग चार्ज ₹ 30/– कुल ₹ 60/–
व्यावहारिक मधुमक्खी पालन	मधुमक्खी पालन से सम्बन्धित जानकारी	₹ 30/– पंजीकृत डाक खर्च + पैकिंग चार्ज ₹ 30/– कुल ₹ 60/–
Sugarcane Production and Processing	गन्ना उत्पादन एवं प्रसंस्करण से सम्बन्धित जानकारी	₹ 40/– पंजीकृत डाक खर्च + पैकिंग चार्ज ₹ 30/– कुल ₹ 70/–
Research Highlights	नई प्रजातियों की विशेषताएं सम्बन्धित	₹ 125/– पंजीकृत डाक खर्च + पैकिंग चार्ज ₹ 35/– कुल ₹ 160/–

उपरोक्त साहित्य मँगाने हेतु मनीआर्डर अथवा बैंक ड्राफ्ट प्रभारी अधिकारी, एटिक के नाम बना हो तथा जो भारतीय स्टेट बैंक (कोड 1133) एवं पंजाब नेंशनल बैंक (कोड 4446), जो पंतनगर पर देय हो, को निम्नलिखित पते पर भेजें। पोस्टल आर्डर एवं चैक स्वीकार्य नहीं है।

सम्पर्क करें :–

प्रभारी अधिकारी
कृषि प्रौद्यौगिकी सूचना केन्द्र (एटिक)
गोविन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
पंतनगर– 263 145, जिला– ऊधम सिंह नगर, (उत्तराखण्ड)
फोन– 05944–234810, 235580, फैक्स– 05944–233473
मो. 9412162673, ई–मेल : aticgbpuat@gmail.com